# मानस कौस्तुभ

## सरस, सरल, सार्थक और सारभरी राम कथा

कमल कुमार नागर

BlueRose ONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

**BLUEROSE PUBLISHERS**
India | U.K.

Copyright © Kamal Kumar Nagar 2025

All rights reserved by author. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the author. Although every precaution has been taken to verify the accuracy of the information contained herein, the publisher assumes no responsibility for any errors or omissions. No liability is assumed for damages that may result from the use of information contained within.

BlueRose Publishers takes no responsibility for any damages, losses, or liabilities that may arise from the use or misuse of the information, products, or services provided in this publication.

BlueRose ONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

For permissions requests or inquiries regarding this publication, please contact:

BLUEROSE PUBLISHERS
www.BlueRoseONE.com
info@bluerosepublishers.com
+91 8882 898 898
+4407342408967

ISBN: 978-93-7310-592-5

Cover design: Yash Singhal
Typesetting: Namrata Saini

First Edition: September 2025

# || अनुक्रम ||


| कथा | पृष्ठ |
|---|---|
| रामकथा के गायन का क्रम | 01 |
| मंगलाचरण | 03 |
| बालकांड | 07 |
| वंदना | 08 |
| श्रीमद्वाल्मीकि रामायण का वीजारोपण | 09 |
| चौरासी लाख योनियां | 11 |
| मूल रामायण 01 | 14 |
| सुमति और सत्यवती कथा | 14 |
| भरद्वाज याज्ञवल्क्य संवाद | 15 |
| अगस्त्य और शिव सती सत्संग | 15 |
| सतीजी का मोह | 16 |
| महा संकल्प | 17 |
| दक्ष यज्ञ | 17 |
| पार्वती जन्म | 18 |
| पार्वती तप | 19 |
| तारकासुर जन्म | 21 |
| काम शमन | 21 |
| शिव ब्याह | 22 |
| शिव पार्वती सत्संग | 24 |
| शिव समाधान | 25 |
| राम जन्म के हेतु | 26 |
| जालंधर कथा | 27 |

मूल रामायण 02/1 28

नारद मोह 29

मनु शतरूपा तप, वर 31

प्रतापभानु चरित्र 33

मूल रामायण 02/2 35

दशानन जन्म, तप 36

दिकपाल 36

बलि बंधन 37

बाली रावण प्रसंग 37

सहस्त्रबाहु से सामना 38

नलकूबर श्राप 38

ऋषि रक्त कर 38

मंदोदरी द्वारा ऋषि रक्तपान 38

जानकी जन्म और निर्वाण कथा 39

जानकीजी की शिक्षा 40

शिव धनुष 41

दशानन की अनीति 41

धरती की अधीरता 42

महा प्रार्थना 42

आकाशवाणी 43

ब्रह्मा का निर्देश 43

दिलीप प्रताप 44

रघु प्रताप 44

कौशल्या हरण 44

दशरथ विवाह 45

पार्वती के प्रथम प्रश्न का समाधान 45

मूल रामायण 03 45

पुत्रेष्टि यज्ञ 47
श्रीराम अवतार 48
कुंडली 49
पार्वती के दूसरे प्रश्न का समाधान 49
अवध में आनंद 50
नामकरण 50
मूल रामायण 04/01 50
बाल चरित्र 50
वानर स्नेह 51
व्यापारी का नग 51
व्याध का पक्षी 52
शूकर, सिंह उद्धार 52
रावण को बल दर्शन 52
जनेऊ और शिक्षा 52
मित्र मंडली 52
मूल रामायण 04/02 53
यज्ञ रक्षा 53
ताड़का उद्धार 53
दिव्य शिक्षा 54
विश्वामित्र आश्रम 54
मारीच पर कृपा 54
सुबाहु उद्धार 54
अहिल्या उद्धार 55
गंगा उत्पत्ति 55
जनकपुर दर्शन 59
विश्वामित्रजी का यशगान 59
पुर दर्शन 59

| | |
|---|---|
| पुष्प वाटिका | 59 |
| गौरी पूजन | 61 |
| प्रार्थना, आशीर्वाद | 61 |
| सीता और शशि | 62 |
| अद्भुत दर्शन | 62 |
| प्रण प्रसंग | 63 |
| रंगभूमि आगमन | 64 |
| अन उपमेय जानकी | 64 |
| रंगभूमि में प्रवेश | 64 |
| रावण बाणासुर आगमन | 67 |
| राज मद हरण | 68 |
| जनक क्षोभ | 70 |
| लक्ष्मण का प्रतिरोध | 70 |
| धनुष भंग | 73 |
| जयमाल | 74 |
| परशुरामजी का आगमन | 75 |
| जीन धनु प्रसंग | 75 |
| लक्ष्मण परशुराम संवाद | 76 |
| निज स्वरूप दर्शन | 79 |
| अयोध्या संदेश | 80 |
| द्रूत दशरथ संवाद, पाती | 80 |
| अवध में आनन्द | 80 |
| बारात प्रस्थान | 80 |
| अनुपम अगवानी | 82 |
| शुभलग्न | 82 |
| भांवर | 82 |
| वंश वर्णन | 83 |

| | |
|---|---|
| अद्भुत जेवनार | 87 |
| राम कलेवा | 87 |
| महा दान | 87 |
| विदाई | 90 |
| भरत और संजीवनी बूटी | 92 |
| मार्ग में परशुरामजी का आगमन | 92 |
| अनुपमअगवानी | 93 |
| कंकण निर्बंध | 94 |
| मुंह दिखाई | 95 |
| विश्वामित्रजी की विदाई | 95 |
| अयोध्या काण्ड | 96 |
| वंदना | 96 |
| मूल रामायण 05 | 97 |
| भरत का ननिहाल गमन, | 97 |
| पराक्रम | 97 |
| विश्वावसु | 98 |
| कैकई कथा | 98 |
| नारद आगमन | 98 |
| युवराज संकल्प | 99 |
| देव शारदा संवाद | 100 |
| मंथरा कैकेई संवाद | 102 |
| कोप भवन | 104 |
| दशरथ कैकई संवाद | 105 |
| राम शपथ | 105 |
| तेंतीस कोटि देव साक्षी | 106 |
| दशरथ का अनुताप, कोप | 107 |
| सुमंत आगमन | 110 |

| | |
|---|---|
| राम कैकई संवाद | 110 |
| मूल रामायण 06 | 112 |
| अधीर अवध | 113 |
| राम कौशल्या संवाद | 114 |
| जानकी का आग्रह | 118 |
| लक्ष्मण का आग्रह | 119 |
| शस्त्र | 120 |
| लक्ष्मण सुमित्रा संवाद | 120 |
| वन गमन | 121 |
| विलाप | 121 |
| सुमंत का कोप | 121 |
| वल्कल धारण | 122 |
| वशिष्ठजी द्वारा समाधान | 122 |
| मूल रामायण 07 | 122 |
| अनाथ अवध | 123 |
| तमसातट | 123 |
| अवधवासियों का अनुताप | 124 |
| गुह से भेंट | 124 |
| गुह लक्ष्मण संवाद | 124 |
| सुमंत की विदाई | 125 |
| केवट पर कृपा | 126 |
| मां गंगा का आशीष | 127 |
| प्रयाग दर्शन | 128 |
| भरद्वाजजी से भेंट | 128 |
| वनवासियों को दर्शनलाभ | 129 |
| मूल रामायण 08 | 130 |
| वाल्मीकिजी से भेंट | 130 |

| | |
|---|---|
| रामजी के वास स्थान | 131 |
| चित्रकूट में कुटिया निर्माण | 133 |
| निषाद सुमंत्र मिलन | 133 |
| सुमंत्र का अवध प्रवेश | 134 |
| दशरथ सुमंत्र संवाद | 135 |
| श्रवण कथा | 136 |
| महा निर्वाण | 137 |
| गुरु ज्ञान | 138 |
| भरत को संदेश | 138 |
| भरत कैकई मिलन | 138 |
| भरत कौशल्या मिलन | 139 |
| मूल रामायण 10 | 140 |
| नृप विदाई | 141 |
| गुरु ज्ञान | 141 |
| भरत वनगमन | 143 |
| निषाद को संदेह | 144 |
| भरत निषाद मिलन | 144 |
| मुहूर्त विचार | 145 |
| संगम दर्शन | 146 |
| भरत भरद्वाज भेंट | 146 |
| बारह बाट | 147 |
| चित्रकूट प्रस्थान | 148 |
| देवराज देवगुरु वार्ता | 148 |
| जानकी स्वप्न, रामजी का सोच | 149 |
| लक्ष्मण कोप ,राम भरोसे | 150 |
| ईति भीति | 151 |
| महा मिलन | 151 |

भेंट 152

नृप क्रिया 153

चिंतन 153

मूल रामायण 11 154

जनक आगमन 156

चिंतन 157

चित्रकूट दर्शन 161

पावड़ी 162

विदाई 163

मूल रामायण 12 163

अरण्य काण्ड 165

जयंत धृष्टता 165

अत्रिऋषि से भेंट 166

मूल रामायण 13 166

विराध उद्धार 166

शरभंगऋषि मिलन 167

महा प्रण 167

सुतीक्ष्णजी को दर्शन 168

अगस्त्यऋषि से भेंट 168

मूल रामायण 14 169

पंचवटी, दंडकवन कथा 169

मूल रामायण 15 169

पंचवटी वास 169

जटायु 169

मूल रामायण 16 170

लक्ष्मण के प्रश्नों का समाधान 171

शूपनखा 172

मूल रामायण 17 173
खर, दूषण, त्रिशिरा उद्धार 173
शूपनखा का रावण को उलाहना 173
नरलीला विचार 174
वेदवती 175
मूल रामायण 18 175
कपट मंत्रणा 176
कपट मृग 177
मर्म वचन 177
सीता हरण 178
जटायु का प्रतिरोध 178
दिव्य पायस 178
मूल रामायण 19 178
श्रीराम विलाप 180
मूल रामायण 20 181
जटायु संस्कार 182
कबंध उद्धार 183
शबरी भगतिन 183
मूल रामायण 21 185
पंपासुर 185
मूल रामायण 22 186
नारद, राम संवाद 186
किष्किंधा काण्ड 188
ऋष्यमूक आगमन 188
महा मैत्री 188
सुग्रीव कथा 189
बाली मायावी युद्ध 190

| | |
|---|---|
| मतंग श्राप | 191 |
| बाली उद्धार | 191 |
| सुग्रीव को तिलक | 195 |
| वर्षा ऋतु | 195 |
| मूल रामायण 24 | 197 |
| कटक एकत्रीकरण | 198 |
| कटक वर्णन | 198 |
| चार भाग | 198 |
| स्वयं प्रभा से भेंट | 200 |
| संपाती से साक्षात्कार | 201 |
| मूल रामायण 26 | 202 |
| जामवंत की प्रेरणा | 203 |
| सुन्दर काण्ड | 204 |
| महा यात्रा | 204 |
| मैनाक | 204 |
| सुरसा | 205 |
| सिंहिका | 205 |
| मूल रामायण 27 | 205 |
| लंकिणी से साक्षात्कार | 206 |
| अवसाद | 207 |
| विभीषण से भेंट | 208 |
| अद्भुत दर्शन | 209 |
| रावण का भय | 210 |
| त्रिजटा का समाधान | 211 |
| गुण वर्णन | 213 |
| विरह वर्णन | 213 |
| जयंत कथा | 214 |

| | |
|---|---|
| मूल रामायण 28 | 215 |
| वाटिका उद्धार | 216 |
| कपि बंधन | 218 |
| अद्भुत संवाद | 219 |
| लंका दहन | 221 |
| उनचास मरूत | 223 |
| कपि चिंतन | 224 |
| चूड़ा मणि | 226 |
| मूल रामायण 29 | 226 |
| अपार हर्ष | 227 |
| संदेश | 228 |
| लंका रचना | 228 |
| मूल रामायण 30 | 229 |
| मंदोदरी की सीख | 230 |
| ब्रह्माजी का श्राप | 231 |
| निशाचरों का अभिमान | 231 |
| विभीषण की नीति | 231 |
| मूल रामायण 31 | 232 |
| शरणागति | 233 |
| तिलक | 234 |
| मूल रामायण 32/01 | 235 |
| सागर से विनय | 235 |
| शुक का संदेश | 236 |
| महा कोप | 236 |
| सागर की शरणागति | 237 |
| लंका काण्ड | 238 |
| काल चक्र | 239 |

| | |
|---|---|
| सेतु बंध | 240 |
| रामेश्वर | 241 |
| प्रहस्त का प्रतिरोध | 242 |
| शशि मेचकताई | 243 |
| मुकुट भंजन | 243 |
| मंदोदरी की सीख | 244 |
| कटक वर्णन | 244 |
| मूल रामायण 32/02 | 244 |
| राम दूत अंगद | 245 |
| चौदह प्राणी | 247 |
| मंदोदरी की सीख | 248 |
| मूल रामायण 33 | 249 |
| लक्ष्मण शक्ति | 250 |
| कालनेमी उद्धार | 252 |
| द्रौणागिरि धारण | 252 |
| भरत का भ्रम | 252 |
| जनक लली | 253 |
| महा विलाप | 253 |
| कुंभकर्ण उद्धार | 256 |
| मेघनाद उद्धार | 258 |
| सती सुलोचना | 258 |
| मूल रामायण 34 | 259 |
| अहिरावण उद्धार | 262 |
| नारांतक उद्धार | 262 |
| सती बिंदुमति | 263 |
| शिव भजन | 263 |
| महा संग्राम | 268 |

| | |
|---|---|
| विजय रथ | 268 |
| घंटा प्रमाण | 268 |
| मूल रामायण 35 | 269 |
| त्रिजटा की युक्ति | 270 |
| रावण वध | 271 |
| मंदोदरी का महाप्रलाप | 273 |
| मूल रामायण 36 | 274 |
| अग्नि परीक्षा | 274 |
| ब्रह्मा द्वारा यशगान | 274 |
| दशरथ आगमन | 275 |
| अमृत वर्षा | 275 |
| शंकरजी द्वारा यशगान | 275 |
| कपिदल विदाई | 276 |
| मूल रामायण 37 | 276 |
| अवध वापसी | 277 |
| ऋषि दर्शन | 277 |
| उत्तरकाण्ड | 278 |
| अवध में आनन्द | 278 |
| मूल रामायण 38 | 279 |
| महामिलन | 279 |
| मूल रामायण 39 | 280 |
| महा तिलक | 281 |
| मोती में राम | 282 |
| वेदों द्वारा यशगान | 282 |
| महनीय विदाई | 283 |
| रामराज्य | 284 |
| संतति | 284 |

| | |
|---|---|
| संत असंत | 285 |
| गूढ़ ज्ञान | 286 |
| लक्ष्मण की विदाई | 287 |
| पुरोहित | 287 |
| स्वधाम प्रयाण | 288 |
| नारद द्वारा वंदन | 290 |
| रामायण माहात्म्य | 290 |
| पार्वती के प्रश्न | 290 |
| काकभुशुंडि गरुड़ सत्संग | 291 |
| काक को माया दर्शन | 291 |
| काक तन कैसे | 292 |
| कलि वर्णन | 303 |
| रुद्राष्टक | 304 |
| लोमश कृपा | 307 |
| गूढ़ ज्ञान | 309 |
| सात प्रश्न | 311 |
| विश्राम | 315 |

# || समर्पण ||

पूज्य पिताजी, पूज्य माताजी (को उनके द्वारा प्रदत्त अध्ययन, चिंतन और लेखन की सद्प्रेरणा) और

पंडित मोहनलालजी नागर (अग्रज),

पंडित राधेश्यामजी नागर (अग्रज),

श्रीमती कृष्णा नागर (धर्म पत्नी),

सौ. रूपल (कृतिका),

प्रिय नयन नागर (सुपुत्री और दामाद),

प्रिय कौस्तुभ, शैली नागर (पुत्र,पुत्र वधु),

एवं समस्त परिजनों को सस्नेह भेंट जिन्होंने मेरे विपतकाल में सदैव स्वयं हौसला रखकर मुझे सकारात्मक बनाए रखने और स्वस्थ होने की आकांक्षा जगाए रखी।

# || प्रस्तावना ||

आदरणीय,

सादर अभिनंदन।

"मानस कौस्तुभ" आपके कर कमलों में सौंप कर प्रफुल्लित हूं। इस ग्रंथ के लेखन में पूज्य पिताजी, माताजी की सद्प्रेरणा, उनकी प्रेरणा से सद्ग्रंथो का अध्ययन, नियमित पारिवारिक सत्संग, स्वनामधन्य संतों के व्याख्यानों के श्रवण का महत्वपूर्ण योगदान रहा।

पूज्य गोस्वामी तुलसीदासजी द्वारा रचित कालजई ग्रंथ श्री रामचरित मानस "मानस कौस्तुभ" का मेरुदंड है। उसी लकुटी के बल से तथा श्रीमद्वाल्मीकि रामायण, अद्‌भुत रामायण, आनन्द रामायण, राधेश्याम रामायण, बरवा रामायण, भागवत नवनीत, महान्नाटक, राम रसायन, अगस्त्य संहिता, स्कंद पुराण, रामायण भूषण गोविन्दराजजी की टीका, भारतवर्ष विचार ग्रंथ, गीतावली, कवितावली, श्रीहनुमन्नाटक, श्रीमद्भगवद्गीता, टीकाकार श्रीज्वालाप्रसादजी, रहीम, केशावदास, वृंद, भवानी प्रसाद मिश्र, पद्माकर के साथ ही कुछ स्वरचित ग्रंथ (जय श्री कृष्ण 'श्रीमद्भागवत कथा', श्रीमद्भगवद्गीता के मोती, जनक लली, दानवीर, गजेन्द्र मोक्ष) आदि के दिव्य श्लोक, मधुर नई कथाओं और छंदों का समावेशन कर "मानस कौस्तुभ" को ग्रंथरत्न बनाने का प्रयास किया है। श्रीराम कथा के विविध स्वरूपों को एक ही ग्रंथ में समावेशित करने का सार्थक प्रयत्न कर मन आल्हादित है।

इसकी रचना यात्रा का यथाविधि वर्णन नहीं किया तो दोष लगेगा। अतः बताना जरूरी है कि मैं उन्नीस मार्च दो हजार इक्कीस से प्रोस्टेट कैंसर से ग्रस्त हूं जो समस्त अस्थियों की यात्रा कर मस्तक तक विस्तारित हो गया है। इससे उपजी प्रतिकूल स्वास्थ्य स्थितियों, चिकित्सा, पीड़ा, दवाइयों के प्रतिकूल प्रभाव के बाद भी रामजी प्रदत्त अदम्य साहस ही इसे पूर्ण कर पाया है।

आज जब मैं यह प्रस्तावना लिख रहा हूं तब उन पड़ाओं का भी स्मरण हो रहा है जो इसलिए बताना जरूरी है कि उसे पढ़कर ऐसी परिस्थितियों का सामना करने वालों का मनोबल बढ़े। "मानस कौस्तुभ" का कुछ भाग उस समय लिखा गया जब लिवर बायोप्सी हुई, कुछ इम्यूनो थेरेपी, कीमो, रेडिएशन थेरेपी के दौरान लिखा गया। इसमें डूबने से तकलीफें तो कम नहीं हुई किंतु लड़ने का हौसला अवश्य बढ़ा। सकारात्मक लेखन ने जीवन आषा में अभिवृद्धि की।

बस इतना ही। अब "मानस कौस्तुभ" आपके पास है। कृपया विद्वता के स्थान पर भावों को वरीयता देते हुए अध्ययन कर अपने सुझावों से उपकृत अवश्य करें।

आषा है यह आपको भाएगी। भाएगी ही।

तबतक के लिए।

सादर अभिवादन।

**आपका कृपाकांक्षी**
**'कमल कुमार नागर'**

# ।। श्रीराम कथा के गायन का क्रम।।

# (श्रीमद्वाल्मिकी रामायण के अनुसार)

1- बालकांड से अयोध्या काण्ड सर्ग 6 राम राज्य की तैयारी
2- अयोध्या काण्ड सर्ग 80 भरतजी का चित्रकूट प्रस्थान
3- अरण्य काण्ड सर्ग 20 खर के भेजे निशाचरों के वध
4- किष्किंधा काण्ड सर्ग 46 सुग्रीव के भूमंडल भ्रमण वर्णन
5- सुंदर काण्ड सर्ग 47 अक्षय कुमार वध
6- युद्ध काण्ड सर्ग 50 राम लक्ष्मण की नागपाश से मुक्ति
7- युद्ध काण्ड सर्ग 99 राम रावण युद्ध (लक्ष्मण शक्ति से पूर्व)
8- उत्तर काण्ड सर्ग 36 हनुमान जन्म, श्राप, वरदान कथा
9- उत्तर काण्ड के अंतिम सर्ग के बाद युद्ध काण्ड के अंतिम सर्ग को पढ़कर विश्राम करें।–

**प्रथमे तु अयोध्यायाः षट्सर्गान्ते शुभा स्थितिः।**
**तस्यैवाशीतिसर्गान्ते द्वितीये दिवसे स्थितिः।।**
**तथा विंशतिसर्गान्ते चारण्यस्य तृतीयके।**
**दिने चतुर्थे षट्चत्वारिंशत्सर्गे कथास्थितिः।।**
**किष्किन्धाख्यस्य काण्डस्य पाठविद्भिरुदाहृता।**
**सुसप्तचत्वारिंशत्के सर्गान्ते सुन्दरेस्थितिम्।।**
**पञ्चमे दिवसे कुर्यादथ षष्ठे तथोच्यते।**
**युद्धकाण्डस्य पञ्चाशत्सर्गान्ते विमला स्थितिः।।**
**एकोनशतसंख्याके सर्गान्ते सप्तमे दिने।**
**युद्धस्यैव तु काण्डस्य विश्रामः सम्प्रकीर्तितः।।**
**तथा चोत्तरकाण्डस्य षट्त्रिंशत्सर्गपूरणे।**
**अष्टमे दिवसे कृत्वा स्थितिं च नवमे दिने।।**
**शेषं समाप्य युद्धस्य चान्त्यं सर्गं पुनः पठेत्।**
**रामराज्यकथा यस्मिन् सर्ववाञ्छितदायिनी।।**

- अनुष्ठानप्रकाश (वाल्मीकि रामायण)

1- बाल काण्ड से शिव पार्वती संवाद आरम्भ
2- शतानंदजी का धनुष यज्ञ हेतु आमंत्रण

3- ब्याह के बाद अयोध्या आगमन
4- वनवासियों द्वारा परिचय पूछना
5- रामजी द्वारा चित्रकूट में भरत की प्रशंसा
6- सीताजी को रावण द्वारा अशोक वाटिका में रखना
7- शशि की श्यामलता संवाद
8- रामजी का अवधवासियों से मिलन
9- समापन

- श्री राम चरित मानस (नवान्हपारायण)

...............................

# || मंगलाचरण ||

वामांगे च विभाति भूधर सुता, देवा पगा मस्तके।
भाले बालविधुर्गलेचगरलं, यस्योरसि व्यालराट।।
सोअयम भूति विभूषणः सुरवरः, सर्वाधिपः सर्वदा।
शर्वः सर्वगतः शिवः शशिनिभः,श्री शंकरः पातु माम।।
- अयोध्या काण्ड वंदना-

शंखेंद्वाभमतीव सुंदरतनुं शार्दूलचर्माम्बरं,
कालव्यालकपालभूषणधरं गंगाशशांकप्रियं।
काशीशं कलिकल्मशौघशमनं कल्याणकल्पद्रुमं,
नौमीड्यम गिरिजापतिं गुणनिधिं श्रीशंकरं कामदम।।
- गोस्वामीजी (लंका काण्ड)-

नमस्तस्मै मुनीन्द्राय श्रीयुताय यशस्विने।
शान्ताय वीतरागाय वाल्मीकाय नमो नमः।।
- अद्‌भुत रामायण सर्ग 01.02-

जयति रघुवंश तिलकः कौशल्यानंदवर्धनो रामः।
दशवदननिधनकरि दाशरथिः पुण्डरीकाक्षः।।
- अद्‌भुतरामायण सर्ग 01.04-

श्रीरामः शरणम् समस्तजगतां, रामं विना का गती।
रामेण प्रतिहन्यते कलिमलं, रामाय कार्यं नमः।।
रामात् त्रस्यति कालभीमभुजगो, रामस्य सर्वं वशे।
रामे भक्तिरखंण्डिता भवतु मे, राम त्वमेवाश्रयः।।
- वाल्मिकी रामायण माहात्म्य ।।01।।-

प्रसन्नताम या न गताभिषेकतस्तथा न मम्लौ वनवास दुःखतः।
मुखांबुज श्री रघुनंदनस्य मे सदास्तु सा मंजुल मंगलप्रदा।।
- अयोध्या काण्ड वंदना-

कुंदेंदीवर सुंदरावतिबलौ विज्ञानधामावुभौ।
शोभाढ्यो वरधन्विनौ श्रुतिनुतौ गौ विप्रवृंद प्रियो।।
माया मानुष रूपिणौ रघुवरौ सद्धर्मवर्मो हि तौ।
सीतान्वेषणतत्परौपथिगतौ भक्ति प्रदौ तौहि नः।।

(कुंदेंदीवर- कुंद पुष्प से गोरे लक्ष्मण और इंदीवर अर्थात श्याम कमल से रघुनाथ, श्रुतिनुतौ- स्तुत्यमान, भक्ति प्रदौ तौ हि नः- मुझे भक्ति देने वाले हैं)
- गोस्वामीजी (किष्किंधा काण्ड)-

शान्तं शाश्वतमप्रमेयमनघं निर्वाण शांति प्रदं।
ब्रह्माशंभुफणींद्रसेव्यमनिशं वेदांतवेध्यं विभुं।।
रामाख्यं जगदीश्वरं सुरगुरूं मायामनुष्यं हरिं।
वंदेहं करुणाकरं रघुवरं भूपालचूड़ामणिम।।
-गोस्वामीजी (सुंदर काण्ड)-

केकीकंठाभनीलम सुरवरविलसद्विप्रपादाब्ज चिह्नम।
शोभाढ्यं पीतवस्त्रम सरसिजनयनं सर्वदा सुप्रसन्नम।
पाणो नाराचचापम कपिनिकरयुतम बंधुना सेव्यमानम।
नोमिड्यम जानकीशम रघुवरमनिशं पुष्पकारुढ़रामम् ।।
- गोस्वामीजी (उत्तर काण्ड)-

जानकी प्रकृतिः सृष्टेरादिभूता महागुणा।
तपः सिद्धिः स्वर्गसिद्धिर्भूतिमूर्तिमती सती।।
- अद्‌भुत रामायण सर्ग - 01.13-

विद्या अविध्या च महती गीयते ब्रह्मवादिभिः।
ऋद्धिः सिद्धिर्गुणमयी गुणातीता गुणात्मिका।।
- अद्‌भुत रामायण सर्ग 01.14-

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति सुव्रत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदा प्रकृति संभवः।।
- अद्‌भुत रामायण सर्ग 01.18-

रामः साक्षात्परं ज्योतिः परंधाम परः पुमान।
आकृतौ परमो भेदो न सीतारामयोर्यतः।।
- अद्‌भुत रामायण सर्ग01.19-

अपाणिपादो जवनो ग्रहीता पश्यत्यचक्षुः स श्रीनोत्स श्रृणोत्यकर्णः।
स वेत्ति विश्वम् नहि तस्य वेत्ता तमाहुरग्र्यं पुरुषम् पुराणम्।।

(जवनो- चलता है, ग्रहीता- पकड़ लेता है, वेत्ति- जानता है, वेत्ता- जानने वाला, तमाहुरग्र्यं- उसे अग्रणी कहते हैं)
- अद्‌भुत रामायण सर्ग 01.22-

गोष्पदीकृतवारीशं मशकीकृतराक्षसम्।
रामायणमहामालारत्नं वंदेअनिलात्मजं।।
उल्लंघ्य सिंधोह् सलिलं सलीलं,यः शोक वह्निम् जनकात्मजायाः।
आदाय तेनैव ददाह लंकां, नमामि तं प्रांजलिरांजनेयं।।
गोपाल गोकुल वल्लभी प्रिय गोप गोसुत वल्लभम्,
चरणारविंद महं भजे, भजनीय सुर मुनि दुर्लभं।।
घनश्याम काम अनेक छवि, लोकाभिराम मनोहरं,

किंजल्क वसन, किशोर मूरति, भूरि गुण करुणाकरम्।।
शिर केकि पच्छ, विलौल कुंडल, अरुण बनरूह लोचनम्,
गुंजावतंस विचित्र स अंग, धातु भव भय मोचनम्।
कच कुटिल सुंदर, तिलक भ्रू, राका मयंक समाननम्,
अपहरण तुलसीदास त्रास, विहारि वृंदा काननम्॥
- गोस्वामी तुलसीदासजी-

सुन्दर स्याम सरीर लसे, मुख को लखि कोटिक इन्दु लजाई,
नैन बने नव नीरज से, भुज है जनु कल्पलता लहराई।
कंबु समान विराजत कंठ, हिये भृगू पायन की परछाई।
मों उर मांझ निवास करो, दासन की निधि राम गुसांई।।
- गोस्वामी तुलसीदासजी-

सिद्धि सदन गज वदन जी, दो ऐसा वरदान।
जन जन के मन में बसे, "मानस कौस्तुभ" गान।।
जय गण नायक गज वदन, लंबोदर भगवान।
ऐसी मति दो कर सकूं, राम चरित का गान।।
आसन धरलो 'कमल' का, ए शारदा भवानि।
कलिमल में इतना फसा, होती है अब ग्लानि।।
श्रद्धा और विश्वास युत, जो हैं जग के मूल।
वे गिरिजा गौरीश जी, हों सब पर अनुकूल।।
कहने से होता कठिन, करना सारे काम।
पर करके दिखला गये, पुरूषोत्तम श्रीराम।।
रघुकुल भूषण रामजी, कौशल्या सुख सार।
कमल नयन दशरथ सुवन, दशमुख तारणहार।।
जग जननी के चरण में, 'कमल' नवावे शीष।
शुभ कर्मों में रत रहूँ, दो ऐसा आशीष।।
चरण कमल गोविन्द के, विपत विदारण हार।
वन्दन ही कलिकाल में, जग का तारण हार।।
सतसंगति जग में कठिन, कठिन नाम का जाप।
मन पर संयम अति कठिन, कठिन सत्य आलाप।।
जीवन सब से कठिन तब, मुक्ती का क्या मार्ग।
कलि में कीर्तन भजन ही, दिखलाते सन्मार्ग।।
सबको अपना मानकर, मांगो सबकी खेर।
तुम्हें खेर मिल जायगी, तनिक न होगी देर।।
उसकी माया प्रबल है, प्रबल प्रकृति विस्तार।
नमन उसी जगदीश को, नित कर 'कमल कुमार'।।
देवहूति सुत के चरण, वन्दौं बारम्बार।
योग शास्त्र देकर किया, हम सब पर उपकार।।

जग के सिरजनहार को, वारम्बार प्रणाम।
विनय यही सब पूर्ण हो, जन हितकारी काम।।
जगन्नाथ भगवान को, बारम्बार प्रणाम।
कलि में जिनके भजन से, मन पाता विश्राम।।
प्रभु सेवा की चाह से, धारा सेवक वेश।
जय हनुमत जय वीरवर, जय जय जयति महेश।।
राम कथा रस रसिक तुम, श्री अंजनी कुमार।
आसन धरकर प्रभु करो, 'कमल' विनय स्वीकार।।
मुनि मंडलि मार्तंड जी, वाल्मीकि श्रीमान।
शांत वीतरागी यशी, परम पूज्य धीमान।।
मंदर सम कवि डूबते, ते नहिं पायो थाह।
मैं तो रजकण हूं प्रभु, गुण वर्णन की चाह।।
नाथ चरित सागर तेरा, 'कमल' बिना पतवार।
कृपा बिना श्रीराम की, कौन लगावे पार।।
गुण वरणू रघुनाथ के, मेरी कहां बिसात।
कृपा भई श्रीराम की, बढ़ी 'कमल' औकात।।
मात पिता मेरे बने, सद्गुरूवर का रूप।
चाखा उन आसीस तें, अमृत बड़ा अनूप।।
कलम भले थी हाथ में, मन था रघुवर धाम।
लिखना पढ़ना सब रहा, रघुकुल मणि का काम।।
साधक जन को शक्ति नित, देता जय श्री राम।

जन जन में हरि मान कर, बोलो जय श्री राम।।
सबके हिरदे बैठ के, राघव करो उद्धार।
हाथ जोड़ विनती करे, 'नागर कमल कुमार'।।

- 'कमल कुमार नागर'

# ।। बाल काण्ड ।।

हमारे शास्त्रों में मनीषियों ने वंदना को अधिक महत्व दिया है। वंदना हमारी विनम्रता, समर्पण ओर आस्था को दर्शाती है। प्रत्येक महान कवि ने अपनी वंदना के माध्यम से अपनी विनम्रता को ही द्रविभूत किया है। मैं भी यथामति राम कथा कहना चाहता हूं। मेरा आश्रय गोस्वामी तुलसीदासजी ही हैं। उनके द्वारा रचित रामचरित मानस ही "मानस कौस्तुभ" का मेरुदंड है। बाबा की ही भांति "क्वचिदन्यतोपि" का भी समावेशन किया गया है।

गोस्वामी तुलसीदासजी राम कथा के आरंभ में अद्भुत वन्दना करते हैं। उनका वंदना का क्रम भी अनुकरणीय है। आइए उन्हीं के शब्दों का दोहरान और स्मरण करें।-

**वर्णानामर्थ संघानां रसानां छंद सामपि।**
**मंगलानां च कर्तारो वंदे वाणी विनायको।।**

वर्ण, अर्थ, रस, छंद में मंगल के कर्ता श्री गणेश ओर सरस्वतीजी हैं। उन्हें प्रणाम।

जब हम थोड़ा गहराई से सोचते हैं तो पाते हैं कि वर्ण, अर्थ, रस ओर छंद तो सभी कविताओं और लेखों में विद्यमान होते हैं। इनके बिना तो कविता संभव ही नहीं है। लेकिन सभी में मंगल नहीं होता। मंगल का अभिप्राय है जो सभी के मनमानस पर झंकृति दे। जो सबको भला लगे, मीठा लगे, अपना लगे। जिसपर सब विश्वास करे। जो सबको भाए। जिसका श्रवण शांति दे, संबल दे, आधार दे। जो विश्वास जगाए।

यदि रचना में मंगल नहीं तो वह निष्प्राण इंसान की तरह होती है। हाड़ मांस का पुतला इंसान नहीं होता। उसे इंसान तब कहते हैं जब उसमें आत्मा रूपी राम तत्व का वास होता है। उसके बिना कुछ नहीं। संतों ने उसे राम कहा है। जिसमें राम नहीं वह शव है। आत्माराम निकला और सब समाप्त। इसीलिए आत्मतत्व निकल जाता है तो "राम नाम सत्य है" कहा जाता है।सत्य गया। मंगल गया नहीं के अमंगल हो गया।

जैसे राम प्राणवान बनाते हैं वैसे ही सरस्वती ओर गणेश वर्ण, अर्थ, रस और छंद को मंगलमय बनाते हैं। इसीलिए बाबा ने श्रीगणेश ओर शारदा की वंदना की है।-

भवानी शंकरो वंदे श्रद्धा विश्वास रूपिणौ। याभ्याम्बिना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वांतस्थमीश्वरं।।

पार्वतीजी के प्रश्न श्रद्धा और शंकरजी के उत्तर भक्तों में विश्वास भरते हैं। उन श्रद्धा, विश्वास स्वरूप मां पार्वती और शंकरजी को प्रणाम। उनकी कृपा बिना सिद्ध भी अपने अंदर विराजे ईश्वर के दर्शन नहीं कर सकते हैं।–

**वंदे बोधमयं नित्यं गुरुं शंकर रूपिणौ।**
**यमाश्रितोहि वक्रोअपि चंद्रः सर्वत्र वंदितः।।**

बोध दाता, शंकर स्वरूपी गुरु को प्रणाम, जिनका आश्रय पाकर, टेढ़ा चंद्रमा भी वंदनीय हो जाता है।-

**सीता राम गुणग्राम पुण्यारण्य विहारिणों।**
**वन्दे विशुद्ध विज्ञानों कविश्वर कपिश्वरो।।**

वाल्मीकिजी और हनुमानजी दोनो, सीता राम रूपी पुण्य चरित्र वन में विहार करने वाले हैं। उन्हें प्रणाम।

(तमसा के तट के वन में विचरण करते हुए एक निषाद द्वारा क्रौंच पक्षी के जोड़े के नर पक्षी को मारने पर मादा के रुदन करने पर वाल्मिकीजी ने निषाद से कहा -

**मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।**
**यत् क्रौंचमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्।।**
**- वा.रा.बा.02.15**
**(मा- न मिले, प्रतिष्ठां- शांति, त्वमगमः- कभी भी)**

अपने आश्रम पर आए ब्रह्माजी को यह श्लोक कहा तो उन्होंने रामायण रचने का निर्देश दिया। शिष्यों ने इस श्लोक को प्रसन्न मनसे गाया कि देखो गुरुजी के हृदय की वेदना उत्तम श्लोक के रूप में प्रकट हुई है।

रामराज्य की स्थापना के बाद महर्षी ने रामायण (पौलस्त्य वध) की रचना कर अपने शिष्यों लव कुश को पढ़ाया। इसमें कुल चौबीस हजार श्लोक,पांच सो सर्ग और सात काण्ड हैं।

आश्रम में कुश लव से रामायण सुनकर मुग्ध हुए ऋषियों ने उन्हें भेंट स्वरूप रस्सी, कमण्डलु, मृगचर्म, आसन, वल्कल आदि दिए।)

अयोध्या की सभा में लव कुश ने गाया -

**जिन प्रवल प्रतापी वरनृप का, इस वसुधा पर अधिकार रहा।**
**स्वायंभव मनु से सगर तलक, जय पाई जन को प्यार दिया।।**
**जिनको सुत षष्टिसहस्त्र सदा, आवृत कर विचरण करते थे।**
**उस सागर खानित संतति के, नृप सगर धरापर तपते थे।।**
**उस उज्ज्वल इक्षवाकु कुल के, गौरव की गाथा गाते हैं।**
**इस रामायण की दिव्य कथा, नृपवर हम आज सुनाते हैं।।**

**चारों ही पुरुषारथ जिसको, सुनने से सुलभ सफल होते।**
**जो दोष दृष्टि तज सुनते हैं, सौभाग्य वंत वे जन होते।।**
**- कमल-**

**उद्भवस्थितिसंहारकारिणीम क्लेश हारिणीम।**
**सर्व श्रेयस्करीं सीतां नतोहम राम वल्लभां।।**

उद्भव, पालन और संहार कर्ता, राम वल्लभा जानकीजी को प्रणाम।-

**गुणवंत अनंत प्रकृति सृष्टा, ए जनक सुता है नमन तुम्हें।**
**तप और स्वर्ग सिद्धी दात्री, ए सती शिरोमणि नमन तुम्हें।।**

**- कमल-**

**यन्मायावशवर्तिविश्ववमखिलं ब्रह्मादि देवा सुरा।**
**यत्सत्वादमृषैवभातिसकलं रज्जो यथा हेर्भ्रम।।**

सकल विश्व, ब्रह्मादि देवता उसकी माया के वशवर्ति है। उसके सत्य से सब, रज्जू में सर्प की भांति, सत्य भासित होता है। उसके चरण नौका हैं। उसे जाने बिना मुक्ति नहीं। उनके चरणों का आश्रय ही भव से पार करता है। ऐसे श्रीरघुनाथजी को प्रणाम-

**बिन चरण गमन,बिन नयन दरश,बिन बाहु कर्ण गहता सुनता।**
**वह पुरुष पुरातन जग देखे, जग उसको देख नहीं सकता।।**

**- कमल-**

**नानापुराणनिगमागमसम्मतं यद्रामायणें निगदितं क्वचिदन्यतोपि।**
**स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथगाथा भाषा निबंध मति मंजुल मातनोति।**

बाबा कहते हैं 18 पुराण, निगम- वेद और उपवेद, छह शास्त्र (योग, सांख्य, न्याय, वैशेषिक, वेदांत और मीमांसा), आगम (वैष्णव आगम - पंचरात्र, वेखानस। शेव आगम- पाशुपत शेव सिद्धांत, त्रिक आदि, शाक्त आगम) और अन्यत्र से भी प्राप्त ज्ञान और कथा का वर्णन स्वांतः सुखाय करता हूं।–

**जेहि सुमिरत सिधि होइ, गणनायक करिवर वदन।**
**करहु अनुग्रह सोइ, बुद्धिराशि शुभगुण सदन।।**

बुद्धि के दाता गणेशजी अनुग्रह करें। जिन राम का स्मरण करते ही गजानन सिद्ध हुए। प्रथम पूज्य हुए। गण नायक हुए। वे बुद्धि राशि रामजी कृपा करें।

**अथवा -**

जिन राम का स्मरण करके सि - सीता, को धि - धीरज हुआ, वे गण नायक (चराचर पति) करि वर (भलाई करके) वद न (बखान नहीं करते, मुख पर न लाते) वे शुभ गुणों के भंडार, मुझपर कृपा करें।

**अथवा -**

जिन गणेशजी का स्मरण करने से सीताजी का मनोरथ सिद्ध हुआ उन बुद्धि राशि और शुभ गुणों के भंडार को प्रणाम।-

**मूक होहिं वाचाल, पंगु चढ़हिं गिरिवर गहन।**
**जासु कृपासुदयाल, द्रवहु सकल कलिमल दहन।।**

मूक- (वचन मूक- तुलसीदास, कमल। अज्ञान

मूक-ध्रुव, प्रहलाद कमल आदि। धर्म मूक- जो अपनी बात न कहे वे धर्म चर्चा करने लगें। ज्ञान मूक- जानते है पर बोलते नहीं- जनक, दत्तात्रेय),

पंगु (पद पंगु, कर्म पंगु- जिसने स्वप्न में भी सुकर्म न किए हों, सुमति पंगु- रामजी को जानकर मौन रहने वाले।-

**नील सरोरूह श्याम, तरुण अरुण वारिज नयन।**
**करहुं सो मम उर धाम, सदा क्षीरसागर शयन।।**

रामजी और विष्णुजी में कोई भेद नहीं हैं। जैसे विष्णुजी क्षीरसागर में वैसे ही रामजी मैंरे हृदय में लक्ष्मण, जानकीजी सहित वास करो।-

**कुंद इंदु सम देह, उमा रमण करुणा अयन।**
**जाहि दीन पर नेह, करहु कृपा मर्दन मयन।।**

(कुंद- कुंद के श्वेत पुष्प, चमेली, इंदु- चंद्रमा)

करुणा के आगार, दीनों पर कृपा करने वाले, काम दाहक श्रीशंकरजी मुझपर कृपा करें।-

**वंदौ गुरु पद कंज, कृपा सिंधु नर रूप हरि।**
**महा मोह तम पुंज, जासु वचन रवि करनिकर।।**
**सदगुरु को प्रणाम जो मनुष्य रूप में परमेश्वर ही है।**

उनका वचन रवि कर (किरणों का) निकर (समूह) है।-

गुरु पद रज मृदु मंजुल अंजन,नयन अमिय द्दग दोष विभंजन।

(अमिय- अमृत स्वरूप, द्दग दोष- द्दष्टि दोष, विभंजन- नाश कारी)-

वंदौ प्रथम महीसुर चरणा,मोह जनित संसय सब हरणा।

(महीसुर- ब्राह्मण)-

साधु चरित शुभ सरिस कपासू,निरस विशद गुणमय फल जासू।

जो सहि दुख पर छिद्र दुरावा,वंदनीय जेहि जग जस गावा।

(दुख-मौसम के, चरखी के, कुटने, कतने, छिदने, छिद्र दुरावा- कपड़ा बनकर)

सकल साधु समाज को प्रणाम है।

ओर तो ओर -

**बहुरि वंदि खलगण सतिभाये,जो बिनु काज दाहिने बांये।**
(सतिभाये- स्वभाव से)

ये परहित में हानि और उजाड़ में लाभ देखने वाले, पराए घृत में माखी की तरह होते है। ये ओलों की भांति, कृषि नष्टकर, अहित कर, स्वयं भी गल जाते हैं। सहस्त्र मुख शेष, सहस्त्र श्रवण प्रथु जैसे वर्तते हैं। मैं तो वंदना करता हूं पर जानता भी हूं कि ये अपनी आदत नहीं त्यागेंगे। जैसे-

पायस पालिय अति अनुरागा,होहिं निरामिष कबहुंकि कागा।

(पायस- खीर, निरामिष- शाकाहारी)

वैसे संत, असंत दोनो ही दुखदाई हैं। यह कैसे -

बिछुरत एक प्राण हर लेहीं,मिलत एक दारुण दुख देहीं।

ये दोनो एक ही समाज की उपज हैं। कमल और जोक, सुधा और सुरा जैसे हैं। क्या कर सकते हैं। जिसकी जैसी करनी -

**भले भलाई पै लहहिं, लहहिं निचाई नीच।**
**सुधा सराहिय अमरता,गरल सराहिय मीच।।**

(पै- ही, मीच- मृत्यु)

हर एक में दोनो पक्ष हैं। दुख-सुख, पाप-पुण्य, देव-दानव। यह जगत बनाया ही ऐसा है-

**जड़ चेतन गुण दोष मय, विश्व कीन्ह करतार।**
**संत हंस गुण गहहिं पय,परिहरि वारि विकार।**

(पय- दूध, परिहरि- त्याग कर, वारि- पानी)

संत गुण ग्रहण कर दोष तजते हैं। कपट नहीं चलता -

उघरहिं अंत न होय निबाहू,कालनेमि जिमि रावण राहू।

राहू ने छल से अमृत पान किया तो मस्तक कटने के बाद भी बच गया। सिर राहू और धड़ केतू हुआ-

गगन चढ़ई रज पवन प्रसंगा,कीचइ मिलहिं नीच जल संगा।

**ग्रह भेषज जल पवन पट, पाय कुयोग सुयोग।**
**होय कुवस्तु सुवस्तु जग,लखहिं सुलक्षण लोग।।**

(ग्रह- नवग्रह, भेषज- औषधि, जल- गंगा या नाली का, पवन- उपवन या गंदगी, पट- वस्त्र भगवान को अर्पित या मुर्दे को चढ़ाया, सुलक्षण-पारखी)

अतः जड़ चेतन सभी को राममय जानकर दोनो हाथ जोड़कर पद वंदना करता हूं।।

चारखानि (स्वेदज- जूं आदि, अंडज- पक्षी सर्प, पिंडज- मनुष्य आदि, उद्भिज्ज जो पृथ्वी फोड़कर निकलते हैं वृक्षादि, ये चार प्रकार के मिलकर चौरासी लाख होते हैं। इन्हें –

सीय राम मय सब जग जानी, करों प्रणाम सप्रेम सुवानी।

संत कहते हैं -

**बीस लाख स्थावर जानों,सब जलचर नव लाख बखानो।**
**ग्यारह लक्ष कूर्म कवि गाए, पक्षी गण दस लाख बताए।**
**तीस लक्ष पशु जानहु भाई, चार लक्ष वानर समुदाई।**
**जब यह चौरासी कट जावे,तब मनुष्य को तनु कछु पावै।।**

सब मिलकर मुझ पर कृपा करो। मैं मन से रंक मनोरथ से राजा हूं -

ज्यों बालक कह तोतरि बाता,सुनहिं मुदित मन पितु अरु माता।

**गोस्वामीजी कहते हैं मुझे तो अपना कवित्व नीका लगा।**
**जैसा भी है। इस ग्रंथ में उदार राम नाम ही परमसुख है।**

मैं भाव (स्तंभन, पसीना आना, रुएं खड़े होना, स्वर भंग, कांपना, विवर्ण, आंसू, प्रलाप करना ये आठ भाव होते हैं।) रस कुछ नहीं जानता।केवल राम नाम आधार है। कैसा है वह नाम -

**मंगल भवन अमंगल हारी, द्रवहु सो दशरथ अजिर बिहारी।**

राम नाम के बिना काव्य वैसा ही है जैसे -

**विधु वदनी सब भांति संवारी, सोह न वसन बिना वर नारी।**

(विधु- चंद्रमा, वर- सुंदर)

नाम प्रभाव से कविता भी मधुर हो जाती है। जैसे सुगंध के साथ धुंआ कड़ुआपन छोड़ देता है। अगरबत्ती इसका उदाहरण है।

हमें उन स्वर्ण वृक्षों से क्या प्रयोजन जो जस के तस रहते हैं। हमे मलयाचल प्रिय है जिसके आश्रय से कंकोल, नीम, कुटज भी चंदन होजाते हैं। मेरी कविता काली गौ के दूध सी गुणकारी होगी।

साधारण जन का गुण गाने से शारदा पछताने लगती है। मैं तो -

कवि न होऊं नहिं चतुर कहाऊं,मति अनुरूप राम गुण गाऊं।

जिसे शारद, शेष, महेश नैति नेति कहते हैं उसे भी तो कवि गाते सुनाते हैं। राम तो -

गई बहोरि गरीब निवाजू,सरल सबल साहिब रघुराजू।

(गई- छूटी, गई, चली गई, छिन गई, बहोरि-बुहार लाने, फेर लाने जैसे सुग्रीव का गया राज्य फेर लाए, गरीब निवाजू- गरीब नवाज, अशरण शरण)

फिर वाल्मीकिजी आदि ने राह तो बना ही दी है जिसपर चलने में मुझे सुगमता होगी। जैसे -

**अति अपार जे सरित वर, जो नृप सेतु कराहिं।**
**चढ़ि पीपिलिका परम लघु, बिनु श्रम पारहिं जाहिं।।**

(अपार- बड़े, विशाल, नृप- राजा, वाल्मिकीजी, व्यासजी, पीपिलिका- चींटी, तुलसीदासजी, कमल)

तुलसी बाबा कहते हैं कि मैं गंगा और सरस्वती को प्रणाम करता हूं। एक तो स्नान करने और दूसरी गान करने से मंगल करती है। रामजी के सेवक, स्वामी और सखा शिव-पार्वती को प्रणाम। यदि वे मुझपर प्रसन्न हैं तो जो मैं कहूं या गाऊं उसका प्रभाव सत्य होगा। अवध भुआल दशरथजी जिन्होंने अपना तन तजकर राम से प्रेम सिद्ध किया और कौशल्या अंबा को प्रणाम। रामजी के माता पिता होना अपार महिमा की बात है। नियम ओर व्रती भरत, राम पताका के दंड लक्ष्मण, भरत अनुगामी शत्रुघ्न, राम द्वारा यश गाए जाने वाले हनुमानजी को प्रणाम -

**वंदौ पवन कुमार, खल वन पावक ज्ञान घन।**
**जासु हृदय आगार, बसहिं राम शर चाप धर।।**

हनुमान जी -

**गोष्पदीकृतवारीशं मशकीकृतराक्षसम्।**
**रामायणमहामालारत्नं वंदेअनिलात्मजं।।**

**उल्लंघ्य सिंधोह् सलिलं सलीलं, यः शोक वह्निम् जनकात्मजायाः।**
**आदाय तेनैव ददाह लंकां, नमामि तं प्रांजलिरांजनेयं।।**

अधम देह से रामजी को पाने वाले सुग्रीव, विभीषण, जामवंत को प्रणाम। ओर -

जनक सुता जग जननि जानकी,अतिसय प्रिय करुणा निधान की।

ताके युग पद कमल मनाऊं,जासु कृपा निर्मल मति पाऊँ।

वाणी और अर्थ, जल और लहर जैसे अभिन्न सीता रामजी को प्रणाम। प्रथम पूज्य गणनाथ को प्रणाम।

प्रथम पूज्य कैसे-

ब्रह्माजी ने कहा कि जो पृथ्वी की परिक्रमा करके पहले आवेगा वो प्रथम पूज्य होगा। मूषक सवार गणेश पीछे रह गए। नारदजी के कथनानुसार राम नाम लिख, परिक्रमा लगाकर प्रथम पूज्य हुए।

एक बार शिवजी ने पाक बनाकर पार्वतीजी को भोजन हेतु बुलाया। वे बोली विष्णु सहस्रनाम का पाठ करके पाऊंगी। शिवजी बोले एक राम का नाम लो और पाठ पूर्ण। ऐसा करने से गौरी को पतिव्रता शिरोमणि कहा गया।

नाम महिमा अपरंपार है अतः -

**राम नाम मणि दीप धर, जीह देहरी द्वार।**
**तुलसी भीतर बाहिरो, जो चाहसि उजियार।।**

(दीप- मणि रूपी दीप, जीह देहरी- जिव्हा रूपी देहरी)-

जपहिं नाम जन आरत भारी, मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारी।

रामजी को चार प्रकार के भक्तों (जिज्ञासु, साधक, आर्त और ज्ञानी) में ज्ञानी प्रिय हैं। शबरी, गीध जैसे सेवकों को रामजी ने अच्छी गति प्रदान की है। नाम ने अनेक का उद्धार किया है। रामजी ने वानर कटक एकत्र कर, श्रम से पुल बनाया और कटक सहित पार गए किंतु उनका नाम अनेक भवसिंधु शोषक है। नाम ने नारद, ध्रुव, प्रहलाद, शिव और-

**सुमिरि पवनसुत पावन नामू, अपने वश करि राखेउ रामू।**
**कहौ कहां लगि नाम बढ़ाई, राम न सकई नाम गुण गाई।**

मेरे पास तो न कर्म न भक्ति न विवेक है, बस राम नाम का ही सहारा है। नाम ही नरसिंह है।कलियुग हिरण्यकश्यपु है। जपने वाला प्रहलाद है। उस राम नाम को कैसे भजें -

भाव कुभाव अनख आलसहूं,नाम जपत मंगल दिसि दसहूं।

(भाव- प्रीति, कुभाव- वैर, अनख- ईर्ष्या)

अपने भक्तों पर बलिहार स्वामी श्रीराम को प्रणाम करके हम भी वाल्मीकिजी, गोस्वामीजी, महान ग्रंथों, मनीषियों के व्याख्यानों का सहारा लेकर कथा आरंभ करते हैं।

इसे याज्ञवल्क्यजी ने भरद्वाजजी, शिवजी ने उमाजी, काकभुषुण्डी ने शंकरजी (मराल तन), उनसे याज्ञवल्क्यजी ने पाई। काकभुषुण्डीजी ने गरुडजी को सुनाई। तुलसीदासजी ने अपने गुरु से वराह क्षेत्र में पाई। वो मुझे जैसी समझ में आई उसको भाषाबद्ध करता हूं। यह कथा पंडितों को विश्राम देने वाली, सकल जनमन को आनंद देने वाली, कलि कलुश विभंजनि है। इसकी चौपाइयां -

मंत्र महामणि विषय व्याल के,मेटत कठिन कुअंक भाल के।

(विषय व्याल- विषय रूपी नाग)

कलियुग के कुपथ, कुतर्क, कुचालि, कपट, दंभ, पाखण्ड को दहन करने के लिए राम गुण ग्राम प्रचंड अग्नि है। कल्प भेद के अनुसार भगवान के चरित्र प्यारे लगते हैं।

काकभुशुंडिजी द्वारा गाई गई मूल रामायण की चौपाइयों के आधार पर भी हम इस कथा को समझने का प्रयास करेंगे। काक ने कहा।

# मूल रामायण 01

प्रथमहि अति अनुराग भवानी,राम चरित सर कहेसि बखानी।

गोस्वामी तुलसीदासजी ने चैत्र शुक्ल नवमी मंगलवार को अयोध्या में कथा आरंभ की। नाम रखा -

राम चरित मानस यह नामा,सुनत श्रवण पाइय विश्रामा।

(सतयुग में धर्म परायण सोमदत्त (सौदास) ब्राह्मण थे। शिव पूजा में रत होने से अपने गुरु गौतम का स्वागत खड़े होकर नहीं करने से रूष्ट शंकरजी ने उसे राक्षस होने का श्राप दिया। सौदास के निवेदन पर गौतमजी ने कहा कि रामायण की कथा सुनने से तुम्हारा राक्षसत्व जाएगा। यह बारह वर्ष तक ही रहेगा। सौदास राक्षस होकर नर और जीवों का मांस भक्षण करने लगा। एक दिन गर्ग ऋषि को देख खाने दौड़ा पर दूर ही रुक गया। उनकी नाम जाप की शक्ति से पास नहीं जा सका। उसके निवेदन पर मुनि ने रामायण की कथा कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा से नवमी तक सुनाई।-

**कथा श्रवण मात्रेण राक्षसत्वमपाकृतम्।**
**विसृज्य राक्षसं भावमभवद् देवतोपमः।।**
**इससे उसकी प्रेत योनि से मुक्ति हो गई।**

- स्कंद पुराण उत्तरखंड वा.रा.मा.02.67

यह कथा पहले शंकरजी ने अपने मानस में रच रखी थी जो शुभ समय पर, पार्वतीजी को सुनाई।

(गंगा तटपर वाल्मीकिजी के आश्रम में नारदजी द्वारा वाल्मीकिजी को रामायण उपदेश दिया गया। नारदजी ने वाल्मीकिजी से कहा कि द्वापर में सातों द्वीपों के महाराज चंद्रवंशी सुमति और उनकी भार्या सत्यवती अत्यंत धार्मिक थे। भोजन और जल दान में सदैव तत्पर रहते। नित्य रामायण सुनते। एक दिन उनसे मिलने विभांडक मुनि पधारे। दोनों ने स्वागत, अगवानी की। आसन धारकर मुनि ने पूछा कि आप इतने धर्मात्मा हो इसका कारण कहो।

सुमति ने कहा कि पूर्व जन्म में मैं मालती नामक शूद्र था। कुमार्ग, चुगली, धोखा, धर्म, देव द्रोह करता। घर से अपनों ने बाहर कर दिया। मैं घूमता वशिष्ठजी के आश्रम के निकट गया और कुटिया बनाकर रहने लगा। वहां काली नामक कर्कशा स्त्री से ब्याह हुआ। वशिष्ठ आश्रम में रामायण कथा सुनने से हमें उत्तम धाम मिला और फिर इस जन्म में राज्य सुख मिल रहा है।

यह कथा कामधेनु के समान है।)

- वा.रा.मा.03

राम प्रिय होंगे तो कथा प्रिय होगी। नहीं तो जो संतों का साथ नहीं करते, श्रद्धा नहीं है उन्हें कथा पंडाल में बैठते ही उबासी आने लगेगी।

आइए कथा आरंभ करते हैं ।

भरद्वाज मुनि प्रयाग में निवास करते हैं। वहां माघ महीने की मकर संक्रांति को सब ऋषि-मुनि स्नान के लिए आते हैं। एक बार याज्ञवल्क्यजी को बरबस रोककर भारद्वाजजी ने पूछा। राम कौन हैं? एक तो अयोध्या के राजकुमार। एक जिनको

शिवजी सदा जपते हैं। या कोई और। याज्ञवल्क्यजी मुस्काए। बोले मैं आपकी चतुराई समझ गया। आप रामजी के गूढ़ गुण, कथा सुनना चाहते हो। जगत का कल्याण करने हेतु प्रश्न कर रहे हो।–

**सरस्वती भण्डार की, बड़ी अपूरब बात।**
**ज्यों खरचे त्यों त्यों बढ़े, बिन खरचे घट जात।।**

- वृंद कवि

जो भी हो, अब राम कथा सुनो-

**एक बार त्रेतायुग माहीं,शंभु गए कुम्भज ऋषि पाहीं।**

(कुम्भज-अगस्त्यजी)-

संग सती जग जननि भवानी,ऋषि पूजे अखिलेश्वर जानी।

अगस्त्य मुनि ने राम कथा गाई। शिवजी कुछ दिन रुक, विदा मांग, दक्ष कुमारी सतीजी के संग घर को चले। उसी समय अवतारी राम, पिता का वचन पालन कर, वन में गए। शंकरजी मन में विचार कर रहे हैं कि रामजी के दर्शन कैसे हों। रावण द्वारा मनुष्य के हाथों मरण हेतु, विधाता के वचन सिद्ध करने के लिए, प्रभु ने अवतार लिया हैं। वे ही सीता हरण के बाद दुखी हैं और सीताजी को खोजते फिर रहे हैं। शिवजी रामजी के दर्शन कर, पहचान उजागर न करते हुए, मन में बड़े हर्षित हैं। प्रणाम किया -

जय सच्चिदानंद जग पावन,अस कहि चले मनोज नशावन।

(सच्चिदानंद- सत- एक रस, चित- प्रकाश रूप, मनोज- कामदेव, नशावन- नाश करने वाले)

सती को विस्मय हुआ कि जिनको जगत प्रणाम करे वे एक राजकुमार को प्रणाम कर इतने आनंदमग्न। इतने हर्षित। इतने भाव विभोर।

सोचा यह कैसा ब्रह्म-

**ब्रह्म जो व्यापक विरज अज, अकल अनीह अभेद।**
**सोकि देह धरि होय नर, जाहि न जानत वेद।।**

(व्यापक- ब्रह्मांड में व्यापक, विरज- संसार रोग रहित, अज- अजन्मा, अकल- कला रहित, अनीह- इच्छा रहित, अभेद- भेद रहित या जिसका भेद कोई नहीं जानता, सोकि- वह क्यों)-

**यदि ये सर्वज्ञ विष्णु हैं तो, दुख नारी हेतु क्यों करते हैं।**
**सब भांति शक्ति के होते भी, इस दुर्गम पथ पर चलते हैं।।**
**लेकिन प्रभु ने यदि नमन किया, कुछ बात निराली होगी ही।**
**हो सकता है परमेश्वर हो, जिनको झुकते हैं जोगी जी।।**

- कमल

असमंजस,भारी असमंजस। शिव जान गए। बोले सती, यह उचित नहीं। शंका मत करो। ये वही मेरे इष्ट परमात्मा राम हैं जिनकी कथा हम सुनकर आये हैं। जिनका मुनि ध्यान धरते हैं। लेकिन शिवजी के कई बार कहने, समझाने पर भी उपदेश न लगा। तो भोले बोले कि तुम्हारे मन में फिर भी संदेह हो तो जाकर परीक्षा ले लो।

मैं तुम्हारे आने तक वट की छाया में बैठा हूं।

शिवजी परिणाम जानगए थे इसीलिए कहा कि जब तक तुम मेरे पास (दूसरा जन्म लेकर) नहीं आती तबतक वट छांव में बैठा हूं। समाधि में।

जैसे तुम्हारा मोह मिटे सोई करो। सोचा मेरे कहे पर विश्वास नहीं तो इसका कल्याण नहीं।

यहां बैठे, सुन रहे, देख रहे, पढ़ रहे सभी शंकरों की भी यही व्यथा है। किसी की सती को अपने शंकर पर विश्वास नहीं। तभी तो-

होइहैं सोई जो राम रचि राखा,को करि तर्क बढ़ावै साखा।

(बढ़ावै साखा- बात को बढ़ावे)

पूज्य पिताजी का एक दृष्टांत है-

एक घर में मेहमान आए। बहुत दिन रुके। आवभगत करवाई। जाने का नाम ही न ले। मेहमान कैसे जावे तो दंपति ने लड़ने का झूठा नाटक किया। लड़ाई इतनी बढ़ी कि मेहमान जाने के लिए तैयार हुआ। उसके बाहर जाते ही दोनों ने प्रसन्न होकर झगड़ा समाप्त किया। पति बोला, देख भाग्यवान मैं तुझसे कहां नाराज था। वोतो झूठमूठ की नाराजी थी। पत्नी ने कहा ए जी,मैं भी तो झूठमूठ की ही रूठी थी। तभी द्वार से मेहमान से आवाज आई क्यों जी,मैं भी तो झूठमूठ का ही गया था।

पर यहां सती ने बात बढ़ा दी। सतीजी सीताजी का रूप धरकर, रामजी के सामने गई। लक्ष्मण ने देखा और सोच में पड़ गए। पहले अवतार में तो बड़ा श्रम करना पड़ा था। (प्रत्येक कल्प के त्रेतायुग में राम अवतार होता है) पुल बनाया था। शक्ति लगी थी। रावण मारा था। अब तो जल्दी ही मिल गई। किंतु रामजी सतीजी का कपट जान गए। क्यों-

सुमिरत जाहि मिटै अज्ञाना, सोई सर्वज्ञ राम भगवाना।

हंस कर, हाथ जोड़, पिता सहित नाम लेकर बोले-

कहेउ बहोरि कहां वृषकेतू,विपिन अकेलि फिरहु केहि हेतू।

(वृषकेतू- धर्म की पताका "पति के वचनों का पालन ही नारी का धर्म भी है।")

बस इतना ही सुना कि सती को बहुत संकोच हुआ। पानी पानी हो गई। काटो तो खून नहीं।

शिवजी के पास चली। सोचा उनकी बात न मानी। अब क्या कहूंगी। रामजी ने जाना कि सती को दुख हुआ है तो और प्रभाव दिखाया। सती मुड़ी तो आगे सीता सहित राम लक्ष्मण देखे। पीछे भी। फिर तो जहां देखे वहां सिद्ध, मुनि, अमित विष्णु ब्रह्मा, सरस्वती, लक्ष्मी को प्रभू की सेवा करते पाया। लेकिन राम स्वरूप अकेला देखा। हृदय कांपा। सुधि भूली। चकराई।

नेत्र बंद करके बैठ गई। जब नेत्र खोले तो कुछ नहीं। कोई नहीं। रामजी को मन ही मन प्रणाम कर शिवजी के पास आई।

उन्होंने पूछा ले ली परीक्षा? तो छुपा गई। बोली, आपकी बात मिथ्या थोड़े ही हे। बस आपकी भांति प्रणाम करके चली आई। शंकरजी ने ध्यान लगाकर देखा। रामजी की माया को प्रणाम किया। मन में विचार किया कि प्रभु की जैसी इच्छा-

**सती कीन्ह सीता कर वेशा, शिव उर भयउ विषाद विशेषा।**
**जो अब करउं सती सन प्रीती, मिटै भक्तिपथ होय अनीती।**

छोड़ी न जावे। प्रेम करने में पाप लगे। हृदय में दाह हुआ। रामजी का स्मरण किया तो मन में महान संकल्प जागा-

इहि तनु सतिहिं भेंट मोहिं नाहीं,शिव संकल्प कीन्ह मन माहीं।

संकल्प लेकर चले। आकाशवाणी हुई।

"आपकी जय हो। जय हो। जय हो। आपके बिना ऐसा प्रण कौन कर सकता है। आप समर्थ राम भक्त हो।" आकाशवाणी सुनकर सती ने अनेक बार पूछा पर शिवजी ने कुछ नहीं कहा।

बाबा कहते हैं-

**जल पय सरिस बिकाय, देखहुं प्रीति कि रीति भली।**
**बिलग होय रस जाय, कपट खटाई परत ही।।**

(दूध में जल मिलने पर दूध ने अपना रूप, गुण सब अपने मित्र जल को दे दिया। दूध तपाया जाने लगा तो मित्र को तापित देख जल ने स्वयं को अग्नि में पहले होम दिया। दूध भी आग में जाने लगा तो मित्र 'पानी के छींटे' को आया जान, ठंडा होगया। सद्पुरुषों की मैत्री एसी ही होती है। निष्कपट।)

सती को चिंतित देखकर कथा कहने लगे। कैलाश पर पहुंचकर कमलासन में बैठे और समाधि लग गई। सती अपनी करनी पर बहुत सोच करती है-

जो प्रभु दीन दयालु कहावा,आरति हरण वेद यश गावा।

यहां तक सोचा कि अब मैं विनती करती हूं कि मेरा यह शरीर जल्दी ही छूट जाए। पर अपने कहने और सोचने से, जल्दी ही सब कुछ कहां होता है। देवों का भी यही हाल है। उन्हें भी प्रतीक्षा करनी पड़ी। लंबी। बहुत लंबी प्रतीक्षा।

सत्तासी हजार वर्ष बीते तब शंभु समाधि से जागे। राम नाम स्मरण किया। सती ने प्रणाम किया तो शिवजी ने सामने बैठने को आसन दिया। नारायण की कथा कहने लगे।

उस समय, सती के पिता दक्ष, प्रजापति हुए। होते ही फूल गए। आप और हम भी, कई दक्षों को जानते हैं जो प्रजापति होते ही फूल जाते हैं। भूल जाते हैं। भैया अधिकार पाकर-

नहिं कोउ अस जनमा जग माहीं,प्रभुता पाय जाहि मद नाहीं।

दक्ष प्रजापति ने फूल कर, इन्हें भूल कर, एक यज्ञ किया। ब्रह्मा, विष्णु, महेश को छोड़ सब को

आमंत्रित किया। आकाश में विमान देखकर संकोच करती सती शिवजी से बोली-

पिता भवन उत्सव परम,जो प्रभु आयसु होय।

तौ मैं जाऊं कृपायतन,सादर देखन सोय।।

शिवजी ने समझाया कि दक्षजी ने अपनी सभी बेटियों को बुलाया है। मुझसे वैर के कारण आपको भुला दिया है। ब्रह्म सभा में वे हमसे रूष्ट हुए थे। हां-

**यदपि मित्र प्रभु गुरु पितु गेहा, जइये बिन बोले न संदेहा।**
**तदपि विरोध मान जहं कोई, तहां गए कल्याण न होई।**

फिर भी सती नहीं मानी। सतियाँ कहां मानती है। शिवजी ने कुछ गण साथ कर, विदा किया।पिता के भवन में जब भवानी गई तो दक्ष के त्रास से किसी ने सम्मान नहीं किया। मां तो आदर पूर्वक मिली पर बहने जरा ज्यादा ही प्रसन्न होकर मिली। दक्ष ने तो कुशल भी नहीं पूछी। सती ने यज्ञस्थल में शंभु का भाग नहीं देखा। पिछला दुख भूल गई। मां के समझाने पर भी, क्रोधित होकर, सकल सभासदों को संबोधित कर बोली-

**सुनहुं सभासद सकल मुनिंदा,कही सुनी जिन शंकर निंदा।**
**सो फल तुरत लहब सब काहू,भली भांति पछिताब पिताहू।**

जो जगदात्मा शंकर और भगवान की निंदा करे और सुनने वाला समर्थ हो तो जीभ काट ले और असमर्थ हो तो कान बंदकर वह स्थान छोड़ दे।शंकरजी जगत को पैदा करने वाले हैं। जग की आत्मा हैं-

पिता मंदमति निंदत तेही,दक्ष शुक्र संभव यह देही।

संकल्प किया -

**तजिहौं तुरत देह तेहि हेतू, उर धरि चंद्रमौलि वृषकेतू।**
**असकहि योग अग्नि तनु जारा, भयउ सकल मख हाहाकारा।**

साथ आए शिवगणों ने यज्ञ विध्वंस किया। भृगु ने मंत्र द्वारा एक राक्षसी उत्पन्न की जिसने शिवगणों को मार भगाया। नारद से यह समाचार पाकर, शिवजी ने कोप कर, वीरभद्र पठाये। (ये ज्वर रूप से जगत विख्यात हैं) वीरभद्र ने यज्ञ विध्वंस किया। सबको दंड दिया।

सती ने मरते समय, श्रीहरि से, जनम जनम शिव पद में अनुराग का वर मांगा। इसीलिए (योग अग्नि वाला जन्म नहीं पाता या अग्नि से जली इसलिए शीतलता के लिए हिमालय के घर गई) हिमवान (हिमालय का अर्थ उनकी ईश्वरी शक्ति से है। प्रत्येक नदी पर्वत में कामरूपधारी देवता वास करते हैं।) के घर पार्वती रूप में प्रकट हुई।

*हिमवान और मैना के घर दो उत्तम कन्याओं गंगा और उमा ने जन्म लिया। देवताओं ने देव कार्य की सिद्धि के लिए गंगा को मांगा जो त्रिपथगा के रूप में त्रिभुवन का हित करती है।

- विश्वामित्रजी,वा.रा.बा.35

अब तो-

जबते उमा शैल गृह आई,सकल सिद्धि संपति तहं छाई।

नाना फल, फूल, मणियां प्रकटी। नदियां सदावाही हुई। पशु-पक्षी वृंद, वैर तजकर सुखी हुए। गिरिजा के घर आने से पर्वत ऐसा शोभायमान हुआ जैसे नर, रामभक्ति को पाकर होता है।

समाचार पाकर नारद आए। नारी सहित हिमवंत ने आदर किया। बेटी चरण में धरी। पूछा इसके गुण दोष कहो। मुनि ने कहा कि यह सब गुणों की खान है। उमा, अंबिका, भवानी नाम होंगे। सहज सुंदर होगी। सुलक्षणा। पति को प्यारी और-

सदा अचल यहिकर अहिवाता,इहिते यश पैहहिं पितु माता।

यह जगत पूज्य होगी। पतिव्रताएं इसके नाम से भव से पार होंगी। इस सुलक्षणी के कुछ अवगुण भी सुनों-

**अगुण अमान मातु पितु हीना, उदासीन सब संशय छीना।**
**योगी जटिल अकाम मन, नगन अमंगल वेश।**

अस स्वामी इहिको मिलहि,परी हस्त अस रेख।।(योगी- अपने स्वरूप को योग (राम) में मिलाने वाला, जटिल- जटाधारी, अनादि काल से जिसकी जटा बढ़ी हो, जिसे समझना जरा कठिन है, अकाम- कामना हीन, नगन- न गण, जिसे किसी का संग नहीं, अमंगल- अतिशय मंगल)

मातापिता के नेत्रों में दुःख और पार्वती के सुख के अश्रु छलके। यह भेद नारदजी भी न समझ सके। शिव पद में अनुराग जागा। मिले कैसे यह चिंता हुई। नारदजी का कहा मिथ्या भी नहीं होता। राजा ने पूछा कि उपाय कहो तो नारदजी बोले राजाजी, विधाता ने जो भाग्य में लिख दिया है उसे कोई नहीं मिटा सकता। हां एक उपाय है। जो मैने वर के दोष कहे वे सब शिवजी में गुण रूप में हैं-

**जो अहि सेज शयन हरि करहीं, बुध तिनकहं कछु दोष न धरहीं।**
**भानु क्रशानु सर्व रस खाहीं, तिनकहं मंद कहत कोउ नाहीं।**
**शुभ अरु अशुभ सलिल सब बहहीं,सुरसरि कोउ न अपावन कहहीं।**
**समरथ को नहिं दोष गुसाईं, रवि पावक सुरसरि की नाईं।**

लेकिन ईर्ष्या वश, जड़ बुद्धि के कारण, कोई मनुष्य ऐसा करे तो कल्प भर नर्क में वास करता है। इसलिए अगर कुमारी तप करे तो भावी को मेटने वाले त्रिपुरारी अवश्य मिलेंगे। यह कह नारदजी ने ब्रह्मलोक गमन किया।

मैना ने हिमवान से पूछा कि मुझे कुछ समझ नहीं आया। आप तो अच्छा घर, वर देखकर बेटी ब्याहो। नहीं तो भले कुमारी कुमारी रहे।

राजा बोले बावरी। चंद्रमा भले ही अग्नि बरसा दे पर नारदजी का वचन अन्यथा नहीं होता। शोक तज। जिसने उसे बनाया वही कल्याण करेगा।

मां उमा के पास गई,गोद में बिठाया। पार्वतीजी ने स्वप्न सुनाकर तप का महत्व कह, तप करने की आज्ञा ली। कुलजन को दुखी देख, वेदशिरा मुनि ने समझाया। उमा, देह का भान भूल, तप में लीन हुई।–

**संवत सहस मूल फल खाए, शाक खाय शत वर्ष गवाए।**
**कछु दिन भोजन वारि बतासा, किए कठिन कछु दिन उपवासा।**

(बतासा-पवन)-

**बेल पात महि परे सुखाई, तीनि सहस संवत सोइ खाई।**

(तीनि सहस संवत-तीन हजार वर्ष)

फिर पत्ते भी तजे तो अपर्णा नाम हुआ। आकाशवाणी हुई।

"तुम्हारा मनोरथ पूर्ण हुआ। कठिन तप किया है। शिवजी मिलेंगे। हठ मत करना। पिता के साथ घर जाना। सप्तऋषि मिले तो वाणी का प्रमाण जान लेना।"

(सप्तऋषि- कश्यप, अत्रि, वसिष्ठ, विश्वामित्र, भरद्वाज, जमदग्नि और गौतम)

उमा प्रसन्न हुई।

अब शुभ शंभु चरित कहता हूं। सुनो- शिव जी वैराग्य धर, राम नाम जपते, पृथ्वी में विचरते (कैलास पर सती का स्मरण होता इसलिए)। तभी रामजी प्रकटे। शिवजी के नियम की सराहना कर, पार्वती का जन्म कहा। रामजी बोले-

**अब विनती मम सुनहुं शिव, जो मोपर निज नेह।**
**जाय विवाहहु शैलजहिं, यह मोहिं मांगे देहु।।**

शिवजी बोले प्रभु आप मांगे, आप विनती करें, यह उचित नहीं। फिर भी आपका आदेश शिरोधार्य। यही मेरा परम धर्म है। आप सब भांति हमारे हितकारी हो-

मात पिता अरु गुरु के बानी,बिनहिं विचार करिय शुभ जानी।

रामजी संतुष्ट हुए। सप्तऋषि आए तो शिवजी बोले, जाकर पार्वती के प्रेम की परीक्षा लो।

पार्वतीजी के पास जाकर ऋषियों ने पूछा कि किस हेतु इतना कठिन तप करती हो। बोली आप मेरी मूर्खता पर हँसोगे -

मन हठ परा न सुनै सिखावा,चहत वारि पर भीति उठावा।

(वारि- पानी)

नारदजी के वचन सत्य मानकर, विकार रहित शंकरजी को पति रूप में पाना चाहती हूं। मेरा अविवेक तो देखो।

ऋषि हंसे। बोले, सच में तुम पर्वत (जड़ बुद्धि) की पुत्री हो। अरे नारदजी के कहने पर किसका घर बसा। दक्ष, चित्रकेतु, हिरन्यकश्यपु की दशा देखो। शंकरजी तो -

निर्गुण निलज कुवेष कपाली,अकुल अगेह दिगंबर व्याली।

(व्याली- सर्पों के गहने)
आप भी उस ठग (नारदजी) से ठगी गई।

सतीजी शंकरजी से ब्याही और मरवा दी। अब-

**अब सुख सोवत सोच नहिं, भीख मांगि भव खाहिं।**
**सहज एकाकिन के भवन, कबहुँ कि नारि खटाहिं।।**

उसे छोड़ो। हम विष्णु से ब्याह करवा देते हैं।

पार्वतीजी बोली, आपने सच कहा। मेरी पर्वत (दृढ़) से बनी देह है। अब तो शरीर छूटे पर हठ न छूटे। पर्वत से निकला सोना या तिनका,जलने पर भी अपना स्वभाव नहीं तजता। नारदजी के वचन न छोडूंगी। घर बसे या नहीं-

गुरु के वचन प्रतीति न जेही,सपनेहु सुगम न सुख सीधि तेही।

महादेव अवगुण भवन,विष्णु सकल गुण धाम।जेहिकर मन रम जाहिसन,ताहि ताहिसन काम।।

अरे -

**नीको हू फिको लगे, जो जाके नहिं काज।**
**फल आहारी जीव के, कौन काम को नाज।।**
**-पैतृक संपदा।–**
**पहले मिलते गर मुनि राई, तो सीख आपकी गुन लेती।**
**जो भी लायक वर बतलाते, उनमें से सुंदर चुन लेती।।**
**अब हार गई हूं यह जीवन, शंकर पर मैंने वारा है।**
**या तो उनसे हो ब्याह न तो, कटजाए निपट कुंवारा है।।**
**गर मन न मानता हो ऋषिगण, ठानी हो ब्याह कराने की।**
**तो वर कन्याएं अनगिन जग में,पालो कुछ फिकर जमाने की।।**

**- कमल**

मेरी तो-
जन्म कोटि लगि रगर हमारी,बरऊं शंभु नतु रहऊं कुमारी।

अब तो शिवजी भी कहे तो न मानूंगी।

ऋषियों ने प्रणाम किया। उनकी निष्ठा की प्रशंसा की ओर हिमवान को भेजकर पार्वती को घर बुलाया। ऋषियों ने जाकर शिवजी को कथा कही जिसे सुन शंकरजी मगन हुए। मन थिरकर राम भजने लगे। यह है आनंद, उत्साह प्रकट करने का सही तरीका। वरना अच्छे समाचार मिलने पर हम पिक्चर जाते हैं, पार्टी करते हैं।

उसी समय तारकासुर ने लोक लोकपति जीते। ब्रह्माजी ने कहा, यह शिव पुत्र के हाथों ही मरेगा। कामदेव को भेजो। शिवजी को जगाओ।

देवों ने कहा पहले काम मरेगा। प्रार्थना की। कामदेव (प्रद्युम्नो मीनकेतनः इत्यमरः) प्रकटे। देवों को स्वार्थी जानकर हंसे। परहित में देह तजो तो लोक बढ़ाई मिले यह सोचकर चले। पुष्पबाण लिया और प्रभाव दिखाया। शास्त्र मर्यादा मिटी। आठों ब्रह्मचर्य जाते रहे।

(स्मरणं कीर्तनं केलि प्रेक्षणं गुह्य भाषणं । संकल्पो अध्यवसायश्च क्रिया निवृतिरेवच ।। आठों मैथुन जागे (स्मरण, कीर्तन, विहार, देखना, एकांतवार्ता, संकल्प, ध्यान, क्रियासिद्धि)। ज्ञान भागा। सब कामवश। एक माथ वाले तो थे ही अब दो माथ का कोन हुआ जिस हेतु यह जागा। बाबा कहते हैं-

**सबके हृदय मदन अभिलाखा, लता निहारि नवहिं तरु शाखा।**
**नदी उमंगि अंबुधि कहं धाई, संगम करहिं तलाव तलाई।**
**(अंबुधि- सागर)**

जब जड़ की यह दशा तो चेतन की कौन कहे। सब मदन अंध। सिद्ध, विरक्त भी। पामरों की कौन कहे-

**धरा न काहू धीर, सबके मन मनसिज हरे।**
**जेहि राखे रघुवीर,ते उबरे तेहि काल महं।।**

यह कौतुक, घड़ी भर दिन से, घड़ी भर रात, दो घड़ी तक हुआ।

शिवजी को देख काम डरा। वापिस भी नहीं हो सकता। मरण जानकर माया रची। वसन्त छाया।जहां तहां अनुराग जागा। अब तो मरणासन्न में भी काम भाव जगा। कमल खिले, भंवरे गान करने लगे। तोते रसीले बोल बोले।

ये सब प्रयास कर मदन हारा। कोप कर आम पर चढ़, पांच पुष्पबाण शंकरजी को मारे। हृदय में लगते ही शंभु जागे। आम पात के मध्य काम को देख, तीसरा नेत्र खोला और जब तक देवता कहे कि प्रभु क्रोध शांत करो तब तक काम स्वाहा -

हाहाकार भयउ जग भारी,डरपे सुर भए असुर सुखारी।

भोगी चिंतित, योगी निर्भय हुए। रति रोती रोती आई। शिवजी बोले-

**अब ते रति तव नाथ कर, होइहिं नाम अनंग।**
**बिनु वपु व्यापहिं सबहिं पुनि, सुनु निज मिलन प्रसंग।।**
**जब यदुबंस कृष्ण अवतारा, होइहिं हरण महा महि भारा।**
**कृष्ण तनय होइहिं पति तोरा, वचन अन्यथा होइ न मोरा।**

शिवजी के जागने का समाचार पाकर, सब देवता उनके पास गए। शिवजी ने पूछा अमर कैसे आए। बोले, आपका ब्याह देखने की लालसा है। पार्वतीजी के तप को सिद्ध करो। शिवजी ने सोचा, समाधि से जगाकर कौन ब्याह करवाता है भाई। उठने तक प्रतीक्षा कर लेते। परंतु चलो ऐसा ही होगा कहा तो दुंदुभी नाद हुआ।

ब्रह्माजी ने सप्तऋषि को गिरि भवन भेजा। पार्वतीजी के पास जाकर बोले, लो सुनो, शिवजी ने काम दाह कर दिया। उमाजी बोली, तो क्या अब तक विकारी थे। काम जरा नहीं। अग्नि के निकट शीत जावेगी तो नष्ट होजावेगी।

ऋषियों ने हिमालय के पास जाकर, सब सुनाकर, उचित लग्न देखा। लग्न पत्रिका ऋषियों के हाथों ब्रह्माजी को दी। ब्रह्माजी ने लग्न सबको सुनाए। सब प्रसन्न। अब तो-

लगे संवारन सकल सुर,वाहन विविध विमान।होहिं शकुन मंगल सुभग,करहिं अप्सरा गान।।

दूल्हे को सजाने लगे-

**शिवहिं शंभुगण करहिं सिंगारा, जटा मुकुट अहिमौर संवारा।**

**कुण्डल कंकण पहिरे ब्याला, तन विभूति पट केहरि छाला।**

(व्याला-सर्प)

**शशि ललाट सुंदर शिर गंगा, नयन तीन उपवीत भुजंगा।**
**गरल कंठ उर नर शिर माला,अशिव वेश शिव धाम कृपाला।**
**कर त्रिशूल अरु डमरु विराजा,चले बसह चढ़ि बाजहिं बाजा।**

ऐसा श्रृंगार क्यों? अरे नारदजी का वचन जो सिद्ध किया है।

देवियां सब जगह एक सी है। यहां भी दूल्हे को देख, देव पत्नियां मुस्काई और बोली, "इनके योग्य दुल्हनियां कहीं नहीं है।"

सब अपने अपने वाहनों पर चले। विष्णुजी बोले, "बारात दूल्हे के अनुरूप नहीं है। सब अपने अपने समाज के साथ चलो।" लो यही कमी थी। शिवजी मुस्काए। सोचा हरि के व्यंग नहीं रुकते।

शिवजी ने भृंगी द्वारा, अपने गणों को बुलाया। सब आगये। शिवजी उन्हें देखकर मुस्काए।

कैसे हैं शिवजी के बाराती-

**कोउ मुखहीन विपुल मुख काहू, बिनु पद कर कोउ बहु पद बाहू।**
**विपुल नयन कोउ नयन विहीना, हृष्टपुष्ट कोउ अति तनु छीना।**

तीखे गहने, हाथ में खोपड़ी, उसमे रुधिर भरा। खर, कूकर और शूकर मुखी। नाचते गाते परम तरंगी भूत गण। अब तो-

**जस दूलह तस बनी बराता, कौतुक विविध होहिं मग जाता।**

यहां हिमालय ने सभी शैल सरिताओं को आमंत्रित किया। इच्छानुरुप धर सब आए। यथोचित आवास दिया। पुर शोभायमान था। क्यों न हो-

**जगदम्बा जहं अवतरी, सो पुर वरणि न जाय।**
**रिद्धिसिद्धि संपति सकल, नितनूतन अधिकाय।।**

सब बारात का स्वागत करने चले। नारायण को देख प्रसन्न हुए। वाह क्या दुल्हा है। कुछ बोले, यह नहीं, दुल्हा अभी पीछे है। इनसे भी सुंदर? वाह। कैसा अनुपम होगा। फिर शिव समाज देखा तो सब डरे और वाहन के हाथी घोड़े तो चमक कर भाग ही चले। चतुर ठहरे। दूल्हे को देखकर बालक डरकर भागे भागे घर गए। माता पिता पूछे क्या हुआ तो बोले। यह यम की सेना है या बारात। अरे -

**बर बौराह बसह** असवारा,व्याल कपाल विभूषण छारा।

(बौराह- बावला, बसह- बेल, छारा- भभूती, विभूति)-

**तनु छार व्याल कपाल भूषण, नगन जटिल भयंकरा।**
**संग भूत प्रेत पिशाच योगिनि विकट मुख रजनीचरा।**
**जो जियत बरात देखत, पुण्य बड़ तिनकर सही।**
**देखहिं सो उमा विवाह घर घर, बात अस लरिकन कही।**

(कपाल- खोपड़ी, नगन- दिगंबर, जटिल- जटाधारी, भयंकरा- डरावनी सूरत, विकट- टेड़े)

माता पिता ने समझाया।

शिवजी जनवासे आए। मैना सखियों के संग आरती करने के लिए कंचन थाल लेकर आई। दूल्हे को देख, डरकर अबलाएं भागी। मैना मन में दुखी हुई। पार्वती को गोद में बिठाया। नेत्र भर आए। बोली-

जेहि विधि तुमहिं रूप अस दीन्हा,तेहि जड़ वर बाउर कस कीन्हा।

(जड़- मूर्ख, जगत का मूल)

कल्पवृक्ष पर लगने वाला फल, बबूर में लगाया। मैं तो-

**तुम सहित गिरितें गिरों पावक जरों जलनिधि महं परौं।**
**घर जाउ अपयश होउ जग जीवत विवाह न हों करों।।**

मैना की दशा देखकर, सब अबलाए विलाप करती हैं। मैना बोली -
नारद कर मैं काह बिगारा,भवन मोर जिन बसत उजारा।
(बसत- बसाबसाया, बसने वाला)-

**सांचेहु उनके मोह न माया, उदासीन धन धाम न जाया।**
**पर घर घालक लाज न भीरा, बांझ कि जान प्रसव की पीरा।**

(घालक- बिगाड़ने वाले, भीरा- डर)
मां को विकल देख जगत जननी बोली। मां विधाता का लिखा तो होगा ही। इसलिए सोचो मत। जब देवों की यह दशा तो हम किस खेत की मूली। भाग्य में बावला है तो किसे दोष दें। जो है सो स्वीकारो। कौन मदद करे। उमाजी बोली, मां-

**तुम सन मिटहिं कि विधि के अंका, मातु व्यर्थ जनि लेहु कलंका।**
**भाग्य में सुख दुख जो लिखा है, जहां जायेंगे पाएंगे।**

नारदजी और सप्तऋषि आए। पार्वतीजी के पूर्वजन्म की कथा कही। कौन हैं पार्वती-

अजा अनादि शक्ति अविनाशिनि,सदा शंभु अर्धांग निवासिनि।

स्वेच्छा स्वरूप धारिणी, जग उत्पत्ति, स्थिति, संहार कारिणी है-

**सुनि नारद के वचन तब, सब कर मिटा विषाद।**
**क्षणमह व्यापेहु सकल पुर, घर घर यह संवाद।।**

फिर तो आनन्द छागया। मैना हिमवान ने पार्वतीजी के चरण पूजे। जेवनार हुई। अनुपम, अवर्णनीय सूपशास्त्र (पाक कला)। देवियां गारी (गाली) गाने लगी। सब आनंदित हुए। पान खाकर विश्राम करने गए। लग्न समय, सब को उचित आसन दिया। वेद विधि से वेदी रची और-

बैठे शिव विप्रन शिर नाई,हृदय सुमिरि निज प्रभु रघुराई।

पार्वतीजी को सखियां मंडप में लाई। देखते ही सुर मोहित हो गए। प्रणाम किया। बैठी। गणपति पूजे (देव अनादि है)। शंकरजी ने पाणिग्रहण किया। सब हर्षित हुए। हिमवान ने यथोचित दहेज दिया। शिवजी के चरण पकड़े। कहा, उमा हमारी प्राण प्रिय है। किंकरी बनाना। अपराध क्षमा करना। मां ने पार्वतीजी को अपनी गोद में बिठाकर समझाया-

करेहु सदा शंकर पद पूजा,नारि धर्म पति देव न दूजा।

अपनी पीड़ा भी कही-

कत विधि सृजी नारि जग माहीं,पराधीन सपनेहु सुख नाहीं।

(यह प्रेम के वचन हैं। पुत्री के विरह के भाव हैं।)

उमा सबसे मिली। मां से लिपट कर मिली। पलट कर मां को देखती हैं। सखियां, शिवजी के पास लेगई। सब अमर प्रसन्न हुए। हिमवान ने शिवजी और सभी शैल, सरित, सर को विदा किया।

कैलाश पर पहुंचकर सभी देव विदा हुए। उमा और शिवजी आनंद से रहे। समय पाकर कार्तिकेय का जन्म हुआ जिन्होंने तारकासुर मारा।

*शिवजी के स्खलित तेज से स्कंद का जन्म हुआ। छहों कृत्तिकाओं का दूध पीने से वे षड्मुख कार्तिकेय कहलाए। उन्होंने दैत्यों का वध किया। उन्हें देवों का सेनापति नियुक्त किया गया।

- वा.रा.बा.37

बाबा कहते हैं कि शिव विवाह का प्रसंग जो गायेंगे वे सदा सुख पावेंगे।

शंभु का चरित सुनकर भरद्वाजजी को सुख हुआ। कथा पर प्रीति बढ़ी। याज्ञवल्क्य बोले, आप धन्य हैं। जिनको शिव पद में अनुराग नहीं वे रामजी को प्रिय नहीं। यह तो भूमिका थी। अब आपकी रुचि देखकर, रामकथा कहता हूं।

एक बार कैलास पर शंभु, वट तले बैठे थे। पार्वतीजी आई। शंकरजी ने वाम भाग में बैठाया। प्रसन्न होगई। प्रशंसा करके बोली, अब राम कथा कहो। सब राम के गुण गाते है। आप रात दिन जपते हो। ये अयोध्या के कुमार हैं या अजन्मा ईश हैं। क्योंकि-

**जो नृप तनय तो ब्रह्म किमि, नारिविरह मति भोरि।**
**देखि चरित महिमा सुनत, भ्रमत बुद्धि अति मोरि।।**

फिर पूर्वजन्म प्रसंग स्मरण कर डरी भी। बोली, नाराज मत होना। जिस तरह मेरा मोह मिटे वह करो। मैंने वन में, रामजी की प्रभुता देखी फिर भी बोध न आया। उसका फल पाया। आपने बहुत समझाया पर बोध न आया। अरे-

**हो भक्त भगीरथ पर प्रसन्न, तत्क्षण उसको गंगा दी थी।**
**प्रभु कह देंगे उसने बरसों, अत्यंत तपश्चर्या की थी।।**
**तो मैंने भी की देह भस्म, मेरी इस बलि पर ध्यान करें।**
**श्री राम कथा रूपी गंगा, अब मेरे लिए प्रदान करें।।**

**-राधेश्याम रामायण**

अब वैसी स्थिति नहीं है। अब राम कथा पर सांची प्रीति है। इसलिए -

**वंदऊं पद धर धरणि शिर, विनय करऊं कर जोरि।**
**वर्णहुं रघुवर विषद यश, श्रुति सिद्धांत निचोरि।।**

तेरह प्रश्न पूछे-

01 - निर्गुण ब्रह्म ने सगुण रूप क्यों धारण किया?

02 - राम अवतार कहो।

03 - बाल चरित्र कहो।

04 - जानकी से विवाह कैसे हुआ?

05 - राज्य क्यों तजा,क्या दोष था?

06 - वन के चरित्र कहो।

07 - रावण को कैसे मारा?

08 - राज्य कैसे किया?

09 - प्रजा सहित निजधाम जाने का अचरज कैसे किया?

10 - वह तत्व कहो जिसमे मुनि मग्न रहते हैं।

11 - भक्ति, ज्ञान, विज्ञान, वैराग्य और मोक्ष संबंधी ज्ञान, प्रथक प्रथक कहो।

12 - रामजी के गुप्त चरित्र **कहो**।

13 - जो नहीं पूछा वह भी कहो।

उमा के प्रश्न सुनकर शिवजी हर्षित हुए। राम चरित्र स्मरण कर पुलकित हुए। दो घड़ी ध्यान कर फिर वर्णन करने लगे-

झूठउ सत्य जाहि बिनु जाने,जिमि भुजंग बिनु रजु पहिचाने।

(झूठउ- झूठा संसार, सत्य- सत्य लगता है, जाहि- जिसको, भुजंग- सर्प, रजु- रस्सी)-

जेहि जाने जग जाय हिराई,जागे यथा स्वप्न भ्रम जाई।

(हिराई- मिथ्या प्रतीत होना)-

मंगल भवन अमंगल हारी,द्रवौ सो दशरथ अजिर बिहारी।

(द्रवौ- कृपा करे, द्रवित होवें, सो- वो, अजिर- आंगन, बिहारी- विहार करने, खेलने वाले)

रामजी को प्रणाम कर अमृतमई वाणी बोले

उमा, तुम धन्य हो। तुम जैसा कोई उपकारी नहीं है। तुमने जगत कल्याण हेतु, रघुपति कथा प्रसंग पूछा है। रामजी की कृपा से तुम्हारे मन में शोक, मोह, संदेहादि कुछ नहीं। जिन्होंने हरि कथा न सुनी उनके कान सर्प के भट्ठों जैसे हैं। जिसने संत दरशन न किए वे नेत्र मोर पंख जैसे हैं। जो हरि और गुरु को न नमा वह मस्तक तुम्बे जैसा है। हरिभक्ति जिसके हृदय में नहीं आई वो जीवित शव ही है। रामगुण न गावे वह जीभ मेंडक सी है। क्योंकि -

राम कथा सुन्दर करतारी,संशय विहग उड़ावन हारी।

(करतारी- ताली)

मैं अपनी मति अनुरूप कहूंगा पर तुमने जो पूछा कि राम कोई और हैं जिन्हें मुनि ध्याते, वेद गाते हैं ऐसा तो मोहग्रस्त, अधम कहते हैं। निर्गुण सगुण में कोई भेद नहीं। संसारी गुणों से रहित ईश्वर ही, भक्तों के प्रेमवश, सगुण होजाता है। जैसे जल से बर्फ और ओले भिन्न नहीं। राम-

राम सच्चिदानंद दिनेशा,नहिं तहं मोह निशा लवलेशा।

उमा, राम प्रकाश मणि हैं। बादलों से सूर्य छिपा कहने वाले अज्ञानी है। वे तो-

सब कर परम प्रकाशक जोई,राम अनादि अवधपति सोई।

जगत को प्रकाशित करने वाले रामजी, माया के पति ओर गुणों के धाम है। जैसे सपने में सिर कटे तो जागे बिना, दुख दूर न होवे। ऐसे ही संसार से जागे बिना, संसार के व्यवहार सत्य प्रतीत होते हैं। जिनकी कृपा से यह भ्रम मिट जाता है वो राम हैं।

जिनका आदि अंत नहीं वो राम हैं -

**बिनु पद चलै सुनै बिनु काना, कर बिनु कर्म करै विधि नाना।**
**आनन रहित सकल रस भोगी, बिनु वाणी वक्ता बड़ योगी।**

**(आनन- मुख)**

वो राम हैं।

इस भांति वेद जिसे बखानते हैं वो राम है।

जो भक्तहित, दशरथ के पुत्र रूप में अवतरित हुए हैं वो राम हैं।

जिनके प्रताप से, काशी में मरने वालों को मैं मुक्ति देता हूं वो राम हैं।

श्रद्धा से, खेल में, प्रमाद से भी छूने पर, अग्नि जलाता है। वैसे ही जिनका नाम, पाप हरता है वो राम हैं।

फिर जिनका नाम, आदर से लेने वालों की तो बात ही क्या है वो राम है।

राम वही परमात्मा हैं पर तुम्हारी तो शंका की बान (टेव) पड़ी है। यह ज्ञान और वैराग्य को हरती है।

उमा डरी। प्रणाम करके बोली। मेरा संशय दूर हुआ। अब उन परमात्मा ने नर तन कैसे धरा वह कथा कहो। प्रसन्न होकर शिवजी बोले जो काकभुषुण्डी ने कही और गरुड़ ने सुनी वह शुभ राम अवतार कथा सुनो।

प्रभु अवतार बस इसीलिए हुआ, यह कहा नहीं जा सकता। क्योंकि राम अतर्क्य हैं। मैं निज मति अनुरूप उनके अवतार के कारण कहता हूं-

**जब जब होय धर्म की हानी, बढ़हिं असुर अधम अभिमानी।**
**करहिं अनीति जाय नहिं वरणी, सीदहिं विप्र धेनु सुर धरणी।**
**तब तब प्रभु धरि विविध शरीरा, हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा।**

* यद यदा हि धर्मस्य.............गीता।-

**असुर मारि थापहिं सुरन, राखहिं निज श्रुति सेतु।**
**जग विस्तारहिं विशद यश, राम जन्म कर हेतु।।**

(थापहिं- स्थापना करना, श्रुति सेतु- वेद मर्यादा रखना)

उसी यश को गाकर भक्त संसार सागर से तर जाते हैं। -

राम जन्म के हेतु अनेका,परम विचित्र एक ते एका।

एक दो सुनो (07)

1 - हरि के पार्षदों (जय विजय) ने विप्र श्राप (सनकादि) से हिरण्याक्ष (इसका वराह रूप से उद्धार किया। (पृथ्वीं वरायाहंतीति वराह- जो पृथ्वी का, जल से उद्धार करे वह वराह।) और हिरण्यकशिपु जिसका नृसिंह रूप से उद्धार किया।

2 - ये दोनो, दूसरे जन्म में, रावण और कुंभकर्ण हुए। (श्री राम ने मारा)

3 - ये ही तीसरे जन्म में, शिशुपाल और दंतवक्र हुए जिनको द्वापर में श्रीकृष्ण ने मारा।

4- एक कल्प में जलन्धर को मारा।

(जलन्धर को अजित जानकर, विष्णु उसके द्वारे, साधु बनकर बैठे। उसकी स्त्री ने उसका समाचार पूछा। तभी जलन्धर के हाथ पैर शिर आकर गिरे। वृंदा विलाप करने लगी। साधु ने कहा तू तो सती है। इन्हें जोड़ दे। यह जी जावेगा। उसने वैसा ही किया। तन में प्राण आगए। प्रेम से चरण दबाने लगी। पराए पुरुष के स्पर्श से सतीत्व छूटा। शिवजी ने उस राक्षस का उद्धार किया। साधु और कृत्रिम पुरुष अंतर्ध्यान हो गए। वृंदा ने विष्णुजी को श्राप दिया कि तुम स्त्री के वियोग में दुखी होवोगे। मेरा स्वामी तुम्हारी स्त्री हरेगा। विष्णु ने यह छल इसलिए किया कि एक बार जलन्धर, शिव रूप धरकर पार्वती के पास गया। भगवती ने यह भेद जानकर, विष्णु को उसकी स्त्री को छलने की प्रेरणा दी। उसका पति ही रावण हुआ।)

# मूल रामायण 02/1-

पुनि नारद कर मोह अपारा,कहेसि बहुरि रावण अवतारा।

5 - एक बार -

नारद शाप दीन्ह इक बारा,कल्प एक तेहि लगि अवतारा।

पार्वतीजी ने चकित होकर यह प्रसंग पूछा। नारदजी ने हरि को शाप? यह कैसे, कब, कहां? यह कथा विस्तार से कहो।

हंसकर शिवजी ने कहा –

**बोले विहंसि महेश तब, ज्ञानी मूढ़ न कोय।**
**जेहि जस रघुपति करहिं जब, सो तस तेहि क्षण होय।**
**(जेहि जस- जिसको जैसा)**

नारदजी को एक बार, गंगा तटपर, हिमालय की गुफा देखकर, भगवान के चरणों में प्रेम हुआ। दक्ष का दो घड़ी कहीं नहीं ठहरने का श्राप जाता रहा।

(लालजी नाई की हकलाहट और आरती कुंज बिहारी की भांति। मेरे पैतृक ग्राम लटूरी गेहलोत के लालजी बहुत हकलाते थे। स्पष्ट बोल भी नहीं पाते। किंतु जब वे यह स्तुति "आरती कुंज बिहारी की" गाते तो भाषा स्पष्ट हो जाती। हकलाहट गायब हो जाती। प्रभु की लीला। अभी भी बस्ती में इसके प्रत्यक्षदर्शी उपलब्ध हैं।)

नारदजी श्वास को रोककर तप करने बैठे।

तप देखकर इंद्र दुखी हुआ। सोचा ये मेरी अमरावती लेना चाहते हैं। बाबा कहते हैं -

जे कामी लोलुप जग माहीं,कुटिल काक इव सबहि डराहीं।

**सूख हाड़ ले भाग शठ, श्वान निरखि मृगराज।**
**छीन लेइ जनि जानि जड़, तिमि सुरपतिहिं न लाज।।**
**(छीन लेइ जनि- छीन न ले ऐसा)**

इंद्र का प्रेरा कामदेव गया। वसंत फैलाया। निज रूप दिखाया। रंभादिक का नर्तन, गान किया।

कामदेव की कला से मुनि तो व्याकुल नहीं हुए पर काम डरगया-

सीम कि चांपि सकइ कोउ तासू,बड़ रखवार रमापति जासू।

(सीम- मेड़, चांपि- दबा, सकइ- सकता है, तासू- उसकी, जासू- जिसके)

काम हारकर, मुनि के चरण पकड़, देवलोक गया। अपनी करनी और मुनि की सुशीतलता का देवों से बखान किया। सब ने मुनि की प्रशंसा की।

एकबार नारदजी, शंकरजी के पास गए और काम विजय का, अभिमान भरा प्रसंग सुनाया। शिवजी ने विनय कर समझाया कि मुनि जैसे मुझे कहा हे ऐसे विष्णुजी को मत सुनाना। अगर बात निकले भी तो छिपा लेना। पर हरि इच्छा बलवान है। शंकरजी के इतने उपदेश पर भी नारदजी को नहीं सुहाया। क्योंकि-

राम कीन्ह चाहहिं सोइ होई,करई अन्यथा अस नहिं कोई।

(करई अन्यथा- उसके विपरीत करे)

एक बार वीणा बजाते ब्रह्मलोक में, क्षीर सिन्धु में श्रीहरि के पास गए। उन्होंने उठकर स्वागत कर, अपने आसन पर बैठाया। पूछा, बहुत दिनों में आए। तो इन्होंने शिवजी के मना करने पर भी, सब कामविजय चरित्र कह दिया। रामजी की माया बड़ी बलशाली है। जग में ऐसा कौन है जिसे वह मोहित न कर दे।

श्रीहरि ने रूखा मुख कर कहा कि मुनि, काम अज्ञान, अभिमान तो आपके स्मरण मात्र से मिट जाता है। अरे मोह तो उसे होता है जिसके हृदय में ज्ञान और वैराग्य नहीं होता है। आप ब्रह्मचर्य व्रती, मतिधीर हैं। काम आपका क्या बुरा करे।

नारदजी बोले यह सब आपकी कृपा है। भगवान ने देखा, अभिमान का भारी अंकुर जमा है। अब उसे शीघ्र उखाड़ना पड़ेगा। जिसमें मुनि का कल्याण और मेरा कौतुक हो वो शीघ्र करूंगा। नारदजी अभिमान से भरे, श्रीहरि को प्रणाम कर चले।

श्रीहरि ने अपनी माया को प्रेरणा दी। नारदजी के रास्ते में श्रीनिवासपुर से अधिक रम्य, सो योजन का एक नगर बसाया जहां रति और कामदेव के समान लोग रहते थे। वहां शीलनिधि राजा था। हाथी घोड़े सेना सहित सो इंद्र सा ऐश्वर्य। उसकी कन्या विश्वमोहिनी,अत्यंत रूपवान थी जिसके स्वयंवर में अनेक राजा आए हुए थे। कौतुकी नारद, राजा के पास गए। उसने स्वागत किया। कन्या बुलाकर दिखाई और गुण दोष पूछे। कन्या को देखकर-

देखि रुप मुनि विरति बिसारी,बड़ी बार लगि रहे निहारी।

(विरति- वैराग्य)

उसके लक्षण देखकर भी भूल गए। कुछ बताए।(समझना तो यह था कि जो अजर अमर होगा वह इसे वरेगा। पर समझे यह कि जो इसे वरेगा वह अजर अमर होगा) सुलक्षणि बताकर चले। सोचने लगे, अब वही उपाय करूं जिससे यह मेरा वरण करे। क्यों-

जप तप कछु न होय इहि काला,हे विधि मिलइ कवन विधि बाला।

(इहि काला- इस समय, जल्द बाजी में। 'मतलब उस समय जप का फल तत्काल मिलता था'।)

इस समय तो शोभा और विशाल रूप की आवश्यकता है। श्रीहरि से सुंदरता मांगू पर जाने में समय लगेगा। उनसे अधिक मेरा हितू कोन है।वही सहायता करेंगे।

बहुविधि विनय की। भगवान प्रकटे। आर्त भाव से अपनी व्यथा कही। मांगा कि नाथ, अपना रूप मुझे प्रदान करो। यहां तक तो ठीक था पर प्रभु कृपा से एक गलती भी कर दी। जो हमे भी

यदा कदा करते रहना चाहिए। बोले-

जेहि विधि नाथ होइ हित मोरा,करहु सो बेगि दास मैं तोरा।

अपनी माया का बल देख, प्रभु हंसकर बोले। हित ही क्यों, परम हित लो- जेहि विधि होइहिं परम हित,नारद सुनहुं तुम्हार।

सोइ हम करब न आन कछु,वचन न मृशा हमार।।

(परम हित- अभिमान हरण, माया से मुक्ति, काम हरण)-

कुपथ मांगु रूज व्याकुल रोगी,वैद्य न देइ सुनहुं मुनि योगी।

तुम्हारा परम हित, मैने निश्चित किया है। यह कह हरि अंतरहित हुए। मुनि मायावश अज्ञानी हुए। हरि की गूढ़ वाणी समझ नहीं पाए। स्वयंवर भूमि में पहुंचे। वहां अनेक राजा, बनठन कर बैठे थे। मुनि भी मन में यह मानकर बैठे कि मुझे ही वरेगी। पर श्रीहरि ने बंदर का रूप दिया। जो किसी को नहीं दिखाई दिया। सब ने नारद जानकर प्रणाम किया। (राजाओं को नारद, नारदजी को विष्णु और कुमारी को वृद्ध कपि नज़र आए)। वहां दो रुद्रगण भी थे जो विप्र रूप में सब देख रहे थे (जिस दिन से शिवजी की बात नहीं मानी तब से शिवजी ने, निगाह रखने के लिए भेजा था।)। नारदजी के पास बैठ, दोनो बातें करते कि हरि ने नीकी सुंदरता दी है। कुंवरी तो इन्हें देखकर ही रीझेगी। जल जावेगी। मन पराए हाथ होने से, नारदजी उनकी अटपटी वाणी भी समझ न पाए। राजकुमारी ने वही भयंकर रूप देखा-

मरकट बदन भयंकर देही,देखत हृदय क्रोध भा तेही।

हाथ में जयमाला लेकर राजकुमारी, राजाओं को देखती चली पर भूलकर भी नारदजी की ओर नहीं गई। मुनि बारबार ऊपर उचकते। हरगण मुस्काते। तभी नृप तनधर हरि आए। कुंवरि ने माला डाली। दुलहिन लेगए।

जैसे गांठ की मणि गिरी ऐसे मुनि व्याकुल हुए।

गणों के कहने पर अपना मुंह पानी में देख, क्रोधित होकर उन्हें श्राप दिया -

**होउ निशाचर जाय तुम, कपटी पापी दोउ।**
**हंसेउ हमहिं सो लेउ फल, बहुरि हंसेहु मुनि कोउ।।**

जल में देखा तो अपना ही रूप पाया। फिर भी शीघ्रता से कमलापति के पास चले। क्रोध के मारे अंग फड़क रहे हैं। सोचते हैं-

**देइहऊं शाप कि मरिहऊं जाई, जगत मोर उपहास कराई।**
**(मरिहऊं जाई- मर जाऊंगा)**

रास्ते में श्रीहरि, लक्ष्मीजी और उसी कन्या के साथ मिले। प्रभु बोले मुनि, व्याकुल होकर किधर चले। अब तो हद ही हो गई। इतना सुनना था कि मायावश बोध न रहा। क्रोध कर बोले। आपतो-

**पर संपदा सकहुँ नहिं देखी, तुम्हरे ईर्ष्या कपट विशेषी।**
**मथत सिंधु रुद्रहिं बौरायहु, सुरन प्रेरि विष पान करायहु।**
**(रुद्रहिं- शंकरजी को, बौरायहु- दीवाना करदिया)-**

**असुर सुरा विष शंकरहीं, आप रमा मणि चारु।**
**स्वारथ साधक कुटिल तुम, सदा कपट व्यवहारू।।**
**परम स्वतंत्र न सिर पर कोई, भावइ मनहि करहुं तुम सोई।**
**भलेहि मंद मंदहि भल करहू, विस्मय हर्ष न हिय कछु धरहू।**
**(भलेहि मंद- अच्छे को बुरा)**

**डहकि डहकि परिचेहु सब काहू, अति अशंक मन सदा उछाहू।**
**(डहकि डहकि- छांट छांट कर, परिचेहु- ठगा है)**

**कर्म शुभाशुभ तुमहिं न बाधा, अब लगि तुम्हें न काहू साधा।**
**भले भवन अब बायन दीन्हा, पावहुगे फल आपन कीन्हा।**

**(बायन- बयाना, निमंत्रण, छेड़ा है)-**

**बंचेहुं मोहि जवन धरि देहा, सोइ तनु धरहु शाप मम एहा।**
**कपि आकृति तुम कीन्ह हमारी, करिहहिं कीश सहाय तुम्हारी।**
**मम अपकार कीन्ह तुम भारी, नारि बिरह तुम होब दुखारी।**
**(अपकार- निरादर)**

भगवान ने सुर, मुनि, धरती, गौ, ब्राह्मणों के लिए श्राप सिर धरा और अपनी माया फेरी। वहां अब न रमा और न राजकुमारी थी। नारद ने चरण पकड़े। पछताए। बोले मेरा श्राप जूठा होजाए। प्रभु बोले, ये मेरी ही इच्छा थी। मुनि बोले, मैंने बहुत दुर्वचन कहे। यह पाप कैसे मिटेगा। प्रभु बोले -

जपहुं जाय शंकर शत नामा,होइहिं हृदय तुरत विश्रामा।

(एक तो शिव उपदेश नहीं माना, दूसरा यह संदेश कि यदि भगवान का भी अपमान करो तो शिवजी का नाम उस पाप से मुक्त करता है। इससे शिवजी की महिमा प्रकट की।)

मुझे शिवजी अत्यंत प्रिय हैं। जिसपर शिवजी कृपा न करे, वह हमारी भक्ति नहीं पा सकता। ऐसा विचार पृथ्वी में विचरण करो। अब माया नहीं व्यापेगी।

प्रभु अन्तरहित हुए और नारदजी सत्यलोक चले जहां मार्ग में शिव गणों ने, अभिमान रहित मुनि को प्रणाम कर कहा, हम ब्राह्मण नहीं शिवगण हैं। बड़े अपराध की सजा पाई है। नारदजी बोले, ऐसे निशाचर हो वो जो भुजबल और अतुलित वैभव से संपन्न होंगे। तब विष्णुजी अवतार धार तुम्हारा उद्धार करेंगे। तब आवागमन मुक्त हो जाओगे।

एक कल्प इस कारण अवतार हुआ। बाबा ने गाया है -

**हरि अनंत हरि कथा अनंता, कहहिं सुनहिं बहु विधि श्रुति संता।**

माया किसे न व्यापी अतः महामायापति का भजन करो। एक और अवतार कथा सुनो-

6 - स्वायंभुव मनु अरु शतरूपा,जिनते भइ नर सृष्टि अनूपा।

दंपति धर्म का पालन करते, उत्तम आचरण करते। आज भी वेद उनका यश गाते हैं। उत्तम संतान पाकर और बहुत काल राज्य कर सोचा कि विषयों से वैराग्य होना कठिन है। चौथापन आगया। भजन बिना जन्म अकारथ चला गया। बेटे को जबरदस्ती राज्य देकर पत्नी के साथ नेमिशारण्य गए। गोमती में स्नान, मुनियों से सत्संग, तीर्थ दर्शन किया। द्वादस अक्षर मंत्रजाप किया। तप कैसा-

**करहिं अहार शाक फल कंदा, सुमिरहिं ब्रह्म सच्चिदानंदा।**

जिनके अंश से शिवजी, ब्रह्माजी, विष्णुजी प्रकटे उनका दर्शन करने की अभिलाषा थी। छह हजार वर्ष जल, सात हजार पवन फिर दस हजार वर्ष पवन त्यागकर एक पैर पर खड़े रहे-

विधि हरि हर तप देखि अपारा,मनु समीप आए बहु बारा।

अस्थि मात्र रह गए तब गंभीर 'मांगु मांगु' नभ वाणी हुई। मृतक जियावनि वाणी सुनकर, देह हृष्टपुष्ट होगई जैसे अभी घर से आए हैं। मनु बोले हे कल्पवृक्ष, कामधेनु, सुखदाता, अनाथनाथ। जो स्वरूप शंकरजी, भुषुण्डीजी और वेद गाते हैं उस स्वरूप का दर्शन करना है। प्यारे वचन सुन विश्ववास प्रभु प्रकटे। कैसे हैं-

**नील सरोरुह नील मणि, नील नीरधर श्याम।**

**लाजहिं तनु शोभा निरखि, कोटि कोटि शत काम।।**
**(सरोरुह- कमल, नीरधर- बादल)-**

शरद मयंक वदन छवि सीवा,चारु कपोल चिबुक दर ग्रीवा।
(मयंक- चंद्रमा, छवि सीवा- सुंदरता की मर्यादा, चारु- सुंदर, दर ग्रीवा- शंख सा कंठ)-

**अधर अरुण रद सुंदर नासा, विधुकरनिकर विनिन्दक हासा।**
**(रद- दांत, विधुकरनिकर- चंद्र किरण, विनिंदक - लज्जित करने वाली)-**
**नव अंबुज अंबक छवि नीकी, चितवनि ललित भावती जीकी।**
**(अंबुज- कमल, अंबक- नेत्र)-**
**भृकुटी मनोज चाप छवि हारी, तिलक ललाट पटल ध्युति हारी।**
**(ध्युति हारी- विद्युत छवि हर्ता)-**
**कुंडल मकर मुकुट शिर भ्राजा, कुटिल केश जनु मधुप समाजा।**
**(कुटिल केश- घुंगरारे बाल, मधुप- भौंरो का)-**
**उर श्रीवत्स रुचिर वनमाला, पदिकहार भूषण मणि जाला।**
**(रुचिर- प्रिय, पदिकहार- चोकोन जड़ा हीरे का हार, भूषण मणि जाला- गहनों का समूह)-**
**केहरि कंधर चारु जनेऊ, बाहु विभूषण सुंदर तेऊ।**
**करिकरसरिस सुभग भुज दंडा, कटि निशंग कर शर कोदंडा।**
**(करि कर सरिस- हाथी की सूंड के समान, निशंग - तरकस)-**
**तड़ित विनिन्दक पीत पट, उदर रेख वर तीन।**
**नाभि मनोहर लेत जनु, यमुन भंवर छवि छीन।।**
**(तड़ित विनिन्दक- बिजली की कांति को हरने वाला)-**

**वाम भाग शोभित अनुकूला, आदि शक्ति छविनिधि जग मूला।**
**जासु अंश उपजहिं गुण खानी, अगणित उमा रमा ब्रह्माणी।**
**भृकुटी विलास जासु जग होई, राम वाम दिसि सीता सोई।**

ऐसे छविसिंधु का दर्शन कर, एकटक निहारते रहे। देह दशा भूल दंड के समान पैरों में गिरे। प्रणाम किया। प्रभु ने प्रसन्न होकर सिरपर हाथ रखकर उठाया। कहा वर मांगो।
बोले एक लालसा है जो आपको तो देने में सरल किंतु लेने में मेरी कृपणता से कठिन लगती है। कल्पतरु के नीचे बैठकर, मेरा मन कृपणता प्रकट कर रहाहै। प्रभु बोले, संकोच तजकर मांगो। मुझे अदेय कुछ नहीं। तब मांगा-

**दानिशिरोमणि कृपानिधि, नाथ कहहुं सतभाव।**
**चाहऊं तुमहिं समान सुत, प्रभुसन कवन दुराव।।**
**(सतभाव- सच्चे भाव से )**

प्रभु ने एवमस्तु कहा। बोले-

**आप सरिस खोजऊं कहं जाई, नृप तव तनय होब मैं आई।**
**(आप सरिस- अपने जैसा)**

शतरूपा को हाथ जोड़े देखकर बोले देवी वर मांगो। बोली, जो राजा ने मांगा वह मुझे अच्छा लगा। फिर भी जो सुख जो गति आपके भक्त पाते हैं –

**सो सुख सोई गति सोई भगति, सोइ निज चरण सनेहु।**
**सोइ विवेक सोइ रहनि प्रभु, मोहिं कृपा करि देहु।।**

प्रभु प्रसन्न होकर बोले, दिया। मां, मेरी कृपा से तेरा अलौकिक ज्ञान कभी नहीं मिटेगा। मनु ने प्रणाम करके कहा। एक और विनय है। आपसे बेटे जैसी प्रीति हो। भलेही लोग मुझे मूढ़ कहें। वह भी कैसी-

**मणि बिनु फणि जिमि जल बिनु मीना, मम जीवन तिमि तुमहिं अधीना ।**
**(फणि- सर्प)**

तथास्तु कह बोले, अब इंद्रलोक में जाकर सुख भोगो। जब अयोध्या के महाराज बनोगे तब मैं अंशों सहित आपका पुत्र बनूंगा। जिस आदिशक्ति ने जग उपजाया वो मेरी माया भी अवतार लेगी। इतना कहकर प्रभु अंतर्ध्यान हुए।
मनु और शतरूपा कुछकाल उसी आश्रम में रहकर, बिना दुख, तन तज अमरावती गए।

7 - याज्ञवल्क्यजी बोले प्रभु अवतार का एक और कारण सुनो। कैकय देश में सत्यकेतु राजा थे। उनके प्रतापभानु और अरिमर्दन दो प्रतापी पुत्र हुए। दोनों में छलहीन प्रीति थी। प्रतापभानु को राज्य देकर, सत्यकेतु वन गए। राजा प्रतापभानु वेदविधि से राज्य करने लगा। उनका धर्मरुचि नाम चतुर, शुक्र सा बुद्धिमान सचिव था। भाई, सचिव और सेना के बल, सब को जीतकर सारी पृथ्वी का एक ही राजा हुआ। भूमि कामधेनु हुई। प्रजा दुखहीन। सब धर्मप्राण। राजा सत्संगी। गुरु प्रेमी कुएं, बावड़ी, मंदिर आदि का निर्माण कराया। वेद के कहे अनुरूप, एक की जगह हजार हजार यज्ञ किए।
एक बार विंध्याचल के गहन वन में अश्व सवार होकर शिकार करने गया, पवित्र मृग मारे। लोटते में एक बड़ा शूकर देखा। राजा ने घोड़ा उसके पीछे करदिया। शूकर भागा। बहुत बाण मारे पर वह बचता हुआ भागा ओर गिरि कंदरा में छुप गया। राजा निराश लोटा पर पथ भूल गया -

**खेद खिन्न तर्षित क्षुधित, राजा वाजि समेत।**
**खोजत व्याकुल सरित सर, जल बिनु भयउ अचेत।।**
**(खेद- दुखित, खिन्न- दुर्बल, वाजि- अश्व)**

तभी एक आश्रम दिखाई दिया जहां एक राजा जिसका राज्य इन्होंने छीना था वो कपट मुनि के वेश में रहता था, वहां गए। उसने इन्हें पहचान लिया। सरोवर दिखाया जहां मज्जन पान से राजा संतुष्ट हुआ। संध्या जान आसन दिया। पूछा, आपके चक्रवर्ती के लक्षण हैं और वन में अकेले कैसे फिर रहे। राजा बोला, मैं राजा प्रतापभानु का सचिव हूं। कपट मुनि बोला, तुम्हारा नगर यहां से दो सो अस्सी कोस है। रात होगई है। वन गहन है। रास्ता मिलना कठिन है। आज रात्रि विश्राम यहीं करो, प्रातः चले जाना-
तुलसी जस भवितव्यता,तैसी मिलै सहाय।
आपु न आवै ताहिपै,ताहि तहां लै जाय।।(भवितव्यता- होनहार)
राजा आश्रम में रुक गया। रात में बात हुई। वह कपटी यह सरल -
बेरी पुनि क्षत्रिय पुनि राजा,छल बल कीन्ह चहै निज काजा।
राज सुख स्मरण कर, दुख छिपाकर बोला, पहले की छोड़ो पर अब भिखारी हूं ओर यहां बसते बहुत काल हुआ। मैं अबतक किसी से नहीं मिला। कोई मुझे नहीं जानता। लोक की बढ़ाई, अग्नि के समान है जो तप रूपी वन का दाह कर देती है। बात तो काम की कही है पर उसके इरादे इससे विपरीत हैं।
गोस्वामीजी कहते हैं कि ऐसे लोग ही वेश कलंकित करते हैं अतः -

**तुलसी देखि सुवेश, भूलैं मूढ़ न चतुर नर।**
**सुंदर केकिहिं पेख, वचन सुधा सम असन अहि।।**

**(केकिहिं- मोर, असन- भोजन, अहि- सर्प)**

वह बोला कि ईश्वर सब जानता है। लोक रिझाने से क्या लाभ। राजा को स्ववश जानकर बोला, मेरा नाम एकतनु है। सृष्टि उपजी तबसे, तप प्रभाव से और शरीर नहीं धारा। अब तो विश्वास करके राजा ने अपना नाम भी बता दिया। उसने भी प्रशंसा की कि राजा जहां तहां अपना नाम नही बताते। ठीक किया। तुम्हारा नाम प्रतापभानु, पिता सत्यकेतु है। अब जो इच्छा हो मांगो। राजा हर्षित हुआ। तृष्णा वश मांगा-

जरा मरण दुख रहित तनु,समर न जीते कोउ।

एक छत्र रिपुहीन महि,राज्य कल्प शत होउ।। कपटी बोला, काल भी तेरे चरणों में सिर नवावेगा। बस एक ब्राह्मण कुल को छोड़कर।क्योंकि -

तप बल विप्र सदा बरियारा,तिनके कोप न कोउ रखवारा।

(बरियारा- बलवान)

अतः ब्राह्मणों को वश में किया तो शिव, विरंचि भी तेरे वश में होंगे पर ब्राह्मणों के कुल से जबरदस्ती नहीं चलती।

राजा का विश्वास और दृढ़ हुआ। बोला, अब मेरा सर्वकाल कल्याण है। कपटी बोला, यह संवाद किसी से मत कहना। छठे कान में यह बात गई तो तुम्हारा नाश समझो। राजा बोला, बस ब्राह्मण श्राप से बचा लो। ये कैसे वश में होवें ?

वह बोला एक उपाय तो है किंतु कठिन है। जब से जन्म लिया तब से, मैं किसी के नगर न गया। पर मेरे गए बिना तुम्हारा कल्याण नहीं होगा। बड़ा असमंजस आन पड़ा। राजा बोला, वेद ऐसा कहते है-

बड़े सनेह लघुन पर करहीं,गिरि निज शिरन सदा तृण धरहीं।

जलधि अगाध मौलि बह फेनू,संतत धरणि धरत शिर रेणु।

(मौलि- मस्तक पर)

राजा को वश में जानकर कपटी बोला, मैं अवश्य तेरा कार्य करूंगा। परन्तु-

योग युक्ति तप मंत्र प्रभाऊ,फले तबहि जब करिय दुराऊ।

मैं रसोई बनाऊं। उसे जो जो खावे वो और उनके घर भी जो जो खावे सब तेरे वश में हो जावे। जाओ, एक वर्ष तक नित्य नवीन एक एक लाख ब्राह्मणों को न्योता दो। मैं इस रूप में नहीं आऊंगा। तुम्हारे पुरोहित का हरण कर उसका वेश धरकर, आज से तीसरे दिन तेरा कार्य करूंगा। अब सोजा। मैं तप बल से अश्व सहित, तुझे सोते सोते ही घर पहुंचा दूंगा। एकांत में बुलाऊं तो समझ जाना। -

श्रमित भूप निद्रा अति आई,सो किमि सोव शोच अधिकाई।

तभी कालकेतु निशाचर जो शूकर बना था वह आया। इसके, देवों को दुख देने वाले सो पुत्र, दस भाई, राजा प्रतापभानु ने मारे थे। दोनों ने मिलकर छल किया।-

रिपु तेजसी अकेल अपि,लघु करि गनिय न ताहु।अजहु देत दुख रवि शशिहिं,शिर अवशेषित राहु।।

दोनो ने विचार किया कि चौथे दिन शत्रु का नाश करके मिलेंगे।

कालकेतु ने राजा को रानी के पास और घोड़े को घुड़साल में पहुंचाया। पुरोहित का हरण किया। पर्वत की कंदरा में मति भ्रमित करके रखा। स्वयं उसका रूप धर पलंग पर जा सोया। बिना प्रातः ही राजा जागा। स्वयं को घर में पाकर अचरज किया। अश्व लेकर चुपके से बाहर गया। किसी ने नहीं देखा। दोपहर बाद आया। नर नारी राजा को आया जानकर प्रसन्न हुए। आनंद मनाया।

प्रतापभानु को ये तीन दिन, युग जैसे बीते। पुरोहित ने एकांत में बुलाकर राजा को सब समझाया। ब्राह्मणों को न्योता दिया। शटरस (कटु, तिक्त, अम्ल, मधुर, कषाय, लवण), चार विधि (भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, चोष्य) अनगिन व्यंजन बनाए। उनमें ब्राह्मण का मांस भी मिला दिया। पद पखार भोजन आरंभ हुआ तब आकाशवाणी हुई-

विप्र वृंद उठि उठि गृह जाहू,है बड़ि हानि अन्न जनि खाहू।

रसोई ब्राह्मण के मांस से बनी जानकर सब उठे।राजा अवाक। ब्राह्मणों ने विचार नहिं किया और क्रोधित होकर श्राप दे दिया। "मूढ़! परिवार
सहित निशाचार होजा।"

(शायद इसीलिए रावण को ब्राह्मणों से सख्त नफरत थी)।

अरे ब्राह्मणों को बिगाड़ने बुलाया था? वह तो ईश्वर ने हमारा धर्म रखा। तू परिवार सहित नष्ट होगा। कोई जलदाता न होगा। राजा व्याकुल। फिर नभ वाणी हुई। ब्राह्मणों, आपने विचार कर श्राप नहीं दिया। इसमें राजा का कोई अपराध नहीं है। ब्राह्मण चकित हुए। राजा भोजनालय में गया।वहां न भोजन ओर न हीं बनानेवाला मिला। सब कथा, ब्राह्मणों को सुनाई। भूमि पर गिर गया। ब्राह्मण बोले -

**भूपति भावी मिटइ नहिं, यदपि न दूषण तोर।**
**किए अन्यथा होय नहिं, विप्र शाप अति घोर।।**
**जो करि कपट छले जग काहू, देइहि ईश अधम गति वाहू।**

व्याकुल राजा ने विनती की कि शाप कब दूर होगा यह तो कहो। बोले तुम दोनो भाई प्रतापी, वैभवशाली निशाचर होंगे। चार स्थान पर पराभव पाकर, शंकरजी को भजोगे तो प्रभुता बढ़ेगी। जब सनतकुमार मिलें तो उनके कहे अनुसार शाप शमन होगा।

(यह सब उस कपटी की माया थी। यहां ब्राह्मणों के मांस का कथन भी कपट ही जानना उचित है क्योंकि बाद में न भोजन मिला और न ही बनाने वाले।)

इस दुष्ट कालकेतु ने पुरोहित को घर भेजकर कपटी तपसी को खबर की। उसने पत्र भेजकर राजाओं को एकत्रित किया। आक्रमण हुआ और सत्यकेतु के कुल में कोई नहीं बचा। ब्राह्मण का श्राप सत्य हुआ। याज्ञवल्क्य बोले –

भरद्वाज सुनु जाहि जब,होत विधाता वाम।

धुरि मेरु सम जनक यम,ताहि व्याल सम दाम।।(मेरु सम- पर्वत सी, जनक यम- माता पिता यम से, व्याल सम- सर्प सी, दाम- रस्सी)

मूल रामायण 02/2-

पुनि नारद कर मोह अपारा,कहेसि बहुरि रावण अवतारा।

समय पाकर वही राजा प्रतापभानु अपने समाज सहित दशानन हुआ। एकबार विश्रवा मुनि तप करके अपनी पत्नी से बातें करने लगे। वह बोली जितने समय आपने तप किया उतने में तो हमारे दस पुत्र हो जाते। ऋषि बोले, मैं तुम्हें एक ही दस जैसा बलशाली पुत्र दूंगा। दशानन का जन्म हुआ। अरिमर्दन कुंभकर्ण, धर्मरूचि मंत्री विमाता पुत्र विभीषण हुआ। उन निशाचरो का कामरूप था। उनका वर्णन नहीं हो सकता। पुलस्त्य कुल में जन्म लेकर भी निशाचर हुए।

एकबार पुलस्त्य ऋषि तपहित सुमेरु पर्वत पर तृणबिंदु आश्रम गए। वहां अनेक देव ऋषि कन्याएं आकर कलकल करने लगी। ऋषि की तपस्या में व्यवधान हुआ। बार बार समझाने पर भी नहीं मानी तो बोले कि जो अब हमारे सामने आएगी वो गर्भवती हो जाएगी। भूल वश तृणबिंदु कन्या आई और गर्भवती हुई। उसे तृणबिंदु ने ऋषि को ही सौंप दी। उससे विश्रवा का जन्म हुआ जिन्हें भरद्वाज ने अपनी कन्या दी। उससे कुबेर का जन्म हुआ। कुबेर के तप से प्रसन्न ब्रह्मा ने, पुष्पक विमान देकर निधिपति किया। विश्रवा ने प्रसन्न होकर, राक्षसों के पाताल चले जाने से खाली पड़ी लंका, कुबेर को देदी। सुमाली ने

कुबेर को देख विचारा कि ऐसा ही पुत्र मेरी पुत्री कैकसी को हो। कैकसी विश्रवा के पास घोर संध्या समय गई और पुत्र याचना की तो बोले तुझे राक्षस पुत्र होंगे। बोली, आपसे भी राक्षस? ऋषि बोले, एक भक्त भी होगा। तब रावण, कुंभकर्ण, शूपनखा और दूसरी पत्नी (निकषा) से विभीषण हुए।

तीनों ने उग्र तप किया। कुबेर का पिता द्वारा सम्मान देखकर मां के कहने पर रावण तप हेतु गया। ब्रह्मा प्रसन्न होकर पास गए। रावण ने मांगा -

**हम काहू कर मरहिं न मारे, वानर मनुज जाति दुइ बारे।**

**(दुइ बारे- दोनो को छोड़ दो)**

कुंभकर्ण को देखकर ब्रह्माजी ने सोचा कि जो यह दुष्ट रोज आहार करेगा तो संसार उजाड़ होजाएगा। सरस्वतीजी को प्रेरित कर बुद्धि फेर दी। उसने छह मास की नींद मांगी। बोला, असमय जगाया तो मृत्यु होगी। इन्होंने तथास्तु कहा-

**गयउ विभीषण पास तब, कहा पुत्र वर मांग।**

**तेहि मांगेउ भगवंत पद, कमल अमल अनुराग।।**

**(अमल- लत, टेव, व्यसन)**

वर पाकर घर आए। मयदानव ने मंदोदरी रावण को दी। वेरोचन की धैवती (नातिन) वज्र ज्वाला से कुंभकर्ण, शैलुश गंधर्व की कन्या सरमा से विभीषण का ब्याह किया।

(मानसरोवर के तट पर सरमा का जन्म हुआ। जब सरोवर का जल बढ़ने लगा तो मां ने कहा "सरो मा वर्धत" सरोवर मत बढ़। पानी रुक गया। इसी से सरमा नाम पड़ा)

समुद्र में ब्रह्माजी के द्वारा बनाए और मयदानव द्वारा सवांरे, जग विख्यात, लंका नामक स्वर्ण और मणि रचित, स्वर्ण कोट युक्त जिसके द्वार पर लिखा था-

"जिस कल्प में जो राक्षसों का स्वामी हो वही प्रतापी इसमें बसे "

उस कुबेर की नगरी को, जहाज से जाकर रावण ने घेरा। यक्ष भागे। रावण ने लंका को अपनी राजधानी बनाया। सभी राक्षसों को योग्यतानुरूप घर बांटे। एक बार अलकापुरी जाकर कुबेर से पुष्पक विमान ले आया। कौतुक में कैलाश पर्वत उठालिया। पार्वतीजी व्याकुल हुई तो शिवजी ने थोड़ा सा दबाया जिससे इसके हाथ दब गए। रोया तो रावण नाम पड़ा। पहले दशकंधर था।

सुख, संपत्ति, सुत, सेन, सगे, सफलता, शौर्य, शक्ति, समझ सब बढ़ाया जैसे लाभ होने पर लोभ बढ़ता है-

जिमि प्रतिलाभ लोभ अधिकाई।

कुंभकर्ण जैसा भाई, मेघनाद जैसा पुत्र जिसके कारण देवलोक में नित्य परावना (एक राजा के राज्य से दूसरे में भागना) होता रहता था। कुमुख, अकम्पन, कुलिशरद, धूम्रकेतु, अतिकाय जैसे जगजई कामरूप मायावी योद्धा थे। एक बार समस्त कुल को देख अभिमानी रावण बोला, हमारे वेरी देवता हैं सो उनको त्रास देने के लिए -

द्विज भोजन मख होम सराधा,सब कर जाय करहुं तुम बाधा।

तब भूखे देवता आन मिलेंगे फिर सोचूंगा मारूं या छोड़ दूं। मेघनाद को देवों से लड़ने भेजा ओर स्वयं गदा लेकर चला।-

**चलत दशानन डोलत अवनी, गर्जत गर्भ स्रवत सुर रवनी।**

**(सुर रवनी- देवताओं की स्त्रियां)**

रावण को आता देख, देव सुमेरु की कंदराओं में जा छुपे। दिकपालों (उर्ध्व के ब्रह्मा, ईशान के शिव व ईश, पूर्व के इंद्र, आग्नेय के अग्नि या वह्नि, दक्षिण के यम, नैऋत्य के निर्रिति, पश्चिम के वरुण, वायव्य के वायु और मरुत, उत्तर के कुबेर और

अधो के अनंत) में से रावण इंद्र, अग्नि, यम, निर्रिति, वरुण, मरूत, कुबेर के लोक गया तो उन्हें खाली पाया। देवों को गाली देता समान योद्धा खोजता फिरता।
सात द्वीप (जंबू, प्लक्ष, शाल्मली, कुश, क्रोंच, शाक, पुष्कर), नो खंड (इलावृत, रम्यक, कुरु हिरण्मय, हरि, भरत, केतुमाल, भद्राश्व, किंपुरुष), सात पाताल (तल, अतल, वितल, सुतल, तलातल, रसातल, पाताल) सब धसकने लगे। नारदजी से भेंट हुई। पूछा देव कहां हैं तो उन्होंने श्वेतद्वीप में भेजा।
समुद्र उतरकर गया। वहां बहुत सी स्त्रियां देख बोला कि अपने पतियों से कहो राक्षसों का राजा आया है। उन्हें जीतकर मैं तुम्हें लेजाऊंगा।-

**सुनत वचन इक जरठ रिसानी, धाय चरण गहि गगन उड़ानी।**

**(जरठ- वृद्धा)**

गई दूरि धरि धरि झकझोरा,डारा सिंधु मध्य अति जोरा।
ब्रह्मा के वर से मरा नहीं। हर्ष विषाद रहित, नागों को जीत बली के लोक गया। जहां बली ने स्वागत किया। रावण बोला अब अपने शत्रु को जीत पृथ्वी पर राज्य करो। बली बोला पहले मेरे पितामह हिरण्यकशिपु के गहने पहन लो फिर जीतना। रावण उन्हें उठा भी न सका। बलिने कहा -

**जिन भूषण यह अंगनि धारे, ते भट गए ऐक क्षण मारे।**

**(जिन- जिन्होंने, ते भट- वे योद्धा)**

लजाकर चला तो वामनजी ने देखकर सोचा कि नारदजी से अभिमान भरे बोल बोलकर आया है।
उन्होंने नगर के कुछ खेलते बच्चों को अपना बल दिया जिन्होंने इसे पकड़ा और नगर में लाए। नर नारी कौतूहल से देखने लगे।-

**बीस बाहु दशकंधर जाई, विधि यह गढ़नि कहां की आई।**

**(जाई- जिसके, गढ़नि- बनावट)-**

राखिन्हि बांधि खिजावहिं भारी,नाम न कहै सहे बहु मारी।
वामनजी को देखकर लजाया। उन्होंने दयाकर छुड़ाया। पर निर्लज्ज लाज और शंका त्यागकर वहां से चला। निर्दयी, निर्लज्ज, हिंसक और राम विमुख होकर जीत चाहता है। बाबा कहते हैं -

**भरद्वाज सुनु जाहि जब, होत विधाता वाम।**
**मणिहुं कांच हुइ जाय तब, लहै न कोड़ी दाम।।**

जहां भी ब्राह्मण देवता देखता, दंड लेता, दुख देता। उत्पाती इधर उधर फिरता हुआ पंपापुर में मुनि मन हारी पंपा सरोवर के निकट आया। वहीं रम गया। वहां ध्यान करते हुए वाली को देख, बाहें ठोक, तीन सो बीस दांत किटकिटाकर बोला, बकध्यानी युद्ध कर। वाली बोला सूर्य को अंजलि दे लूं। उसने सोचा वर पाया हुआ है, मरेगा तो नहीं। समझाया घर जा। नहीं माना तो-
तब सकोप उठि झपटि कपीशा,दृढ़ गहि कांख दाब दशशीशा।
वाली ने सूर्य को अंजली दी। रावण दबा रहा।
सप्त सिंधु तट गया। रावण दबा रहा।
संध्या की। रावण दबा रहा।
शिव वंदन किया। रावण दबा रहा।
नाम जपे। रावण दबा रहा।
घर आया। रावण दबा रहा।

रात में बांधता, दिन में फिर दबा लेता। कांख में पसीना और दुर्गंध हुई। क्रोध कर काटा (सोचो तो कांख में काटना कितना घृणास्पद है)। वाली समझा बालों में जूं है।
(वाली पांच घड़ी में सब समुद्र तटपर संध्या कर आता था। वाल्मीकिजी ने भी पांच घड़ी ही लिखा है। छह माह की बात अपुष्ट है।)
एक दिन अंजलि देते समय फिसल कर भागा।
पुनः पकड़ कर बांधा। अंगद को खेलने को दिया जिसने कौतुक से लातें मारी।
(शायद इसीलिए अंगद ने सभा में पैर जमाया था)
तारा ने पहचाना। छोड़ा। बोली, भागो नहीं तो कपीश फिर पकड़ कर बांधेंगे।
तब रावण वहां गया जहां सहस्त्रबाहु ने रेवा के कूल में रास रचाया था। वहां अनेक शोभायमान स्त्रियां थी। देव मनुष्य सेवारत थे। रावण देखकर दुखी हुआ। वहां शिव मंदिर, तुलसी, बिल्व, कमल पुष्पादि थे। रावण ने शिव मंत्र पढ़कर जल रोक दिया। समाज डूबता देख सहस्त्रबाहु क्रोधित होकर बोला, यह कौन मुझसे बली आया है। जाकर पकड़ा और घुड़साल में बांध दिया।-

**सकल आय देखहिं नर नारी, मारहिं लात हंसै दै तारी।**

सकुचाया, नाम न बताया।-

**नृत्य करे रम्भादिक नारी, दशौ माथ दश दीपक बारी।**

पुलस्त्यजी ने आकर छुड़ाया।

मार्ग में उर्वशी का हाथ पकड़ा किंतु कुबेर की पुत्रवधु जानकर छोड़ा। उसने जाकर नलकूबर से कहा। जिसने रावण को कुलक्षय का श्राप दिया। मूर्तिमान श्राप लंका गया जिसे भयभीत रावण ने स्वीकारा।

एक बार चार दूत बुलाये और ऋषियों से कर लेने भेजा। ऋषि डरे और रुधिर निकालकर घड़ा भरकर दे दिया। बोले -
घट उघरत क्षय होयपहउ,सहित सकल परिवार।दूत तुरत घट ले गए,लंकापति दरबार।।
घड़ा देख, बहुत सारा कर समझ, प्रसन्न हुआ।खोलने लगा पर श्राप सुनकर उन्हें उत्तर में जनकजी के राज्य में घड़ा गाड़ने भेजा जिससे जो उघाड़े सो मरे। एक बार शिव सभा में, वेदांत विचार में जनकजी से हार गया था इसलिए उनसे जलता था। दूतों ने गाड़ा।
*एक बार घड़े में रावण मुनियों का रक्त भरकर ले गया। मंदोदरी को देकर कहा कि इसे छूना नहीं, विष मानो। न पीना न किसी को देना। वह मंदराचल, मेरु, विंध्याचल के वन में देव, दानव और यक्ष कन्याओं से रमण करने गया। दुखी मंदोदरी ने सोचा -

**वंचिताः पतिना याः स्युस्तस्मान्मे मरणम् वरम्।**
**पुरा रावणसंदिष्टम् शोणितम् क्ष्वेडतोधिकम्।।**
**(क्ष्वेडतोधिकम्- विष से भी अधिक)**
**- अद्‌भुत रामायण सर्ग 08.28**

उपेक्षित जान मंदोदरी उस घड़े के पदार्थ को विष समझकर आत्महत्यार्थ पी गई। प्रभाव तत्काल हुआ -

**सद्यो रावणकांताया गर्भो ज्वलनसन्निभः।**
**ततो विस्मयमापन्ना सा हि मंदोदरी शुभा।।**
**(ज्वलनसन्निभः- अग्नि सा तेजवान)**
**- अद्‌भुत रामायण सर्ग 08.30**

चिंता करने लगी। मेरा पति एक वर्ष से मेरे पास नहीं है। मैं पतिव्रता हूं। उस कामी से क्या कहूँगी। ऐसा सोच तीर्थ यात्रा के बहाने -

**विमानवर मारूह्य कूरूक्षेत्रं जगाम सा।**
**तत्र गर्भं विनिष्कृष्य निचखान भुवस्तले।।**
**(विमानवर- सुंदर यान, विनिष्कृष्य- निकाल कर, निचखान भुवस्तले- भूमि में गाड़ दिया)**
**- अद्भुत रामायण सर्ग 08.34**

सरस्वती में स्नान किया और घर आ गई। किसी से कुछ नहीं कहा। कुछ समय बाद महाराज जनक ने कुरुक्षेत्र में यज्ञ किया। सोने के हल से खोदी धरती से -
स्वर्णलांगल सीतातः कन्यका प्रोत्थिताभवत्।।

**- अद्भुत रामायण सर्ग 08.37**

ओर-
हरि इच्छा तहं पर्यो दुकाला,बिन जल भे सब जीव बिहाला।
(दुकाला- अकाल)
जनकजी ने वृष्टि हेतु यज्ञ किया। स्वर्ण हल हाथ से चलाया।-

**भूमि विदारण होत ही, जग मंगल दातार।**
**प्रगट्यो सिंहासन सुभग, अद्भुत तेज अपार।।**
**चारि सखी चारों तरफ, लीन्हें मुरछल हाथ।**
**मध्य विराजत भूमिजा, पावन जेहि गुणगाथ।।**

शायद इसीलिए जानकीजी को पुनः पृथ्वी देवी ने ही स्वीकार किया था। वाल्मीकि रामायण में वर्णन आता हैं -
बहुवर्षसहस्त्राणि तपश्चर्या मया कृता । नोपाश्नीयां फलं तस्या दुष्टेयं यदि मैथिली ॥
राजसभा में वाल्मीकिजी ने कहा, रामजी मैंने कई हजार वर्षों तक भारी तपस्या की है। यदि मिथिलेशकुमारी सीता में कोई दोष हो तो मुझे उस तपस्याका फल न मिले।

**- वा.रा.उत्तरकांड 96.20-**

मनसा कर्मणा वाचा भूतपूर्वं न किल्बिषम् । तस्याहं फलमश्नामि अपापा मैथिली यदि ॥
मैंने मन, वाणी और क्रिया द्वारा भी पहले कभी कोई पाप नहीं किया है। यदि मिथिलेशकुमारी सीता निष्पाप हों, तभी मुझे अपने उस पापशून्य पुण्यकर्म का फल प्राप्त हो।

**- वा.रा.उत्तरकांड 96.21**

सीता जी ने शपथ ली-

**यथाहं राघवादन्यं मनसापि न चिन्तये ।**
**तथा मे माधवी देवी विवरं दातुमर्हति।।**

मैं श्रीरघुनाथजी के सिवा दूसरे किसी पुरुष का (स्पर्श तो दूर रहा) मनसे चिन्तन भी नहीं करती यदि यह सत्य है तो भगवती पृथ्वीदेवी मुझे अपनी गोद में स्थान दें।–

**मनसा कर्मणा वाचा यथा रामं समर्चये ।**

**तथा मे माधवी देवी विवरं दातुमर्हति ॥**

यदि मैं मन, वाणी और क्रिया के द्वारा केवल श्रीराम की ही आराधना करती हूँ तो भगवती पृथ्वी देवी मुझे अपनी गोद में स्थान दें।-

**यथैतत् सत्यमुक्तं मे वेद्मि रामात् परं न च।**
**तथा मे माधवी देवी विवरं दातुमर्हति ॥**

भगवान् श्रीराम को छोड़कर मैं दूसरे किसी पुरुष को नहीं जानती, मेरी कही हुई यह बात यदि सत्य हो तो भगवती पृथ्वीदेवी मुझे अपनी गोदमें स्थान दें।

**- वा.रा.उत्तरकांड 97.14 से 16-**

तथा शपन्त्यां वैदेह्यां प्रादुरासीत् तदद्भुतम् । भूतलादुत्थितं दिव्यं सिंहासनमनुत्तमम् ॥
विदेहकुमारी सीता के इस प्रकार शपथ करते ही भूतल से एक अद्भुत सिंहासन प्रकट हुआ, जो बड़ा ही सुन्दर और दिव्य था।–

**ध्रियमाणं शिरोभिस्तु नागैरमितविक्रमैः ।**
**दिव्यं दिव्येन वपुषा दिव्यरत्नविभूषितैः ॥**

दिव्य रत्नोंसे विभूषित महापराक्रमी नागोंने दिव्य रूप धारण करके उस दिव्य सिंहासन को अपने सिरपर धारण कर रखा था।-

तस्मिंस्तु धरणी देवी बाहुभ्यां गृह्य मैथिलीम् । स्वागतेनाभिनन्द्यैनामासने चोपवेशयत्॥
सिंहासन के साथ ही पृथ्वी की अधिष्ठात्री देवी भी दिव्य रूप से प्रकट हुईं। उन्होंने मिथिलेशकुमारी सीता को अपनी दोनों भुजाओं से गोद में उठा लिया और स्वागतपूर्वक उनका अभिनन्दन करके उन्हें उस सिंहासन पर बिठा दिया।

**- वा.रा.उत्तरकांड 97.17 से 19**

विदेह की विनय सुन,भूमिजा ने कन्या का रूप लिया और सिंहासन सखियों सहित अन्तरहि होगया। रोना सुन, सुनैना ने गोद लिया। जानकी नाम रखा और नारदजी ने सीता (हल फल का नाम सीता और उससे जो लकीर होती है उसे भी सीता कहते हैं।) कहा। बोले, जो अविनाशी हैं वे इसके वर होंगे। नारदजी लोटे। पुष्पवृष्टि हुई। राजा को अचरज हुआ। तभी ततः खेअभूत्सरस्वती।।आकाशवाणी हुई।
इस तेजस्विनी को अपनी कन्या मानो।-

**ज्वलनार्क समां दिव्यां महत्कार्यं तवालये।**
**भविष्यति महाभाग क्षेमं च जगतोअनया।।**
**(ज्वलनार्क- प्रज्वलित अग्नि, जगतोअनया-जगत का कल्याण)**
**- अद्भुत रामायण सर्ग 08.40**

इसका नाम सीता होगा।
राजा जनक ने प्रसन्न होकर यज्ञ किया और ऋषि प्रदत्त कन्या लेकर घर गये।
वाल्मिकीजी ने कहा -

**एतत्ते कथितं विप्र सीताजन्मैककारणम्।**
**श्रुत्वैतत्सर्वपापेभ्यो मुक्तो भवति मानवः।।**
**- अद्‌भुत रामायण 08.43**
***उसके घर सीताजी का निवास होता है।**
**- अद्‌भुत रामायण**

सीताजी शुक्ल पक्ष के शशि जैसी बढ़ी। सब को प्यारी लगती।-
पुनि नृप निपुण पढ़न बैठाई,अचिर काल सब विद्या पाई।
हमारे सनातन धर्म में आरंभ से ही नारी शिक्षा का महत्व था। कुछ मंद मति, शास्त्रों का अध्ययन किए बिना, संतों को सुने बिना मिथ्या दोषारोपण करते हैं।

पहले विदेह ने शिवजी का ध्यान किया था। प्रकट तो वर मांगा कि वेद जिसे नेतिनेति कहते हैं उनका दर्शन करना चाहता हूं।-

**सुनि शिव दीन्हो धनुष पुनि, कही बात समुझाय।**
**पूजन याको नेम करि, मिलिहैं भगवत आय।।**

नित्य पूजन करने लगे। एक दिन सीताजी ने सेवा के निकट जाकर, खेल में धनुष उठा लिया।
*बचपन में सीताजी उस शिव धनुष को लकड़ी का घोड़ा बना कर खेला करती थी।
**-आनन्द रामायण**

आश्चर्य से जनकजी ने प्रण किया।-
**जो यह शिव को चाप चढ़ावै, सोई जनक सुता कहं पावै।**
उधर घट गाड़कर रावण को दूतों ने संदेश दे दिया। वह निश्चिंत होकर ब्राह्मण और देवों को दुख देने लगा।-
**रवि शशि पवन वरुण धनुधारी, अग्नि काल यम सब अधिकारी।**
**किन्नर सिद्ध मनुज सुर नागा, हठि सब ही के पंथहि लागा।**
**(पंथहि लगा- पीछे पड़ गया।)-**

ब्रह्म सृष्टि जहं लगि तनु धारी, दशमुख वशवर्ती नरनारी।
सब भयभीत। सब नमन करते। सबको वश में किया। देव, यक्ष, गंधर्व, नर, किन्नर, राजाओं की अनेक कन्याओं को बाहुबल से जीतकर ब्याह ली। इंद्रजीत से जो कहता वो उसने जैसे पहले ही कर रखा था।
अनीति करते रावण को कुबेर ने समझाया तो उसे जीत यमराज पर धाया। उसकी आयु विचार यमराज देवों के कहने से अंतर्ध्यान हुए।
तब मेघनाद इंद्रलोक गया। इंद्र ने रावण को बांधा यह सुन मेघनाद आया तथा इंद्र को जीत पकड़ लाया। ब्रह्माजी ने अमोघ शक्ति और अनेक वरदान देकर देवराज को छुड़ाया।
राक्षस अनेक मायावी रूप धरकर उपद्रव करते।-
**जेहिविधि होइ धर्म निर्मूला, सो सब करहिं वेद प्रतिकूला।**

जहां जिस ग्राम में गाय, ब्राह्मण देखते आग लगा देते। आज भी ऐसे आचरण करने वाले हैं जो रावण की उपस्थिति का आभास करवाते हैं।आदेश था –

**शुभ आचरण कतहुं नहिं होई, वेद विप्र गुरु मान न कोई।**
**नहिं हरि भक्ति यज्ञ जप दाना, सपनेहुं सुनिय न वेद पुराणा।**

जहां इन्हें होता देखे और सुने तो खुद दौड़कर नष्ट करे। ऐसा भ्रष्ट आचार हुआ। धर्म सुनाई भी नहीं देता।-

**वरणि न जाय अनीति, घोर निशाचर जे करहिं।**
**हिंसा पर अति प्रीति, तिनके पापहिं कवन मिति।।**
**(कवन मिति- कोई ठिकाना नहीं)**

बहुत से चोर, जुआरी, खल बढ़े। ये-

**मानहिं मातु पिता नहिं देवा, साधुन सन करवावहिं सेवा।**

शिवजी कहते हैं-

**जिनके यह आचरण भवानी, ते जानहुं निशिचर सम प्राणी।**

धर्म की अति हानि देख, धरती भयभीत होकर अकुलाई। बोली, मुझे पर्वत, सागर आदि का इतना बोझ नहीं जितना इन परद्रोहियों का है। रावण के डर से कोई नहीं बोलता। गाय का रूप धरकर जहां सब मुनि और देवता थे वहां गई। अपना संताप सुनाकर रोई। मुनि, गंधर्व, गौ सब ब्रह्मलोक गए। ब्रह्मा बोले, धरती धैर्य धरो। भगवान तुम्हारा दुख जानते हैं। मेरा वश नहीं चलेगा। अविनाशी प्रभु ही तेरी सहायता करेंगे।
सब देवता बैठे। विचार किया, प्रभु कहां मिलेंगे।-

**गोलोक चलें वैकुंठ चलें, या क्षीर सिंधु पर जाएं हम।**
**क्या जाने कहां दयानिधि हैं, किस जगह पुकार सुनाएं हम।।**
**-राधेश्याम रामायण**

किसीने वैकुंठ किसी ने क्षीरसागर बताया। जिसकी जैसी भक्ति प्रभु वैसे ही प्रकट होते हैं।
शिवजी बोले, उमा वहां मैं भी था। मैंने कहा-

**हरि व्यापक सर्वत्र समाना, प्रेमते प्रकट होहिं मैं जाना।**
**देश काल दिशि विदिशिहु माहीं, कहहु सो कहां जहां प्रभु नाहीं।**
**रहने दो और उपासन अब, प्रेमोपासन करना सीखो।**
**करुणानिधि से मिलना है तो, करुणा क्रंदन करना सीखो।।**
**-राधेश्याम रामायण**

रामायण में चार कल्पों का रामावतार प्रसंग कहा है। जिन्होंने वैकुंठ कहा उन्होंने जलंधर और जय विजय के कल्पानुसार कहा जिन्होंने क्षीर सागर कहा उन्होंने नारद के श्राप वाले कल्प और चौथे कल्प में स्वायंभुव मनु को वर दिया था। शिवजी कहते है ये सब समान हैं।
शिवजी की बात सुन, ब्रह्माजी अति प्रसन्न हुए। नैनों से जल बह चला। कुछ देर मन साध फिर स्तुति करने लगे-

**जय जय सुरनायक, जन सुखदायक, प्रणतपाल भगवन्ता।**
**गो द्विज हितकारी जय असुरारी, सिंधु सुता प्रिय कंता।**

(सुर नायक- देवों के रक्षक, अधिपति, जन-मनुष्यों के, प्रणतपाल- दीनों, शरणागतों के पालक, असुरारी- असुरों के शत्रु सिंधु सुता-लक्ष्मी, कंता- पति "जो अब असुरों के हाथ लग गई है")
कहें कि प्रभु तो समदर्शी हैं तो भी आप-

**पालन सुर धरनी अद्‌भुत करनी मरम न जानै कोई।**

आप कैसे हैं-

**सो सहज कृपाला दीनदयाला करहुं अनुग्रह सोई।।**

है अविनाशी, घट घट के वासी, असुरों की मति फेर दो। पृथ्वी को आनंद दाता, माया रहित, मोक्ष दायक, सच्चिदानंद की जय हो। आपने त्रिगुण सृष्टि बनाई है। किसी की सहायता नहीं। हम भक्ति, पूजा नहीं जानते। वेद कहते हैं कि आपको दीनदुखी प्यारे है। हमारे ऊपर कृपा करो। संसार सागर के आप मंदर (मंदराचल पर्वत) हो। सब भांति सुंदर हो। सिद्ध, मुनि, देव सब व्याकुल हैं। आपको नमस्कार करते हैं। फिर तो देवताओं और पृथ्वी को डरी हुई जानकर दुख और संशय हरने वाली मधुर आकाशवाणी हुई-

**जनि डरपहु मुनि सिद्ध सुरेशा, तुमहिं लागि धरिहौं नर वेशा।**
**अंशों सहित सूर्यवंश में अवतार लूंगा।**

भगवान बोले-

**निज भय का सब परित्याग करो, आनंद हृदय में धारो अब।**
**उस खल के दिन गिनती के है,निज मन में यह स्वीकारो सब।।**
**मैं मनुज रूप धर धरती पर, शुभ अवध धाम में आऊंगा।**
**आमात्य पुत्र पौत्रादिक संग, निशिचर वध सत्य बढ़ाऊंगा।।**
**ग्यारह हजार वर्षों तक इस, वसुधा को सुख पहुंचा कर के।**
**निज धाम लौट कर आऊंगा, ऋषि सत्ता को बल देकर के।।**
**- कमल - वा.रा.बा.15.28,29**

कश्यप-अदिति वर पाकर अवध में दशरथ-कौशल्या हुए हैं। नारद का वचन सिद्ध करने, परम शक्ति सहित, उनके घर, हम चारों भाई अवतार लेंगे। ओर-

**हरिहौं सकल भूमि गरुआई, निरभय होहु देव समुदाई।**

गगनगिरा सुन देवता प्रसन्न मन लोटे। ब्रह्माजी के समझाने पर धरती को भरोसा हुआ-

**निज लोकहुँ विरंचि गए, देवन इहहि सिखाय।**
**वानर तनु धरि धरणि महं, हरिपद सेवहुं जाय।।**

*ब्रह्माजी ने सभी देवों को अपने अंश से तेजवान संतान विष्णुजी की सहायतार्थ उत्पन्न करने का निर्देश दिया। उन्होंने पहले से ही जाम्बवान की सृष्टि कर रखी थी जो जम्हाई लेते समय उनके मुंह से उत्पन्न हुए थे। सूर्य ने सुग्रीव और इंद्र ने वालि को प्रकट किया। कुबेर ने गंध मादन, विश्वकर्मा ने नल, अग्नि ने नील, अश्विनीकुमारों ने मेंद ओर द्विविद, वरुण ने सुषेण, वायु ने हनुमान ओर सभी यक्ष, नाग, विद्याधर, गंधर्व आदि ने जो संतति पैदा की उसके नख दांत ही अस्त्र थे। वे पर्वतों को हिलाने, सागर लांघने की शक्ति रखते थे। ऐसे करोड़ों वानर पैदा हुए।

**-वा.रा.बा.17**

द्वापर में सबको कहा था-

**वसुदेव-देवकी सुत बन कर, नारायण भूपर आएंगे।**
**गोपियां गोप बन देव गणों, हम सब भी ब्रज में जाएंगे।**
**- कमल -"जय श्री कृष्ण"**

मन में विश्राम लेकर धरती और जो कहा सो करने सब देव गए। ब्रह्मा के आदेश का पालन किया।–
**वनचर देह धरी क्षति माहीं, अतुलित बल प्रताप तिन पाहीं।**

पर्वत, वृक्ष, नख इन्हीं आयुधों के साथ, प्रभु के अवतार लेने की प्रतीक्षा करने लगे। यह चरित्र रावण ने सुना तो विचार किया कि जन्म लेते ही मार दूंगा। (कंस ने भी यही सोचा था।) सूर्यवंशी मेरे वश में हैं क्या मारेंगे। फिर भी दंडकारण्य में दशानन ने एक थाना बना दिया। जन्म मृत्यु की सूचना दो,कर लो।

महाराजा दिलीप ने थाना खत्म किया। रावण उनका बल देखने आया। रनिवास में गया।(ब्राह्मणों को रोक नहीं थी) अपना रूप दिखाया तो रानियां डरकर भागी। सरयू तट गया जहां महाराज दिलीप ने, पूजा करते करते, चावल के दाने फेंके। लोगों ने कारण पूछा तो कहा कि वन में एक सिंह ने गाय पकड़ी थी। ये दाने उसकी रक्षा के लिए फेंके हैं। रावण ने जाकर, एक मरा सिंह देखा। चांवल के दाने तीर बनकर उसके शरीर में लगे थे।

रावण सीधा अपने घर गया। राजा ने महल में रावण के आने के समाचार सुन, अंजुरी में जल ले, दक्षिण दिशा में छोड़ दिया।–

**भये विशिख दश लक्ष तब, कह नृप लंकहिं जाहु।**
**सहित त्रिकूट समुद्र में, बोरि फिरहु तेहि नाहु।।**
**(विशिख- बाण, बोरि- डुबा कर, नाहु- स्वामी सहित)।**

तीखे बाण, पवन को तिरस्कृत करते गए और नगर को उलटने लगे। तब मंदोदरी के विनय करने, दिलीप की दुहाई देने पर लोटे। राजा सोचकर चुप रहे।

दिलीप के बाद, राजा रघु से कर मांगा। महाराज रघु ने पवन बाण से, लंका के घर ढहाए। तब भी मंदोदरी की विनय से शांत हुए। रघुवंशी अज से युद्ध किया तो पवन अस्त्र से, सेना सहित लंका पहुंचा दिया। अप्रतिम तेज जानकर चुप रहा।
फिर दशरथ हुए-

**दश सहस्त्र रवि कर लखे, दशों दिशा रथ जाहि।**
**दश शिर रिपु प्रकटे सुवन, कहिए दशरथ ताहि।।**
**(रवि कर लखे- किरणों के समान तेज, सुवन-दससिर वाले का शत्रु पुत्र हो)**

जिसमे दस रथियों का बल हो वह दशरथ।
जिसमें दस हजार सूर्य किरण सा तेज हो वह दशरथ।
जिसका रथ दसों दिशाओं में जा सके वह दशरथ।
जिसके घर दशानन को मारने वाला पुत्र पैदा हो वह दशरथ।

दूत भेजकर, कर मांगा तो दशरथ ने, अपने तीरों से लंका के दरवाजे बंद कर दिए। दूतों से कहा-
**जो रावण पट लेइ उधारी, तो हम कर देवहिं बिन रारी।**

रावण से द्वार नहीं खुले, हार मानी तब बाण लोट आए। रावण ने फिर तप किया और ब्रह्मा से मांगा कि राजा दशरथ के वीर्य से कोई पुत्र ही उत्पन्न न हो। स्रष्टा मन में दुख मान, एवमस्तु कहकर लोटे।

एक बार रावण कौशलपुरी गया। कौशल्याजी का हरण किया और मंजूषा राघव मच्छ को सौंप दी। ब्रह्माजी रावण का रूप धरकर वह पुत्री मांग लाए और वन में धर दी।

रावण ने कौशल नरेश पर आक्रमण कर उन्हें जीतकर कौशल्या का हरण किया। पिटारी में बंद कर समुद्र में तिमिंगल मछली को देकर घर गया। देवयोग से दशरथ के हाथ पिटारी लगी।कौशल्या को देख गंधर्व विवाह किया। सब घर आए। नगर में मंगल छाया। सुमंत ने मंजूषा का पट खोलकर कन्या को देखा। पूछा किसकी कन्या हो। उन्होंने बताया, हम कौशल राज कन्या हैं। यहां कौन लाया पता नहीं।

सुमंत ने कन्या, रोते बिलखते कौशलपुर राज परिवार को सौंप दी। उनके पूछने पर अपने महाराज का परिचय दिया-

**अवधपुरी नृप दशरथ नामा, धर्मधुरंधर सब गुण धामा।**
**तासु सचिव मैं सुनहुं नृप, सुनि अति भयहु उछाह।**
**कह्यो कि अब यहि सुता कर, करिहौ तिन संग ब्याह।।**

तुरत नेगी और ब्राह्मण को भेजकर टीका किया और धूम धाम से ब्याह हुआ। विरधासन की सयानी कन्या से, सुमंत का ब्याह हुआ।

*रावण ने ब्रह्माजी से कहा मैने दशरथ को मार, कौशल्या को छुपा कर आपका वचन असत्य कर दिया है।

ब्रह्मा बोले "ॐ पुण्याहम"। रावण चौंककर बोला क्या मतलब। ब्रह्माजी बोले दोनो का विवाह तो हो चुका। अचरज कर रावण ने पिटारी देखी तो तीनों को देख मारने लगा। ब्रह्माजी ने रामजी के कोप का भय दिखाकर रोका।

**-आनन्द रामायण**

कौशलराज ने धूम धाम से दशरथ कौशल्या का ब्याह किया और अपना राज्य भी अवध में मिला दिया। फिर काश्मीर से अश्वपति की पुत्री कैकेई और सिंहलराज (मगध) के राजा सुमित्र की पुत्री सुमित्रा से दशरथजी ने ब्याह किया।

*कुल सात सो ब्याह और किए।

**- आनन्द रामायण सर्ग 01**

*राजा दशरथ के तीन पत्नियों के अलावा 60000 रानियां और थी जो सती हुई ।

**-कम्ब रामायण**

दशरथजी की सभी नारियां, पति अनुकूल रहती। दशरथ ने तप कर, भगवान को पुत्र पाने का वर पाया था।

यहां तक पार्वतीजी के पहले प्रश्न "निर्गुण ब्रह्म सगुण कैसे" का उत्तर शंकरजी ने दिया।

अयोध्या में -

**कामी वा न कदर्यो वा नृशंसः पुरुषः क्वचित्।**
**द्रष्टुं शक्यमयोध्यायां नाविद्वान् न च नास्तिकः।।**
**(कदर्यो- कृपण, नृशंसः- क्रूर, नाविद्वान्- मूर्ख)**

**- वा.रा.बा.06.08**

***कांबोज,बाल्हीक,वनायु ओर सिंधुनद के श्रेष्ठ अश्व अयोध्या में थे।**

**- वा.रा.बा.06.22**

*अयोध्या तीन योजन में फैली सघन नगरी थी। जहां दो योजन में तो युद्ध करना भी असंभव था। इसीलिए अयोध्या कहते थे।

**-वा.रा.बा. 06.26**

मूल रामायण 03-

प्रभु अवतार कथा पुनि गाई,पुनि शिशु चरित कहेसि मन लाई।

अब आगे -

**एक बार भूपति मन माही, भइ गलानि मोरे सुत नाहीं।**

*दशरथजी के कहने पर सुमंत्र ने पुत्र प्राप्ति के लिए अश्वमेध यज्ञ हेतु परामर्श के लिए सभी विद्वान ऋषियों को बुलाया।

**- वा.रा.बा**

क्योंकि -

**विधिहीनस्य यज्ञस्य सध्यः कर्ता विनश्यति।**
**विधिहीन यज्ञ का अनुष्ठानकर्ता यजमान तत्काल नष्ट हो जाता है।**

**- वा.रा.बा.08.18-**

द्वैविद्यं ब्रह्मचर्यस्य भविष्यति महात्मनः।

सुमंत्र ने कहा महाराज ब्रह्मचर्य दो प्रकार के होते है। एक दंड धारण युक्त मुख्य ब्रह्मचर्य दूसरा ऋतुकाल में पत्नी समागम गौण ब्रह्मचर्य

**- वा.रा.बा.08.05**

तुलसी बाबा लिखते हैं-

**गुरु गृह गए तुरत महिपाला, चरण लागि करि विनय विशाला।**
**निज दुख-सुख सब गुरुहिं सुनायउ, कहि वशिष्ठ बहु विधि समझायउ।**
**धरहु धीर हुईहै सुत चारी, त्रिभुवन विदित भगत भय हारी।**

*अयोध्या में वशिष्ठजी और वामदेवजी के अलावा महाराज दशरथ के गुणी अर्थशास्त्र के ज्ञाता ये आठ विद्वान सलाहकार मंत्री थे।-

**धृष्टिर्जयंतो विजयः सुराष्ट्रो राष्ट्रवर्धनः।**
**अकोपो धर्मपालश्च सुमंत्रश्चाष्टमोर्थवित्।।**

**- वा.रा.बा.07.03-**

**सुयज्ञोप्यथ जाबालिः काश्यपोप्यथ गौतमः।**
**मार्कण्डेयस्तु दीर्घायुस्तथा कात्यायनो द्विजः।।**

**- वा.रा.बा.07.03**

ये सब-

**कुशला व्यवहारेशु सौहृदेशु परीक्षिताः।**
**प्राप्त कालं यथा दंडं धारयेयुः सुतेश्वपि।।**

**(परीक्षिताः-आजमाए, परीक्षा किए हुए)**

**-वा.रा.बा.07.10**

ओर-

जाग्रतो नयनचक्षुषा।

नीति रुपी नेत्रों से देखते हुए सदा सजग रहते थे।इसी हेतु सभी मंत्री अपने गुणों से राज्य में गुरु तुल्य माने जाते थे।

**- वा.रा.बा.07.16**

वशिष्ठजी बोले-

**चिंता है बड़ी चिता से भी, नर को निर्जीव बनाती है।**
**मुर्दे को चिता जलाती है, चिंता जीते को खाती है।।**

**- राधेश्याम रामायण**

*सुमंत्र ने दशरथजी से कहा कि एक समय सनतकुमारों ने ऋषियों को कहा था कि दशरथ के बुलाने पर ऋष्यश्रृंग आकर यज्ञ करवाएंगे जिससे उनके घर चार दिव्य पुत्र उत्पन्न होंगे।
*दशरथजी की शांता नामक एक कन्या थी जिसे अंगराज रोमपाद ने मांग लिया। मित्रता थी सो दे दिया। एक बार अंग देश में अकाल पड़ा। महात्माओं ने कहा यदि विभांडक ऋषि के पुत्र, ऋष्यश्रृंग आवे तो वर्षा हो। तब वैश्याए उन्हें लेकर आई। रानियों संग राजा ऋष्यश्रृंग को आमंत्रित करने गए और सात दिन रुककर ऋषि को लेकर आए।

**- वा.रा.बा.11**

बाबा गाते हैं -
श्रृंगी ऋषिहिं वशिष्ट बुलावा,पुत्र लागि शुभ यज्ञ करावा।
*वशिष्ठजी के कहने पर सुमंत्र ने यज्ञ हेतु धार्मिक राजा, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और सहस्त्रों शूद्रों को आमन्त्रित किया। मिथिला नरेश जनकजी को सुमंत्र स्वयं जाकर लाए।

**- वा.रा.बा.13**

*यज्ञ दक्षिणा में राजा ने होता, उद्गाता, अध्वर्यु और ब्रह्मा को चारों दिशाओं का राज्य दे दिया उन्होंने उसके बदले दक्षिणा का कहकर राज्य लौटाया। तब राजा ने उन्हें दस करोड़ स्वर्ण मुद्रा, दस लाख गौ, रजत मुद्रा दी। सभी ने वह सारा धन ऋष्यश्रृंग्य और वशिष्ठ को दे दिया जिन्होंने उसका न्यायोचित बंटवारा किया।

**-वा.रा.बा.14**

*अनादर पूर्वक दिया गया दान दाता को नष्ट कर देता है।

**- वशिष्ठजी - वा.रा.बा.13-**

अहो तृप्ताःस्म भद्र।।
यज्ञ का प्रसाद पाकर सब कहते "हम तृप्त हुए"।

**- वा.रा.बा.14**

* ऋष्यश्रृंग्य ने पहले अश्वमेध और फिर अथर्ववेद के मंत्रों से पुत्रेष्टि यज्ञ करवाया था।

**-वा.रा.बा.15**

- यज्ञ में आए देवता ब्रह्माजी से बोले कि आपके वरदान से दशानन सबपर अधिकार कर बैठा है। उसको-

**नैनं सूर्यः प्रतपति पार्श्वे वाति न मारूतः।**
**चलोर्मिमाली तं दृष्ट्वा समुद्रोपि न कंपते।।**
**(चलोर्मिमाली- उत्ताल तरंगें)**

**-वा.रा.बा.15.10**

मुनि की भक्ति सहित आहुतियों से अग्नि चरु लेकर प्रकटे और कहा कि यह खीर रानियों में यथा योग्य भाग बनाकर बांट दो।
- यज्ञ से एक दिव्य प्रकाशमान प्रजापति लोक का पुरुष प्रकट हुआ। उसके हाथ में सोने की अद्भुत खीर से भरी परात थी जो चांदी के ढक्कन से ढकी थी -

**दिव्यपायससम्पूर्णाम् पात्रीं पत्नीमिव प्रियाम्।**
**प्रगृह्य विपुलां दौर्भ्यां स्वयं मायामयीमिव।।**

**- वा.रा.बा.16.15**

महाराज ने आधा भाग कौशल्या को दिया। बचे आधे भाग के दो भाग कर एक कैकई को दिया।
बचे भाग के फिर दो विभाग कर,कौशल्या और कैकई का हाथ धरवाकर सुमित्रा को दिया।-

**जैसे कोई अति दीन हीन, वैभव अखूट पा जाते हैं।**
**त्योंही वह पायस पाकर के, दशरथ आनंद मनाते हैं।।**
**कौशल्या को दे अर्ध भाग, आधे के फिर दो भाग किए।**
**इक भाग सुमित्रा को देकर, आधे के फिर दो भाग किए।।**

**कैकई रानी को सौंप एक, नृपवर ने तनिक विचार किया।**
**जो शेष अंश था शेष हेतु, तत्काल सुमित्रा हाथ दिया।।**
**- कमल- वा.रा.बा.16**

* एक गिद्धनी ने कैकई के हाथ से पायस लेकर अंजनी पर्वत पर गिराया जिसे अंजना ने ग्रहण किया। उनके गर्भ से हनुमानजी का जन्म हुआ।बाद में कौशल्या और सुमित्रा ने कैकई को अपना भाग दिया।

**- आनन्द रामायण**

गोस्वामीजी ने कहा भी हैं –

**जेहि सरीर रति राम सों, सो आदरहिं सुजान ।**
**रुद्र देह तजि नेह बस, बानर भे हनुमान॥**
**इस प्रकार सभी गर्भवती हुई। सुख संपति छाई।**
**ओर फिर -**
**योग लग्न गृह वार तिथि, सकल भये अनुकूल।**
**चर अरु अचर हर्षयुत, रामजन्म सुख मूल।।**

नवमी तिथि मधुमास पुनीता,शुक्ल पक्ष अभिजित हरि प्रीता।

**(मधुमास- चैत्र)**

अभिजीत मुहूर्त, पुनर्वसु नक्षत्र था। प्रीत योग।-

**मध्य दिवस अति शीत न घामा,पावन काल लोक विश्रामा।**

ऐसे शुभ अवसर पर जब सर्वत्र आनंद छाया था। देवता विनती करने आए और-
सुर समूह विनती करि,पहुंचे निज निज धाम।जगनिवास प्रभु प्रगटे,अखिल लोक विश्राम।।
बाबा गाने लगे -

**भये प्रकट कृपाला दीन दयाला, कौशल्या हित कारी।**
**हर्षित महतारी मुनि मन हारी, अद्‌भुत रूप निहारी।।**
कैसे हैं-
**लोचन अभिरामा तनु घन श्यामा, निज आयुध भुज चारी।**
**भूषण वन माला नयन विशाला, शोभासिंधु खरारी।।**

दोनो हाथ जोड़कर, माता बोली, आपकी स्तुति कैसे करूं। वेद कहते हैं आप तीन गुण और ज्ञान से भिन्न हो। ब्रह्मांड जिसके हृदय में रहे, वह मेरे उदर में रहे यह सुनकर धीरों की मति, स्थिर नहीं रहती। प्रभु ने पूर्व जन्म की कथा सुनाई जिससे पुत्र का प्रेम आवे –

**माता पुनि बोली सो मति डोली, तजहुं तात यह रूपा।**
**कीजै शिशु लीला अति प्रियशीला, यह सुख परम अनूपा।।**

तब -

**सुनि वचन सुजाना रोदन ठाना, है बालक सुर भूपा।**
**यह चरित जे गावहिं हरिपद पावहिं, ते न परहिं भव कूपा।।**
**विप्र धेनु सुर संत हित, लीन्ह मनुज अवतार।**
**निज इच्छा निर्मित तनु, माया गुण गोपार।।**
**(गोपार- माया, गुण और इंद्रियों से परे)**

चैत्र शुक्ल दशमी को भरत, एकादशी को लक्ष्मण और शत्रुघ्न का जन्म हुआ। चारों भाइयों की जन्म कुंडली देखें तो राम, लक्ष्मण और शत्रुघ्नजी के सभी ग्रह एक जैसे ही स्थानों पर बैठे हैं। तीनो के वृहस्पति, चंद्र, शनि, मंगल और सूर्य मध्य में है। सबसे उच्च शनि है।

(चैत्र शुक्ल नवमी, पुनर्वसु नक्षत्र, कर्क लग्न में रामजी का जन्म हुआ। पुष्य नक्षत्र, मीन लग्न में भरत, अश्लेषा नक्षत्र, कर्क लग्न में लक्ष्मण और शत्रुघ्न का जन्म हुआ।)

यहां पार्वतीजी का दूसरा प्रश्न पूर्ण हुआ।

समय आने पर बालक का रोना सुन, सभी रानियां आईं। दासियां दौड़ीं। पुरवासी आनंद मग्न हुए। महाराज को सूचना दी-

दशरथ पुत्र जन्म सुनि काना,मानहुं ब्रह्मानंद समाना।

दशरथजी हर्षातिरेक से उठ न पाए। जिनका नाम सुनने से शुभ होता है वे मेरे घर आए हैं। बाजे बजाओ। गुरुजी को बुलावा भेजा। वे बहुत से ब्राह्मणों संग राजद्वारे आए।

कांति की अधिकता से, बालक देखा नहीं जाता। नांदी मुख श्राद्ध, जात कर्म किया। स्वर्ण, मणि, गौ दान दिया। आकाश से पुष्प वृष्टि हुई। विचित्र ध्वजा पताका बनाई, लगाई।

दर्शन करने -

वृन्द वृन्द मिलि चलीं लुगाई,सहज श्रृंगार किए उठि धाई।

यहां रामजी सहज हैं तो सहज श्रृंगार। वहां द्वापर में कृष्ण जी थोड़ा नटखट हैं तो -

"मन भर कर श्रृंगार किया।"

**- कमल -जय श्री कृष्ण**

स्वर्ण कलश, मंगल सामग्री (हल्दी, दूब, दही)

थाली में धरकर, राज मंदिर आईं। बंदीगणों ने यश गान किया।-

**सर्वस दान दीन सब काहू, जेहि पावा राखा नहिं काहू।**
**(सब काहू- सबको, सब ने)**

कस्तूरी, चंदन, केसर की कीच मचगई। घर-घर में आनन्द छाया। सुखकंद के जन्म का हर्ष मना।

कैकेई और सुमित्रा का आनंद अवर्णनीय है -

**कौतुक देखि पतंग भुलाना, एक मास तेहि जात न जाना।**

(पतंग- सूर्य)

खगोल की गति ठहरी-

**मास दिवस का दिवस भा, मर्म न जानै कोइ।**
**रथ समेत रवि थाकेउ, निशा कवन विधि होइ।।**

तुलसी ने यह गुरु कृपा से जाना। शिवजी बोले, गिरिजा, एक और गुप्त बात बताता हूं। वहां यह चरित्र देखने, काकभुषुण्डि और मैं मनुज रूप से गली में फिरते थे।

राजा ने दान देकर, सबके मन में संतोष किया। इसी आनंद में कुछ दिन बीते कि नामकरण का अवसर आया। वशिष्ठजी को बुलाया। गुरु बोले-

जो आनंद सिंधु सुख राशी,सीकर ते त्रैलोक्य सुपासी।

(सीकर- सीक को जल में डूबोकर धरती में पटकने से जो कण निकलते हैं उन्हें सीकर कहते हैं, ते- से लेकर, त्रैलोक्य सुपासी- त्रैलोक्य का सुख)-

सो सुखधाम राम अस नामा,अखिल लोक दायक विश्रामा।

(दायक विश्रामा- जगत इनमें विश्राम पाता है, इनसे विश्राम पाता है।)-

विश्व भरण पोषण कर जोई,ताकर नाम भरत अस होई।

(पोषण- अपनी भक्ति, सेवा, भ्रातृस्नेह, त्याग, साधुता से पोषण करने वाले)-

**जाके सुमिरण ते रिपु नासा, नाम शत्रुघन वेद प्रकाशा।**
**लक्षण धाम राम प्रिय, सकल जगत आधार।**
**गुरु वशिष्ठ तेहि राखेउ, लक्ष्मण नाम उदार।।**

(आधार- शेष जिनका अपना कुछ नहीं, सब रामजी के ही लिए करते हैं जो धरती धारण करते हैं, उदार- परिपूर्ण-जो राम का स्नेही हो वही परिपूर्ण, इनमें सब गुण हैं)।

गुरुजी बोले, महाराज आपके चारों पुत्र वेद के तत्व, प्राण हैं। हवि अंश से इनका संग सबल हुआ। श्याम गौर जोड़ियां निरख माताएं तृण तोड़ती। कहीं नजर ना लग जाए। चारों शील, रूप, गुण के आगार पर राम तो क्या कहने सरकार-

**व्यापक ब्रह्म निरंजन, निर्गुण विगत विनोद।**
**सो प्रभु प्रेम भक्ति वश, कौशल्या के गोद।।**

(निरंजन- माया रहित, विनोद- जन्म, मृत्यु, क्रीड़ा रहित, प्रेम- अपने सेवक जय विजय, प्रतापभानु पर, भक्ति- मनु शतरूपा, नारद)

मूल रामायण 04/01-

**बाल चरित कहि विविध विधि, मन मंह परम उछाह।**
**ऋषि आगमनु कहेसि पुनि, श्री रघुवीर विवाह।।**

कोटि काम सी छवि। नील कमल। लाल चरणों में नख मानो कमल पात में मोती। कुलिश, वज्र, ध्वज, अंकुश चिन्ह, कमर में तगड़ी, पैरों में नूपुर, बड़ी भुजा, ह्रदय पर सिंह का नख, कौस्तुभ मणि, हीरों के हार, विप्र पद चिन्ह, शंख सा त्रिरेखा वाला कंठ, शोभायमान ठोडी, दो दो दांत, लाल होठ, सुंदर नासिका, मनहारी तिलक। सही और सटीक लिखा है -

"श्री राम चंद्र कृपालु ...."

सुंदर कान, नाक, गर्भ के चिकने बाल और तोतले बोल, पीला झबला, घुटनों से चलना। वाह।

शिवजी कहते हैं -

**रूप सकहिं नहिं कहि श्रुति शेखा, सो जाने स्वप्नेहु जिन देखा।**

है पार्वती जिन्होंने राम चरण में प्रेम किया उन्हें यह दरस सुख संभव है। जगत को बनाने वाली माया जिसके भृविलास से नाचे उसी का भजन श्रेष्ठ है। मन, कर्म और वाणी की चतुराई को त्यागकर भजन करने वालों पर रामजी कृपा करते हैं। प्रभु ने सब को सुख दिया। माताएं ललना को पलना पौढ़ाती। कभी गोदी लेती। बाल गीत बनाकर गाती हैं।

एक बार मां ने नहला कर पलना पौढ़ाए। कुल देव, इष्ट की पूजार्थ पकवान बनाए। भोजन शाला में रामजी को भोजन करते देखा। डरी। वापिस जाकर देखा तो पलने में पौढ़े हैं। फिर पाक शाला में देखा तो मति भ्रम जाना। माता की दशा देख मुस्काए। माता को अपना अखंड और अद्भुत स्वरूप दिखाया जिसके रोम रोम में करोड़ों ब्रह्मांड हैं। क्या क्या हैं –

**अगणित रवि शशि शिव चतुरानन, बहु गिरि सरित सिंधु महि कानन।**
**काल कर्म गुण दोष स्वभाऊ, सो देखा जो सुना न काऊ।**
**देखी माया सब विधि गाढ़ी, अति सभीत जोरे कर ठाडी।**

माया हाथ जोड़े खड़ी थी। नचाने वाली माया, छुड़ाने वाली भक्ति देखी। विस्मय से आंखे बंद करके बैठ गई। रामजी ने देखा, मां अचरज में हैं तो पुनः बालक स्वरूप हो गए।

स्तुति कर नहीं सकती। जगत पिता को बालक जाना। रामजी ने मां को समझाया। यह रहस्य किसी से मत कहना। मां बोली प्रभु अब आपकी माया मुझे न व्यापे।

रामजी थोड़े बड़े हुए। चूड़ा करण, मुंडन किया।

(जन्म से पहिले या तीसरे वर्ष मुंडन करने से वीर्य दोष जाता रहता है)। चूड़ा पहनाया।

राजा भोजन को बुलाते तो बाल समाज त्यागकर नहीं आते पर मां के बुलाने पर, ठुमक कर भाग आते। (बचपन से पिता नहीं माता का कहा माना)

कवित्त -

**तनु की ध्युति स्याम सरोरुह लोचन, कंज कि मंजुलताई हरे।**
**अति सुंदर सोहत धूरि भरे छवि, भूरि अनंग कि दूरि टरे।।**
**दमके दंतियां ध्युति दामिनि सी, किलकै कल बाल विनोद करे।**
**अवधेश के बालक चारि सदा, तुलसी मन मंदिर में बिहरे।।**
**कबहूं शशि मांगत रारि करे, कबहूं प्रतिबिंब निहारि डरे।**
**कबहूं करताल बजाय के नाचत, मातु सबै मन मोद भरे।।**
**कबहूं रिसिआय कहें हटके, पुनि लेत सोई जेहि लागि अरे।**
**अवधेश के बालक चारि सदा, तुलसी मन मंदिर में बिहरे।।**

भोजन करते ओर अचानक भाग चलते। मुख में दही भात लिपटा है। वाह क्या छवि है। बलिहार।

एक दिन द्वार पर मदारी ने बंदर नचाया। रामजी ने हठ किया मुझे बंदर चाहिए। बहुत से बंदर दिए पर नहीं माने। तब वसिष्ठजी ने हंसकर कहा कि कपिराज सुग्रीव के पास एक बंदर है। उसे सादर बुलवाओ। दूत गए। सुग्रीव ने सादर महावीरजी को भेजा। रामजी ने हृदय से लगाया। अब तो हमेशा साथ रखते।

एक बार पतंग इंद्रलोक में गई। इंद्र पुत्र जयंत की पत्नी ने देखा। इतनी अद्भुत पतंग का स्वामी कैसा होगा। पतंग पकड़ ली। हनुमानजी को भेजा। वह बोली, इसके स्वामी का दर्शन करके छोड़ूंगी। हनुमानजी ने आकर समाचार कहे। तब रामजी ने कहा चित्रकूट में दर्शन होंगे। उसने दर्शन अभिलाषा में पतंग छोड़ दी।

एक बार एक व्यापारी आया। राजा को नग दिखाया। रामजी ने कुएं में डाल दिया। व्यापारी ने राजा से हठकर कहा, वही नग दो। तभी कूप से एक वृक्ष निकला जिसमे अमोल लाल लगे। पके और झरे। सब ले लेकर जाने लगे। सात दिन तक लूट मची। फिर वृक्ष अदृश्य होगया।

एक दिन एक व्याध आया। एक अद्भुत पक्षी दिखाया। रामजी ने उड़ा दिया। वह बोला, वही पक्षी लाकर दो। रामजी ने पृथ्वी में उसका पंख गाड़ा। जिससे वृक्ष बना -

लगत फूल फूटत तुरत,निकसत उड़त विहंग। बैठत महलन घरन पर,धावत बालक संग।। अयोध्यावासियों ने पाले और जिन्होंने देखा वे, देश देश के राजा भी पालने के लिए लेगये।

एक दिन एक शूकर आया। तत्काल रामजी ने, चरण पकड़ पृथ्वी पर दे पटका। उसका दिव्य शरीर हुआ। बोला, हरि भक्तों को सिर नहीं नवाने से, राजा से शूकर की योनि पाई है-

नृप से शूकर को तन पायो,लखि तव दरश भयो मन भायो।

कमलजी अब तुम भी अभिमान तजकर सबको प्रणाम करना आरंभ करदो ।

एक दिन एक सिंह ने ब्राह्मण की गाय पकड़ी।रामजी ने पांच बाण मारे जिनके लगते ही सिंह उत्तम गंधर्व होगया।-

पाय रूप निज कथा सुनाई,नारद हास्य देह अस पाई।

एक दिन भाई और मित्रों संग, सरयू में स्नान करते थे कि रावण प्रेरित एक असुर, सबको निगल गया। उसे मारकर, रामजी शीघ्र निकल आए। सब पुरजन प्रसन्न हुए।

एक दिन सरयू किनारे खेलते थे कि रावण एक पक्षी का रूप धर, इन्हें उठाना चाहता था। बिना फर का बाण मार लंका में गिरा दिया।-

**सात दिवस पर मुर्छा जागी, समुझि प्रताप लाज उर लागी।**

बाबा कहते है-

**जिनकर मन इनसन नहिं राता, ते जन वंचित किए विधाता।**

कैसे हैं राम जी, कवित्त-

**पद कंजनि मंजू बनी पनहीं, धनुहीं शर पंकज पाणि लिए।**
**लरिका संग खेलत डोलत है, सरयू तट चौहट हार हिये।।**
**तुलसी अस बालक सों नहिं नेह, कहा जप योग समाधि किए।**
**नर ते खर शूकर श्वान समान, कहो जग में फल कौन जिये।।**
**सरयू वर तीरहिं तीर फिरैं, रघुवीर सखा अरु वीर सबै।**
**धनुही कर तीर निशंग कसे, कटि पीत दुकूल नवीन फबै।।**
**तुलसी तेहि औसर लावनता, दश चारि सो तीन इक्कीश सबै।**
**मति भारति पंगु भई जो निहारि, विचारि फिरी उपमा न फबै।।**

12 वर्ष के हुए तो जनेऊ किया। फिर -

**गुरु गृह गए पढ़ न रघुराइ, अल्प काल विद्या सब पाई।**
**जाकी सहज श्वांस श्रुति चारी, सो हरि पढ़ यह कौतुक भारी।**

राजाओं की लीला के खेल खेलते। हाथ में धनुषबाण शोभित हैं। जहां से भाई और मित्रों संग गुजरते, इन्हें निरखकर सब थकित (मूर्तिवत) होते। (सुंदर, शेखर, वीर, मणिभद्र, तेजरूप, कलाधर, बाणरूप, रसरास रामजी के।

रसिक रसाल, सुभद्र, कमलाकर, कुशल, जटाधर, भरतजी के। वज्रशाल, रसमत्त, वातप, मंडन, विहारी लक्ष्मणजी के। सतानक, दमन, राज रंजन, चामीकर शत्रुघ्नजी के मित्र हैं।)

कौशलपुर के नर-नारी वृद्ध और बाल को रामजी प्रिय लगते हैं। अनुज और सखाओं संग भोजन करते। माता पिता की आज्ञा मानते। वेद पुराण सुनते और सुनाते-

प्रातकाल उठिके रघुनाथा,मातु पिता गुरु नावहिं माथा।

राजा की आज्ञा से नगर के कार्य करते।
शंकरजी बोले, अब आगे की कथा सुनो।
मूल रामायण 04/02-

**बाल चरित कहि विविध विधि, मन मंह परम उछाह।**
**ऋषि आगमनु कहेसि पुनि, श्री रघुवीर विवाह।।**

*प्राचीन काल में महान कुश राजा हुए उनके पुत्र कुशनाभ के पुत्र गाधि के पुत्र विश्वामित्रजी हुए।

**- वा.रा.बा.34**

विश्वामित्रजी महान ज्ञानी मुनि, सिद्धपीठ आश्रम में जब यज्ञ, तप करते थे तो मारीच और सुबाहु उन्हें परेशान करते थे।-

**गाधितनय मन चिंता व्यापी, हरि बिन मरहिं न निशिचर पापी।**

सोचा इसीहेतु जिन्होंने भूमि का भार हरने को अवतार लिया हैं उनके दर्शन करूं और दोनों भाइयों को लेआऊं।
(वे स्वयं इन्हें मारने में समर्थ थे किंतु बारह वर्ष से यज्ञ कर रहे थे जिसमें स्वयं को क्रोध करना वर्जित था।)
अविलंब अयोध्या के राजद्वार गए। राजा दशरथ ने सुना तो ब्राह्मणों को साथ लेकर अगवानी करने गए। दंडवत कर, सम्मान से भीतर लाए, अपने आसन पर बैठाया। चरण धोकर पूजा की ओर कहा कि मेरे समान आज कौन धन्य है। विविध भांति भोजन करवाया। चारों पुत्रों से प्रणाम करवाया। राम को देखकर मुनि तन की सुधि भूल गये।
राजा ने आगमन का प्रयोजन पूछा तो बोले कि जब मैं यज्ञ करता हूं तब असुर मुझे बहुत सताते हैं। मैं तुमसे सहायता मांगने आया हूं। अनुज सहित रघुनाथ को मुझे दो जिससे हम सनाथ होंगे। आपको यश और इन्है विजय और ब्याह का हर्ष मिलेगा।
* आप अपने पुत्र राम को मुझे दें। मैं उन्हें अमित श्रेय प्रदान करूंगा।

**- विश्वामित्रजी**

इतना सुना कि राजा का हृदय कांप गया। मुख की कांति कुम्हलाई।

* दशरथ ने कहा कुशिकनंदन मेरी आयु साठ हजार वर्ष की हो गई है जब मुझे संतान मिली है।

**- वा.रा.बा.19,20**

विप्र आपने विचार कर नहीं मांगा। अरे भूमि, धन, खजाना, देह, प्राण मांगलो सब दूंगा पर-
सब सुत प्रिय मोहिं प्राण कि नाई,राम देत नहिं बनै गुसाईं।
कहां निशाचर और कहां सुकुमार बालक। प्रेम रस सानी वाणी सुनकर मुनि को हर्ष हुआ। तब वसिष्ठ के बहुत समझाने-
(इनका अवतार भूमि का भार उतारने को हुआ है और रघुकुल रीति सदा चलि आई..)
पर राजा के संदेह का नाश हुआ। दोनों पुत्रों को बुलाया, हृदय से लगाकर, बहुत समझाया। कहा मुनि, ये मेरे प्राण हैं, प्राणों के स्वामी हैं। अब आप ही इनके माता-पिता हैं। सौंपा। राम लक्ष्मण जननी से मिलने, आशीष लेने गए। फिर धीर वीर महावीर हनुमानजी को विदाकर और वन में मिलने का कह मुनि के संग चले।-

**श्याम गौर सुंदर दोउ भाई, विश्वामित्र महानिधि पाई।**

मुनि ने सोचा ये ईश्वर ही हैं जो मेरे कारण पिता को छोड़ा है। मुनि ने ताड़का दिखाई जो क्रोध कर दौड़ी आई थी। रामजी ने एक ही बाण से उसके प्राण हर लिए और दीन जानकर अपना पद प्रदान किया। क्वांर कृष्ण पड़वां के दिन ताड़का मारी।
* एक राजपूत को चारों वर्णों की रक्षा के लिए स्त्री हत्या का दोष नहीं लगता है।

**- विश्वामित्रजी-वा.रा.बा.25**

(ताड़का सुकेतु यक्ष की कन्या थी। ब्रह्माजी को प्रसन्न कर,दस हजार हाथियों का बल पाया था। जम्भ के पुत्र सुंद से इसका ब्याह हुआ। जिससे मारीच की उत्पत्ति हुई। अनिष्ट करने के कारण अगस्त्यजी ने सुंद को मार दिया। तब दोनो मां बेटे ऋषि को खाने दौड़े। ऋषि ने राक्षस होने का श्राप दिया। तबसे ये वन ऋषियों से शून्य करने लगे थे।

* वनवास 14 वर्ष का ही क्यों ?

राजा दशरथ एक बार मृगयार्थ वन गये। प्यास से व्याकुल बेहोश हुए तब ताड़का ने प्राण रक्षा की। प्रसन्न होकर राजा ने वर मांगने का कहा। ताड़का ने 14 वर्ष अवध पर शासन मांगा। नियम यह था कि जो 14 वर्ष शासन करे (सिंहासन की 14 सीढ़ियां थी) वह स्थाई हो। वर दिया।धर्म रक्षार्थ जब राम गये तब ताड़का का वध किया। पिता वचन भंग पर दुख हुआ। विश्वामित्रजी ने ताड़का की अस्थियों से खड़ाऊ बनाई जिन्होंने अवध पर 14 वर्ष शासन किया।

**- रघुकुल रीति(पैतृक संपदा)-**

तब ऋषि निज नाथहिं जिय चीन्ही,विद्यानिधि कहं विद्या दीन्ही।

*विश्वामित्रजी ने रामजी को सरयू में स्नान कराके ये आयुध दिए- दंड चक्र, विष्णु, एन्द्रचक्र, वज्रास्त्र, ब्रह्मशिर, एशीक, ब्रह्मास्त्र, धर्म, काल, वरुण पाश, शुष्क, आर्द्र, वज्र, पैनाकास्त्र, नारायणास्त्र, आग्नेयास्त्र, वायव्यास्त्र, मोहन, प्रस्थापन, सौम्यवर्षण, संतापन, विलापन, गंधर्वास्त्र, मानवास्त्र, त्वष्ट्रास्त्र, शिशिर आदि। बला अति बला विद्या भी दी जिससे भूख प्यास नहीं लगती, कभी थकावट, ज्वर ओर रूप में विकार नहीं होता। सोते में भी राक्षस हमला नहीं कर सकते।

**- वा.रा.बा.22**

आयुध दे,आश्रम आ, कंद मूल फल अर्पित किए।

*विश्वामित्रजी का आश्रम वही सिद्धाश्रम था जहां विष्णुजी ने तपस्या की थी जहां कश्यपजी को उनके पुत्र बनने का वरदान दिया था। वामन रूप धरकर बली से पृथ्वी प्राप्तकर इंद्र को लौटाई थी।

**-वा.रा.बा.29**

प्रातः मुनि को यज्ञ करने का कह, आप रखवाली करने लगे। यह सुन मुनि द्रोही मारीच, सेना लेकर दौड़ा तो-

बिनु फर बाण राम तेहि मारा,शत योजन गा सागर पारा।

(शत योजन- चार सो कोस)

अग्निबाण से सुबाहु का वध किया। लक्ष्मणजी ने कटक काट दिया। देवों ने यश गाया। कुछ दिन रुके कथा सुनी। तब मुनि के कहने पर जनकजी के यहां धनुषयज्ञ देखने चले।

रास्ते में एक आश्रम देखा जहां पक्षी, मृग और कोई जीव जंतु नहीं था। एक शिला देख मुनि से पूछा। यह कौन। मुनि बोले-

**गौतम नारी शाप वश, उपल देह धरि धीर।**
**चरणकमल रज चाहती, कृपा करहु रघुवीर।।**

**(उपल- पत्थर)**

*ब्रह्मा ने परम सुंदरी अहिल्या रचकर धरोहर स्वरूप गौतमजी को दी। इंद्रादिक इस इच्छा में थे कि हमें देंगे। कुछ दिन ब्रह्मा ने गौतम की परीक्षा ली। एक दिन जाकर यथावत देखा तो गौतम को ही सौंप दी। एक दिन इंद्र ने गौतम का रूप धरकर अहल्या से विहार किया। जाते इंद्र को देख दोनों की दुष्टता विचार, गौतमजी ने इंद्र के शरीर में सहस्त्रों नारी गुप्तांग होने का श्राप दिया। (इंद्र के यज्ञ करने पर बाद में वे नेत्र हुए) अहिल्या को पत्थर की शिला होने का श्राप दिया। रामजी के छूने से उद्धार बताया।) रामजी ने शिला स्वरूपिणी अहिल्या का उद्धार किया।

**- आनन्द रामायण**

*मिथिला के वन में एक सूना आश्रम देख रामजी ने गुरु से पूछा। विश्वामित्रजी ने अहिल्या और इंद्र के कपट की कथा कही। लौटते समय इंद्र को कपटवेश में देख गौतमजी ने श्राप दिया -

**मम रुपं समास्थाय कृतवानसि दुर्मते।**
**अकर्तव्यमिदं यस्माद्व विफलस्त्वं भविष्यति।।**

**(समास्थाय- धारण करके)**

तू विफल अंडकोष हो जायेगा। इतना सुनते ही इंद्र के अंडकोष गिर गए।

**- वा.रा.बा.48.27**

अहिल्या को भी श्राप दिया -

**इह वर्षसहस्त्राणि बहूनि निवसिष्यसि।।29**
**वात भक्षा निराहारा तप्यन्ती भस्मशायिनी।**
**अदृश्या सर्वभूतानामाश्रमेअस्मिन् वसिष्यसि।।**

**- वा.रा.बा.48.30-**

**यदा त्वेतद् वनं घोरं रामो दशरथात्मजः।**
**आगमिष्यति दुर्धर्षस्तदा पूता भविष्यसि।।**

**- वा.रा.बा.48.31**

*राम लक्ष्मण ने विश्वामित्रजी के साथ गौतम आश्रम में प्रवेश किया। उनके आने से अहिल्या सब को दृष्टिगत हुई (श्राप के बाद से अदृश्य थी)। राम लक्ष्मण ने उनके चरण स्पर्श किए। अहिल्या ने भी अतिथि का पूजन किया। पावन हुई तब गौतमजी ने अहिल्या को अपनाया और रामजी की पूजा की।

**- वा.रा.बा.49**

रामजी ने मर्यादा रख जैसे ही चरण रज छुवाई -

**परसत पद पावन शोक नशावन प्रगट भई तप पुंज सही।**
**देखत रघुनायक जन सुखदायक सन्मुख हुई कर जोरि रही।।**
**अति प्रेम अधीरा पुलक सरीरा मुख नहीं आवे वचन कही।**
**अतिशय बड़भागी चरणन लागी युगल नयन जल धार बही।।**

धैर्य धर, रामजी को पहचान, उनसे भक्ति पाई और स्तुति की-

**मैं नारि अपावन प्रभु जग पावन रावण रिपु जन सुखदाई।**
**राजिवलोचन भवभय मोचन पाहि पाहि शरणहिं आई।।**

बुरे में भी अच्छा छुपा होता है-

**मुनि श्राप जो दीन्हा अति भल कीन्हा परम अनुग्रह मैं माना।**
**देखेऊं भरिलोचन हरि भवमोचन यहै लाभ शंकर जाना।।**

**(भवमोचन- संसार का भय हरने वाले)**

मांगा -

**विनती प्रभु मोरी मैं मति भोरी नाथ न मांगऊं वर आना।**
**पदकमल परागा रस अनुरागा मम मन मधुप करइ पाना।।**
**जेहि पद सुर सरिता परम पुनीता प्रगट भई शिव शीश धरी।**
**सोई पदपंकज जेहि पूजत अज मम शिर धरेउ कृपालु हरी।।**
**इहि भांति सिधारी गौतम नारी बार-बार हरिचरण परी।**
**जो अति मनभावा सो वर पावा गइ पतिलोक अनंद भरी।।**

बाबा कहते हैं, हे मंद तुलसी, अति मंद 'कमल' तुम भी ऐसे प्रभु का भजन करो।
आगे गंगा तट जा, प्रणाम कर सुख पाया। मुनि से गंगाजी की उत्पत्ति पूछी।

मुनि बोले, राम, आपके कुल में राजा सगर की दो पत्नियां, केशिनी ओर सुमति थी। सगर पुत्र हेतु दुखी थे। दोनो को साथ ले तप हित वन गए। जहां भृगु आश्रम था वहां सो वर्ष तप किया। तब भृगु ने प्रसन्न होकर वर मांगने को कहा। केशिनी ने एक पुत्र और सुमति ने साठ हजार पुत्र मांगे। मुनि ने तथास्तु कहा। प्रणाम कर तीनों अयोध्या आए। समय पाकर केशिनि ने असमंजस और सुमति ने एक तुम्बी जाई जिसमें साठ हजार छोटे छोटे पुत्र थे जिन्हें घृत से भरे घड़े में रखा। राजा प्रसन्न हुआ। विप्रों का विधि से मान किया।

राजकुंवर बड़े हुए। एक बार केशिनी पुत्र असमंजस ने प्रजा के बालकों को नाव में बिठाकर सरयू में डुबा दिया। प्रजा ने राजा से विनती की -

**तव सुत किन्हें पाप बहु, मारे बालक वृंद।**
**तुम कहं प्राण समान यह, सकल प्रजन कहं मंद।।**
**(मंद- शत्रु)**

राजा ने प्रजा को धैर्य दिया। असमंजस को देश निकाला दिया। जाते जाते इस योगी ने, सभी बच्चों को जिला दिया। असमंजस का एक पुत्र अंशुमान था।

राजा सगर ने अश्वमेध का घोड़ा छोड़ा। इंद्र ने रखवालों की नजर बचाकर, अश्व हरण कर, कपिल मुनी के आश्रम में छोड़ दिया। राजपुत्रों ने बहुत ढूंढा पर निराश लोटे। राजा के कहने पर वे वज्र के हाथों वाले बलवान पृथ्वी खोदने लगे। खोदते खोदते दिग्गजों (एरावत, पुंडरीक, वामन, कुमुद, अंजन, पुष्पदंत, सार्वभौम, सुप्रतीक आठ दिग्गज) के पास पहुंचे और सब को प्रणाम किया।

कपिलजी के आश्रम में घोड़ा देख क्रोधित होकर मुनि से बोले कि कपटी, दूसरों का धन लेकर पाताल में आ बैठा है। मुनि के वेश में तुम तस्कर हो। किसी ने बगुला, छली कहा। यह सुन कपिलजी ने नेत्र खोले। उनकी दृष्टि पड़ते ही सब जलकर भस्म हो गए।

शिवजी कहते हैं-

**उमा वचन जेहि समुझि न बोला, सुधा होइ विष तिक्तसु ओला।**
**(तिक्तसु- कड़वा)-**
**पावक जानि धरहिं कर प्राणी, जरहिं काहि नहिं अति अभिमानी।**
**जानि गरल जे संग्रह करहीं, सुनहुं राम ते कारण मरहीं।**
**(संग्रह- भक्षण)**

बिना कारण क्रोध किया और सब जलकर राख हो गए। बहुत दिनों तक कोई समाचार न पाकर राजा ने अंशुमान को भेजा। वे विष्णु भक्त संतों, दिग्गजों को प्रणाम करते चले। मार्ग में मामा गरुड़ को प्रणाम किया। उन्होंने सब वृत्तांत कहा। एक जलाशय में सब को तिलांजलि दी। गरुड़जी ने गंगा लाने को कहा और दोनो कपिल आश्रम गए। प्रणाम किया। मुनि ने घोड़ा दिया। घर आकर सब के भस्म होने का वृत्तांत कहा। समय पाकर अंशुमान फिर दिलीप, भागीरथ राजा हुए। अंशुमान, ।० दिलीप आदि गंगा हेतु तप कर के अमर हुए।-

जे सुरसरि लगि तनु तजि भूपा,सो तजि मूढ़ पियहिं जल कूपा।

**(लगि- के लिए)**

अपने पुत्र कारक को राज्य दे भागीरथजी गंगा हित तप को गए। तप से प्रसन्न हो ब्रह्मा आए और इसने वर मांगा। सब संतों की वृद्धि हो और गंगा भू पर आवे। ब्रह्माजी बोले ला दूंगा पर धारेगा कौन। वो पाताल चली जाएगी। शिवजी ही गंगा को धारण कर सकते है।

भागीरथजी ने एक अंगूठे पर खड़े होकर शिवजी की आराधना की। शिवजी ने प्रकट होकर कहा कि मैं धारण करूंगा। पर- उहां देवसरि शिव वचन,सुनि मन कीन्ह विचार।

जाऊं रसातल शिव सहित,जात न लावौं बार।।(देवसरि- गंगा)

शिवजी ने जटा बढ़ाई। ब्रह्माजी ने गंगा छोड़ी- छूटत शोर भयो अति भारी,चकित देव अहि दिग्गज चारी। सुरसरि पुनि हर जटा समानी,वर्ष एक तहं रही भुलानी।

कौतुक देख देव हर्षे। पुष्प वर्षे। भागीरथजी की विनती पर शिवजी ने, एक बूंद छोड़ी। जिससे तीन धार हुई। एक आकाश (मंदाकिनी), एक पाताल (दुख हर्ता प्रभावती) गई। तीसरी गंगा हुई जिसे देख, राजा को आनंद हुआ।

गंगाजी के कहने पर भागीरथजी वेगवान रथ पर आगे आगे चले। पीछे गंगाजी चली। उनके तटपर सब मज्जन, तर्पण कर पाप गलाते हैं। हरिद्वार, प्रयाग, काशी होती समुद्र में जा मिली। मार्ग में आते जान्हु ऋषि की संध्या सामग्री बहा दी। क्रोध कर वे गंगा पान कर गए। भागीरथजी के अनुनय करने पर, जांघ से निकाला। तबसे जाह्नवी नाम पड़ा।

समुद्र गंगा को पाकर सनाथ हुआ।–

**कौन बड़ाई जलधि मिलि, गंग नाम भौ धीम।**
**केहि की प्रभुता नहिं घटी, पर घर गये रहीम।।**

- रहीम ब्रह्माजी ने उसे गंगासागर नाम दिया जहां पाप रूप उल्लू भय खाता है। गंगाजी को भागीरथी नाम दिया।-

गंगाजी की अवतरण कथा सुन रामजी को हर्ष हुआ। वहां से स्नान कर चले और जनक नगर के निकट आए। पुर की शोभा निरख, अनुज सहित प्रसन्न हुए। पुर के चारों ओर वाटिका, पुष्पित बाग, फलित वृक्ष और वन पल्लवित हैं। कूप, बावड़ी, सर कमल युक्त हैं। धनिक (बेचने वाले), वणिक (खरीदने वाले) बैठे हैं। भवन ऐसे जैसे कामदेव ने चित्रित किए हों। जनक का निवास तो उपमा रहित था। किले को देख लगता जैसे सब भवनों की शोभा, उसने रोक रखी है। सीता मंदिर और भव्य। वज्र और मणि जड़ित दरवाजे लगे हैं। राजद्वारे मागध (वंश प्रशंसक), नट (नाचने वाले) की भीड़ है। अश्व, गज, रथ, शूर, मंत्री बहुत हैं। ताल के किनारे, पुर बाहर (पर बारा) बहुत से राजा रुके हैं। एक सुंदर बगीचा देख, मुनि ने विश्राम का निश्चय किया। रामजी ने सहज स्वीकृति दी।

विश्वामित्रजी के आने का समाचार पाकर, जनकजी मंत्री, योद्धा, ब्राह्मण, गुरु और जातिवालों को लेकर मिलने आए।

*शतानंदजी ने विश्वामित्रजी के सुयश और कठिन तप की कथा सुनाई। एकबार राजा विश्वामित्र की सेना का कामधेनु की सहायता से वशिष्ठजी ने अद्भुत सत्कार किया। राजा ने कामधेनु मांगी किंतु मुनि ने सादर मना किया। कामधेनु को राजा विश्वामित्र जबरदस्ती लेजाने लगे। वशिष्ठजी की आज्ञा पाकर कामधेनु ने राजा की सेना का सामना करने के लिए पल्हव, यवन मिश्रित शक, हुंकार से कांबोज, थन से बर्बर, योनि से यवन, शकृद्धेश (गोबर द्वार) से शक, रोम कूपों से म्लेच्छ, हारीत और किरात उत्पन्न किए जिनने विश्वामित्रजी की सेना का संहार करदिया।

निराश राजा विश्वामित्र ने तप करके महादेव से सभी अस्त्र शस्त्र प्राप्त किए और वशिष्ठजी के आश्रम पर आक्रमण किया। सभी जीवजंतु विचलित होकर भागे। वशिष्ठजी ने उन्हें रोका और एक डंडा (ब्रह्मदंड) लेकर राजा को ललकारा। राजा ने सभी दिव्य अस्त्र चलाए पर मुनि के ब्रह्मदंड से सब विफल

हुए। क्रोध के कारण वशिष्ठजी के रोमकूपों से अग्नि की किरणे निकलने लगी। ब्रह्मदंड भी कालाग्नि के समान धधकने लगा। तब ऋषियों ने वंदन किया। वशिष्ठजी शांत हुए। राजा विश्वामित्रजी बोले -

**धिग् बलं क्षत्रियबलं ब्रह्मतेजो बलं बलम्।**
**एकेन ब्रह्मदंडेन सर्वास्त्राणि हतानि मे।।**

**- वा.रा.बा.56.23**

* ऐसा कहकर वशिष्ठजी के साथ वैर बांध ब्राह्मणत्व प्राप्त करने के लिए तप करने लगे। प्रसन्न होकर ब्रह्माजी ने राजर्षि बनाया। राजा ने दुखी होकर पुनः तप आरंभ किया।

**- वा.रा.बा.59**

*अयोध्या नरेश त्रिशंकु ने वशिष्ठजी से सशरीर स्वर्ग जाने का यज्ञ करने का आग्रह किया। उनके मना करने पर उनके सो पुत्रों से भी यही कहा। उन्होंने जिद करने पर चांडाल होने का श्राप दिया। चांडाल त्रिशंकु विश्वामित्रजी के पास गया। उन्होंने आश्वासन दिया और यज्ञ हेतु न आने वाले आचार्यों को चांडाल होने का श्राप दिया। जब कोई देवता यज्ञ भाग लेने नहिं आए तो विश्वामित्रजी ने त्रिशंकु को सशरीर स्वर्ग भेजना आरंभ किया। इंद्र ने उसे गुरु आज्ञा विपरीत आचरणी मानकर वापिस लौटाया। त्रिशंकु की चीख सुन विश्वामित्रजी ने कहा "वहीं रुक"। तब विश्वामित्रजी ने नूतन नक्षत्र, सप्तर्षि बनाए और दूसरे इंद्र की सृष्टि करने लगे। देवताओं ने विश्वामित्रजी से ऐसा नहीं करने का निवेदन किया। उनकी सहमति के बाद देवों ने विश्वामित्रजी के बनाए सप्तऋषि और नक्षत्रों को सौरमंडल के बाहर स्थापित कर उनके बीच में त्रिशंकु को स्थान दिया।

**- वा.रा.बा.60,61**

*राजा अंबारिश के यज्ञ का पशु किसी ने चुरा लिया। ब्राह्मणों ने कहा कि किसी पुरुष को दक्षिणा देकर यज्ञपशु बना लो। राजा ऋचीक मुनि से एक लाख गौ, स्वर्ण मुद्राएं देकर उनके पुत्र शुनःशेप को ले आए। लोटते में पुष्कर में तपस्यारत मामा विश्वामित्रजी से मिलकर शुनःशेप ने अपनी पीड़ा कही। विश्वामित्रजी ने अपने पुत्र को शुनःशेप के स्थान पर बली पशु बनने और उनके इनकार करने पर चांडाल

होने का श्राप दिया। उन्होंने शुनःशेप को एक गुप्त रहस्यभूत स्तुति बताई जिसे सुनाकर इंद्र की कृपा से दीर्घायु हुआ। अम्बरीष का यज्ञ भी सफल हुआ।

विश्वामित्रजी को ब्रह्माजी ने ऋषि पद दिया। वे पुनः तपस्या में लगे तभी मेनका को देख उसमे रम गए। दस वर्ष बाद उससे विरक्त होकर हिमालय पर तप करने गए। ब्रह्माजी ने महर्षि का पद दिया। विश्वामित्र ने कहा मुझे ब्रम्हर्षि बना दो। ब्रह्माजी ने कहा कि आप अभी निष्काम नहीं हुए। वे दोनो हाथ उठाकर तप करने लगे। जाड़े में पानी में, गर्मी में पंचाग्नि तपने लगे। इंद्र ने रंभा को भेजा। उसे मुनि ने

पत्थर की होने ओर वशिष्ठ कृपा से उद्धार बताया। फिर तप की हानी देख बोले -

नैवं क्रोधं गमिष्यामि न च वक्ष्ये कथंचन।।

**- वा.रा.बा.64.17**

*वे फिर बिना श्वास लिए और निराहार तपस्या करने लगे। सो वर्ष बाद भोजन ग्रहण करने लगे तभी ब्राह्मण के वेश में इंद्र के मांगने पर वह भी देकर फिर तप करने लगे। घोर तप से उनके मस्तक से निकले धुंए से त्रिलोकी घबराई। तब ब्रह्माजी सहित सब देवों ने आकर उन्हें ब्रह्मर्षि कहा और दीर्घायु दी। विश्वामित्रजी ने कहा कि वशिष्ठजी मुझे ब्रह्मर्षि कहे तब मानूंगा। देवों के आवाहन पर वशिष्ठजी आए। विश्वमित्रजी को ब्रह्मर्षि कहा।

**- वा.रा.बा.65**

यह चरित्र सुन सब को आनन्द हुआ। जनकजी ने प्रणाम किया। मुनि और विप्रो से आशीर्वाद पाया। विश्वामित्रजी ने कुशल पूछकर राजा को बैठाया। तभी दोनो भाई आए जो फुलवारी देखने गए थे। सांवले और गौरे, कोमल, नेत्रों को सुख देनेवाले किशोरों को देखकर- उठे सकल रघुपति जब आए,विश्वामित्र निकट बैठाए।

विश्वामित्रजी ने दशरथजी की मार्यादा रखी कि जब सब आए तो राम फुलवारी देखने गए थे और जब राम आए तो सबने उठकर स्वागत किया। दोनो को देखकर सब सुखी हुए और जनक तो- मूरति मधुर मनोहर देखी,भयउ विदेह विदेह विसेखी।

क्वार शुक्ल द्वादशी को दर्शन हुआ। धैर्य धर मुनि को प्रणाम कर पूछा-कहहु नाथ सुंदर दोउ बालक,मुनि कुल तिलक कि नृप कुल पालक। ब्रह्म जो निगम नेति कहि गावा,उभय वेश धरि की सोइ आवा। सहज विराग रूप मन मोरा,थकित होत जिमि चंद्र चकोरा।
गुरु देव बताओ ये कौन हैं क्योंकि-

**इनहिं विलोकत अति अनुरागा, बरबस ब्रह्म सुखहिं मन त्यागा।**

विश्वामित्रजी बोले, आपने बिलकुल सही कहा है। ये सबको प्यारे हैं। यह सुन रामजी मुस्काए। मानो संकेत किया कि इतना ही बहुत है। आगे भेद मत खोल देना।
बोले ये-
रघुकुलमणि दशरथ के जाए,मम हित लागि नरेश पठाए।
ये राम और लक्ष्मण हैं जिन्होंने निशाचारों से मेरे यज्ञ की रखवाली की है।
जनकजी बोले, आपके चरणों का प्रताप है कि आनंद को भी आनंद देने वाले के दर्शन हुए। इंसानों में ब्रह्म जीव सा सहज स्नेह है। मुनि संग सब को लेकर नगर गए और सुंदर, सुखप्रद भवन में वास करवाया। रामजी ने मुनियों संग भोजन किया और विश्राम करने गए।
लक्ष्मण के हृदय में नगर दर्शन की लालसा है पर रामजी का भय, मुनि का संकोच रख प्रकट नहीं करते। रामजी ने लक्ष्मण के मन की बात जान ली।
*रामजी अपने हिस्से का मधुर भोजन लक्ष्मण को देकर ग्रहण करते थे।

**- वा.रा.बा.18**

हृदय में भक्तवत्सलता हिलोरे लेने लगी। जनकपुरवासी भक्तों को दर्शन देने की इच्छा हुई। गुरु की आज्ञा पाकर बोले-

**नाथ लखन पुर देखन चहहीं, प्रभु सकोच डर प्रगट न कहहीं।**
**जो राउर आयसु मैं पाऊं, नगर दिखाय तुरत लै आऊं।**

मुनि ने सहर्ष कहा। हे राम, दोनो भाई नगर देख, सुंदर मुख दिखा, शीघ्र आकर हमारा वियोग दूर करो। जहां जानकी, उर्मिला है वो सुखनिधान नगर देखो। आप धनुष तोड़ोगे इसलिए सुख निधान हो।
मुनि को प्रणाम करके चले। अनेक बालक संग हो लिए। कैसे हैं दोनो, पीत दुपट्टा, कमर में तरकस, सुंदर धनुष बाण, चंदन चर्चित, श्याम गौर, लाल चंदन का तिलक, सिंह कंध, आजानु बाहु, नाग मणिमाला, कमल से नेत्र, चंद्रमा सा मुख, त्रिताप हारी (दैहिक -जनक प्रण, दैविक- परशुराम का आना, भौतिक- धनुष टूटने पर राजाओं का युद्धरत होना)। कर्ण में सुवर्ण पुष्प या धतूरे के पुष्प जो दर्शकों को मुग्ध कर दे, चौकोन टोपी, कुंचित कैश, वाह क्या छवि है। बात फैल गई। अब तो-

**देखन नगर भूप सुत आए, समाचार सब लोगन पाए।**
**धाये धाम काम सब त्यागे, मनहुं रंक निधि लूटन लागे।**
**(रंक- जनकपुर की जनता रघुवंश के ऐश्वर्य विहीन थी)**

देख देख सुखी होते। घर के झरोखों से युवतियां निहारकर धन्य हुई। परस्पर कहती हैं कि इन्होंने कोटि काम छवि पाई है। कोई भी, किसी से भी, कितनी ही बार कह रही है।-
विष्णु चारिभुज विधि मुख चारी,विकट वेश मुख पंच पुरारी।
(पुरारी- त्रिपुरासुर के शत्रु शंकरजी)-

**अपर देव अस कोउ न आही, इहि छवि सखि पटतरिये जाही।**

**(पटतरिये- उपमा दें)**

इनके अंग अंग पर कोटि कोटि काम वारी वारी।एक बोली-

**ए दोउ नृप दशरथ के ढोटा, बाल मरालन के कल जोटा।**
**(ढोटा- बालक, बाल मरालन- बाल हंस, कलजोटा- शोभायमान जोड़ा)**

कौशिक यज्ञ के रक्षक और निशिचरों को मारने वाले। श्याम रामजी कौशल्या नंदन हैं। गौरे जो वो राम के पीछे हैं वे लक्ष्मण हैं। सुमित्राजी के सुपुत्र। यज्ञ रक्षा, अहिल्या उद्धार कर, धनुष यज्ञ देखने आए हैं । (अब जानकी की व्यथा दूर करने आए हैं यह बात एक अवध की जनकपुर में ब्याही ने कही।)

रामजी को देखकर एक बोली, जानकीजी के योग्य तो बस ये ही हैं। राजा देखेंगे तो प्रण तज देंगे। दूसरी बोली अरी देखलिए। स्वागत भी किया पर, अज्ञान वश प्रण नहीं तजने वाले। कोई बोली विधाता जानकीजी का भला करेंगे। यदि इनसे नाता हो तो हमारा भी भला होगा। कैसे-

**जो विधि वश अस बने संयोगू, तो कृतकृत्य होय सब लोगू।**
**सखि हमरे अति आरति ताते, कबहुंक यह आवै इहि नाते।**

अन्यथा तो पुराने पुण्यों के बिना इनका दर्शन दुर्लभ है। एक बोलि शिव चाप कठोर और ये अति सुकुमार हैं। दूसरी बोली नहीं री, देखने में कोमल हैं पर इनका अमित प्रभाव हैं। अहिल्या तार दी क्या वे धनुष तोड़े बिना रहेंगे। अरे जिस विधाता ने जानकीजी गढ़ी, उसी ने इन्हें बनाया है। सब प्रसन्न-

**हिय हर्षहिं वर्षहिं सुमन, सुमुखि सुलोचनि वृंद।**
**जाहिं जहां जहं बंधु दोउ, तहं तहं परमानंद।।**

(सुमन- पुष्प, अच्छा मन, कोमल चरण हैं इस लिए, पुष्प लगने से कभी तो ऊपर देखेंगे, परमानंद- परमानंद देने गए थे किंतु वहां तो जानकी के प्रताप से, जहां जाते परमानंद पाते हैं।)।

फिर पूर्व दिशा में जाकर धनुष यज्ञ की विशाल और सुंदर रचना का अवलोकन किया। पुर के बालक, सारी रचना आदर से दिखाते, मनोहर गात छूकर हर्षित होते। अपने अपने घर बताते, घर लेजाते। प्रीति देख दोनो चले भी जाते।

शिवजी बोले, पार्वती जिनकी निमेष से भुवनो की रचना हो वे भक्त हेतु धनुष यज्ञ शाला को निरख रहे हैं। देर हुई जान, डरते हुए गुरु के निकट चले-

**जासु त्रास डर कहं डर होई, भजन प्रभाव दिखावत सोई।**

बालकों को हठ पूर्वक विदा किया। लोटे। संकोच सहित गुरु को प्रणाम कर बैठे। संध्या, पुराण के बाद मुनि सोने गए। दोनो ने चरण दबाए। जिनके चरण चापने के लिए, योगी विविध यत्न करते हैं वे दोनो भाई मुनि के चरण दबा रहे है। शायद नगर भ्रमण की क्षमा मांग रहे हैं। गुरु के बार बार निर्देश पर रामजी सोने गए। (सेवा, दान और भोजन इन तीन अवसर पर गुरु की आज्ञा एक बार में नहीं माननी चाहिए) लक्ष्मण रामजी के चरण दबाने लगे तो हृदय से लगा, बार बार मना कर सोने भेजा। लक्ष्मण सोए नहीं लेट गए।

लक्ष्मण रात्रि बीतने पर मुर्गे की आवाज सुनकर उठे। गुरुजी से पहले रामजी उठे। शौचादि क्रियाओं, स्नान से निवृत्त हो गुरु को प्रणाम किया और आज्ञा पा श्रेष्ठ बाग में पुष्प लेने गए।

यहां तीनो ऋतुए सदैव विद्यमान है। मध्य में सरोवर है। मणियों की सीढ़ियां, बहुरंगी कमल खिले हैं। जलखग कूज रहे, भौंरे गूंज रहे है। यह आराम (बाग) रामजी को सुखद लगा। माली से पूछकर, मुदित मन पुष्प लेने लगे।
उसी समय सीताजी वहां आई। मां ने गौरी पूजन के लिए भेजी थी। साथ में चतुर सखियां गीत गाती हैं। निकट ही गौरी का दिव्य मंदिर है। सरोवर में स्नान कर, गौरी पूजन को गई। अनुकूल वर मांगा। (जनकजी के एक वर्ष के संकल्प का एक दिन शेष रहा था।) एक सखी फुलवारी देखने चली गई थी। उसने दोनो भाइयों को देखा और सीता के पास आई। सखियों ने उसे पुलकित, नैनो में जल भरे देखा तो हर्ष का कारण पूछा। बोली, दोनो कुंवर बाग देखने आए हैं। (राज कुंवर हैं सो फूल तोड़ने का भाव नहीं कहा बाग देखने का कहा।)-

**श्याम गौर किमि कहहुं बखानी, गिरा अनयन नयन बिनु बानी।**

सब हर्षित हुई। सीताजी अधिक उत्कंठित हुई। एक बोली ये तो वही हैं जो मुनि के साथ आए हैं। सब पर मोहिनी डाली है। सब जनक पुरवासी स्ववश किए हैं।-

**वर्णत छवि जहं तहं सब लोगू, अवशि देखिअहि देखन योगू।**

पुरानी प्रीति कोई न देखे पर दर्शन को नेत्र अकुलाने से, उसी सखी के साथ जानकीजी दर्शन करने चली।
(नारदजी ने भी ।कहा था तुम्हारा पहला मिलाप पुष्प वाटिका में होगा)
यहां -

**कंकन किंकिन नूपुर धुनि सुनि, कहत लखन सन राम हृदय गुनि।**

(गुनि- विचार कर)-

**मानहुं मदन दुंदुभी दिन्हीं, मनसा विश्व विजय कर लीन्हीं।**

जिधर से शब्द हुआ, उस ओर देखने लगे ओर सीता के मुखचंद्र पर, चकोर की नाई, रामजी के नैन लगगए। चंचल नैन अपना ध्येय पाकर अचंचल हुए। मानो निमि ने (अपनी संतानों का श्रृंगार स्थल देख सकुचा कर) स्थान तज दिया।
(राजा निमि ने यज्ञ करना चाहा। वशिष्ठजी इंद्र के यहां चले गए। लौटे तो निमि और गुरु में कहा सुनी हुई। दोनो ने श्राप दिया शरीर न रहे। गुरु ने शरीर छोड़ दूसरा शरीर धरा। पुरोहित ने प्रयास किया पर निमि ने योग मार्ग में स्थित हो शरीर धारण करने में अनिच्छा व्यक्त की और पलकों पर रहने का वर मांगा। ऋषियों ने तथास्तु कहा)
सीता की शोभा देख सुख पाया। वचन नहीं निकले। जैसे विरंचि ने रचकर, अपनी चतुराई दिखाई हो या जो सब को विरचती हैं, उनका दर्शन जनक पुरवासियों को करवाया। कैसी हैं जानकीजी -

**सुंदरता कहं सुंदर करहीं, छवि गृह दीप शिखा जनु बरहीं।**

(छवि गृह- छबीले घर में, शीशमहल, दीप शिखा- दीप मालिका, बरहीं- जलती है, वरीयता देती है)-
सब उपमा कवि रहे जुठारी,केहि पटतरऊं विदेह कुमारी।
(जुठारी- कवियों ने उपमा दी, दे दे के सभी उपमाएं जूठी कर दी है। अब वो विदेह कुमारी को कैसे दी जावे।)
सिय शोभा मन में वर्णन कर, अपनी दशा विचार, रामजी लक्ष्मण से बोले -

**तात जनक तनया यह सोई, धनुष यज्ञ जेहि कारण होई।**
**पूजन गौरि सखी लै आई, करत प्रकाश फिरत फुलवाई।**
**जासु विलोकि अलौकिक शोभा, सहज पुनीत मोर मन क्षोभा।**
**(सहज पुनीत- स्वाभाविक पवित्र, क्षोभा- चलायमान)**

शुभ शकुन देने वाले अंग फड़कते हैं।-

**रघुवंशिन कर सहज सुभाऊ, मन कुपंथ पग धरै न काऊ।**

मेरे जी ने कभी पराई नारि नहीं देखी-

**जिनके लहहिं न रिपु रण पीठी, नहिं लावहिं पर तिय मन दीठी।**

(रण पीठी- शत्रु जिनकी पीठ नहिं देखते, मन दीठी- मन और दृष्टि)-

**मंगन लहहिं न जिनके नाहीं, ते नर वर थोड़े जग माहीं।**

(मंगन- मांगने वाले, याचक, नाहीं- इनकार)

इसमें लक्ष्मणजी की प्रशंसा की है। उनका चित्त काम शत्रु ने चलायमान नहीं किया। परनारी सीता और सखियों को नहीं देखा और विश्वामित्रजी आदि रामजी की सेवा को मांगने वाले हैं, उन्हें ना नहीं किया। लक्ष्मण से बात करते हैं। मन सीता के रूप में लुभाया है। सीता के मुख कमल की शोभा मधुर भ्रमर की भांति पान करते हैं। कमल के मकरंद का पान करते समय, भौरा मौन रहता है। फिर उसी के आस पास गूंजता रहता है। ऐसे ही एक बार लक्ष्मण से बात करते हैं। एक बार सीताजी को निहारते हैं। एक टक क्यों नहीं देखते तो बाबा कहते हैं, भौंरा जो फूल पर बैठा रहे तो फूल को खेद होता है।

उधर सीताजी चारों ओर देखती हैं कि कुमार कहां गए। चिंता करती है। (तीन चिंता- चले गए क्या, मन की प्रीति चली न जाय, पिता का प्रण)

श्वेत लोचन मित्रता, श्याम शत्रुता, लाल मध्यस्थता के प्रतीक हैं। यहां श्रृंगार नहीं होने के कारण नेत्र श्वेत हैं। अब श्रृंगार क्यों नहीं तो भाई बाग के सर में नहाने के बाद, कहां से श्रृंगार करेंगी।

तभी लता ओट से सखियों ने सेन से दिखाए, वे रहे। सीताजी के नेत्र खोई निधि पाई हो ऐसे हर्षित हुए। राम की छवि पर ठहर गए। तलाश करते करते थक कर रुक गए। फंस गए। पलक ठहर गए। जितना सुना था उससे अधिक पाया। पिता के प्रण की गर्मी से तपी जानकी, राम दरस की चंद्र शीतलता देख, सुध भूल गई। अब दर्शन कैसे करे तो-

लोचन मगु रामहिं उर आनी,दीन्हें पलक कपाट सयानी।

(मगु-रास्ते से,उर आनी-हृदय में बिठा कर, पलक कपाट- पलक द्वार बंद कर लिए)

तभी-

**लता भवन ते प्रकट भये, तेहि अवसर दोउ भाइ।**
**निकसे जनु युग विमल विधु, जलद पटल बिलगाइ।।**
**(विमल विधु- दो निर्मल चंद्रमा, जलद पटल- बादलों की ओट, बिलगाइ- चीर कर)**

चीरने का अभिप्राय, जानकीजी की दर्शन अभिलाषा पूरी करने या जानकीजी को देखने की चाहत में रास्ते पर न जाकर, लताओं को चीरकर प्रकट हुए। कैसे हैं श्याम- गौर। नीले- पीले कमल से। सिर पर मोरपंख (निष्काम)। बीच में कुसुम कली के गुच्छे लगे हैं। तिलक, श्रम बिंदु, टेढ़ी भौंह, घुंघराले बाल, कमल से नेत्र, सुंदर ठोड़ी, सुंदर नासिका, सुंदर कपोल, मन मोहिनी हंसी, काम लजावन शोभा, शंख सा गला, मणियों की माला, हाथी के बच्चे की सूंड सी भुजाएं, बाएं हाथ में फूलों भरा दोना, केहरी कटि, पीत वस्त्र, शोभा, शील के निधान, सूर्य कुलभूषण रघुनाथजी को देख, सखियां भी सुधि भूल गई। तभी एक सयानी ने हाथ पकड़ कर कहा। (क्योंकि राज कुंवर सामने खड़े हैं सो बोल नहीं सकती। सीता ने आंखे बंद की है सो इशारा नहीं कर सकती)। अरे गौरी का ध्यान बाद में कर लेना। पहले राजकुमार को देख क्यों नहीं लेती। (रामजी को उनके प्रेम की विकलता न जान पड़े) अरे जिनके लिए गौरी को ध्याती हो वे सामने खड़े है। ये भूप किशोर हैं, चले जायेंगे। सकुचाकर सीताजी ने नेत्र खोले तो सामने दो रघु सिंहों को देखा। मन दुखी हुआ। कोमल रघुनाथ, कठिन प्रण जानकर मन दुखी हुआ। तब शीतल हुई सीता को संभाल, थोड़ा जोर दे, सखी जोर से बोली, चलो कल फिर इसी समय आयेंगे। (सीता के वियोग को

संयोग से ढक कर)। चलो देर होगई तो मां फिर नहीं आने देगी। या रामजी को संकेत किया कि कल फिर आना। या कल गुरु आने नहीं देंगे। गूढ़ वचन सुन सीता सकुचाई। मां का भय माना। रामजी को हृदय में धर, यह सोचकर कि मेरा शरीर पिता के वश है, घर चली। पक्षी, वृक्षों के बहाने मुड़कर रघुवीर की छवि देखती (शिव चाप को टूटा हुआ जान)

सुख, स्नेह, शोभा, गुण की खान जानकी को प्रभु ने जाता देखा। सीताजी गौरी के मंदिर आई। प्रार्थना करने लगी-

**जय जय जय गिरिराज किशोरी, जय महेश मुख चंद्र चकोरी।**

(गिरिराज किशोरी- गिरि जैसे उदार दाता की कन्या हो। मुझ पर अवश्य उपकार करोगी, महेश- महा ईश की भार्या हो सो सबकुछ कर सकती हो।)-

जय गजवदन षड़ानन माता,जगत जननि दामिनि धुति गाता।

(गजवदन- सिद्धि दाता की मां हो। मेरा मनोरथ सिद्ध करना कौनसी बड़ी बात है, षड़ानन- कार्तिक, गाता- देह)-

**नहिं तव आदि मध्य अवसाना, अमित प्रभाव वेद नहिं जाना।**

(अवसाना- अंत, इससे पहले भी थी, अब भी हो, आगे भी रहोगी)-

**भव भव विभव पराभव कारिणि, विश्वविमोहनी स्ववश विहारिणि।**

(भव भव- उत्पन्न कर्ता की उत्पन्न कर्ता, विभव- ऐश्वर्य दात्री, पालन करने वाली, पराभव कारिणि- संहार कर्ता, विश्वविमोहनी- पिता की मति फेर देने वाली, स्ववश विहारिणि- हस्त रेखा पलटने वाली)

हमारे मन में सुकृतों की जननी, पोषण कर्ता और दुष्कृतों को नष्ट करने वाली हो। पतिव्रता, सुतियाओं में मां आप प्रथम हैं। उसी मार्ग पर मैं भी चलना चाहती हूं। आपकी सेवा से चारों फल सुलभ हैं। त्रिपुरासुर के नाश करने वाले की प्यारी। मेरे भी तीन ही शत्रु हैं। रामजी का वियोग, पिता का प्रण और धनुष की कठोरता। सो-

**देवि पूजि पदकमल तुम्हारे, सुर नर मुनि सब भये सुखारे।**
**मोर मनोरथ जानहुँ नीके, बसहुं सदा उर पुर सबही के।**

स्पष्ट न कह जानकी चरण पड़ी।-

**विनय प्रेम वश भई भवानी, खसी माल मूरत मुसुकानी।**
**(खसी माल- माला खिसक गई)**

इसलिए मुसकाई कि जो माला सीताजी पहनाने वाली थी वो खिसक गई, छूट गई इसलिए देवी मुसकाई। देवता का मुसकाना और पुष्प का गिरना शुभ संकेत होता है। अर्धांगी के गले में माला डालती थी सो गिर गई। मूर्ति का मुसकाना राजाओं के लिए शुभ नहीं होता इसीलिए जनकजी के सुकृतों की मूर्ति सीताजी- अयोध्या चली गई।

सीताजी ने प्रसाद माला सिर धरी। पार्वतीजी प्रसन्न होकर बोली-

**सुनु सिय सत्य अशीष हमारी, पूजहिं मनकामना तुम्हारी।**
**(पूजहिं- पूरी होगी)-**
**नारद वचन सदा शुचि सांचा, सो बर मिलहि जाहि मन रांचा।**
**(सांचा- सत्य, उनको भी सत्य सिद्ध हुआ था, मन रांचा- रमा, मुझे भी मिला था)**

**मनजाहि राचेउ मिलहिं सो वर सहज सुंदर सांवरो।**

**करुणानिधान सुजान शील सनेह जानत रावरो।।**
**(सुजान- चतुर)-**
**इहि भांति गौरि असीस सुनि सिय सहित हिय हर्षित अली।**
**तुलसी भवानिहिं पूजि पुनि पुनि मुदित मन मंदिर चली।।**
**जानि गौरि अनुकूल, सिय हिय हर्ष न जात कही।**
**मंजुल मंगल मूल, वाम अंग फरकन लगे।।**

सीताजी की शोभा को मन में सराहते हुए, रामजी भी गुरुजी के पास गए और निश्छल भाव से सब कह दिया। सुमन पाकर मुनि ने पूजा की, दोनों को आशीर्वाद दिया-

सफल मनोरथ होहिं तुम्हारे,राम लखन सुनि भये सुखारे।

भोजन कर कथा कहने लगे। संध्या समय दोनो संध्या करने गए। उदित चंद्र देख सीता का स्मरण हुआ। किंतु वे महल में, यह बाहर। सीता सखियों संग यह अकेला। इसमें सीता सी शीतलता कहां-

**जन्म सिंधु पुनि बंधु विष, दिन मलीन सकलंक।**
**सिय मुख समता पाव किमि, चंद्र वापरो रंक।।**
**(सकलंक- ललाट में दाग)**

(उत्तमता तीन स्थानों पर देखी जाती है जन्म, संग, अंग)।
सदा घटता बढ़ता, राहु से भयभीत, विरहियों को दुख दाता, अवगुण की खान है चंद्रमा। सीता के मुख की चंद्रमा से उपमा देने से बड़ा दोष होगा।

आज की बड़ी रात जान गुरुजी के पास गए। प्रणाम कर आज्ञा ले विश्राम किया।

रात बीतने पर जागे या रात भर जागे और लक्ष्मण के जागने पर बोले। है तात देखो कमल को सुख देने वाला लोकों को आनंद दाता सूर्य उदय होगया है। लक्ष्मण बोले, कमल की भांति आपके भक्त भी धनुष टूटने से प्रसन्न होंगे। (भक्त चार प्रकार के 1- आर्त (सीता), 2- जिज्ञासु और ज्ञानी (विश्वामित्र), 3- साथी- (लक्ष्मण आदि), 4- अर्थी (जनक जी,) धनुष भंग से आपका गुप्त भुजबल प्रकट होगा। प्रसन्न हो स्नान किया, गुरुजी को आकर प्रणाम किया। जनकजी ने शतानंद को कौशिक मुनि के पास भेजा। शतानंदजी को प्रणाम कर रामजी गुरु के पास बैठे।

गुरुजी बोले, है तात जनकजी ने बुलाया है। चलकर जानकी का स्वयंवर देखिए। ना जाने ईश्वर किसको बढ़ाई दे। लक्ष्मण के कहने पर कि जिसपर आपकी कृपा होगी वही यश भाजक होगा, गुरुजी ने प्रसन्न होकर आशीष दी। मुनि और वृद्धजनों के संग धनुष यज्ञशाला देखने चले। दोनो भाई रंगभूमि में पधार

गए हैं जब यह समाचार लोगों ने पाया तो बालक, युवा, वृद्ध, नर नारी सब, घर के काम भूलकर आगये। जनक ने भीड़ देख सेवकों को निर्देश दिया। जिन्होंने सभी को यथायोग्य स्थान उपलब्ध करवाया।

उसी समय मनोहर छविधारी राजकुंवर भी आए। तारों में चंद्रमा जैसे शोभित हुए। सब अपलक देखने लगे -

**जिनके रही भावना जैसी, प्रभु मुरति देखी तिन तैसी।**
**देखहिं भूप महा रणधीरा, मनहुं वीररस धरे शरीरा।**
**डरे कुटिल नृप प्रभुहिं निहारी, मनहुं भयानक मूरति भारी।**
**रहे असुर छल छोनिप बेखा, तिन प्रभु प्रकट काल सम देखा।**
**(छोनिप बेखा- कपट वेश- रौद्र रस)-**

**पुरवासिन देखे दोउ भाई, नर भूषण लोचन सुख दाई।**
**(श्रृंगार)-**
**नारि विलोकहिं हर्षि हिय, निज निज रुचि अनुरूप।**
**जनि सोहत श्रृंगार धरि, मूरति परम अनूप।।**
**विदुषन प्रभु विराट मय दीशा, बहु मुख कर पग लोचन शीशा।**

(विदुषन- पंडितों को- वीभत्स रस (सहस्त्र शिरसा- यजुर्वेद)-

**जनक जाति अवलोकहिं कैसे, सजन लगे प्रिय लागहिं जैसे।**
**(सजन- जाति के)-**
**सहित विदेह विलोकहिं रानी, शिशु सम प्रीति न जाय बखानी।**
**(करुणा रस)-**
**योगिन परम तत्व मय भासा, शांत शुद्ध सम सहज प्रकासा।**
**हरि भक्तन देखे दोउ भ्राता, इष्टदेव इव सब सुख दाता।**
**(इव- के समान)-**
**रामहि चितव भाव जेहि सीया, सो सनेह मुख नहिं कथनीया।**

वे अपने मन आई, हृदय में अनुभव करती हैं। स्वयं भी व्यक्त नहीं कर सकती। वह कवि कैसे कहे। इस भांति जैसा जिसका भाव था वैसे ही उसने रामजी को देखा।

इस राज समाज में कौशल राज कुमार जो संसार के नेत्रों को चुराने वाले हैं, बिराज मान हैं और यह स्थिति तो किशोर अवस्था में हैं। आगे क्या करेंगे। चोर तो रात में और असजग के यहां किंतु ये तो भरे समाज में, चोरी पकड़ने वाले यंत्र, नेत्र ही चुरा लेते हैं। अब कौन देखे, कौन पकड़े। सहज ही मन हरने वाले। क्वार के चंद्र सा मुख, कमल नैन। दृष्टि काम मद हारी। कानों में कुंडल हैं। हंसी कुमुद बंधु कर (चंद्र किरण) की निंदा करती। तिरछी भौंहे, मनोहर नासा, बड़े भाल पर सुंदर तिलक, कपोल की श्यामलता से भौंरे लजाते। पीली चोकोंन टोपी, गज मुक्ता (राजकुंवर) गले में है, तुलसी माला (मुनि का चेला), वृषभ कंध, केहरि चाल, आजानु बाहु, कमर में तर्कस, पीला पट, बाएं कांधे धनुष, हाथ में बाण, पीत जनेऊ (वस्त्र महीन थे इसलिए जनेऊ दिखाई दी), इनका दर्शन कर सब लोग सुखी हुए। नेत्र टालने से भी न टरे।

सवैया -

**दंतकि पंगति कुंदकली, अधरा धर पल्लव खोलन की।**
**चपला चमकैं घन बिज्जु जगैं,छबि मोतिन माल अमोलन की।।**
**घुंघरारि लटैं लटकैं मुख ऊपर, कुंडल लोल कपोलन की।**
**निवछावर प्राण करे तुलसी, बलि जाऊं लला इन बोलन की।।**

जनकजी अति प्रसन्न हुए और विश्वामित्रजी के चरण पकड़े। विनती कर अपनी कथा कही-

एक समय जनकजी धनुष की पूजा कर रहे थे। जानकीजी भी संग गई। सोचा पिताजी इतनी दूर आते हैं सो धनुष उठाकर घर ले आई। दूसरे कल्प में जहां धनुष रखा था वहां मां लिपाई करती थी। धनुष के कारण तीन ही कोने लिपते थे। एक दिन उनके स्थान पर जानकीजी गई और धनुष उठाकर चारों कोने लीप दिए।

*बचपन में सीताजी उस शिव धनुष को लकड़ी का घोड़ा बनाकर खेला करती थी।

**- आनन्द रामायण**

तीसरे कल्प में सीताजी सखियों संग चाईं माईं खेल रही थी और हाथ के झटके से धनुष अपनी जगह से हट गया तो राजा ने प्रण किया कि जो धनुष तोड़ेगा उसी से कन्या ब्याहेंगे। एक वर्ष के प्रण में बस आज ही का दिन शेष है।

*जनकजी ने पांच सो बेलों से खिंचवाकर शस्त्रागार से धनुष बुलाया था।

**-आनन्द रामायण**

*राजा जनक के आदेश पर -

**नृणां शतानि पंचाशद् व्यायतानां महात्मनाम्।**
**मंजूशामष्टचक्रां तां समूहुस्ते कथंचन।।**

(शतानि पंचाशद्- पांच हजार, व्यायतानां महात्मनाम्- मोटे ताजे महा मनस्वी, मंजूशामष्टचक्रां- आठ पहियों वाली लोहे की संदूक, समूहुस्ते कथंचन- किसी तरह ठेल कर लाए।)

**- वा.रा.बा.67.04**

मुनि ने महोत्सव रचना की सराहना की। राजा प्रसन्न हुए। आसन दिया -

**सब मंचन ते मंच इक, सुंदर विषद विशाल।**
**मुनि समेत दोउ बंधुवर, बैठारे महिपाल।।**

**(विषद- उज्जवल)**

रामजी को देखकर राजाओं को ऐसा लगा कि राम ही धनुष तोड़ेंगे और न भी तोड़े तो सीता इनके ही गले में माला डालेगी। यह सुन अंध अभिमानी राजा हंसे कि बिना धनुष तोड़े देखते हैं कोन ब्याह करता है। जानकी के लिए एक बार काल से भी युद्ध करेंगे। धर्मशील नृप बोले -

वृथा मरहुं जनि गाल बजाई,मन मोदक नहिं भूख बुताई।

(बुताई- बुझती है)

अरे जानकी को जगत की माता जानो और -

**जगत पिता रघुपतिहिं बिचारी, भरि लोचन छवि लेहु निहारी।**

ये दोनो शंकरजी के हृदय में वास करते हैं। अरे अमृत के सागर को छोड़कर कहां मृगतृष्णा जल के पीछे भाग रहे हो। खैर जिसको जो अच्छा लगे करो, हमने तो जन्म फल पा लिया। देवता विमानों में बैठ नभ से सुमन वृष्टि करने लगे।

समय जान जनकजी ने जानकी बुलाई जिन्हें सुंदर, चतुर सखियां सादर ले आई।

यहां तुलसीदासजी ने हाथ खड़े कर दिए। कलम रख दी। हाथ जोड़ लिए बोले-

**सिय शोभा नहिं जाय बखानी, जगदंबिका रूप गुण खानी।**

सारी उपमा छोटी है जो प्राकृत स्त्रियों के अंगों में अनुरागी है। उनसे सीताजी की उपमा देकर कौन अपयश ले। जगत में कोई स्त्री ऐसी कमनीय हे ही नहीं। सब में कुछ न कुछ कमियां है -

गिरा मुखर तन अर्ध भवानी,रति अति दुखित अतनु पति जानी।

(गिरा मुखर- सरस्वती वाचाल, तन अर्ध भवानी- उमा अर्ध वदन है, अतनु- अशरीर)-

**विष वारुणी बंधु प्रिय जेही, कही रमा सम किमि वैदेही।**
**(वारुणी- शराब, रमा- लक्ष्मी)**

जहां लक्ष्मी बहिन होती है वहां दोनों बहन भाई वारुणी ओर विष आ ही जाते है। अरे सौंदर्य सिंधु में परम रूप कच्छप हो, शोभा रज्जू हो, श्रृंगार की मंदर मथानी हो, काम अपने कर से मथे -

**इहि विधि उपजे लक्ष्मि जब, सुंदरता सुख मूल।**
**तदपि सकोच समेत कवि, कहहिं सीय सम तूल।।**

सभा की रीति जानने वाली चतुर सखी सीताजी को साथ लेकर मधुर गीत गाती चली। सुंदर तन पर नवीन सारी शोभित है। सखियों ने अंग अंग के गहने पहनाए है -

रंग भूमि जब सिय पगु धारी,देखि रूप मोहे नर नारी।

गंधर्वों ने प्रसन्न होकर दुंदुभी बजाई, पुष्प वृष्टि की। अप्सराए गाने लगी। -

पाणि सरोज सोह जयमाला,औचक चितये सकल भुआला।

चकित होकर रामजी को खोजा। मुनि के पास दोनो को बैठे देखा। ललक लगी। एक टक निहारते देखने लगी किंतु -

**गुरुजन लाज समाज बड़ि, देखि सीय सकुचानि।**
**लगी विलोकन सखिन तनु, रघुवीरहिं उर आनि।।**
**(बड़ि- गुरुओं और बड़े समाज को देख लजाई)**

दोनो की छवि देखकर नर नारी अपलक देखते रहे। बोलने से सकुचाते हैं पर विधाता से विनती करते हैं कि जनकजी की जड़ता (प्रण से बंधे रहना) हरो, हमारे जैसी मति दो और सीताजी को रामजी से वरो। जगत भला कहेगा। सबको अच्छा लगेगा। हठ करने से अंत में हृदय को दाह होगा। सबके मन में यही लालसा है कि सांवरा कुमार ही जानकी के लिए श्रेष्ठ वर है।

तभी रावण, बाणासुर आए जिन्हें देख सब दुखी हुए। बोले ईश्वर अब क्या करेगा।

कवित्त -

**याके दश शीश बीस बाहु डोलै शैल मनो, याके एक शीश बाहु दीरघ हजार हैं।**
**दोनो लाल चंदन को दीन्हें हैं त्रिपुंड भाल, पहरे रुद्राक्ष माल छाये तनु छार है।।**
**दोनो अति बलि भायो दोनो जग जिति पायो, दोनो भय देत देखे तनु विकरार है।**
**दोनो धनु तोरै ताको कौन है उपाय हाय, शोक ते उधार को अधार करतार है।।**
**(उधार- उद्धार करने वाले)**

सभी चिंतित थे तभी रावण बोला, सीता कहां है दिखा दो। धनुष तोड़ उसे ले जाऊंगा। यह सुन बाणासुर बोला, यह गुरु का धनुष रखा है। विचार क्यों नहीं करते। बकवास करते हो। अहंकारी रावण बोला -

**मेरे भुज दंडन ते देखि खंड खंड दंड, भाजिकै ब्रह्मांडहूते काल कीन्हों गौन है।**
**परम प्रचंड नवखंड में अखंड फैलो, देखिके प्रताप मार्तंड डोलै मौन है।।**
**देत देत दण्ड धननाथ भए द्रव्य हीन, सुनत कोदण्ड चंड इंद्र मानौ जौन है।।**

(खंड खंड दंड- टुकड़ों में दिए दंड को देख, त्रास को देख, गौन- भाग गया, धननाथ- कुबेर, कोदण्ड चंड- धनुष का टंकार सुन, जौन- कांपता है)-

**बाहु दंड छत्र दंड सो सुमेरू तौलोजाय, कीन्हा मुंडमालि को कोदंड गर्व कौन है।।**

(बाहु दंड- भुज बल से, छत्र दंड सो- छाते जैसा, तौलोजाय- उठा लिया, मुंडमालि- शिव जी, कोदंड- धनुष उठाना, गर्व कौन- कौनसे गर्व की बात है।)

बाणासुर बोला -

अरे जिस भगवान ने तीन पैर पृथ्वी लेने को, वामन रूप बनाया और मेरे पिता ने पहचान कर भी मना नहीं किया। थोड़ा मांगने पर कहा कि क्यों मेरी हंसी करते हो। मैने ही जल लाकर दिया। फिर जो दान उन्होंने दिया उसका आज भी जग यश गाता है। लेकिन उस पर भी तेरे जैसा घमंड तो मैने नहीं किया।

रावण बोला -

**एकहि शीशकि कौन धरी, सिगरो जग यों सरसों सम सोहै।**
**तौनहिं शेष के वेश शरीर में, सूक्षम कीन्हें अभूषण जो है।।**
**सो शिव वास कियो जेहि शैल सो, कौर भयो कर एक हि को है।**
**हौं नहिं गर्व करौं करै कौन, प्रशंसत जाहि हरी हर तो है।।**

(अरे एक सिर की क्या जिन्होंने सारी धरती सरसों सी धारण की है उन शेष को भी अपना छोटा सा गहना बना लेने वाले शिवजी जिस पर्वत पर वास करते हैं उस शैल को मैने एक ही हाथ से उठा लिया। वो मैं गर्व न करूं तो फिर कौन करे जिसकी शिवजी भी प्रशंसा करते हैं।)

बाणासुर बोला -

**पीन पिनाक पुरारि को यों, विरच्यो विधि लेकर वज्र को सार है।**
**याकी न जानत तैं गरुता, नहिं सीख गनै गुन्यो पूरो गंवार है।।**
**आपने गर्व गंवावनको धनु तोरन को शठ कीन्हों विचार है।**
**जो बढ़के बलते बलकै, अवलोकत है सो तो नाऊ को बार है।।**

(अरे पुराना नहीं यह शिव धनुष विधाता ने वज्र के सार से दृढ़ गढ़ा है। तू इसकी गरूता, वजन, दृढ़ता, महत्व नहीं जानता और नहीं सुनता। शिक्षा ग्रहण नहीं करता है। ऐसा लगता है की निपट गंवार है। अपना गर्व भंग करने, मान हरण करवाने के लिए ही तूने इसे भंग करने का विचार किया है। अपने बल से बढ़कर बातें करता है वह बल तो नाई का बाल जैसा है।)

रावण बोला -

देख अभी धनुष के साथ तेरा भी मद तोडूंगा और फिर तेरी पुरी सिंधु में डुबाऊंगा। ऐसा कह धनुष उठाने लगा पर न उठा। तब बाणासुर बोला

अरे अभागे-

**कर जो कर में कइलास लियो, अब कैसे कै नाक सिकोरत है।**
**दइ तालन बीस भुजा झहराय, झकै धनु को झकझोरत है।।**
**तिल एक हलै न हलै बसुधा, रिस पीसकै दांतन तोरत है।**
**मन में यह ठीक भयो हमरे, मद काको महेश न मोरत है।।**

(देखो सभासदों, कैलाश उठाने वाला कैसे नाक सिकोड़ रहा है। बीस भुजा ताल वृक्ष के समान झहराती है। धनुष झकझोर रहा है। पृथ्वी हिलती पर धनुष एक तिल न हिल रहा। क्रोध से दांत पीस रहा है। अब सिद्ध हुआ कि शिवजी किसका मद नहीं हरते। यानी शिवजी किसी का भी मद नहीं रहने देते।)

ऐसा कह धनुष की प्रदक्षिणा कर बाणासुर प्रसन्न होकर लोटा। रावण बोला, इसमें अवश्य कोई जादू है। इस कन्या को वैसे ही लिए जाता हूं। तभी आकाशवाणी हुई -

तव कुंभीनसि कन्या जोई,लिये जात मधुदानव सोई।

मेघनाद यज्ञ में, विभीषण तप में, कुंभकर्ण शयन में मगन है। उसे अभी छुड़ाकर लाता हूं ऐसा कह, दुखी हो रावण वहां से चला गया।

*धनुष उठाते में रावण की धोती की लांग खुल गई थी। वह लज्जित होता बिना लांग लगाए लंका लोटा।

-आनन्द रामायण

यहां सब सुखी हुए। जनकजी ने बंदी, भाटों को अपना प्रण बताने बुलाया (वे राम रूप में मगन थे) जो प्रण न तोड़ने से अप्रसन्न थे। बोले, हम विदेह (कठिन प्रण करने वाले) का प्रण कहते हैं जो बड़े बड़े राजाओं को विदेह (शर्मिंदा) करने वाला ओर उनके चंद्रमा रूपी बल को राहु सा ग्रसने वाला है। रावण, बाणासुर देखकर चले गए। उस धनुष को तोड़ने वाला सीताजी को वरेगा।

बस फिर क्या था, घमंडी नृप अपने इष्ट को नमन कर (उनकी उपासना कुटिलता से भरी थी इसलिए सफल नहीं हुए। या इष्ट को शिर नवाए बिना ही चले या रामजी के सामने और देवता क्या करे) उठे। अच्छे राजा तो चाप के समीप भी नहीं गए।

तमक कर जाते हैं और लजाकर लोटते हैं। दस हजार ने प्रयास किया (टूट गया तो लड़कर वर लेंगे) पर हिला भी नहीं। कैसे-

डगै न शंभु शरासन कैसे,कामी वचन सती मन जैसे।

बिना वैराग्य सन्यासी जैसे सब हंसी के पात्र हुए। श्रीहत हो, सिर नवाकर जा बैठे। उनकी दशा देख जनकजी जैसे क्रोध में हों वैसे व्याकुल होकर बोले -

दीप दीप के भूपति नाना,आये सुनि हम जो प्रन ठाना।

देव दनुज धरि मनुज शरीरा,विपुल वीर आये रण धीरा।

(यहां रघुनाथजी पर भी कटाक्ष माना जा सकता है।)

अरे क्या मनोहर कुंवरि के हेतु विधाता ने धनुष तोड़ने वाला रचा, बनाया ही नहीं है। (राम जी विधि निर्मित नहीं है।) तोड़ना तो दूर तिलभर हिला न सके। वाह -

**अब जनि कोउ माखै भट मानी, बीर बिहीन मही मैं जानी।**
**अब कोई वीर्य का मद मत करना।**

अब -

**तजहु आश निज निज गृह जाहू, लिखा न विधि वैदेहि विवाहू।**

अब प्रण त्यागूं तो सुकृत जावे न त्यागूं तो कुंवरी कुंवारी रहे। -

**जो जनतेऊं बिनु भट भुई भाई, तौ प्रण करि होते न हंसाई।**

कवि कहते हैं -

**है द्वीप द्वीप के राजागण, हम किसे कहें बलशाली है।**
**हमको तो यह विश्वास हुआ, पृथ्वी वीरों से खाली है।।**
**आसरा छोड़ प्रस्थान करो, दुख हमें दिया है दाता ने।**

**सीता सुकुमारी का विवाह, लिक्खा ही नहीं विधाता ने।।**
**- राधेश्याम रामायण**

इतना सुनकर सब नर नारी जानकीजी को देखकर दुखी हुए किंतु लक्ष्मणजी को क्रोध आगया। भृकुटी टेढ़ी हुई, हाथ फड़कने लगे, नेत्रों में क्रोध छा गया। बुरे फसे। रामजी के भय से कुछ बोल नहीं सकते पर जनकजी के वचन बाण से लगे। रामजी को प्रणाम कर प्रामाणिक वाणी बोले -

**रघुवंशिन महं जहं कोउ होई, तेहि समाज अस कहहिं न कोई।**
**कही जनक जस अनुचित वाणी, विद्यमान रघुकुल मणि जानी।**

बोले -

**रघुवीर रामजी के होते, अनुचित वाणी कह डाली है।**
**यह शब्द वज्र से लगते हैं, पृथ्वी वीरों से खाली है।।**
**- राधेश्याम रामायण**

**सुनहुं भानुकुल पंकज भानू, कहहुं स्वभाव न कछु अभिमानू।**

हे सूर्यकुलकमलसूर्य -

**जो तुम्हार अनुशासन पाऊं, कंदुक इव ब्रह्मांड उठाऊं।**
**(कंदुक इव- गेंद के समान)-**
**काचे घट जिमि डारऊं फोरी, सकऊं मेरु मूलक इव तोरी।**
**तव प्रताप महिमा भगवाना, का बापुरो पिनाक पुराना।**
**(पिनाक- धनुष)**

आज्ञा दो तो कौतुक करूं -

**कमल नाल इमि चाप चढ़ावौं, योजन शत प्रमाण लै धावौं।**
**तौरऊं छत्रक दंड जिमि, तव प्रताप बल नाथ।**
**जो न करऊं प्रभु पद शपथ, पुनि न धरऊं धनु हाथ।।**
**(छत्रक दंड जिमि- पृथ्वी के फूल सा, कौवे के छत्ते जैसा)**

यह सुन दिग्गज डोले, धरा कांपी, राजा डरे, जानकीजी प्रसन्न, जनक सकुचाये, मुनि, ऋषि ओर रामजी मुस्काए। पुलकित हुए। संकेत से रामजी ने लक्ष्मणजी को रोका, पास बैठाया जैसे कहते हों कि अभी तुम्हारा नहीं, मेरा नंबर है भाई। पहले बड़े भाई को ब्याहने दो फिर तुम्हारा भी नंबर आयेगा। तब विश्वामित्रजी शुभ समय जानकर अत्यंत स्नेहमई वाणी बोले -

उठहुं राम भंजहुं भव चापा,मेटहुं ताल जनक परितापा।

(भव चापा- शिव धनुष, परितापा- दुख)

यहां रामजी और जनकजी दोनो को तात कहा है। गुरुजी के वचन सुन उनके चरणों में शिर नवाया। न हर्ष न विषाद। युवा मृगराज को लजाते हुए उठकर स्वाभाविक चाल से चले। मंच रूपी उदयाचल पर, प्रातः के सूर्य से रामजी उदय हुए तो संत रूपी कमल वन खिले और दर्शकों के नेत्र रूपी भौंरे प्रसन्न हुए। कपटी राजा निराश होकर उल्लू जैसे छिप गए, मानी सकुचाये। मुनि विशोक हुए, फूल बरसाए -

**गुरु पद वंदि सहित अनुरागा, राम मुनिन सन आयसु मांगा।**

और -

**सहजहिं चले सकल जग स्वामी, मत्त मंजु वर कुंजरगामी।**
**(मत्त- मतवाले, मंजु वर- श्रेष्ठ, कुंजरगामी- हाथी जैसी चाल)**

जनकपुर के नर नारी पुलकित हुए। पितरों, देवों को मनाया, सुकृत समर्पित किए। हे गणेशजी, गोसाईजी धनुष कमल की नाल समान टूट जावे।

सीताजी की मां सखियों को पास बुलाकर व्याकुल होकर बोली, सखी जो हमारे हितैषी कहलाते हैं वे सब कौतुक देखने वाले हैं। कोई राजा को समझाता क्यों नहीं कि ये बालक हठ करने योग्य नहीं। रावण बाणासुर ने छुआ नहीं, सभी राजा पराजित हुए -

**सो धनु राज कुंवर कर देहीं, बाल मराल कि मंदर लेहीं।**
**(बाल मराल- हंस के बच्चे से कहीं मंदराचल उठता है।)**

ऐसा लगता है राजा की चतुरता, सयानापन चला गया। विधाता की गति अनजान है। हमारे आसपास ठकुरसुहाती कहने वाले भाट नहीं, सत्य कहने वाले शुभ चिंतक होने चाहिए।

चतुर सखी बोली मां, इन तेजस्वियों को छोटा मत मानो -

**कहं कुम्भज कहं सिंधु अपारा, शोखेउ सुयश सकल संसारा।**
(एक समय किसी चिड़िया के तीन बच्चे समुद्र बहा लेगया। वह अपनी चोंच से समुद्र उलीचने लगी। अगस्त्यजी ने पूछा और सुनकर समुद्र को दंड देने का बोला और चले गए। एक दिन उनकी पूजा सामग्री भी बहा ले गया। तब तीन अंजली में- "राघवायनमः, केशवायनमः, वासुदेवायनमः" बोलकर सारा सागर सोख लिया। बहुत दिन बाद,देवों के निवेदन पर योगबल से फिर भर दिया। तब से समुद्र खारा हुआ।)-

रवि मंडल देखत लघु लागा,उदय तासु त्रिभुवन तम भागा।

**मंत्र परम लघु तासु वश, विधि हरि हर सुर सर्व।**
**महामत्त गजराज कहं , वश कर अंकुश खर्व।।**
**(छोटा मंत्र "ॐ" देवों और छोटा अंकुश हाथी को वश कर लेता है।)**

इसलिए देवी चिंता तजो। रामजी ही धनुष तोड़ेंगे। सखी के वचन सुनकर मां को विश्वास हुआ। विषाद मिटा। प्रीति हुई। उधर रामजी को देखकर भयभीत जानकीजी हृदय में सभी देवों की बिना क्रम के विनती करने लगी। है महेश, पार्वतीजी सेवा स्वीकारो, हित विचारो, चाप की गरुता निवारो। -

गणनायक वर दायक देवा,आजु लगे कीन्हेउ तव सेवा।

विनय सुनो, चाप का भारीपन हरो।-

**हे गणपति आज सफल कर दो, मेरी बरसों की सेवा को।**
**हे महाराज होकर प्रसन्न, हरिए धनुवे की गरुता को।।**
**- राधेश्याम रामायण**

उधर रामजी चलते इधर जानकीजी रघुवीर वदन देखती, देव मनाती। नेत्रों में जल भर आया। तन पुलकित हुआ। रामजी को देख संतोष और पिता का प्रण जान क्षोभ होता। -

अहह तात दारुण प्रण ठानी,समुझत नहिं कछु लाभ न हानी।

सचिव उचित क्यों नहीं कहते। कहां वज्र सा धनुष, कहां कोमल रामजी। सिरस (सरसों) के फूल से कहीं हीरा बेधा जा सकता है। अब तो धनुष तेरी ही शरण हूं। अपनी जड़ता लोगों पर डाल। हलका होजा। इस प्रकार जानकीजी दुखी है। पल पल युग सा हुआ। कभी प्रभु, कभी धरती मां को देखती हैं। नेत्र कामदेव की मछलियों से हिंडोला लेते। रात्रि के कमल में बंद भौंरे की नाई अवाक हुई। -

लोचन जल रह लोचन कोना,जैसे परम कृपण कर सोना।

व्याकुल हुई फिर धीरज धरा। यदि तन मन वचन से प्रण सच है तो सबके अंदर विराजमान ईश्वर अवश्य ही मुझे श्री रघुवर की दासी बनाएंगे। क्योंकि -

**जेहिके जेहि पर सत्य सनेहू, सो तेहि मिलहि न कछु संदेहू।**

प्रेम का प्रण कि रामजी न मिले तो तन तज दूंगी यह जान,सीताजी को देख रामजी ने धनुष को ऐसे देखा जैसे गरुड़ छोटे सर्प को देखता है।

उधर लक्ष्मण ने देखा कि रामजी ने शिव धनुष को देखा है तो चरणों से पृथ्वी दबाकर (पहले बोले तो डोल गई थी) पुलकित होकर बोले। -

**दिशि कुंजरहुं कमठ अहि कोला, धरहु धरणि धरि धीर न डोला।**

है दिग्गज, कच्छप, शेष, वराह। -

**राम चहहिं शंकर धनु तोरा, होहु सजग सुनि आयसु मोरा।**

इधर रामजी धनुष के पास आए। सब नर नारियों ने सुकृत और पुण्य समर्पित कर देव मनाए। रामजी ने भी सब को चित्रित सा देखा, जानकीजी को विशेष व्याकुल जाना कि पल कल्प सा हो रहा है सोचा -

**तृषित वारि बिनु जो तनु त्यागा, मुए करै का सुधा तड़ागा।**

प्यासा मर गया तो अमृत सागर में डालने से भी क्या होगा।-

**का वर्षा जब कृषी सुखाने, समय चुके पुनि का पछताने।**

**ऐसा जानकर जानकी को देखा। विशेष प्रीति देख पुलके। देर नहीं की।**

मन ही मन गुरु वशिष्ठजी को प्रणाम कर बहुत फुर्ती से धनुष को उठा लिया।-

**पश्यतां नृसहस्त्राणां बहूनां रघुनंदनः।**
**आरोपयत् स धर्मात्मा सलीलमिव तद्धनुः।।**
**(आरोपयत्- उठा लिया, सलीलमिव- लीला पूर्वक)**
**- वा.रा.बा.67.16**

मानो बिजली चमकी। खींचा। घन रूप रामजी ने धनुष चढ़ाया तो दामिनी रूप सीताजी दमकी। लेते, चढ़ाते, खींचते किसी ने न देखा। सब खड़े देखते रहे। अवाक। (स्टेंडिंग ओवेशन बिफोर सक्सेस) -

**आरोपयित्वा मौर्विं च पूरयामास तद्धनुः।**
**तद् वभंज धनुर्मध्ये नरश्रेष्ठो महायशाः।।**
**(मौर्विं- प्रत्यंचा, पूरयामास- कानों तक खींचा)**
**- वा.रा.बा.67.17-**

तेहि क्षण राम मध्य धनु तोरा,भरेउ भुवन ध्वनि घोर कठोरा।

ब्रह्मांड में घोर शब्द हुआ। सूर्य के अश्व मार्ग तज चले। दिग्गज चिंघाड़े। धरा कांपी। शेष, वराह, कश्यप कसमसाए। सुर, असुर, मुनि कानों में हाथ दे व्याकुल हुए। फिर जय जयघोष किया। रामजी ने धनुष के दोनो खंड नीचे डाले। लोग सुखी हुए।

विश्वामित्रजी का रूपसिंधु राम प्रेम के जल से भर गया। आनन्द हुआ। आकाश में बाजे बजे, देवांगनाएं नृत्य करने लगी। ब्रह्मादिक मुनि रामजी की प्रशंसा कर आशीष देने लगे। देव सुमन माल वर्षा करते हैं। किन्नर रसीले गीत गाने लगे। जय जय ध्वनि ने धनुष भंग ध्वनि को दबा दिया। बंदी, मागध, सूत, भाट पूर्व पुरुषों (पुरखों) का यश गाने लगे। लोग हाथी, घोड़े, मणि, वस्त्र न्योछावर करने, स्त्रियां मंगल गाने लगी। जो चिंता करती थी वो -

**सखिन सहित हरशीं सब रानी, सूखत धान परा जनु पानी।**
**जनक लहेउ सुख शोच बिहाई, पैरत थके थाह जनु पाई।**
**(पैरत- तैरते)-**

श्रीहत भये भूप धनु टूटे,जैसे दिवस दीप छवि छूटे।

सीताजी तो जैसे पपीहे को स्वाति जल मिला हो वैसी हर्षित हुई। क्यों -

**ताड़का जु मारी करि यज्ञ रखवारी फेरि, तारी मुनि नारी ये तो बाल यश खूटतो।**
**पुनि सुर नारी नर नारी औ सुरारी नारि, हंसति जु नारी वीर नाम वह छूटतो।।**
**रसिक बिहारी ईश सबहिं सिधारी यह, कीरति अपारी धौं न जानी कौन लूटतो।**
**जनक दुलारी होती निपट दुखारी भारी, अवधबिहारी पै न जोपै धनु टूटतो।।**
**- रामरसायने**

धनुष टूटा कैसे -

**परि परि पायं जाय गिरिजा निहोरे नित्य, शंकर मनाये पूजे गणपति भाव से।**
**दीन पान विविध विधान जप कीन्हें बहु, नेम व्रत लीने सिय सहित उछावसे।।**
**रसिक बिहारी मिथिलेश की दुलारी दृढ़, प्रीति उर धारि अवधेश सुत चाव से।**
**जनक किशोरी के प्रताप से पिनाक टूटो, टूटो है न जानों राम बल के प्रताप से।।**
**- रामरसायने**

लक्ष्मण चकोर के बालक की भांति रामजी को देखते हैं। शतानंदजी की आज्ञा से सीताजी, रामजी के पास चली। सुंदर, चतुर सखियां साथ हैं, मंगल गाती हैं। बीच में सीता छवि मध्य महा छवि समान शोभायमान है। कर में जय माल, तन में संकोच, मन में प्रसन्नता। पास जाकर रामजी की छवि देख चित्र सी खड़ी रही। कवि कहता है –

**सोहे सिय सहित उमंग सखि साजे अंग, भूषण सुरंग रंग वसन विशाल सों।**
**करि कर ऊंच दोउ ठाड़ी है विदेह सुता,कैसे कण्ठ डारै माल छोटी रघुलाल सों।।**
**रसिक बिहारी तेहि औसर निहारी छबि, उपमा विचारी सो उचारी है उताल सो।**
**कनकलता सी नव वल्ली है अनूप काढ़ि,ऊरध उठी है मानो मिलन तमाल सों।।**
**- रामरसायने**

चतुर सखी ने धीरे से कहा जय माल पहराओ। सुनकर माला उठाई पर पहराई न गई। फिर सखियों के गाने की आवाज सुनकर सचेत हुई और रामजी के गले में माला डाल दी।

कवि कहते हैं -

**अति ही उताल है निहाल रघुलाल कण्ठ, मेली जय माल भयो आनंद अपारो है।**
**रसिक बिहारी श्याम गोरी नव जोरी हेरी, सब नर नारी निज प्राण धन वारो है।।**
**माल पहराई दुहू छाई सो अपार शोभा, ता छिन अनूप रूप रुचिर निहारो है।**
**धारि तिय वेष मंजु मुदित वसंत मानो, आज ऋतुराज पै प्रसून जाल डारो है।**
**- रामरसायने**

(हेरी- देख कर, निरख कर)-

**रघुवर उर जयमाल, देखि देव वर्षहिं सुमन।**
**सकुचे सकल भुआल, जनु विलोकि रवि कुमुद गण।**

पुर, व्योम (आकाश) में बाजे बजे। दुष्ट मलिन, साधु प्रसन्न हुए। सब आशीष देने लगे। ब्राह्मण वेद मंत्र, भाट यशगान करते है। पृथ्वी, अकाश, पाताल में राम के धनुष भंग का यश फेल गया।छवि और श्रृंगार सी जोड़ी है। सखी बोली चरण छुओ पर सीता डरकर हाथ नहीं लगाती। क्यों -

गौतम तिय गति सुरति करि,नहिं परशति पद पानि।

मन विहंसे रघुवंश मणि,प्रीति अलौकिक जानि।।(कहीं हाथ की मुंदरी की मणियां, नारी बनकर प्रीति में भागीदार न होजावे। अथवा पांव पड़ते ही महल में जाने से वियोग होगा।)

क्रूर कपटी नृप गाल बजाने लगे। दोनो लड़कों को मार, सीता छुड़ालो। धनुष टूटने से क्या। हमारे रहते कुंवरि कौन ब्याह सकता है। जनक मदद करे तो उसे भी जीत लो।

महात्मा राजा बोले अब तो लाज भी लजाने लगी है। सबका बल, प्रताप, वीरता और नाक तो धनुष भंग होते ही कट गई। ब्रह्माजी ने तुम्हारे मुख पर कालिख पोत दी। रामजी को नयन भर देख लो। सुनो -

वैनतेय बलि जिमि चह कागू,जिमि शश चहहिं नाग अरि भागू।

(वैनतेय- गरुड़, शश- खरगोश, नाग अरि- गरुड़)-

**जिमि चह कुशल अकारण कोही, सुख सम्पदा चहै शिव द्रोही।**

(कोही- क्रोधी)-

**लोभी लोलुप कीरति चहई, अकलंकता कि कामी लहई।**
**हरिपद विमुख परम गति चाहा, तस तुम्हार लालच नरनाहा।**

कोलाहल सुन जानकीजी सहमी जिन्हें सखी मां के पास लेगई। रामजी गुरुजी के पास गए। लक्ष्मणजी रामजी से सकुचाते हैं। नेत्र लाल, सिंह के बच्चे की तरह राजाओं को देखते हैं।

नगर के नरनारी राजाओं को गाली देते है। तभी -

**तेहि अवसर सुनि शिव धनु भंगा, आए भृगुकुल कमल पतंगा।**

(पतंगा- सूर्य)

(कुशांबु के ओरस से गाधि का जन्म हुआ। उनकी कन्या सत्यवती से ऋचीक का ब्याह हुआ और जमदग्नि हुए जिनसे राजा प्रसेन कन्या रेणुका का ब्याह हुआ। जमदग्नि के सबसे छोटे पुत्र वासुदेव अंश परशुरामजी हुए। एक बार हैहय वंशी कार्तविर्य ने जमदग्नि की कामधेनु का हरण किया तो परशुरामजी ने उसका वध किया। गाय पिता को दी। पिता के कहने पर राजा के

वध के प्रायश्चित निमित्त, एक वर्ष तीर्थाटन, पृथ्वी परिक्रमा को गए। समय पाकर कार्तवीर्य पुत्रों ने, समाधिस्थ जमदग्नि को मार दिया। परशुराम ने हैहयवंश का संहार किया। कुरुक्षेत्र में शोणित के नो कुंड भरे। यज्ञ कर, इक्कीस बार पृथ्वी क्षत्रिय हीन कर, होता को पूर्व, ब्रह्मा को दक्षिण, अध्वर्यु को पश्चिम, उद्गाता को उत्तर दिशा दी ओर महेंद्रांचल पर्वत पर गए। इनके कारण क्षत्रियों ने, वंश बदल दिए। सत्यवती की माता के विश्वामित्र हुए।)

उनको देख राजा छुपे। गौरे तन पर विभूति, माथे पर त्रिपुंड, जटा, टेडी भौंहें, बेल से उच्च कंधे, सुन्दर जनेऊ, माला, मृग छाला, मुनि वस्त्र, दो तरकस, धनुष बाण, हाथ में फरसा, रिस के कारण क्रोधी जान पड़ते हैं। मुनि वेश में वीर रस प्रकटा। देखते ही व्याकुल राजा खड़े हुए और पिता सहित (ऋषि कुल) अपना नाम बताकर, दंडवत किया। जिसकी ओर देखते उसे लगता, अब आयु समाप्त हुई।

जनकजी ने आकर प्रणाम किया। सीताजी से भी करवाया। सौभाग्यवती हो यह आशीष पाकर सखियां प्रसन्न हुई। विश्वामित्रजी आकर मिले। दोनो भाइयों से प्रणाम करवाया। रामको देखा तो कामदेव के अभिमान का हरण करने वाले स्वरूप में आंखे ठहर गई।

जनकजी से अजान समान पूछा इतनी भीड़ क्यों। जनक से समाचार पाकर, दोनो चाप खंड देखकर -

**अति रिस बोले वचन कठोरा, कहु जड़ जनक धनुष केहि तोरा।**
**बेगि दिखाउ मूढ़ नतु आजू, उलटौं महि जहं लगि तव राजू।**

डर से राजा जनक उत्तर न दे पाए। कुटिल नृप इनपर संकट आने से प्रसन्न हुए। देव, मुनि, नाग, नगर नर नारी दुखी हुए। सीताजी की माताजी पछता रही हैं कि विधाता ने, बनी बनाई बात बिगाड़ दी। परशुरामजी का स्वभाव सुनकर सीताजी को पलक झपकाना भी कल्प सा लगा। सभी को सभय, जानकीजी को डरी जानकर, रामजी आगे आकर बोले -

**नाथ शंभु धनु भंजन हारा, होइहि कोइ इक दास तुम्हारा।**
**(जिसने छाती में लात मारी उसका दास और शंभु का नाथ होगा।)**

क्या आज्ञा है कहो। मुनि क्रोध कर बोले कि सेवक तो वह जो सेवा करे। यहां तो दुश्मन का काम कर लड़ाई की है।–

**सुनहुं राम जेहि शिव धनु तोरा, सहसबाहु सम सो रिपु मोरा।**

उसे समाज से प्रथक खड़ा करो नहीं तो सब राजा मारे जाएंगे। इतना सुन लक्ष्मणजी मुस्काकर बोले -

**जो ज्यादा मीठा होता है, अपना ही नाश कराता है।**
**मीठे गन्ने को ही देखो, कोल्हू में पेरा जाता है।।**
**-राधेश्याम रामायण -**

बहु धनुहीं तोरी लरिकाई,कबहुं न अस रिस कीन्ह गुसाईं।

(एक बार सब राजाओं को जीतकर परशुरामजी ने उनके धनुष, एक स्थान पर रखे ओर देवों के धनुष भी रखे। पृथ्वी और शेष व्याकुल होकर, स्त्री और बालक का वेश बनाकर, यह सोचकर कि, ये आदि निशाचरों के हाथ लगे तो अनर्थ हो जायेगा, परशुरामजी के पास गए। पृथ्वी बोली, हम आश्रम की परिचर्या करेंगे। आप मुझे और मेरे ऊधमी बालक को अपने आश्रम पर रख लो यदि आप इसपर क्रोध न करो तो। अनुमति पाकर रहने लगे और एक दिन, अवसर पाकर शेष ने, सभी धनुष तोड़ डाले। उनके शब्दों को सुन गुरु विस्मित हुए। गुरुजी ने क्रोध नहीं किया। परशुरामजी ने कहा अब तुम जाओ तब शेषजी ने अपना रूप दिखाकर कहा कि अब एक शिव धनुष रहा है जिसे रामजी तोड़ेंगे। तब फिर वार्ता होगी। यह कह दोनो अपने रूप में मिल गए।)-

**यहि धनु पर ममता केहि हेतू, सुनि रिसाय कह भृगुकुल केतू।**

मुनि बोले -

**रे नृप बालक कालवश, बोलत तोहिं न संभार।**
**धनुही सम त्रिपुरारि धनु, विदित सकल संसार।।**

उत्तर मिला -

**लखन कहा हंसि हमरे जाना, सुनहु देव सब धनुष समाना।**
**का क्षति लाभ जीर्ण धनु तोरे, देखा राम नये के भोरे।**
**छुवत टूट रघुपति नहिं दोशू, मुनि बिन काज करिय किन रोशू।**

कवि कहते हैं -

**तूल की रही कि काहू फूल की रही की मृदु, मूल की रही कै धूल सान के सजाई थी।**
**सांटी की रही कि कहो सांची स्वच्छ माटी लाय, कांची काहू कुशल कुलाल ते कराई थी।।**
**रसीकबिहारी भृगुनाथ भाषिये तो नेक, शंकर समीप या कहां ते किमि आई थी।**
**हौंतो यह जानो अनुमान ते जु कोउ बाल, खेल हेतु धनुहि मृणाल की बनाई थी।।**
**(मृणाल- कमल नाल)**

परशुरामजी फरसे की और देखकर बोले, मूर्ख, तूने मेरा स्वभाव नहीं सुना। अरे बालक जानकर तेरा वध नहीं कर रहा हूं। मुझे केवल मुनि मत समझ, मैं बाल ब्रह्मचारी अति क्रोधी हूं। विश्व विदित क्षत्रिय कुलद्रोही हूं। इक्कीस बार क्षत्रिय विहीन कर, पृथ्वी ब्राह्मणों को दी है। यह फरसा देख जो सहस्त्रबाहु की भुजा काटने वाला है। अपने माता पिता को शोकवश मतकर। यह फरसा गर्भ के बालक को भी नष्ट करने वाला है।

लक्ष्मणजी हंसकर कोमल वाणी बोले कि आप मुनि होकर महा योद्धापन का अभिमान करते हो। मुझे फरसा दिखाकर फूंक से पहाड़ उड़ाना चाहते हो। -

**क्यों बूढ़ा फरसा दिखला कर, क्षत्रिय कुमार को डरा रहे।**
**बलिहार आपतो फूंकों से, उदयाचल पर्वत उड़ा रहे।।**
**-राधेश्याम रामायण-**
**इहां कुम्हड़ बतिया कोउ नाही, जो तर्जनी देखत मरि जाही।**
**(कुम्हड़ बतिया- छुई मुई )**
**अरे आपकी यज्ञोपवित देख मैने कुछ नहीं कहा। क्यों -**
**सुर महिसुर हरिजन अरु गाई, हमरे कुल इन पर न शुराई।**

आपका तो वचन ही करोड़ों वज्र सा है। ये धनुष बाण तो अकारथ धरते हो। क्रोधित होकर परशुरामजी बोले विश्वामित्र, यह बालक मंद, कुटिल, कालवश, निज कुलद्रोही है। निरंकुश, निष्ठुर और निडर है। क्षणभर में काल का ग्रास होजाएगा। फिर मुझे दोष मत देना। बचाना चाहते हो तो सामने से हटा दो। विश्वामित्रजी बोले मुनि, क्षमा करें। बड़े बच्चों के दोष नहीं देखा करते।

लक्ष्मण बोले आपका यश आपके होते कौन वर्णन करे। आपने कई बार, इसका बखान करदिया। ओर कहना हो तो कह लीजिए। क्रोध रोककर दुख मत सहो। आप वीर धीर हैं। गाली देते शोभा नहीं देते। -

**शुर समर करणी करहिं, कहि न जनावहिं आपु।**
**विद्यमान रिपु पाय रण, कायर करहिं प्रलाप।।**

आप तो जैसे काल को मेरे लिए बुला ही लाए हो। अब तो मुनि कठिन परशु संभाल कर बोले लोगों, अब मुझे दोष मत देना। यह कटुवादी बालक वधयोग्य है। बालक जान अब तक बचाया पर अब यह मरना ही चाहता है। अरे कौशिक, केवल तुम्हारे शील के कारण इसे बिना मारे छोड़ रहा हूं वरना काट कर, गुरु का ऋण उतार देता।-

**इक गरम बना इक नरम बना, क्या कुटिल नीति है दोनो की।**
**ओ विश्वामित्र क्या देख रहे, चालाकी अपने चेलों की।।**
**- राधेश्याम रामायण**

विश्वामित्रजी ने मन में हंसकर कहा कि इन्हें हरा ही हरा सूझ रहा है। धनुष को जिसने गन्ने समान तोड़ दिया उसे पहचान ही नहीं रहे हैं।

लक्ष्मण बोले, अरे आपका शील कौन नहीं जानता। माता पिता के बाद अब गुरु ऋण ही तो बचा है जिसे हमारे सिर थोपा है। ब्याज भी बढ़ा दिया।

(एक बार जमदग्निजी ने रेणुकाजी को जल भरने भेजा। वहां गंधर्व गंधर्विनी का विहार देखने में देर हुई। पिता ने इनसे माता का मस्तक काटने और आज्ञा भंग करने वाले भाइयों का मस्तक काटने को बोला। इन्होंने काट दिया। पिता प्रसन्न होकर बोले वर मांगो। इन्होंने मांगा ये सब जीवित हो जावें और इन्हें यह भान भी न होवे। पिता की मृत्यु पर मां के इक्कीस बार छाती पीटने पर, इक्कीस बार पृथ्वी क्षत्रिय विहीन की थी।)

अरे किसी हिसाब वाले को बुला लो, थैली खोलकर चुका देता हूं। यह सुन कुल्हाड़ा संभाला, सभा हाहाकार कर उठी।

लक्ष्मण बोले परशुराम, मुझे क्या कुल्हाड़ दिखाते हो। मैं तुम्हें ब्राह्मण जानकर अबतक बचा रहाहूं। कहीं कोई वीर मिला नहीं। देवता और ब्राह्मण घर में ही वीर हैं।

कवि कहता है -

**वेद पढ़ि जाने जप यज्ञ बड़ो जानै पाप, पुण्य मढ़ि जानै बहु बातैं छबि जानै हैं।**
**ढापबे में जानै वर थापवे में जानै दोष, ढापबे में जानै तप तापबे में जानै हैं।।**
**खाय जानै खूब और अजूब जाचि लाच, जानै रसिकबिहारी वाल को पढ़ाय जानै हैं।**
**ऐंती पुनि औरहूं अनेक रीति जाने एक, युद्ध पर बीरताई विप्र नाहीं जानैं हैं।।**

सब लोगों ने कहा यह अनुचित है। तब रामजी ने संकेत से लक्ष्मण को रोका। क्या किया -
लषण उतर आहुति सरिस,भृगुवर कोप कृशानु।

**बढ़त देखि जल सम वचन, बोले रघुकुल भानु।।**
**नाथ करहु बालक पर छोहू, सूध दूध मुख करिय न कोहू।।**
**(छोहू- कृपा, कोहू- क्रोध)**

आपका प्रभाव नहीं जानता। बालक की अनुचित बात पर माता, पिता, गुरु रूष्ट नहीं होते। रामजी की बाते सुन कुछ शांत हुए ही थे कि लक्ष्मण को मुसकाता देख बोले, तेरा भाई बड़ा पापी है। इसका शरीर गोरा पर मन काला है। यह दूधमुख नहीं विषमुख है।

लक्ष्मण बोले मुनिजी क्रोध पाप का मूल है। मुझ पर दया करो। क्रोध करने से टूटा धनुष नहिं जुड़ेगा। थक गए होंगे बैठ जाइए ओर जो अधिक ही प्रीति हो तो कोई गुणी बुलाकर जुड़वा लो। कवि कहता है -

**ऐसे ही कमान बाल केलि की रुचे तो बहु, होवेंगी विदेह गेह अबही मंगाऊं मैं।**
**रसिकबिहारी जो तिहारी प्रीति याहि माहि, तोपै कहु खंड खैंच वेग ही बढ़ाऊं मैं।।**
**नीकी जिय भावै भृगुनाथ तौ निदेष दीजै, हेम की रचाय मणि माणिक मढ़ाऊं मैं।**
**जो पै तुम्हें चाहिए कहो तो द्विजराज अब, याहू ते अनोखी चोखी अमित गढ़ाऊं मैं।।**

लक्ष्मण के बोलने से जनकजी डरे।-

**थर थर कांपहिं पुर नर नारी, छोट कुमार खोट बड़ भारी।**

पराशुरामजी का शरीर निर्भय वाणी सुन जलने लगा। इससे बल की हानि हुई। बोले राम तुम्हारा भाई मन का मलिन है। कंचन घट में विष जैसा।लक्ष्मण फिर हंसे तो रामजी ने नेत्रों से घुड़क दिया और मृदु बानी बोले, नाथ बालक के वचन पर ध्यान मत दीजिए।-

**बरें बालक एक स्वाभाऊ, इनहिं न संत विदूषहिं काऊ।**
**(बरें- बूढ़े, ततैया, विदूषहिं- दोष)**

आपका अपराधी तो मैं हूं। आप कोप मुझपर करिये। कहिए आपका क्रोध कैसे शांत होगा। परशुराम बोले, राम क्रोध जाए तो जाए कैसे। तुम्हारा भाई अभी भी कुदृष्टि से देख रहा है।

इसके कंठ में कुठार न दिया तो मैंने भी क्या क्रोध किया। इस कुल्हाड़े का घोर शब्द सुनकर, रानियों के गर्भ गिर जाते हैं। अब या तो विधाता वाम है या कुल्हाड़ा ही कुंठित होगया। यह सुन, लक्ष्मण के हंसने पर जनकजी से बोले, सुन यह यमपुर जाना ही चाहता है। इसे मेरी आंखों से दूर कर दो। लक्ष्मण बोले, आंख बंद कर लीजिए, कोई नजर नहीं आएगा।

कवि कहता है –

**कै तो कर कंपत गिरो है कहुं पाहन पै, परशु तिहारो तबहींते छीन धार भो।**
**कै तो कहूं कानन कठोर तरु कीन्हें छिद्र, जाते मंद धार है हथ्यार पिनकारभो।।**
**कै तो लोह काचे का बनायो है अजान कोऊ, कै तो यह आजलों न काहू पै प्रहार भो।**
**रसिकबिहारी सत्य कही दरशात यातें, कांध पे धरे ही धरे कुंठित कुठार भो।।**

तब क्रोधकर रामजी से बोले, तेरा भाई तेरी सम्मति से ही टेडा बोल रहा है। तू विनती कर रहा है। अब या तो युद्ध कर या राम कहाना छोड़। शिव द्रोही, छल छोड़, युद्ध कर। वर्ना भाई सहित मार दूंगा। रामजी सिर झुकाए मन में मुस्काकर कह रहे हैं -

**गुनहु लषनकर हम पर रोषू, कतहुं सुधाइ हुते बड़ दोषू।**
**(सुधाई हुते- अति सरलता भी)**

(दोष जानकी का जिन्होंने धनुष उठाकर प्रण करवाया। अब हम उनका नाम भी नहीं ले सकते।)-

टेड़ जानि शंका सब काहू,वक्र चंद्रमहिं ग्रसै न राहू।

रामजी बोले रिस त्यागो। मेरा सिर आगे है। अरे सेवक और स्वामी का कैसा युद्ध। आपका वेश देख वंश स्वभाव से उत्तर दिया। इसमें लड़के का भी दोष नहीं। जो आप मुनि की भांति आते तो चरणों की धूल मस्तक पर रखता। क्षमा करें। आप में और हम में कहां बराबरी। कहां सिर कहां चरण। हमारा मात्र राम जबकि आपका परशुराम नाम है। हम सब भांति आप से हारे। क्षमा करो।

मुनि क्रोधित होकर बोले तू भी टेड़ा, तेरा भाई भी टेड़ा। तू भी कुटिल, तेरा भाई भी कुटिल। मुझे ब्राह्मण मात्र मत जान। मैने अपने धनुष को सुआ, कोप को अग्नि, बाण की आहुति कर चतुरंगिनी सेना सहित राजाओं को समिधा किया है। इस फरसे से ऐसे अनेक समर यज्ञ किए हैं। मेरा प्रभाव न जानकर, मात्र ब्राह्मण समझ कर निरादर कर रहा है। तूने धनुष क्या तोड़ा, इतना अहंकार जैसे जग जीत लिया।

रुख बदलकर रामजी बोले मुनि, थोड़ा विचार कर बोलो। हमारी चूक छोटी और आपकी रिस बड़ी है। यह पुराना धनुष, मैने छुआ और टूट गया, इसमें क्यों अभिमान करूं। निरादर की बात करते हो तो -

**जो हम निदरहिं विप्रवदि, सत्य सुनहुं भृगुनाथ।**
**तौ अस को जग सुभट जेहि, भयवश नावहिं माथा।।**
**(निदरहिं- तिरस्कार करें, विप्रवदि- ब्राह्मण जान)**

काल भी प्रचारे तो सुख से लड़ें। क्षत्रिय तन और युद्ध से भय, यह तो कुल कलंक है। यह कुल की प्रशंसा नहीं बस अपना स्वभाव कहता हूं कि रघुवंशी रण में काल से भी नहीं डरते हैं। ब्राह्मणों के वंश की तो ऐसी प्रभुताई है कि उनसे डरने वाला अभय हो जाता है।-

**सुनि मृदु गूढ़ वचन रघुपति के, उघरे पटल परशुधर मति के।**

बोले -

**राम रमापति कर धनु लेहू, खैंचहुं मिटै मोर संदेहू।**

(भगवान ने धनुष देते समय, परशुराम को समझा दिया था कि जो यह धनुष चढ़ा दे तो जानना पूर्ण अवतार होगया और फिर तप करने चले जाना।)

रामजी के हाथ में जाते ही धनुष जैसे अपने आप ही चढ़ गया। यह देख परशुरामजी को बड़ा विस्मय हुआ। कवि कहता है-

**कैधों जटाजूट कैधों कंचन मुकुट सोहैं, चंदन की खौरे कैधों चंद्र अभिराम है।**
**कैधों मुंडमाल कैधों नाम मुकता की माल, कैधों अंगराय कै विभूति छवि धाम है।।**
**कैधों है त्रिशूल कैधों शर सुख मूल कर, कैधों पटपीत के बघम्बर ललाम है।।**
**रसिकबिहारी छवि न्यारी या अनूप भारी, राम रूप शंभु कैधों शंभु रूप राम है।।**
**-रामरसायन रामायण**

रामजी का प्रताप जानकर परशुरामजी प्रफुल्लित होकर बोले आपकी जय हो। आप रघुवंश रूपी कमल वन के विकास हेतु भानु और राक्षसकुल रूपी वन के विनाश हेतु अग्नि हो। हे शंकरजी के मन के मानस, आपकी क्या प्रशंसा करूं। मैने अज्ञान वश आपको बहुत अनुचित कहा है। आप दोनो भाई क्षमा के मंदिर हैं। मुझे क्षमा करें। जय हो, जय हो, जय हो कह, तप हित वन गए।

रघुनाथजी का यह प्रताप देखकर, खोटे राजा भागे।

तभी-

**देवन दीन्ही दुंदुभी, प्रभु पर वर्षहिं फूल।**
**हर्षे पुर नरनारि सब, मिटा मोह भय शूल।।**
**अब तो घने बाजे बजे, सुमुखियां गाने लगी। ओर -**
**सुख विदेह कर वरणि न जाई, जन्म दरिद्र मनहुं निधि पाई।**
**विगत त्रास भई सीय सुखारी, जनु विधु उदय चकोर कुमारी।**
***सीताजी रामजी से छह महीने छोटी थी।**
**-आनन्द रामायण**

विश्वामित्रजी को प्रणाम करके, जनकजी बोले, अब उचित आदेश दीजिए। मुनि बोले, राजन ब्याह तो धनुष आधीन था। तदपि वेदानुसार व्यवहार करो।

(विवाह की तीन विधि- स्वयंवर, पिता दत्त और कुलोचित।)

मुनि के कहने पर तुरत अयोध्या दूत भेजा। जनकजी ने महाजनों को बुलाकर, घर और नगर सजाने का निर्देश दिया। उन्होंने निपुण लोगों को इस कार्य में लगाया। सोने के केले के खंबे, पत्ते सहित बेल, मणियों के पत्ते, फल, बांस, पद्मराग के फूल बनाए। मणि, माणिक चीरकर कमल बनाए। अनेक रंग के पक्षी, भौंरे बनाए जो हवा के प्रवाह से गुंजार करते। खंबों में मंगल द्रव्य लिए प्रतिमाएं उकेरी। नीलम खोदकर आम के पत्ते, बीच में सोने के बोर और अमिया लटकाई। लग्गिया, झंडिया लगाई। जानकीजी और रघुनाथजी के मंडप अवर्णनीय थे। सब घर, जनक (पिता) के घर लग रहे थे। -

जो संपदा नीच गृह सोहा,सो विलोकि सुरनायक मोहा।

जिस पुरी में साक्षात लक्ष्मी नारी का उत्तम वेश धरकर बसे वहां की शोभा का वर्णन करने में तो शारदा और शेष भी सकुचाते हैं।

*रास्ते में वाहनों के थक जाने के कारण तीन रात विश्राम कर चौथे दिन संदेशवाहकों ने वृद्ध महाराज दशरथ के दर्शन किए।

**- वा.रा.बा.68**

जनकजी के दूत अवधपुर पहुंचे। वहां की शोभा देख प्रसन्न हुए। राजद्वारे जाकर खबर की। राजा ने बुलाया और स्वयं पाती स्वीकारी।-

वारि विलोचन बांचत पाती,पुलकि गात आई भरि छाती।

*दूतों ने कहा कि महाराज जनकजी ने कहा है कि यहां आने पर आपको अपने दोनो पुत्रों के विवाहजनित आनंद की प्राप्ति होगी।

**-वा.रा.बा.68**

नगर के लोगों को विश्वास हुआ कि राम लक्ष्मण के, जनकपुर में होने के समाचार आज सही हुए।

खेलते समय समाचार सुन, भरत शत्रुघ्न आए। पिता से पूछा कि पाती कहां की है। हमारे दोनो भाई कुशल तो हैं। राजा ने पाती पुनः पढ़कर सुनाई।

पाती ।।श्री।।

अनंत श्री महाराज अपराजिताधिराज, सकल महाराजानाम शिरताज, जगलाज को जहाज, गरीब नेवाज, महिमंडल महेंद्र सुरेंद्र के उपेंद्रसम करन काज, यश जागत जहान, केते भान समान प्रतापवान, हान मान सम्मान सुजान, ज्ञान प्रेमनिधान, दशरथ भूप को शीरकेतु भूप की जयजीव!

आप अनूप कुशल स्वरूप हैं। यहां आपकी कृपा ही कुशल है। भुवन हितकारी, मुनि संग, अंग अंग आभा उमंग, अनंग आभा भंग करनहार, आपके युगल कुमार आए। हमने लोचन लाहु पाये। रामचंद्र ने महीपन मद मोरि, महेश धनु तोरि, महि कीर्ति छाई, महिजा पाई। साजि बारात आइये, ब्याहि ले जाइए।

# आपका जनकराज

पाती सुन दोनो भाई प्रसन्न हुए। प्रेम उमंग आया। भरत की विशेष प्रीति से सभा, विशेष सुखी हुई। राजा ने दूतों को निकट बिठा, मधुर वचन कहे। भैया, दोनो बालक कुशलपूर्वक तो हैं। आपने अपने नेत्रों से देखा है। (अत्यंत प्रेम के कारण भैया कहा।) जबसे विश्वामित्रजी के साथ गए हैं आज सांची सुधि पाई है। उनका स्वभाव कहो। अच्छा बताओ, विदेहजी ने कैसे पहचाना। दूत मुस्काए, बोले, हे सभी राजाओं के मुकुटमणि महाराज, आपके समान कोई धन्य नहीं है जिनके राम और लक्ष्मण के समान विश्व के विभूषण सुपुत्र हैं।-

**पूछन योग न तनय तुम्हारे, पुरुष सिंह तिहुंपुर उजियारे।**
**जिनके यश प्रताप के आगे, शशि मलीन रवि शीतल लागे।**
**तिन कहं कहिय नाथ किमि चीन्हें, देखिय रवि दीपक कर लीन्हें।**

सीताजी के स्वयंवर में अनेक सुभट राजा एकत्रित हुए। किसी से शिवधनुष न टरा। सब हारे। सुमेरू उठा सकने वाले भी, परिक्रमा लगाकर लोटे। और तो और कैलाश उठाने वाला भी पराजित हुआ। -

**तहां राम रघुवंश मणि, सुनिय महा महिपाल।**
**भंजेउ चाप प्रयास बिनु, जिमि गज पंकज नाल।।**

परशुरामजी ने आकर आंख दिखाई पर वे भी अपना धनुष देकर, वन चले गए। जैसे रामजी वैसे लक्ष्मणजी। उनको देखकर, राजा वैसे ही कांपते हैं जैसे शेर के बच्चे को देखकर हाथी।-

देव देखि तव बालक दोऊ,अवनि आंखि तर आव न कोऊ।।

प्रेम, प्रताप, वीररस सानी, दूत की वाणी सबको प्रिय लगी। प्रसन्न होकर न्यौछावर देने लगे तो उन्होंने, अनीति जानकर कान मूंद लिए। बेटी के घर से न्यौछावर कैसे लें। तब राजा ने वशिष्ठजी को पत्रिका दी। दूतों को मिलवाया। मुनि बोले, पुण्यात्माओं के लिए पृथ्वी सुख से भरी है।-

**जिमि सरिता सागर महं जाहीं, यद्यपि ताहि कामना नाहीं।।**
**तिमि सुख संपति बिनहिं बुलाये, धर्मशील पहं जाहि सुभाये।**

आप और कौशल्या देवी ब्राह्मण, देवता और गौ सेवक हो। मुनि ने आज प्रमाणित कर दिया। वाह क्या प्रमाणपत्र है।-

**सुकृति तुम समान जग माहीं, भयो न है कोउ होनेहु नाहीं।**
**तुम ते अधिक पुण्य बड़ काके, राजन राम सरिस सुत जाके।**

आपके चारों बालक वीर, नम्र, धर्मात्मा, व्रती और गुणों के समुद्र हैं। आपको चारों काल कल्याण है। अब निशान बजाकर बारात सजाओ।

बहुत अच्छा कह, दूतों को उत्तम वास दे, राजा रनिवास को गए। सबको बुलाकर पत्रिका सुनाई। रानियां जैसे मोर बादलों की आवाज सुन प्रसन्न होता है वैसी प्रफुल्लित हुई गुरु माताओं ने आशीष दी। रामजी की माता अति प्रसन्न। प्रेम से सब रानियां पाती ले लेकर, हृदय से लगाती है। रानियों ने ब्राह्मणों को बुलाकर दान दिया। याचकों को बुला न्यौछावर दी। वे शुभकामना व्यक्त करते लोटे।

बाजे बजने लगे। चौदह भुवनो में रामजी और जानकीजी के विवाह का उत्साह भरगया। लोग मार्ग, गृह, गली संवारने लगे। वैसे तो अयोध्या सदैव सुहावनी है किन्तु प्रीति की रीति से, ध्वज, पताका, वस्त्र, चमर, स्वर्ण कलश, बंदनवार, दूब मणिजाल, हल्दी, दधि, अक्षत, माला, सुगंध से चौक पुराए। सोलह

श्रृंगार कर, काम की पत्नी को लजाती नारियां, मंगल गाती, कोकिल लजाती, राजभवन की ओर चली। जहां विश्वविमोहन मंडप बनाया गया। ब्राह्मण वेदध्वनि, भाट वंश वर्णन ,मंगल गान करने लगे। भवन छोटा उत्साह अपार था। उस समय -

**शोभा दशरथ भवन की, को कवि वरणै पार।**
**जहां सकल सुरशीशमणि, राम लीन अवतार।।**

महाराज के निर्देश पर, भरतजी ने दरोगा को बुलाया। हाथी, घोड़े, रथ सजाने को कहा जिन्होंने जैसे जलती धरती पर पैर रखे ऐसे, पवन को तिरस्कृत करते, घोड़ों को, उसी के रंग के अनुरूप सुंदर साज सजाया। उनपर छबीले नौजवान सवार हुए। सूर्य के रथ को लज्जित करते रथ सजाए।

नगर के बाहर बारात जुड़ने लगी, शुभ शकुन होने लगे। सुंदर हाथियों पर अंबारी शोभा दे रही थी। हाथियों के गलघंट मेघ गर्जन को लजाते।अनेक वाहन (जिनमे अश्व जुते हों), पालकी पर श्रेष्ठ ब्राह्मण, साक्षात वेदछंद जैसे विराजे।खच्चर, ऊंट, वृषभ पर सामान लादा। कावड़ लेकर कहार चले। मागध, सूत, भाट, बंदीगण भी विमानारूढ हुए। सब के मन में राम दरश की अभिलाषा है। राजद्वारे भीड़ हुई। नारियां मंगल द्रव्य की आरती लिए खड़ी गीत गाती हैं।

तब सुमंत ने दो रथों में सूर्य के अश्वों को तिरस्कृत करते, दिव्य अश्व जोते जिनका वर्णन शारदा भी नहीं कर सकती।-

**तेहि रथ रुचिर वशिष्ठ कहं, हर्षि चढ़ाइ नरेश।**

आपु चढ़ेउ स्यंदन सुमिरि,हर,गुरु,गौरि गणेश।।सहित वसिष्ठ सोह नृप कैसे,सुरगुरु संग पुरंदर जैसे।

कुल रीति कर, सब की विधि अनुसार व्यवस्था देख, रामजी का स्मरण कर, गुरु आज्ञा ले, शंख बजाकर कार्तिक बदी अष्टमी को बारात लेकर चले। देवों ने पुष्प वृष्टि की। विदूषक कौतुक कर हंसाने लगे। कुंवर अश्व नचाते हैं। घंटा ध्वनि हो रही है। मंगल शकुन हुए। बाई ओर नील कंठ, दाहिनी ओर कौआ, नौले का दर्शन हुआ। और -

**सानुकुल बह त्रिबिध बयारी, सघट सबाल आव वरनारी।**

(सघट- घड़ा भरे, सबाल- बालक लिए)

गाय सम्मुख दूध पिलाती मिली। मृगसमूह दाहिने आया। दधि और हाथ में पुस्तक लिए विद्वान ब्राह्मण आए।-

**मंगल मय कल्याण मय, अभिमत फल दातार।**
**जनु सब सांचे होन हित, भये शकुन इकबार ।।**

(मंगल मय- धन पुत्रादि देने वाले, कल्याण मय- इनकी निर्विघ्न स्थिरता देने वाले, अभिमत फल- वांछित फल)

ये सब शकुन उनके लिए हैं जिनके पुत्र श्रीराम हैं। रामजी जैसा वर, सीताजी जैसी दुल्हन और दशरथ और जनकजी जैसे समधी। वाह। ब्याह सुन शकुन भी नाचे। बारात चली।

जनकजी ने मार्ग में सेतु बंधाए। मार्ग में वास के उत्तम स्थान बनाए।

*जनकजी ने इक्षुमति के तटपर स्थित सांकाष्या नगरी से विवाह आनंद में सम्मिलित होने के लिए अपने भाई कुशध्वज को दूत भेजकर सपरिवार बुलाया।

**- वा.रा.बा.70.03**

नित्य नवीन सुख से, बाराती अपना घर भूल गए। बारात आती जानकर, मिथिलावासी, हाथी, घोड़े रथ लेकर अगवानी को चले। स्वर्ण कलश, कटोरे, थाल में अनेक पकवान, फल, गहने, वस्त्र थे। मृग, घोड़े, हाथी, रथ थे। दही, चिउड़ा कावड़ में भरकर भेजे।

दोनो समधी हर्ष से मिलते हैं। देव दुंदुभी बजाते हैं। देवों की स्त्रियां नृत्य करती हैं। भेंट दी। राजा ने स्वीकार की। जनवासे चले।

पुर में बारात आई जानकर, जानकीजी ने अपनी महिमा जनाई। रिद्धिसिद्धि को बुलाकर जनवासे में देवसुलभ सुख उपलब्ध करवाए। यह महिमा देखकर रामजी प्रसन्न हुए। पिताजी का आगमन सुन आनंद न समाया। गुरुजी के संकोच से कुछ कहते नहीं। गुरु ने दोनो को हृदय से लगाया। नेत्र भर आए। जनवासे दशरथजी से मिलने जैसे प्यासा सरोवर पर जावे वैसे चले। मुनि को पुत्रों संग आते देख, दशरथजी स्वागत करने को, देह सुध भूल उठ चले। मुनि को प्रणाम किया। मुनि ने हृदय से लगाया। कुशल पूछी। दोनो भाइयों को गले लगाया। -

सुत हिय लाय दुसह दुख मेटे,मृतक शरीर प्राण जनु भेंटे।

दोनो ने वशिष्ठजी को प्रणाम किया। चारों भाई आपस में मिले।-

**पुरजन परिजन जातिजन, याचक मंत्री मीत।**
**मिले यथाविधि सबहिं प्रभु, परम कृपालु विनीत।।**

चारों भाई राजा के समीप, चारों पुरुषार्थों के समान शोभित है। देव पुष्पवृष्टि और नाकनटी (अप्सरा) नृत्य करती हैं। शतानंदजी और विप्रो, कुलजनो के साथ, जनकजी ने अगवानी की। बारात लग्न से पहले आगई थी इससे सब प्रसन्न हैं। (यह हमारे लिए संकेत भी है कि बारात समय पर पहुंचनी चाहिए)

सब ब्रह्माजी से, दिन बड़ा हो, यह प्रार्थना करते हैं। लोग बातें करते हैं -

जनक सुकृत मूरति वैदेही,दशरथ सुकृत राम धरि देही।

इन जैसी किसी ने शिवजी की आराधना नहीं की ओर न ही किसी ने फल पाया। -

इन सम कोउन भयो जग माहीं,है न कतहुं अब होनेउ नाहीं।

जानकीजी के दर्शन करने, जनकपुर वास करने और राम विवाह देखने से, हमारे समान कौन पुण्यवान होगा। जनकजी बार बार सीता को बुलाएंगे, दोनो भाई लेने आयेंगे, हम दर्शन पाएंगे। राजा के साथ दो भाई और हैं। एक राम जैसे एक लक्ष्मण जैसे। अब तो चारों यहीं ब्याहें तो आनंद हो।

स्वयंवर में आए राजाओं ने भी दर्शन लाभ लिया। ब्रह्माजी ने, हिमऋतु अगहन मास गौधूलि बेला का लग्न निकाला। नारदजी के साथ जनकपुर भेजा।

*मार्गशीर्ष, शुक्लपक्ष, पंचमि गुरूवार को राम सीताजी का गोरज लग्न हुआ था।

**- भागवत नवनीत 366**

शतानंदजी के कहने पर मंत्री, मंगल कलश सजाकर लाए। वाद्य बजे। सुहागिने गाने लगी।

ब्राह्मण वेदध्वनि करने लगे। दशरथजी से निवेदन किया। वे गुरु को पूज, कुल रीति कर, मुनि, साधु समाज लेकर चले।

देवता दशरथजी का भाग्य और ऐश्वर्य देख सराहना करने लगे। शिव ब्रह्मादिक विमान में चढ़कर, राम ब्याह देखने आए। नगर की शोभा और नारियों को देख, देवों की स्त्रियां फीकी हुई। ब्रह्माजी को अपनी रचना कहीं नहीं मिली। सब सीताजी का वैभव था। शिवजी बोले, बाबा ब्याह देखो, आश्चर्य मत करो।

दशरथजी के साथ, साधु, देवताओं और चारों कुमार, चारों मोक्ष (सायुज्य, सालोक्य, सामिप्य, सार्ष्टि) जैसे लग रहे हैं। राम रूप निरख, उमा संग शंकर आनंद मग्न हो गए। मोर के कंठ सा श्याम अंग, केसरिया बाना, ब्याह के सब गहने।

घोड़ों को नचाते। भाट यश गाते चले। जिस घोड़े पर रामजी बैठे हैं उसकी गति देखकर गरुड़जी भी लजाते हैं। घोड़ा जैसे कामदेव ने सजाया है।

शंकरजी को अपने पंद्रह नेत्र प्रिय लगे। ब्रह्मा आठ नेत्र जान पछताए, विष्णु (सहस्त्राक्ष) प्रसन्न हुए। कार्तिक बारह नेत्र से देख हर्षित हैं। इंद्र तो गौतम के शाप को वरदान मान मगन हुए। जय जयकार हुई।

सुनैना रानी सखियों संग परिछन (दूल्हे की आरती) करने चली। सब रति को लजाने वाली हैं। कोकिल कंठ से गाती, चाल से गज, काम को लजाती चली। बाजे बजे। एक और आश्चर्य हुआ-

**शची शारदा रमा भवानी, जे सुरतिय शुचि सहज सयानी।**
**कपट नारि वर वेष बनाई, मिलीं सकल रनिवासहि जाई।**

साथ गाने लगी। झांकी देख अम्भोज (कमल से) अंबक (नेत्रों) में अंबु (जल) उमड़ा। बाबा कहते हैं -

**जो सुख भा सिय मातु मन, देखि राम वरवेष।**
**सो न सकहिं कहि कल्प शत,सहस शारदा शेष।।**

नेत्रों के हर्ष जल को, अवसर के अनुसार रोका, आरती की। अर्घ्य दिया। पंच शब्द (घंटा, शंख, बांसुरी, नगाड़े, दुंदुभी या वेद, बंदी,जय, शंख और बाजे) हुआ।

रामजी ने मंडप में प्रवेश किया। दिव्य आसन पर बैठाए। न्यौछावर की। ब्रह्मादिक ब्राह्मण का वेश धर मंगल दर्शन करने लगे। नाई, बारी (घरेलू कामगार जो पवित्र माना जाता है, दोना पत्तल भी बनाते हैं।), भाट, नट न्यौछावर पाकर धन्य हुए।

कवि, वक्ता जनकजी और दशरथजी के मिलन की उपमा ही नहीं ढूंढ सके। बहुत कोशिश की, फिर बोले इनके जैसे ये ही हैं। सृष्टि रचने के बाद आज समान समधी देखे।-

सम समधी देखे हम आजू।

जनकजी मार्ग में पट बिछाते सब को मंडप में लाए। स्वयं आसन बिछाकर बैठाया। वशिष्ठजी, वामदेव, जाबाली के साथ विश्वामित्रजी को अधिक स्नेह से पूजा। ईश्वर मानकर दशरथ और बारातियों की पूजा की। रामजी ने देवताओं को देखकर, मानसिक पूजा की।

वशिष्ठजी के कहने पर शतानंदजी जानकीजी को लेने गए। सखियां आदर पूर्वक जानकीजी को सजाकर मंडप की ओर ले चली। छबीली सीताजी, सखियों के मध्य शोभायमान थी। कवि, वक्ता की मति थोड़ी और जानकीजी की सुंदरता अधिक है सो वर्णन नहीं हो सकता। जानकी को मंडप में आती निरख, सबने मन ही मन प्रणाम किया। रामजी संतुष्ट हुए। देव वंदनकर

पुष्पवृष्टि करने लगे। मुनि आशीष देकर शांतिपाठ करने लगे। कुलगुरुओं ने विधि की। देवताओं ने प्रकट हो पूजा ली। आशीर्वाद देकर सुख पाया। मधुपर्क (दही और शहद) दिया। होम समय अग्नि प्रकट होकर आहुति स्वीकारते हैं। जनकजी की पटरानी सुनैनाजी को-

**सुयश सुकृत सुख सुंदरताई, सब समेटि विधि रची बनाई।**

सुंदर सुहागिनियां मुनिवर का आदेश पाकर सुनैनाजी को ले चली। जनकजी के दक्षिण भाग में बैठाया। सुनैनाजी जनकजी के वाम भाग में हिमवान के वाम भाग में मैनाजी के समान शोभायमान हुई।

स्वर्ण कलश और स्वर्ण परात सामने रखकर दोनो दूल्हे के चरण धोने लगे। जो शिवजी के हृदय सरोवर में सदैव रहते हैं। जो स्मरण मात्र से कलिकलुश मिटाते हैं। जिनके स्पर्श मात्र से गौतम की नारी पवित्र हुई। जिनका मकरंद गंगा, शिव नित्य सिरपर धरते हैं। मुनि योगी जिनमें मन लगाकर वांछित फल पाते हैं। वे चरण धोकर धन्य हुए। सब जय जयकार करने लगे। वर और कुंवरि का हाथ परस्पर पकड़ाकर कुलगुरु शाखोच्चार करने लगे। इस भांति नृपभूषण जनक ने कन्यादान किया।

वसिष्ठजी बोले।

"उस परमेश्वर से ब्रह्मा से मरीचि से कश्यप से सूर्य से वैवस्वत से इक्ष्वाकु से कुक्षि से विकुक्षि से बाण से अनरण्य से पृथु से त्रिशंकु से धुंधुमार से युवनाश्व से मांधाता, सुसंधि से प्रसेनजित और ध्रुवसंधि से भरत से असित से सगर से असमंजस से अंशुमान से दिलीप से भगीरथ से कुकुत्स्थ से रघु से प्रवृद्ध से शंखण से सुदर्शन से अग्निवर्ण से शीघ्रग से मरू से प्रशुश्रुक से अंबरीश से नहुष से ययाति से नाभाग से अज से महाराजाधिराज दशरथ जिनसे ये चारों राज कुमार प्रकटे हैं। महाराज जनक इस प्रकार ब्रह्माजी

से लेकर राम तक सारे इक्ष्वाकु राजा धार्मिक, यशी, सत्यवादी हुए हैं। मैं रामचंद्र जिनके जैसा वर सप्त द्वीप में नहीं है उसके हेतु आपकी सुता जानकी का हाथ मांगता हूं।"

तब शतानंदजी बोले।

"त्रिलोकी के श्रेष्ठ राजा निमि से मिथि से जनक से उदावसु से नन्दिवर्धन से सुकेतु से देवरात से बृहद्रथ से महाबीर से सुधृतिमान से धृष्टकेतु से हर्यश्व से मरू से प्रतिंधक से कीर्तिरथ से देवमीढ़ से विबुध से महीध्रक से कीर्तिरात से महारोमा से स्वर्णरोमा से ह्रस्वरोमा से कुशध्वज (संकाश्य नगरी के राजा हैं) और सीरध्वज वे अपनी कन्या जानकी आपको देते हैं।"

लो अब हमे अपने परदादा और दादी के नाम भी याद नहीं हैं।-

**प्रतिग्रहो दातृवशः।**
**दान दाता के अधीन होता है।**
**- वा.रा.बा.69.14**

तुलसी बाबा गाने लगे-

**हिमवंत जिमि गिरिजा महेशहिं हरिहिं श्री सागर दई।**
**तिमि जनक रामहिं सिय समर्पी विश्व कल कीरति नई।।**
**क्यों करें विनय विदेह कियो विदेश मूरति सांवरी।**
**करि होम विधिवत गांठ जोरी होन लागी भांवरी।।**

महासंकल्प का पाठ हुआ। जय ध्वनि, वेद ध्वनि हुई। नारियों का गान हुआ। बाजे बजे। देवों ने कल्पवृक्ष के पुष्प बरसाए।

तब वसिष्ठजी की आज्ञा से कुशध्वजजी की कन्या मांडवी भरत से,जानकीजी की छोटी बहन उर्मिला लक्ष्मण से और कुशध्वज कन्या श्रुतिकीर्ति शत्रुघ्न संग ब्याही। भांवर होने लगी।

*चारों भाइयों ने अग्नि की तीन परिक्रमा करके पत्नियों को स्वीकार किया।

**- वा.रा.बा.73**

राम सीता की छवि मणि खंबों में ऐसी लग रही है मानो अनगिन रति काम दर्शन कर रहे हैं।कभी छिप जाते कभी प्रकट होते। जनक तो सुध भूल गए। चारों योग्य वर पाकर प्रसन्न हैं।

भांवर के बाद रामजी ने जानकीजी की मांग में सिंदूर लगाया। गुरु आज्ञा से दोनों एक आसन पर बैठे। दोनों को देख दशरथ पुलकित हुए। जीभ एक, मंगल अनेक, कौन वर्णन करे।

महाराज दशरथ चारों बेटों को बहुओं के साथ देखकर ऐसे आनंदित हैं जैसे क्रियाओं सहित चारों फल पा लिए हों। रामजी की ही विधि से सभी का ब्याह हुआ। जनकजी द्वारा दिए गए दहेज का वर्णन नहीं हो सकता। याचकों को मनभाया दान दिया। मुनियों को प्रणाम किया। जनकजी हाथ जोड़कर दशरथजी से बोले। आपसे संबंध के साथ ही, हम बड़े हो गए। अब यह राज, साज, समाज सब आप अपना सेवक जानो। इन कन्याओं को अपनी परिचारिका समझना। दशरथजी ने जनकजी के शील की सराहना की।

सब कोहबर में गए। पार्वतीजी ने रामजी को लहकोर (मिठाई खिलाना) दिया। सरस्वतीजी ने जानकीजी को सिखाया। हास विलास हुआ।

कवि कहते है -

**दूलह श्रीरघुनाथ बने दुलही सिय सुंदरि मंदिर माही।**
**गावति गीत सबै मिलि सुंदरि वेद युवा जुरि विप्र पढ़ाहीं।।**
**राम को रूप निहारति जानकि कंकण के नग की परिछाहीं।**
**याते सबै सुधि भूल गई कर टेकि रही पल टारत नाहीं।।**

सखियां दुल्हा दुल्हिन को जनवासे लेगईं। देवता "ये चारों जोड़ी बहुत काल तक जिए" ऐसे आशीष दे, नगाड़े बजाकर अपने लोक को गए।

जेवनार (प्रीतिभोज) का बुलावा आया। अनोखे वस्त्रों के पावडे बिछाए जिनपर महाराज दशरथ चरण धरते आए। पांव धोकर यथोचित आसन पर बैठाया। मणियों के पत्तो को सोने की कील से बनाई पत्तलें रखकर परोसने वाले क्षणभर में स्वादिष्ट सूपोदन (दाल भात), सुरभी सरपि (गाय का घी) सब को परोस गए। अनेक प्रकार के शटरस (अम्ल, मधुर, तिक्त, कषाय, कटु, लवण) पकवान (भक्ष्य- बूंदी आदि- जो चबाने में आवे। भोज्य जो खाया जावे- पूरी, मिठाई दाल भात। लेह्य- जो चाटा जाए, रबड़ी, मोहन भोग। चोष्य- जो चूसा जावे)।

सब भोजन करने लगे और उधर नारियां गाली गाने लगी।-

**फीकी पै निकी लगे, कहिए समय विचारि।**
**सबके मन हर्षित करे, ज्यों विवाह में गारि।।**

**- पैतृक संपदा**

गाली सुन मुनि और राजा प्रसन्न हुए। आचमन किया। पान खाया। जनवासे गए।

*राम कलेवा

जानकीजी के भाई लक्ष्मीनिधि, वरों को सखाओं सहित जनवासे से, कलेवा हेतु बुलाने गए। राजा ने अपने पास आसन दिया। सभी कुंवरों का श्रृंगार किया गया।

बाबा वर्णन करते है -

**रघुनंदन शिर पाग जरकसी लसी त्रिभंगी बांधी।**

**तिमि नौरंगी झुकी कलंगी रुचि रुचि पैजनि साधी।।**

(जरकसी लसी- जरी से गुंथी, त्रिभंगी- तीन लट वाली, पैजनि- लड़ियों वाली)-

**वरणि सकै को राम को, अनुपम दूलह वेष।**
**जेहि लखि शिव सनकादिको,रहत न तनुहि सरेख।।**
**(सरेख- सुधि)**

अपने सखाओ सहित घोड़ों पर सवार होकर चले। (राम जगवंदन, भरत रंगीला, शत्रुघ्न चंपा, ओर लक्ष्मण लक्खी नामक घोड़े पर सवार हुए।) रामजी के बगल में लक्ष्मीनिधि हास्य करते चले। नारियां इन्हें देख मुग्ध हुई। बोली-

**धनि यह भाग्य हमारो प्यारी जिन भरि नैन निहारे।**
**नतु दरशन दुर्लभ दूलह के रविकुल प्राण पियारे।।**
**भाग सोहाग आज भल पायो श्रीमिथिलेश कि बेटी।**
**सुंदर श्याम माधुरी मूरति जिन निज भुज भर भेंटी।।**

एक बोली जनक महल चलो। आज स्वयं भी हंसेंगे इन्हें भी हंसावेंगे।

राज कुंवर द्वारे आए। सुहागिनों ने कंचन कलश, पल्लव, दीपक सहित सजाए। सोने की थाली लेकर परिछन चली पर रूप में मोहित होगई-

राम रूप रंगि गई रंगीली,लखि दूलह सुख सारा।

तन मन रह्यौ सरेख न काहू,को करे मंगलचारा।। नैत्रो का जल रोक, परिछन चली। लक्ष्मीनिधि हाथ पकड़ रामजी को, सब कुंवरों के साथ भीतर ले गए। वहां रति को लजाती, सुनैनाजी बैठी थी। राम को देख सब उठी-

करि आरती वारि मणिभूषण,सादर पांय पखारे।

चारि रंग के चारि सिंहासन,चारिहुं वर बैठारे।। लखि छवि ऐना सासु सुनैना,एकहु पलक तजैना।

भूली चैना बोलि सकै ना,कहत बने ना बैना।।तकि जकि रही तनक नहिं डोलै,मगन महा मुद माहीं।

राम रूप रंगि गई रंगीली,आंसु बहे दृग जाहीं।। सासू की ऐसी दशा देखकर, रामजी सकुचाते हैं। आज इन्हें क्या हो गया। सखी बोली, यह आपका प्रभाव है लालजी। सुनैना जागी, बलाई ली, मुख चूमा। सांवरी सूरत पर तृण तोड़ने लगी। फिर कलेवा कराने ले गई। पद पखार। स्वर्ण थाल में विविध पकवान परोसे। पंखा झल। रुचि पूछकर परसा। प्रभु ने स्वाद सराहा। फिर हाथ धुलाकर सखियों ने पान खिलाया। तभी लक्ष्मीनिधि की पत्नी सिद्धि, रामजी के निकट आकर कमल हाथ में लिए बोली-

हौ चितचोर किशोर भूप के,बड़े चोर तुम प्यारे।सुरति हमारि भुलाय सांवरे,सासु समीप सिधारे।।

रामजी बोले, हमे दोष क्यों देती हो। तुम ही हमारा आना जान छिपकर बैठी थी।-

**हम आए तुम महलन भीतर, तुमहिं न पर्यौ जनाई।**
**भलो सदन तुम्हरो है प्यारी, जहं सब जाहिं समाई।**

बोली, यहां आपके घर की रीति नहीं चलेगी। ऐसा कह, हाथ पकड़, अपने भवन ले गई। चारों को आसान दे, आरती उतार, मालती की माला डाल, इत्र लगा, पान खिलाया।-

**ललित लवंग कपूर संगधरि, कोउ सखि पान लगावे।**
**कोउ कर पीकदान लै ठाढ़ी, कोउ सखि चमर डुलावै।।**

न्योते पर आई अनेक राजकुमारियां भी सिद्धिसदन आई। राम शोभा देख मोहित हुई। सिद्धि सहित स्नेह से गारी देने लगी-

**एक सखी कह सुनहुं लाल जी, यह स्वरूप कहं पायो।**
**कानन सुन्यो काम अति सुंदर, की तुमको सोई जायो।।**
**बोली सिद्धि सुनहु रघुनंदन, तुम हमरे ननदोई।**
**एक बात तुमसों हम पूछें, लाल न राखहुं गोई।।**
**होत ब्याह संबंध सबन को, अपनी जातिहिं माहीं।**
**निज बहिनी श्रृंगीऋषि को तुम, कैसे दियो विवाही।।**

(पूर्व में कथा कह चुके हैं कि दशरथ कन्या अंगराज रोमपाद ने गोद ली और ऋषि को ब्याही थी)-

की उनको मुनीश लै भाग्यो,की वोई संग लागी।

ऐसी बात बतावहुं लालन,तुम रघुवंश अदागी।।लषण कह्यो यह सुनहुं लाड़िली,जेहि विधि जहं लिख दीना।

तहैं संयोग होत है ताको,ब्याह तो कर्म अधीना।।कहं हम राजकुंवर रघुवंशी,कहं विदेह वैरागी।भयो हमारो ब्याह तुम्हारे,विधिगति गनै को भागी।।

एक बात और। तुम सिद्धि तुम्हारे पति लक्ष्मी (निधि)। ये नारी संग नारी का ब्याह कैसे हुआ, जरा बताओ।

एक सखी बोली, अब आपसे कौन जीत सके लालन। आपके घर की रीति तो सारे संसार में प्रसिद्ध है।

**अति उदार करतूति दार सब, अवधपुरी की बामा।**
**खीर खाय पैदा सुत करती, पतिकर कछु नहिं कामा।।**
**सखी वचन सुनि तब रघुनंदन, बोले मृदु मुसुकातै।**
**आपनि चाल छिपावहु प्यारी, कहहु आन की बातैं।।**
**कोउ नहिं जन्मैं मात पिता बिन, बंधी वेद की रीती।**
**तुम्हरे तो महिते सब उपजे, अस हमरे नहि रीती।।**

तब सिद्धि की छोटी बहन चंद्रकला बोली, लालन बालपन से तपस्वियों के साथ रहे हो फिर कहो ये छल छंद कहां सीखे। यातो मुनि नारियों के संग या अपनी बहिन से क्योंकि मीठे-खट्टे का स्वाद बिना चखे पता नहीं चलता।-

**बोले भरत भली कह सजनी, तुमहुं तो अवै कुमारी।**
**वर्णऊ पुरुष संग की बातें, सो कहं सीखेउ प्यारी।।**
**रहे मुनिन संग ज्ञान सीखन को, सो सब सुने सुनाये।**
**कामिनि कामकला अब सीखन,हम तुम्हरे डिग आये।।**

एक सखी बोली, रामजी आप इतने सुंदर हो तो अवधपुरी की नारियां तो अवश्य आप पर रीझी होगी। हाथ पकड़ रामजी बोले, तुम तो सब को अपने ही जैसा समझती हो। सब ताली देकर हंसे। सिद्धि आदि सब सुखी हुई। रामजी बोले, आप सब मुझे प्राणों से अधिक प्रिय हो।–

**हम सब भांति तुम्हारे सांवरि, तुम सब भांति हमारी।**
**सत्य सत्य ये सत्य वचन मम, मानहुं राजकुमारी।।**
**रघुनंदन के वचन सुनि, खुल गये हृदय किवाड़।**
**बढ्यो प्रेम सब तियन के, तनिकहुं नहीं संभार।।**

सब बोली -

**धन्य भाग हमरे रघुनंदन, हम ते बड़ कोउ नाहीं।**
**बूढ़त रही जगत सागर में, राखि लीन्ह गहि बांही।।**
**जेहि जेहि योनि कर्मवश हम को, जन्म विधाता देही।**
**तहं तहं रसिकराय रघुनंदन, तुमही मिलहुं सनेही।।**

**बरु विधि कोटिन करै यातना, या तनु क्षण क्षण छूटै।**
**हमरी तुमरी लगन लाड़िले, कौनौ जनम न टूटै।।**

(बरु- चाहे)
हम भी गाएं -

**हमरी तुमरी लगन लाड़िले, कौनौ जनम न टूटै।**
**हमरी तुमरी लगन लाड़िले, कौनौ जनम न टूटै।।**

करुणामई वाणी सुन, करुणा सागर ने सब का कोमल वाणी से सत्कार किया। विदा मांग सिद्धि सदन से, चारों भाई चार चंद्रमा की भांति निकले। सासु से विदा ले, जनवासे आए। इसी आनंद में पल समान दिवस बीतने लगे।

दशरथजी प्रातक्रिया कर गुरुजी के पास गए। पूजा कर, निवेदन किया कि आपकी कृपा से हमारे सब कार्य सिद्ध हुए हैं। मेरा मन है, विप्रो को गौ दान करूं। वशिष्ठजी ने साधु कह, विप्रों को आमंत्रित किया। वामदेव, नारद, जाबालि, वाल्मीकि, विश्वामित्र आदि आए। राजा ने दंडवत प्रणाम किया। उचित आसन दिया।-

**चारि लक्ष वर धेनु मंगाई, काम सुरभि सम शील सुहाई।**

सब को सबभांति अलंकृत किया। गौ दान से मुनियों का मान किया। बोले, मैने आज जीने का लाभ लिया कहकर, अशीष लेकर विदा किया। फिर याचक (मांगने वाले) बुलाए। (उस समय याचक भी बुलाने पर आते थे।)-

**कनक वसन मणि हय गय स्यंदन, दिए बूझि रुचि रविकुलनंदन।**

सब दशरथजी की जय जयकार करते चले।कौशिक मुनि के चरण पकड़ राजा बोले, यह सब आपकी कृपा का प्रभाव है।

इस प्रकार रामजी के विवाह का वर्णन शेषजी भी न कर सके तो कमल किस गिनती में है। फिर भी संतों, ग्रंथों की कृपा से यथामति कहा है।

महाराज दशरथ रोज उठकर विदा मांगते और प्रेम से जनकजी रोक लेते। नित नूतन पहुनाई। नित्य नगर में नया आनंद। किसी को बारात का

जाना नहीं सुहाता। बाराती मानो स्नेह रज्जू से बंध गए हों। एक दिन कौशिक मुनि और शतानंदजी ने आकर जनकजी को समझाया तो जनकजी ने जो आज्ञा कह मंत्रियों को बुलाकर कहा कि अवधनाथ विदा होना चाहते हैं। भीतर रनिवास में सूचना पहुंचादो। इतना सुनना था कि सचिव, ब्राह्मण, सभासद और राव प्रेम से भावविभोर हो गए।

बारात जाती है यह जान, पुरवासी भी सांझ के कमल से कुम्हला गए। बारात के लौटते समय के स्थानों पर जनकजी ने बेल, कहार द्वारा, अनेक प्रकार की खाद्य सामग्री पहुंचा दी। इंद्र को लजाने वाला दहेज अवधपुर पहुंचा दिया। थोड़े जल में मछली की भांति, रानियां व्याकुल हुई। बार बार सीता को गोद ले समझाती हैं।-

**होइहहु संतत पियहिं पियारी, चिर अहिवात अशीष हमारी।**
**सासु श्वसुर गुरु सेवा करहूं, पति रुख लखि आयसु अनुसरहूं।**

चारों को यही शिक्षा दी। (हमें भी अपनी बेटी को विदा करते समय यही सीख देनी चाहिए।) बार बार मिलकर कहती हैं, विधाता ने नारी क्यों बनाई। चारों भाई विदा लेने आए। लोगों ने कहा हमारा राजा सच में विदेह है जो इन्हें विदा कर रहा है। चलो नेत्र धन्य कर लें।-

**मरणशील जिमि पाव पियूखा, सुरतरु लहै जन्म कर भूखा।**
**पाव नारकी हरिपद जैसे, इनकर दर्शन हमकहुं तैसे।**

(हरिपद- वैकुंठ)

रनिवास में सासुओं ने मुदित मन आरती की। प्रेम अवर्णनीय है। उबटन कर स्नान कराया।भोजन करवाया। सकुचाते रामजी बोले-

**रा उ अवधपुर चहत सिधाये, विदा होन हम इहां पठाये।**
**मातु मुदित मन आयसु देहू, बालक जानि करब नित नेहू।**

रनिवास बिलखने लगा। कुमारियों को बुलाया। चारों को सोंपी। कहा कि ये हमें प्राण प्रिय है।

चरण पड़ी। रामजी ने समझाया। विदा किए। कुंवरियों को बुलाया। मां बारबार मिली। पहुंचाती हैं फिर मुड़कर मिलती हैं।-

**पुनिपुनि मिलति सखिन बिलगाई, बाल वत्स जनु धेनु लवाई।**

(बिलगाई- अलग अलग)

आज तो जैसे विदेहपुर में करुणा और विरह ने वास ही कर लिया है।-

**शुक सारिका जानकी जियाये, कनक पींजरन राखि पढ़ाये।**
**व्याकुल कहहिं कहां वैदेही, सुनि धीरज परिहरै न केही।**

जब खग मृग की यह दशा तो मनुष्यों की क्या कहें। जनकजी अपने भाई के साथ आए। नैनो में जल भर आया। सीता को देख धीरता जाती रही। गले लगाया। जैसे ज्ञान की मर्यादा मिट गई। मंत्रियों ने समझाया। पालकियां बुलाई।

सब को बैठाया। राजा ने सीता को समझाया। उनके प्रिय दासी दास साथ भेजे।

दशरथजी ने मुनियों को प्रणाम कर, गणेशजी का पूजन कर, प्रस्थान किया। शुभ शकुन हुए।मांगने वालों को बुलाकर संतुष्ट किया। बहुत समझाने पर जनकजी ने मुनियों को प्रणाम कर विदा किया।

रामजी से कहा, आप मुनि ओर महेश के मानस के हंस हो। आप मात्र स्नेह से ही रीझते हो। रामजी ने पिता और कौशिक की भांति सम्मान किया। बारात चली।

*लौटती बारात पर कपटी राजाओं के आक्रमण से भरत मूर्छित होगये थे। उनके लिए रामजी के निर्देश पर लक्ष्मण मुग्दल मुनि के आश्रम से संजीवनी लाए थे।

**-आनन्द रामायण**

*विश्वामित्रजी विवाह पूर्ण होने पर मिथिला से ही अपने आश्रम लोटगये।

**- वा.रा.बा.74**

*लौटती बारात में शकुन ओर अपशकुन देखकर राजा दशरथ के पूछने पर वशिष्ठजी ने कहा कि घोर विपदा आने वाली है पर टल जायेगी। तेज तूफान में राजा, वशिष्ठजी और रामजी को छोड़कर सब अचेत हो गए।

**- वा.रा.बा.74**

*मार्ग में मिले परशुरामजी ने रामजी से कहा कि विश्वकर्मा ने दो धनुष बनाए थे। एक शिवधनुष जिसे तुमने तोड़ दिया दूसरा विष्णु का धनुष जो मेरे पास है जिसे उन्होंने मेरे पूर्वज ऋचीक को दिया था। आप इसपर बाण चढ़ाओ।

**- वा.रा.बा.75**

*रामजी ने परशुरामजी के हाथ से उस धनुष बाण के साथ उनकी वैष्णवी शक्ति भी ले ली। फिर परशुरामजी ने कहा कि मैं रात में पृथ्वी पर नहीं रहता। आप मेरी गमन शक्ति को छोड़कर तपस्या से प्राप्त लोकों पर विजय को इस बाण से नष्ट कर दो।

**- वा.रा.बा.76**

*रामजी बोले मैं तुम्हें दिव्य चक्षु देता हूं। मुझे देखो। परशुरामजी ने देखा -

**ततो राम शरीरे वै रामोपश्यत्स भार्गवः।**
**आदित्यांसवसून्रुद्रांसाध्यांश्च मरुद्गणान।।**

**- अद्‌भुत रामायण 09.18-**

**वहां राम को राम के, दर्शन हुए विशेष।**
**रवि वसु रुद्र मरुद्गण, तके सकल अनिमेष।।**

**-कमल-**

**पितृंहुताशनांश्चैव नक्षत्राणि ग्रहांस्तथा।**
**गंधर्वान्राक्षसान्यक्षान्नदींस्तीर्थानि यानि वै।।**

**- अद्‌भुत रामायण 09.19**

**पितृईश्वर ग्रह नक्षत्र अग्नि, गंधर्व राक्षस थे उनमें।**
**बहु नदी तीर्थ यक्षादिक भी, थे बसे रामजी के तन में।।**

**- कमल-**

**ऋषीन्वै निखिलान्यांश्च ब्रह्मभूतान्सनातनान।**
**देवर्षींश्चैव कात्स्र्न्येन समुद्रान्पर्वतांस्तथा।।09.20**

**(कात्स्र्न्येन- संपूर्ण)-**

**वेदांश्च सोपनिषदान्वषट्कारांसहाध्वरैः।**
**ऋचो यजूंषि सामानि धनुर्वेदांश्च सर्वशः।।09.21**

**(सहाध्वरैः- यज्ञ सहित)**

**थे देव ऋषी पर्वत सागर, संपूर्ण सनातन को देखा।**
**उपनिषद वेद यज्ञादि ऋचा, क्या करे कोई उनका लेखा।।**
**- कमल-अद्‌भुत रामायण**

रामजी मार्ग के लोगों को सुख देते पवित्र दिन अयोध्या के समीप आए। वाद्यध्वनि सुनकर पुरजन प्रसन्न हुए। घर संवारे। तोरण, ध्वजा, पताका, अरगजा, मंगल कलश धरे।

राज भवन की शोभा कौन कहे। सुआसिनियां (सुहागवती) आरती लेकर आई। सभी माताएं प्रेम विह्वल हुई । चलते न बना। आरती सजाकर चली-

**हरद दूब दधि पल्लव फूला, पान पूगिफल मंगल मूला।**
**अक्षत अंकुर रोचन लाजा, मंजुल मंजरि तुलसि बिराजा।**
**(अंकुर- अंकुरित धान्य, रोचन- गोरोचन, लाजा - खीलें)**

शुभ समय में राजा के संग राज कुमारों ने, गणेशजी का स्मरण कर अवधपुर में प्रवेश किया। नागरिकों ने न्योछावर की। आज भी न्यौछावर की परंपरा कायम है। आप सब भी करते ही होंगे। करना

भी चाहिए। कुंवरों की आरती उतारी। पालकी का पर्दा हटाकर, वधुओं को देख, सुख पाया। इस तरह राजद्वारे आए। माताएं बारबार आरती करती हैं। भूषण, मणियां न्योछावर करती हैं।-

**वधुन समेत देखि सुत चारी, परमानंद मगन महतारी।**

निगम, नीति अनुरूप कुलरीति कर इन अतुलनीय जोड़ियों को भीतर ले गई। चार मंगल आसनों पर बैठा कर धूप, दीप, नैवेद्य से पूजन किया। ऐसे प्रसन्न हैं जैसे-

**पावा परम तत्व जनु योगी,अमृत लहेउ जनु संतत रोगी।**
**जनम रंक जनु पारस पावा, अंधहिं लोचन लाभ सुहावा।**
**मूक वदन जनु शारद छाई, मानहु समर शूर जय पाई।**
**इन सब सुखों से भी अधिक माताएं सुखी हैं।**

महाराज ने सवारी, वस्त्र, मणियों से बारातियों का अभिनंदन कर विदा किया। अयोध्यावासियों को पहरावनी दी। याचक ओर सेवकों को जो जो भाया वह दिया। सबने आशीर्वाद, शुभकामनाएं दी। गुरु ओर ब्राह्मणों के साथ, महल में प्रवेश किया। रानियों ने चरण धो, स्नान करा, मालपुए जिमाए। ब्राह्मण देवता आशीर्वाद देकर घर गए। सबने विश्वामित्रजी की पूजा कर पदधूलि (चरण रज) ली। भीतर उत्तम वास दिया। मुनि ने अपना नेग मांग लिया। आशीर्वाद दिया। रामजी और जानकीजी को अपने हृदय में धारण कर प्रसन्न मनसे अपने आवास की ओर प्रस्थान किया।

रानियों ने ब्राह्मणियों और सुआसिनियों को बुलाकर उचित गहने, वस्त्र भेंट किए। प्रिय पाहुनों का विशेष सन्मान किया। देव निशान बजा, पुष्पवृष्टि कर, अपने अपने स्थान गए। सब को विदा कर, महाराज ने महल में जाकर, वधुओं और राज कुमारों को गोद बैठारा। निरखा। हृदय से लगाया। जिस भांति ब्याह हुआ सब कहा। जनकजी का गुण, शील, प्रीति, रीति, धनसंपदा-

**बहु विधि भूप भाट जिमि वरणी, रानी सब प्रमुदित सुनि करणी।**

स्नान कर, पांच घड़ी रात जाने तक, गुरुदेव, जाति वालों संग भोजन किया। आचमन कर पान पाए। सब अपने अपने घर गए। इस समय का प्रेम, आनंद, विनोद, मंगलताई, समाज, मनोहरता अनेक शारदा, शेष, महेश, वेद, विरंचि, गणेश से भी अवर्णनीय है। बाबा कहते हैं-

सो मैं कहौं कौन विधि वरणी,भूमिनाग शिर धरै कि धरणी।

(भूमिनाग- केंचुआ, गिंडोला)

राजा ने रानियों को बुलाकर जो कहा उसका हमे भी पालन करना चाहिए-

**वधू लरकिनी पर धर आई, राखेउ नयन पलक की नाई।**

सब नींदवश हैं। इन्हें विश्राम दो। यह कह, राम चरण चित लाकर, महाराज शयन करने गए।

रानियों ने स्वर्ण जड़ित पलंग, दूध के फैन सी गादियां, सुंदर उपबरहन (तकिए), सुगंध युक्त माला, रत्नदीप जलाए। रामजी को पौढ़ाया ओर कोमल शरीर देख पूछा, लाल आपने मार्ग में जाती ताड़का कैसे मारी। मारीच, सुबाहु जैसे घोर निशाचरों का वध, अहिल्या उद्धार, कमठ पीठ और वज्र से कठिन धनुष तोड़ सीता ब्याही-

**सकल अमानुष कर्म तुम्हारे, केवल कौशिक कृपा सुधारे।**

आज आपको देख हमारा जन्म सफल होगया।-

**जे दिन गए तुमहिं बिन देखे, ते विरंचि जनि पारहिं लेखे।**

उम्र के लेखे में न लावे। (काश हम भी ऐसे भाव रख पाते) रामजी माताओं को संतुष्ट कर शिव, गुरु, विप्र के चरणों का स्मरणकर सो गए। अयोध्या की नारियों ने जागरण किया।

जैसे सिर की मणि को सर्प हृदय में छिपा कर सोता है उसी भांति सासुएं वधुओं को अपने साथ लेकर सोई।

प्रातः चारों भाई जागे। सरयू स्नान, संध्या कर पिता के पास आए। रामजी को देख, सभा लोचन के लाभ की सीमा परखने लगे। इससे अधिक भाग्य क्या होगा। विश्वामित्रजी और वशिष्ठजी आए तो पूजा कर उचित आसन दिया। वशिष्ठजी ने विश्वामित्रजी के तप की कथा कही जिसे रनिवास सहित महाराज ने सुना।

*एक बार वशिष्ठ जी ने कामधेनु के बल से विश्वामित्रजी की सेना सहित पहुनाई की।विश्वामित्रजी ने आश्चर्य कर कामधेनु मांगी और वशिष्ठजी के मना करने पर युद्ध छेड़ दिया। वशिष्ठजी ने ब्रह्मदंड से विश्वामित्रजी के सभी अस्त्र नष्ट कर दिए तब ये क्षात्रबल को धिक्कारते तप करने गए। चारों दिशाओं में दस हजार वर्ष तपकर ब्रह्माजी के वरदान से ब्रह्मऋषि हुए। ब्रह्माजी ने वशिष्ठजी से मेल भी करवा दिया। इनका चरू ब्रह्ममय ही था।)

इसीभांति अवध आनन्द में मगन रही। सुदिन देख कंकन छोड़े। कवि कहते हैं -

**बोली एक नारी सुनो अवध बिहारी यह, शंभु धनु हे न जाहि बे गि गहि तोरोगे।**
**रसिकबिहारी हौ तिहारी चतुराई तब, जानोंगी सुकंकण की गांठ जब छोरोगे।।**
**ताछिन छबीली एक दूजी हंसी बोली श्याम, आज धीरताई बीरताई सब बोरोगे।**
**तुम पै न तौ लौं कबौ छूटि है छबीले लाल, जौ लौं नाहीं जनक लली के कर जोरोगे।।**
***लोकमान्यता के अनुसार कैकेयी ने कनक भवन सीताजी को 'मुंह दिखाई' में दिया था।**
**- संस्कृति कोश**

मुंह दिखाई -

**खोजि आई कोसिला,बिचारि बड़े हौसला से, वधु अनुरूप कोउ वस्तु ना लखाई है।**
**लागी चित्त चिन्ता कहा दीजिये निछावरी में, सिया सी बहू को नेग परी कठिनाई है।।**
**और कछु पाई नाहीं, सीय समताई जोग, निकट बुलाई नीलमणि रघुराई है।**
**हाथ रघुनाथ गहि दीन्हों सिय हाथ माहीं, लेहु बहु ये ही तेरे मुँह की दिखाई है।।**

बाबा गाते हैं -

**नित नव सुख सुर देखि सिहाहीं, अवध जन्म याचहिं मन माहीं।**
**(सिहाहीं- प्रशंसा करना)**

विश्वामित्रजी रोज विदा होना चाहते किंतु रामजी के प्रेम और विनय से रुक जाते।

राजा बोले-

**नाथ सकल संपदा तुम्हारी,मैं सेवक समेत सुत नारी।**

एक दिन मुनि विदा हुए और राम का रूप, राजा की भक्ति, ब्याह का आनंद सराहते चले।

यहां -

आए राम ब्याहि घर जबते,बसै अनंद अवध सब तबते।

तुलसी बाबा कहते हैं राम विवाह को कवियों ने बहुत गाया है। इस कमल ने भी अपनी वाणी को पवित्र कर लिया। जो लोग इसे सुनेंगे, गायेंगे वे राम कृपा के भाजक होंगे।

**।। इति बालकांड ।।**

# || अयोध्याकांड ||

अयोध्याकाण्ड का आरंभ गोस्वामी तुलसीदासजी शंकरजी और रामजी के साथ गुरु की वंदना से करते हैं। आइए समझते हैं कि इनकी ही वंदना क्यों।

यहां वनवास की कथा का वर्णन होगा। राज्य मिलते मिलते रामजी को वनवास होगया। भरतजी को अकारण, बिना दोष के रामविमुख होने का दोष लगा। दशरथजी को अपने वचन की मर्यादा के लिए राम प्रेम में प्राण त्यागने पड़े। यह सब जहर शंकरजी ही पी सकते हैं।

*गणेशजी के वाहन चूहे को शिवजी के गले का हार सर्प, सर्प को कार्तिकेय वाहन मोर, पार्वती वाहन शेर स्वयं गणेश को (हाथी समझ), खाना चाहता है। पार्वती गंगा से डाह करती है, चंद्रमा में और तीसरे नेत्र अग्नि मे कलह है। अपने परिवार में हो रहे इस संघर्ष से तंग आकर बेचारे शिवजी को हलाहल विष पीना पड़ा। वे ही इसके विषद वर्णन की शक्ति देते हैं। इसलिए शंकरजी की वंदना आवश्यक थी। रामजी के गुणों का गान रामजी की ही कृपा से संभव है अतः उनको नमन किया और लेखनी और जिव्हा दोनो गुरु की कृपा से ही मंगलता प्राप्त कर सकती है अतः गुरु की चरण रज की वंदना करते हैं।–

**वामांगे च विभाति भूधर सुता, देवा पगा मस्तके।**
**भाले बालविधुर्गलेचगरलं, यस्योरसि व्यालराट।।**
**सोअयम भूति विभूषणः सुरवरः, सर्वाधिपः सर्वदा।**
**शर्वः सर्वगतः शिवः शशिनिभः,श्री शंकरः पातु माम।।**

(वामांगे- बाईं गोदी में, वाम भाग में, विभाति- शोभित है, भूधर सुता- पार्वती, देवा पगा- गंगा, यस्योरसि- जिसके हृदय में, व्यालराट- सर्पों का राजा, भूति विभूषण- विभूति ही गहना है, सुरवरह- देवों में श्रेष्ठ हैं, सर्वाधिपः- सब के अधिपति, स्वामी, शर्वः- संहार कर्ता, सर्वगतः- सर्व व्यापक, शशि निभः- चंद्रमा तुल्य, शंकरः- कल्याण दाता, पातु माम- मेरी रक्षा करे)

इतनी विलक्षणताओं ओर विविधताओं से भरे शंकरजी ही अत्यंत सहिष्णु हो सकते हैं। और-

**प्रसन्नताम या न गताभिषेकतस्तथा न मम्लौ वनवास दुःखतः।**
**मुखांबुज श्री रघुनंदनस्य मे सदास्तु सा मंजुल मंगलप्रदा।।**

हानि-लाभ में सम रहने वाले रामजी ही हमारे जीवन में मंगल का वास कर सकते हैं।-

श्री गुरु चरण सरोज रज,निज मन मुकुर सुधारि।

वर्णहुं रघुवर विमल यश,जो दायक फल चारि।।(मन मुकुर- मन रूपी दर्पण)

इसी दोहे से गोस्वामीजी ने हनुमान चालीसा का भी आरंभ किया है। गुरु की कृपा ही हमारे कृतित्व को मंगलमय बनाती है। यह कार्पण्य शरणागति है। जैसे वाल्मीकिजी के गुरु नारदजी कहते हैं "पापोहम"। आगे भरत चरित्र कहा है सो और पवित्रता की याचना की। आइए वंदना के बाद कथा आरंभ करते हैं -

जबते राम ब्याहि घर आये,नित नव मंगल मोद बधाये।

(मोद- आनन्द)

मूल रामायण 05-

बहुरि राम अभिषेक प्रसंगा,पुनि नृप वचन राज रस भंगा।

रामजी का मुख देखकर सब लोग सुखी और माताएं प्रसन्न हैं। सब के मन में अब यही अभिलाषा कि महाराज अपनी इच्छा से राम को युवराज पद दे दें।

कैकय राजा के पुत्र युधाजित (कंकय) बड़े बलशाली थे। वे कुछ दिनों से अयोध्या में ही थे।एक दिन वशिष्ठजी की विनय कर कहा कि हे नाथ, वह उपाय करो जिससे भरत-शत्रुघ्न मेरे देश को पवित्र करे। कुछ दिनों में फिर लौट आवेंगे। संकोचवश मैं महाराज से नहीं कह सकता।

विधि का विधान और होनी का भान कर, मुनि बोले, तुम्हारी इच्छा अवश्य पूरी होगी। यह कह राजसभा में आए जहां सब ने सत्कार किया। गुरुजी ने महाराज से कहा, कैकय कुंवर जाना चाहते हैं और अपने साथ भरत-शत्रुघ्न को भी ननिहाल ले जाना चाहते हैं। पहले तो राजा को नहीं भाया पर गुरु आदेश मान, भरत को बुलाया। बोले तुम दोनो गुरु आज्ञा से, अपने हितार्थ सेना लेकर, माता से आज्ञा लेकर, ननिहाल जाओ।

भरत कौशल्याजी के भवन गए। फल खाकर, विदा ले, रामजी के भवन गए। प्रणाम किया। रामजी ने हृदय से लगाया। सब बताकर, आज्ञा ले कैकेई भवन गए। उनकी आज्ञा ले राजा के पास आए। महाराज ने युवा सैनिक उनके साथ किए। युधाजित ने भी राम से विदा ली। सबने सुमित्राजी से विदा ले, लक्ष्मण से मिल, प्रयाण किया।

कैकय नरेश ने भेंटे देकर स्वागत किया। नानी से मिलकर प्रसन्न हुए।

शिवजी बोले, पार्वती, मल्ल निशाचर का पुत्र खरमुखकेतु, ब्राह्मण द्रोही था। उसके ताप से विप्र दुखी थे। भरत ने ब्राह्मणों के पास जाकर कहा आप निश्चिंत तप करो। हम सेवा करेंगे-

रघुकुल राम अनुज पुनि सेवक,केहिविधि सहिय विप्र दुख देवक।

निशाचर को कोप कर आया जान, शत्रुघ्न को मुनियों की रखवाली हेतु छोड़ भरत, नगर से आठ कोस दूर उनसे जा भिड़े। उसके दूत ने आकर कहा-

तुम नृप भूषण निरखन लायक,कत रोकत मग गहि धनु सायक।

भरत ने कहा बातें मत बना। युद्ध कर। उसने आक्रमण किया। आक्रमण किया जानकर वहीं से शत्रुघ्न ने तीर चलाकर उसकी सेना को प्रताड़ित किया। उनके तीरों ने नचा नचा कर निशाचरों को मारा। देवों ने सराहना की। खर ने क्रोधित होकर पर्वत शिला बरसाई जिसे भरत ने चूर्ण कर दिया। उसका कटक काटकर उसका भी उद्धार किया। इस विजय पर महाराज ने स्वागत, देवों ने पुष्पवृष्टि की। प्रशंसा की। नारियों ने मंगल गान कर आरती की। दान से भंडार खाली हुआ और भरत के प्रभाव से फिर भर गया। ब्राह्मणों के यशगान पर भरत बोले, मैं श्री रामजी के दासों का दास हूं। सब उनकी ही कृपा से संभव है-

राम नाम मणि मन अहि करहू,अभय होहु भव भय परिहरहू।

(अहि- सर्प)

भरत के साथ जो युवा राजकुमार आए थे, उन्हें चार माह बाद विदा मांगने पर महाराज ने बीस हजार रत्न, वस्त्र, खग, मृग, हाथी, घोड़े आदि भेंटकर विदा किया। भरत-शत्रुघ्न डेढ़ कोस तक विदा करने आए और सुमंतपुत्र से माता-पिता, गुरु, रामजी के चरणों में प्रणाम का आग्रह कर घर लोटे।

उधर सखानंद आदि राजकुमार अयोध्या पहुंचे। महाराज को प्रणामकर भरत महिमा कह, पाती दी। कैकय नरेश और अपने पुत्रों की पाती पढ़ने ही वाले थे तभी राम-लक्ष्मण और वशिष्ठजी पधारे। भरत कृत्य पर बीस योजन के अयोध्या नगर में हर्ष फैल गया। प्रसन्न होकर दान, मानकर, गुरुजी को विदाकर घर आए। इधर आनन्द दिन दूना बढ़ रहा है लेकिन उधर-

अवध अनंद देखि सब लेखा,नैन त्रषित उर शोच विषेखा।

(लेखा- देव गण)

इन्हें चिंतित देख ब्रह्माजी बोले, सुरराज प्रभु ने आप के संकट हरने हित ही मनुज रूप धरा है। चिंता मत करो।

एक दिन विश्वावसु गंधर्व अयोध्या आया। उसका गान सुनकर सब मुग्ध हो गए। उसे यहीं रुकने को बोला। विश्वावसु ने कहा मैं इंद्र की आज्ञा के बिना कहीं नहीं रह सकता। कैकेई ने कहा इंद्र हमारे बल से अपने लोक में बसता है।

पत्र लिखा –

**हमरे आवत रिसि करत, अस तुम गए मुटाय।**
**पठइ पत्रिका बांचि कर, सुनि नृप गए चुपाय।।**
**(मुटाय- मानी होगए)**
**लेकिन इंद्र-**
**मनमें समुझे कैकई, लिख पठये वच बंक।**
**हमरउ लागी घात तब, हमहूं देब कलंक।।**

(कैकई पूर्व जन्म में- सौराष्ट्र नगर के एक भिक्षु नाम ब्राह्मण की कलह प्रिया, विपरीत आचरणी, भार्या थी। अंत में आत्महत्या की। पति से प्रतिकूल आचरण के कारण अनेक योनियों में भटकती अंत में राक्षसी हुई जो धर्मदत्त ब्राह्मण द्वारा तुलसीदल युक्त जल छिटकने से पापहीन हुई। ब्राह्मण के द्वारा जन्मभर के कार्तिक स्नान के पुण्य का फल आधा उसे देने, द्वादसाक्षर मंत्र से अभिषेक करने से प्रेतत्व समाप्त हुआ। स्वर्ग गई। पुण्य क्षीण होने पर कैकई हुई।)

इंद्र ने विश्वावसु को लिखा कि जब महाराज कहे तब आना।

इधर विवाह के बारह वर्ष बाद -

**वर्ष अठारह की सिया, सत्ताइस के राम।**
**कीनी मन अभिलाष तब, करनो है सुरकाम।।**

श्रीराम जानकी बैठे थे कि नारदजी पधारे। स्वागत किया। चरण धोकर घर, देह पवित्र की।

बोले -

**ताको मुनि नाहिन भव आगे, जेहि बिनु हेतु संत प्रिय लगे।**

(भव- संसार, पुनर्जन्म)

नारदजी बोले, यह आपका विरद है जो दासों की बढ़ाई और अपनी लघुता प्रकट करते हो। आपने हमारे लिए ही देह धरी है।-

**उदर चराचर मेलि जो सोवा, अस्तनपान लागि सोइ रोवा।**

भक्ति बिना आप अलभ्य हैं। मेरे हृदय में सदा वास करो। मुझे ब्रह्माजी ने कहा है कि -

जेहि हित लीन्ह मनुज अवतारा,नाथ ताहि अब करिय संभारा।

रामजी मुस्काकर बोले, ब्रह्मा को अभी भी भय है। कहना जल्दी ही आकर मिलूंगा। नारदजी प्रणाम कर लोटे। यहां रामजी ने सीताजी को समझाया और पूर्व कथा कहकर अवतार का हेतु बताया।-

**सुर हित लागि सो करिय ऊपाई, चलिए वन परिहरि ठाकुराई।**

जिनकी भृकुटी फेरने से जग संभव, पालन और विनाश होता है वे निशाचारों के नाश का विचार करते हैं ये आश्चर्य है।

एक समय महाराज दशरथ राजसभा में विराजे थे। स्वभाव से दर्पण हाथ में लिया। दशरथजी से सीख लेकर राजाओं, शासकों, मुखियाओं को समय समय पर अपना मुंह दर्पण में देखते रहना चाहिए। विशेषकर तब जब सिंहासन पर बैठे हों। इससे अपने कर्मो का भान होता रहे। यदि राज्य में जनहित में कमी हो, मुकुट टेड़ा हो, राज्य नीतिपथ तज रहा हो, नीतिगत निर्णय नहीं हो पारहे हों तो सुधार किया जा सके। काश।

मुकुट संभाला तो कानो के पास श्वेत केश देखे।

मानो कहते हों महाराज अब राम को युवराज बनाओ। जन्म का लाभ लो। सुदिन देख गुरुजी को यह विचार सुनाया। बोले-

**जे गुरु चरण रेणु सिर धरहीं, ते जनु सकल विभव वश करहीं।**

आपकी कृपा हमारे ऊपर है। अब राम को युवराज बनाकर अभिलाष पूरी कर दो। फिर तन रहे न रहे कोई चिंता नहीं। मुनि ने राम का विरद बखान कर कहा -

**बेगि विलंब न करिय नृप, साजिय सबहि समाज।**

सुदिन सुमंगल तबहि जब,राम होहिं युवराज।।(आप सब तैयारी करो पर यह राम के हाथ में है कि वे कब युवराज हों।)

महाराज मुदित मन मंदिर आए। सेवक, मंत्री, सुमंत को बुलाकर पूछा -

**जो पंचहिं मत लागै नीका, करहु हर्षि हिय रामहिं टीका।**

मंत्री ऐसे प्रसन्न हुए मानो छोटे बिरवे पर पानी बरसा। उनके मन की अभिलाष भी यही थी। बोले विलंब न करें। मानो बढ़ती बेल ने अच्छी शाखा पा ली हो। सब अपने

अपने काम पर लग गए। मुनि के निर्देश पर सभी तीर्थों का जल बुलवाया। बाजार, चोक, घर संवारने के निर्देश दिए। विप्र, गणेश पूजन कर सब मुनि आज्ञा पालन करने लगे।

*अन्य जनपदों के सामंतों और राजाओं को रामजी के अभिषेक के लिए आमंत्रित किया किंतु कैकय नरेश और जनकजी को देव माया से आमंत्रित करना भूल गए। इनके आने से राज्याभिषेक संपन्न हो जाता।

**- वा.रा.अ.01.48**

राम-सीता को मंगल शकुन हुए तो वे समझे, भरत आने वाला है। क्योंकि -

भरत सरिस प्रिय को जग माहीं,इहै शकुन फल दूसर नाहीं।

रनिवास प्रमुदित हुआ। जिसने प्रथम सूचना दी उसने उपहार पाए। सुमित्रा, कौशल्या मगन हो दान देती हैं। *राजा दशरथ ने रामजी को अपने भवन में बुलाकर समझाया। बेटा, आजकल मुझे बुरे स्वप्न आ रहे हैं। वज्रपात और उल्काएं गिरती है।

मेरे जन्म नक्षत्र को सूर्य मंगल और राहु ने घेरा है। इसमें महाविपत्ति और मृत्यु के योग भी हैं ।इसके पहले कि मेरी बुद्धि चंचल हो और भरत मामा के घर से आए, कल पुष्य नक्षत्र में तुम युवराज बन जाओ।

**- वा.रा.अ.04.18,25**

महाराज ने राम को सीख देने का गुरुजी से आग्रह किया। गुरु आगमन जान रामजी ने द्वारपर पूजन किया। सीता सहित प्रणाम कर कहा -

सेवक सदन स्वामि आगमनू,मंगल मूल अमंगल दमनू। फिर भी मुझे बुला लिया होता। बड़ी कृपा की। घर पवित्र किया। मुनि ने राम के शील की प्रशंसा कर, अभिषेक की सूचना दी। संयम के निर्देश दे प्रस्थान किया। राम ने विचार किया कि पवित्र वंश में यह बड़ा अनुचित है कि छोटों को छोड़ बड़ों को राज्य दिया जाता है।

**(अनुज विहाय- भरत की अनुपस्थिति में)**

लक्ष्मण प्रसन्न हैं। पुरवासी कल कब होगा यह अभिलाषा करते हैं जब राम-सीता स्वर्ण सिंहासनपर बिराजेंगे। कुचाली देव विघ्न की कामना करते हैं क्योंकि -

तिन्हिं सुहाय न अवध बधावा,चोरहिं चांदनि रात न भावा।

सरस्वती को बुलाया और चरण पकड़ विनती करते हैं कि मां हमारी विपत्ति देखो और यह प्रयास करो कि राम राजा न बनकर वन जाएं जिससे सभी देवों के काम सफल

होंगे। शारदा पछताई कि मैं यहां क्यों आई। फिर देवताओं के निहोरे पर पछताती अयोध्या की ओर यह सोचती चली-

**ऊंच निवास नीच करतूती, देखि न सकहिं पराइ विभूती।**

फिर सब का भला सोच, मानो बुरे ग्रह की भांति दशरथ पर आई। और -

**नाम मंथरा मंदमति, चेरी कैकई केरि।**

अयश पिटारी ताहि करी,गई गिरा मति फेरि।।(कभी कैकई के पिता ने मृग का शिकार किया था। मृगी रोती अपनी मां के पास गई। मां ने राजा के पास जाकर मृग को छोड़ने का आग्रह किया। बोली, मैं यक्षिणी हूं इसे जीवित कर लूंगी। राजा ने उसे भी तलवार मारी। मरते समय उसने कहा, जैसे आपने मेरे जामाता का वध किया वैसे ही मैं तुम्हारे जामाता के प्राण लूंगी। वही मृगी, मंथरा हुई। (यह दुंदुभी गंधर्वी थी जो द्वापर में कुब्जा हुई थी।)

*मंथरा ने पूछा कि यह राम की माता आज लोगों को प्रसन्न होकर धन क्यों बांट रही है ?

लोग इतने प्रसन्न क्यों हैं ?

दशरथ इतने प्रसन्न क्यों हैं ?

राम के युवराज बनने के समाचार केकई से सुनकर मंथरा क्रुद्ध कर बोली –

**उत्तिष्ठ मूढ़े किं शेषे भयं त्वामभिवर्तते।**
**उपप्लुतमघोघेन नात्मानमवबुध्यसे।।**

शेषे- सो रही हो, अभिवर्तते- बढ़ रहा है, उपप्लुतमघोघेन- विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा है,
नात्मानमवबुध्यसे- दुरावस्था का बोध नहीं है)

**- वा.रा.अ.07.14**

आगे बोली -

**तव दुः खेन कैकेयि मम दुःखं महद् भवेत्।**
**त्वद्वृद्धौ मम वृद्धिश्च भवेदिह न संशय।।**

**- वा.रा.अ.07.22**

बाले, पति कहलाने वाले जिस व्यक्ति का तुमने पोषण किया है वह वास्तव में शत्रु निकला।

कैकेई प्रसन्न होकर बोली -

**रामे वा भरते वाहं विशेषम् नोपलक्षये।**
**तस्मात् तुष्टास्मि यद् राजा रामं राज्ये अभिषेक्ष्यति।।**
**(विशेषम् नोपलक्षये- कोई भेद नहीं देखती)**

कैकेई राम की प्रशंसा करती है -

**-वा.रा.अ.07.35**

**धर्मज्ञो गुणवान दांतः कृतज्ञः सत्यवान् शुचिः।**
**रामो राजसुतो ज्येष्ठो यौवराज्यमतोऽर्हति।।**
**(दांतः- जितेंद्रिय)**

**- वा.रा.अ.08.14**

बाबा कहते हैं -

मंथरा ने नगर की मनोहर बनावट, सजावट देखी और राम का तिलक सुन हृदय में दाह हुआ। मन में किरातिनी की भांति विचारा कि कैसे अमंगल हो। कैकेई ने अनमनी देखकर पूछा तो नारी चरित्र कर, उत्तर देने के स्थान पर आंसू बहाने लगी। रानी ने कहा बड़े गाल दिख रहे, क्या लक्ष्मण ने शिक्षा दी है। फिर भी न बोली। बस काली सांपिनि की भांति श्वास छोड़ती रही। रानी ने जब पूछा बता राम, राजा, भरत, लखन, शत्रुघ्न प्रसन्न तो हैं। राम का नाम पहले सुन हृदय में और शूल हुआ। बोली, अरे सौभाग्याभिमानिनी, समीप के बड़े भय को भी तुम नहीं देख पाती हो।-

रामहिं छांडि कुशल केहि आजू,जाहि नरेश देई युवराजू।

एक कौशल्या को विधाता दाहिना है। तुम्हारा बेटा विदेश में है,तुम्हें शैया प्रिय है और राजा को अपने वशवर्ती समझती हो। बाहर निकलो। देखो।

मलिन मन जान रानी ने झुककर कहा। फिर ऐसी घर फोड़ने वाली बात कही तो जीभ निकलवा दूंगी -

**काने खोरे कूबरे, कुटिल कुचाली जानि।**
**तिय विशेष पुनि चेरि कही,भरतमातु मुसुकानि।।**
**(खोरे- गंजे)**

अरी पगली, वही सुदिन होगा जब तेरी बात सच हो और रामचंद्र युवराज बने। बड़ा भाई स्वामी हो और छोटा सेवा करे यही तो सूर्यवंश की रीति है। कल राजतिलक है तो मन भाया मांग ले। राम को सब माताएं कौशल्याजी जैसी समान हैं। मुझपर तो ज्यादा ही प्रीति है। यदि विधाता जन्म दे तो राम-सीता बेटा-बहु अवश्य दे। उसके तिलक में तुझे दुख कैसा -

**भरत शपथ तोहि सत्य कहु,परिहरि कपट दुराउ।**
**हर्ष समय विस्मय करसि, कारण मोहिं सुनाउ।।**

यह सुन कुबरी रिसाई। बोली,अब तो दूसरी जीभ से ही कुछ कहूंगी-

फोरै योग कपारू अभागा,भलउ कहत दुख रौरेहि लागा।

(रौरेहि लागा- तुम्हें लगा)।

जो झूठी बात सत्य बना कर कहे, वे प्रिय, मैं अप्रिय। अब मैं भी ठकुर सुहाती कहूंगी या मौन रहूंगी। विधाता ने कुबड़ी करके परवष किया है। आप कहती हो राम राजा हों तो भला। तो-

कोउ नृप होउ हमहिं का हानी,चेरी छांड़ि अब होब कि रानी।

जारइ योग स्वभाव हमारा,अनभल देखि न जाय तुम्हारा।

**गूढ़ कपट प्रिय वचन सुनि,तीय अधरबुधि रानि।**
**सुरमाया वश वैरनिहिं, सुहृदजानि पतिआनि।।**

(अधरबुधि- होठ पर बुद्धि वाली, क्षण क्षण में भाव बदलने वाली, पतिआनि- विश्वास कर गई, बातों में आ गई)

भिलनी के गान से मृगी की भांति मोहित होकर बार बार पूछने लगी। मंथरा बोली तुम पूछती हो तो कहती हूं अन्यथा मेरा तो पहले ही घर फोड़ी नाम रखा गया है। अयोध्या को साढ़ेसाती समान कुटिलता से बोली।

तुमसे राम स्नेह करते है, वे दिन गए। जो सूर्य, कमल का पालन करता है, वही जड़ न रहने पर जला देता है। राजा मुंह पर मीठी बात करते है और तुम सीधे स्वभाव से मान जाती हो। राम की मां होशियार है। समय पाकर चाल चल दी। भरत को ननिहाल भेजकर, तुमपर राजा का स्नेह देख, यह प्रपंच रचा है। इस तरह सैंकड़ों सोतों की कथा कह, कैकेई को वश किया। फिर भी कैकेई के पूछने पर बोली, क्या पूछती हो। अपना भला बुरा

पशु पक्षी भी जानते हैं। तुम्हारे राज में खाया, पहना है सो सत्य कहने में आता है। कल राम को तिलक नहीं, तुम्हारे लिए विपत्ति का बीजारोपण होगा। दूध की मक्खी।

सुत सहित सेविका होजाओगी। जैसे कद्रू ने विनता को, वैसे ही कौशल्या तुम्हें दुख देगी। भरत कैद में होंगे।

* कैकई के कहने पर कि राम के सो वर्ष बाद भरत ही तो राजा बनेगा मंथरा बोली –

**हो गए राम गर राजा तो, उनका सुत राज्य संभालेगा।**
**फिर भरत कहां होगा सोचो,सेवा कर दिवस निकालेगा।।**
**यह कहीं नहीं होता पगली, सारे सुत राजा बन जावे।**
**सब बैठ गए सिंहासन तो, होगा अनर्थ रण ठन जावे।।**
**राजा बन राम भरतजी को, हां देश निकाला दे देगा।**
**इससे बढ़ कंटक मान प्राण, हो सकता उनके ले लेगा।।**
**-कमल-**

- संनिकर्षाच्च सौहार्द्रं जायते स्थावरेश्विव।।

(पास रहने से सौहार्द्र उत्पन्न होता है।)

**- वा.रा.अ.08.16-28**

*सिंह के आक्रमण से जैसे गजराज वन में भागा फिरता है वैसी ही भरत की दशा होगी। अब हे विलासिनी तुम उल्टा कर दो। भरत को राजा ओर राम को सीधा वन भेजो।

**- वा.रा.अ.08.39**

* कुब्जा की कैकेई ने प्रशंसा की तो मंथरा
बोली -

**गतोदके सेतुबंधो न कल्याणी विधीयते।**
**उत्तिष्ठ कुरु कल्याणं राजानमनुदर्शय।।**

**- वा.रा.अ.09.54**

(गतोदके- पानी निकल जाने पर, विधीयते-बांधा जाता, राजानमनुदर्शय- राजा को अपनी कला दिखाओ)

रानी पवन से कदली वृक्ष की भांति कांपी। विश्वास में आई। बकी को हंसिनी जाना। बोली, मेरी दाहिनी आंख भी फड़क रही है और रात में गलत स्वप्न भी देखा है।–

कहा करों सखि सूध स्वभाऊ,दाहिन वाम न जानौ काऊ।

अपनी जानकारी में तो मैंने आज तक किसी का अनभल नहीं किया। विधाता ने जाने किस पाप की यह सजा दी है। अपने पीहर में जनम बिता दूंगी पर सोत की सेवकाइ नहीं करूंगी। जिसे भगवान दुश्मन के सहारे जिलावे उसके लिए तो जीने से मरना ही भला।

कुबरी बोली, मन में ऐसा मत सोचो। तुम्हारा सुहाग दिन दूना (अब दो दिन का) है। जिस राजा ने आपका अनभल चाहा, वही फल पावेगा। मैंने तो जब से यह कुमंत्र सुना, भूख प्यास उड़ गई। ज्योतिषियों ने बताया कि भरत ही राजा होंगे। जो कहो तो उपाय कहूं। महाराज आपके वश हैं। रानी बोली –

**परऊं कूप तव वचन पर, सकौं पूत पति त्यागि।**
**कहसि मोर दुख देखि बड़, कस न करब हित लागि।।**

(दुख देखि बड़- बड़ा दुख देख कर, हित लागि- हित की बात)।

बाबा कहते हैं -

**कुबरी करि कुबली कैकेई, कपट छुरी उर पाहन टेई।**

(उर पाहन- हृदय रूपी पत्थर पर, टेई- घिस कर)-

**लखइ न रानि निकट दुख कैसे, चरइ हरित तृण बलि पशु जैसे।**

कुबरी की बात विष मिला मधु है। बोली, तुमने मुझे जो कथा कही थी वह याद है कि नहीं।-

**दुई वरदान भूप सन थाती, मांगहुं आजु जुड़ावहुं छाती।**

**(थाती- धरोहर, जुड़ावहु- ठंडी करो)**

(दंडकारण्य में वैजयंत नगर के राजा अतिध्वज रहते थे। वहां शंबर असुर से महाराज दशरथ इंद्र की ओर से लड़े। महाराज घायल हुए। सारथी मारा गया। तब कैकेई रथ चलाकर बचालाई। महाराज ने प्रसन्न होकर, दो वर मांगने को कहा जिसे कैकेई ने धरोहर रखा।

दूसरी कथा अनुसार एक बार कैकेई ने सोते समय, एक ऋषि के मुंह पर स्याही लगा दी थी। ऋषि ने श्राप दिया की तुझे कलंक लगेगा। कोई मुंह नहीं देखेगा। फिर विनती से प्रसन्न होकर, कैकई को ऋषि ने वरदान दिया था कि समय आने पर तुम्हारा बायां हाथ वज्र सा कठोर होजाएगा। उस युद्ध में रथ की धुरी टूटने पर, कैकेई ने अपनी उंगली डाली थी। तब दो वर पाए थे।)

बेटे को राज्य, राम को चौदह वर्ष वनवास मांग कर, सोतों की प्रसन्नता छीन लो। राम यदि अयोध्या में रहेगा तो प्रजा दो भाग हो जायेगी।और सुन, महाराज जब राम की शपथ लें तभी मांगना। इतना कह, कोप गृह जाने की सीख दी।

रानी ने कुबड़ी को हितू बताकर सराहा। यदि कल यह सब हुआ तो तुझे चखपुतरी (नेत्रों की पुतली) करूंगी।

विद्वानों ने सही कहा है। नीच को आदर देने से उल्टा परिणाम होता है। यहां भी-

**विपति बीज वर्षा ऋतु चेरी, भुइ भइ कुमति कैकई केरी।**
**(भुइ- धरती, पृथ्वी)**

पाई कपट जल अंकुर जामा,वर दोउ दल दुख फल परिणामा।

यह कुचाल चलके कैकई, राज्य करती हुई नष्ट हुई।

उधर राज द्वारे भीड़ थी। एक आता, एक जाता था। सब प्रसन्न। कुछ सखा राम के पास गए जिनका रामजी ने सम्मान किया (सुंदर, शेखर, वीरसेन, मणि, भद्र, रसिकेश, कलाधर, बाणरूप, रसराज, मनोहर, गुणाकर, मानद, पत्रीश, कापाल, गदाधर, रमनेस, पद्माकर, शीलनिधि ये अठारह रामजी के मुख्य सखा हैं।)

सब यही अभिलाषा लेकर लोटे कि जिस जिस योनी में जन्म लें, वहां शंकरजी हमें -

सेवक हम स्वामी सिय नाहू,होय नात यह ओर निबाहू।

सब प्रसन्न, कैकेई दुखी। बाबा कहते हैं -

**को न कुसंगत पाय नसाई, रहै न नीच मते चतुराई।**
**(नसाई- नष्ट होता है)**

वही हुआ –

**सांझ समय सानंद नृप, गयउ कैकई गेह।**
**गमन निठुरता निकट किय,जनु धरि देह सनेह।।**

कैकई कोप भवन में है, यह सुन ठिठके। -

स वृद्धस्तरूणीं भार्यां।

(राजा बूढ़ा और भार्या युवा।)

**- वा.रा.अ.10.23**

पैर आगे न बढ़े। इंद्र जिनके बलपर रहता है, सारे राजा जिनका रुख देखते हैं वे दशरथ -

सो सुनु तिय रिस गयउ सुखाई,देखहुं काम प्रताप बड़ाई।

त्रिशूल, तलवार को सहने वाला, कामदेव के पुष्पबाण से मारा गया। नारी के समीप पहुंचे।

उसकी दशा देख दुखी हुए। पृथ्वी पर शयन, मोटा, पुराना वस्त्र। आभूषण विहीन। कुमति ने कुवेश धारा। मानो विधवापन को जता दिया।

राजा ने पास जाकर, हाथ पकड़कर पूछा। प्राण प्रिय, किस कारण रिसाई हो। कैकई ने सर्पिणी की भांति हाथ झटका। दो वरदान वासना मानो जीभ है, मर्म स्थान राजा का राम से प्रेम है, अंदर विष भरा है।–

**उस कोप भवन में अवधपती, भार्या तन को सहलाते है।**
**फिर शनै शनै प्रिय वचनों से, उसके अंतस तक जाते है।।**
**किसका प्रिय करना कहो प्रिये, किसके अप्रिय की ठानी है।**
**जो कहो करूंगा सत्य वचन, तू मेरी अतिप्रिय रानी है।।**
**जो है अवध्य उसको वध दूं, या प्राणदंड वापिस कर लूं।**
**धनवान दरिद्री को कर दूं, कंगाल बड़ा धनपति कर दूं।।**
**हो सकल मनोरथ पूर्ण तेरे, मैं यही कामना करता हूं।**
**ए प्राणप्रिये तेरे सुख हित, मैं प्राण समर्पित करता हूं।।**
**-कमल (- वा.रा.अ.10)**

राजा ने सुमुखी, सुलोचनी, पिकवचनी कह, कोप का कारण पूछा। बताओ किसने तुम्हारा अहित कर यमपुर का मार्ग चुना है। मानो शारदा मुखर हुई। वही कहा जो वो चाहती थी -

कहु केहि रंकहिं करों नरेशू,कहु केहि नृपहिं निकारौं देशू।

तुम्हारे अमर शत्रु को भी मार सकता हूं,फिर सामान्य जनों का क्या। राम शपथ, सब तो तेरे वश है। प्रसन्न होकर मांगो। सुंदर श्रृंगार करो। यह सुन, जैसे किरातिनी मृग को देख फंद संवारती है वैसे हंस कर उठी। गहने पहनने लगी। राजा बोले भामिनी तेरा मन भाया हो रहा है। नगर में घर घर आनंद बधावा बज रहा है।

कल राम को युवराज बना रहा हूं। इतना सुनते ही जैसे किसी ने पका बालतोड़ छुआ हो वैसे कांप उठी पर चोर की पत्नी की भांति पीर हृदय में छुपा गई। राजा उसकी कुटिलाई समझ न सके क्योंकि गुणी गुरु की सिखाई थी। नीतिवान राजा भी नारी चरित्र के अगाध जल को न जान पाए।

रानी बोली मांग मांग कहते रहते हो। कभी दिया भी करो। पहले दो वरदान देने को बोला था अब तो उनको पाने में भी संदेह है।

राजा बोले प्रिय, तुम्हें रूठना मनाना अच्छा आता है। अरे तुमने ही धरोहर रख रखी है, मांगा ही नहीं ओर मैं भी भोले स्वभाव के कारण भूल गया। मुझे झूठा दोष मत दो। दो के चार मांगलो-

रघुकुल रीति सदा चलि आई,प्राण जाहिं बरु वचन न जाई।

असत्य के समान पातक नहीं और सत्य सब सुकृतों का मूल है। रानी ने सुकृत और स्नेह की सीमा, रामजी की शपथ करवाई।

*कैकेई का सिर अपनी गोदी में लेकर दशरथ बोले प्रिये, मुझे केवल राम ही तुम से अधिक प्रिय हे।

*जो प्राणों के आराधनीय ओर जिन्हें किसी के द्वारा जीतना असंभव है उन राम की शपथ खाकर कहता हूं कि तुम्हारी कामना पूर्ण करूंगा।

*जिन्हें दो घड़ी भी देखे बिना मैं जीवित नहीं रह सकता उन राम की शपथ खाकर कहता हूं कि तुम्हारी कामना पूर्ण करूंगा।

*अपने को और अपने अन्य पुत्रों को भी न्योछावर करके मैं जिस राम का वरण करने को उद्धत हूं उन राम की शपथ खाकर कहता हूं कि तुम्हारी कामना पूर्ण करूंगा।-

तेन रामेण कैकेई शपे ते वचन क्रियाम्।

**- वा.रा.अ.11.08**

*दशरथ को अपने वश में जानकर कैकेई ने इंद्र आदि तेंतीस कोटि देवों को साक्षी किया -

इंद्र,चंद्र,आदित्य,ग्रह,दिशा

**- वा.रा.अ.11.14**

कुत्सित मति वाली, हंसकर बोली। जैसे राजा के मनोरथ रूपी वन के, सुख रूपी पक्षियों पर, व्याधिनी, वचन रूपी बाज छोड़ रही हो। -

**सुनहुं प्राणपति भावत जीका, देहु एक वर भरतहि टीका।**
**दूसर वर मांगौ कर जोरे, पुरवहु नाथ मनोरथ मोरे।**

यहीं नहीं ठहरी। बोलती गई -

**तापस वेष विशेष उदासी, चौदह वर्ष राम वनवासी।**

विशेष उदासी का अभिप्राय असंग, असाधन रहे जिससे राज्य का राग नष्ट हो। राज्य वासना नष्ट होगी। चौदह वर्ष में भरत का मूल दृढ़ हो जाएगा।

रावण की आयु चौदह वर्ष रही थी, सो चौदह वर्ष मांगा।

मंथरा के मुख से, राम को राज देने की बात,

चौदह दिन बाद सुनी थी सो एक दिन का एक वर्ष मांगा।

वनवास से चौदह भुवन सुखी होंगे सो चौदह वर्ष मांगा ।

*कैकेई ने मांगा कि राज्याभिषेक की इसी सामग्री से मेरे पुत्र भरत का अभिषेक किया जाए और -

**नव पंच च वर्षाणि दंडकारण्यमाश्रितः।**
**चीराजिनधरो धीरो रामो भवतु तापसः।**
**(चीराजिनधरो- वल्कल तथा मृग चर्म)**
**- वा.रा.अ.11.26,27**

मृदु, विशेषण युक्त शब्द महाराज को दुखदाई हुए। बाज के झपटने से लावा पक्षी की भांति सहम गए, कुछ कहते न बना। अत्यंत ध्युतिहीन हुए। सिर पर हाथ रखा। जैसे तन धरकर सोच भी सोचने लगा। मेरा मनोरथ रूपी कल्पतरू फूलने ही लगा था तभी कैकई रूपी हथिनी ने तोड़ दिया। अवध उजाड़कर विपत्ति की नीव रखी है। बाबा कहते हैं -

कवने अवसर का भयउ,गयेउ नारि विश्वास।

योग सिद्धि फल समय जिमि,यतिहिं अविध्या नाश।।

महाराज मन में दुखी हुए। कैकेई कुदृष्टि कर बोली। क्या भरत आपका पुत्र नहीं? क्या मैं मोल ली पत्नी हूं? बुरा लगा? बुरा लगा तो पहले संभल कर क्यों न बोले? या तो हां करो या ना कर दो। रघुकुल की सत्य प्रतिज्ञा नष्ट करो। अपयश लो।-

सत्य सराहि कहेउ वर देना,जानेउ लेइहि मांगि चबेना।

शिबि, दधीचि, बलि ने जो कहा सो तन, धन तजकर भी किया। दिया। कटु वचन कह जैसे जले पर नमक छिटकती हो। -

इतना बस सुना नृपति ने ओर, मन में संताप समाया था।
वह एक बड़ा ही अशुभ काल, क्या काल रूप धर आया था।।
यह दिवास्वप्न हे क्या मेरा, या मोह चित्त में छाया है।
व्याधी का हे भीषण प्रकोप, या भूत प्रेत की माया हे।।
कुछ पल को मूर्छावंत हुए, तन की भी सुधि बिसराय थी।
जब आंख खुली तो मृत्यु मई, कैकई दृष्टि में आई थी।।
बंधगई जकी बोले इतना, धिक्कार अहो धिक्कार अहो।
बस शब्द यही मुंह में आया, धिक्कारअहो धिक्कार अहो।।
जब तनिक चेतना आई तो, अत्यंत क्रोध ने जकड़ लिया।
बोले ए दयाहीन पापिन, बतला क्या मैने अहित किया।।
जिस रामचंद्र ने सदा तुझे, माता से अधिक दुलारा हे।
उसको तू वन में भेज रही, जो इस कुल का उजियारा हे।।
ए जहर भरी काली नागिन, मैने ही तुझको पाला हे।
जिसने था प्राण समान रखा, अब उसको ही डस डाला हे।।
आदित्य न हो जग टिक जाए, जल बिना कृषी हो सकती हे।
लेकिन राघव के दरस बिना, सांसें न मेरी चल सकती हे।।
ले आज तेरे इन चरणों में, मैं अपना सीस झुकाता हूं।
पापिन कर कृपा प्राण मत ले, याचक बन हाथ बढ़ाता हूं।।
कैकई वृद्ध हूं देख जरा, मृत्यू के दर पर बैठा हूं।
मत हत्यारी बन पाप चढ़ा, मैं हाथ पसारे बैठा हूं।।

केकई बोली -

दुर्मति महाराज राममाता, बन गई राजमाता गर तो।
विष पीकर प्राण तजूंगी मैं, यह बात अभी मन में धर लो।।
ये परम अमंगल बोल सुने, तो बोल न नृप मुख से निकले।
अपलक बस तकते रहे उसे, सोचा पापिन इक पल पिघले।।
तुझ कुलटा के कारण हर दम, कौशल्या को ठुकराया था।
उसकी सेवा संकल्प त्याग, सब अर्थ हीन ठहराया था।।

तू ही अपथ्य बन अब मेरे, इस तन को खाए जाती है।
लेकिन है दोष बड़ा मेरा, जड़ता ही बुद्धि भ्रमाती है।।

सुनले पापिन यह भी गुन ले, कुछ तेरे हाथ न आयेगा।
लेगा न राज है भरत संत, राघव गर वन को जाएगा।।
तेरी बाहों को गले डाल, मैं पगला उनमें झूम रहा।
अब पता चला फंदा था वह, फांसी में कबसे झूल रहा।।
खेल खेल में शिशु जैसे, जहरीला नाग पकड़ता है।
त्यों प्रेम किया मैंने तुझसे, वह गर्दन आज जकड़ता है।।
संसार कहेगा मूढ़ नृपति, नारी के वश बौराया था।
प्राणों से प्रिय अपने सुत को, दाता वन भेज कहाया था।।
मैं कहूं अगर पर ऐसा हो, वह मेरी आज्ञा भंग करे।
गर ऐसा हो ओर भरत लाल, नहिं तेरी आज्ञा अंग धरे।।
गर राम न होगा इस घर में, तो लखन कहां रह पाएगा।
फिर भरतलाल का अनुगामी, शत्रुघ्न नगर तज जाएगा।
इनके जाते ही प्राण मेरे, इस तन को तुरत त्याग देंगे।
कोसिला सुमित्रा दोनो के, सुन प्राण तेरे ये प्रण लेंगे।।
तू इन सब की हत्यारिन बन, कितने दिन तक जी पाएगी।
मूरत पखान की बन करके, अपजस भाजन कहलाएगी।।
सुन भरत तेरे इन छंदों में, स्वीकृति गर अपनी पाएगा।
कहदेना मेरि चिता के फिर, वह निकट नहीं आ पाएगा।।

- कमल- (वा.रा.अ.12)-

धिगस्तु योषितो नाम शठाह् स्वार्थपरायणाः।
न ब्रवीमि स्त्रियः सर्वा भरतस्यैव मातरम्।।

- वा.रा.अ.12.100

धैर्य धर महाराज ने नेत्र खोले। सामने नंगी तलवार सी कैकई, कुबुद्धि मूठ, जिसपर कुबरी ने निठुरता रूपी धार लगाई है। राजा ने जान लिया कि यह अवश्य मेरे प्राण लेगी। उसको सुहाती वाणी बोले। प्रिया, क्यों ऐसे अप्रिय वचन बोलती हो। शंकर साक्षी है। भरत और राम दोनों मेरे नेत्र हैं। प्रातः दूत भेजकर दोनो को बुला लेता हूं।

सुदिन सोध भरत को युवराज बना देता हूं। अरे राम को राज्य का लोभ कहाँ। उसे तो भरत पर अधिक प्रीति है। वो तो बड़े छोटे का विचार कर मैंने निर्णय किया था। इसमें कौशल्या का भी दोष नहीं है। हां तुमसे पूछे बिना किया जिससे मनोरथ खाली रहे। रिस त्यागो। कुछ दिन में भरत युवराज होंगे।

एक बात अवश्य बुरी लगी। दूसरा वर असमंजस मांगा है। अभी तक हृदय जल रहाहै। यह सब हास्य था क्या? राम का दोष तो कहो। तुम भी उसकी सराहना करते न थकती थी। अब उस स्नेह पर संदेह होता है। जिसके स्वभाव की शत्रु भी प्रशंसा करे वो माता के प्रतिकूल कैसे करेगा। हंसी त्याग कर मांगो जिससे मैं भरत का राज्याभिषेक देख सकूं-

जिअइ मीन बरु वारि विहीना,मणि बिन फणिक जियइ दुख दीना।

राम बिना मेरा जीवन नहीं रहेगा। यह स्वभाव है, छल नहीं। मेरा जीवन राम दर्शनाधीन है
महाराज बोले -

करती हो कपट दुराग्रह पर, हिय में होती न तनिक पीरा।

**नहिं जलन जीभ में होती क्या, मुंह में न जनमते हैं कीरा।।**
**यह कह महाराज बढ़े आगे, उसके न चरण छू पाए पर।**
**रोगी की भांति गिरे भू पर, सर चकराया और गश खा कर।।**
**- कमल- वा.रा.अ.12**

थोड़ा होश आया तब बोले-

**जिस अग्नि देव की साक्षी में, मेने तुझ संग था ब्याह किया।**
**ले आज तेरा तेरे सुत संग, इस दशरथ ने परित्याग किया।।**
**- कमल -वा.रा.अ.12**

आग में घी की नाई और जली। बोली। कोई भी जतन करो पर यहां आपकी माया नहीं चलेगी। दो या मना करो। प्रपंच मत करो। आप, राम और उसकी माता सब सज्जन है। जैसा कौशल्या ने मेरा भला किया, मैं भी ठोक बजा कर दूंगी। तुम क्या मरोगे -

**होत प्रात मुनि वेश धरि, जो न राम वन जाहिं।**
**मोर मरन राउर अयश, नृप समुझिय मन माहिं।।**

इतना कह पाप के पहाड़ से निकली कुटिल नदी की भांति कैकई खड़ी होगई। दो वर इस नदी के किनारे, हठ धार, कुबरी के वचन भंवर, महाराज तट के तरु हैं। राजा समझ गए। यह स्त्री के बहाने मौत आई है। अंतिम प्रयास किया -

**गहि पद विनय कीन्ह बैठारी, जनि दिनकर कुल होसि कुठारी।**
**मांगु माथ अबही देऊं तोहीं, राम विरह जनि मारसि मोहीं।**

सिर कटने से तो बस मेरा ही मरण पर राम के जाने से कुल नष्ट होगा। जैसे भी हो राम को रख, नहीं तो जन्म भर तेरी छाती जलेगी।

कोई असर न देख -

**देखी व्याधि असाधि नृप, परेउ धरणि धुनि माथ।**
**कहत परम आरत वचन, राम राम रघुनाथ।।**

हथिनी ने मानो कल्पवृक्ष गिराया। जल बिन मछली से दुखी हुए।

घाव पर विष देती हुई सी बोली। यही करतब करना था तो मांगु मांगु किसके बल कहते थे -

दुइ कि होहिं इक संग भुआलू,हंसब ठठाइ फुलाउब गालू।

दानी भी और कृपणता भी। या तो वचन भंग करो या धैर्य रखो। महिलाओं की तरह रोवो मत-

**तनु तिय तनय धाम धन धरनी, सत्य संध कहं तृण सम बरनी।**

मर्म वचन सुन राजा बोले। तेरा दोष नहीं है। मेरा काल ही पिशाच बन तुझसे चिपटा है। अरी, भोला भरत राज्य नहीं चाहता। यह तो विधिवश तुझमें कुमति जागी है। अयोध्या में फिर अच्छे दिन आजायेंगे। सर्वगुण संपन्न राम का शासन होगा। सभी भाई उसकी सेवा करेंगे। त्रिभुवन में राम का यश फैलेगा। पर-

तोर कलंक मोर पछिताऊ,मुयहु न मिटिहि न जाइहि काऊ।

(न जाइहि काऊ- कभी नहीं जाएगा)

बोले-

**रानी रानी आंचल पसार, कर्जा ले ओर दान भी ले।**
**ले राज और बनवास भि ले, वर भी ले ओर प्राण भी ले।।**
**-राधेश्याम रामायण**

अब तुझे जो भावे सो कर। मेरी आंखों से दूर होजा। जब तक जिऊं मुझसे कुछ मत कहना। तू नाहर के लिए गाय मार रही हो वैसे ही पछताएगी।

इतना कह बिना पंख के विहंग जैसे महाराज गिरे। हृदय में यही मान्यता कि भोर न हो। कोई राम को सूचना न देदे। दिनकर उदय मत होना।

राम वन में जायेंगे। अवध बेहाल होगी। राजा की प्रीति और कैकई की निष्ठुरता दोनो विधाता की बनाई है।

लेकिन जो होना है होता है। राजा को विलाप करते भोर हुई। द्वार पर बीन, बांसुरी, शंख बजने लगे। भाट और गायकों के बोल राजा को शूल से लगे -

मंगल सकल सुहाहिं न कैसे,सहगामिनिहिं विभूषण जैसे।

(सहगामिनि- सती, विभूषण- आभूषण)

उस रात रामजी की दर्शन लालसा में अवध में कोई नहीं सोया। प्रातः सूर्योदय के बाद भी, महाराज के न जागने पर, सेवक, सचिव चिंतित हुए। सुमंत को भेजा। सुमंत मंदिर में गए जो दौड़कर खाने जैसा, विपत्ति, विषाद के निवास सा लगा। कैकेई भवन में जाकर महाराज की दशा देख सुमंत सूख गए। जय जीव किया। टूटी नाल के कमल समान महाराज भूमि पर पड़े हैं। वे डर के मारे पूछ भी न पाए तभी कैकई बोली। महाराज की सारी रात राम राम रटते कटी। नींद न आई। कारण भी नही बताया। राम को बुला लाओ तब हाल पूछना।

राजा का रुख देख सुमंत चले पर पैर न चले। क्या कहूंगा रामजी से। द्वार पर सब मिल गए। विकल मुख देख पूछने पर समाधान किया। राम के निकट गए।-

राम सुमंतहिं आवत देखी,आदर कीन्ह पिता सम लेखी।

समाचार कहे। दोनो चले। रामजी को सचिव के साथ पैदल, त्वरा में जाते देख, लोग दुखी हुए। जाकर देखा कि सिंहनी से डरे वृद्ध गजराज के समान महाराज सहमे गिरे हुए हैं। मणिहीन भुजंग से। मृत्यु के समान कैकई को पास बैठे देखा।

राम ने ऐसा दृश्य पहली बार देखा। फिर भी धैर्य धर महारानी से पूछा। माताजी, पिताजी के दुख का कारण क्या है। कठिनता भी अकुला जाए ऐसी निधड़क, कमान सी जबान से महाराज के हृदय को बेधती राम को सब निष्ठुरतापूर्वक सुनाती हुई बोली राम, महाराज का तुमपर बहुत स्नेह है। यही उनके दुख का बड़ा कारण है। विस्तार किया, मुझे दो वर देने को कहा। जो भाया सो मैने मांग लिया। बस महाराज सोच में पड़े हैं। तुम्हारा ही संकोच है। आज्ञा मानो तो दुख मिटे।

रामजी मन में मुस्काए। सहज, आनंद निधान, दूषण रहित, शारदा को संवारने वाले श्रेष्ठ वचन बोले-

**सुनु जननी सोइ सुत बड़ भागी, जो पितु मातु वचन अनुरागी।**
**तनय मातु पितु तोषण हारा, दुर्लभ जननि सकल संसारा।**

वन जाने में तो लाभ ही लाभ हैं –

**मुनिगण मिलन विशेष वन, सबहिं भांति हित मोर।**
**तेहि मंह पितु आयसु बहुरी, सम्मत जननी तोर।।**

ओर मेरा प्यारा भरत राजा बनेगा यह तो विधाता का मुझपर उपकार होगा-

जो न जाहुं बन एसेहु काजा,प्रथम गनिह मोहिं मूढ़ समाजा।

कौन है जो कल्पवृक्ष को छोड़ एरंड को सींचेगा। अमृत तजकर विष की याचना करेगा।

*कैकेई ने कहा कि राम जबतक तुम शीघ्र वन नहीं चले जाते तबतक तुम्हारे पिता शयन ओर भोजन नहीं करेंगे।

रामजी बोले मां मैं पिता नहीं आपकी आज्ञा से वन जा रहाहूं क्योंकि मुझे पिताजी ने अभी भी वन जाने को नहीं कहा है। दुख इतना सा है कि आपने इतनी सी बात के लिए महाराज को कष्ट दिया।

**-वा.रा.अ.19,24**

माता, बस महाराज को व्याकुल देखकर एक दुख है-

**थोरिहिं बात पितहिं दुख भारी, होत प्रतीति न मोहिं महतारी।**

राजा धैर्यवान, गुण सागर हैं। क्या मुझसे कोई बड़ा अपराध हुआ जो बोलते नहीं।

इसे भी कपट जान, सीधे जल में जोक सी तिरछी बोली। तुम्हारी सौगंध, भरत की आन है कि इसके अलावा मुझे कोई और कारण नहीं दिखाई देता। तुम अपराध योग्य हो ही नही। सबके सुखदाता हो। पिता को भी समझाओ। बुढ़ापे में अयश न ले।

उसके वचन अपावन क्षेत्र में पावन तीर्थ से लगे। किंतु गंगा में सब नदियों की भांति राम को अच्छे लगे।

महाराज की मुर्छा गई तो राम का स्मरण किया। करवट ली। सचिव ने राम के आने की सूचना दी। महाराज ने आंखे खोली। सचिव ने सहारा देकर उठाया। राम को चरणों में गिरता देख, खोई मणि पाई हो वैसे हृदय से लगाया। देखते रहे। बस देखते रहे। नेत्रों से जल बरसता रहा। बोल न पाए। बार बार हृदय से लगाया। देखलो। राम हृदय से लगे है फिर भी राजा दुखी हैं।

विधाता को मन ही मन मनाते हैं। शंकरजी का ध्यान करते हैं -

**आशुतोष तुम अवढर दानी, आरति हरहुं दीन जन जानी।**

आप सबके हृदय में प्रेरणा देते हो। राम को भी दो। मेरा वचन, शील, स्नेह त्यागकर घर रहे। अपयश हो तो हो। कीर्ति नष्ट होती हो तो हो। नर्क में जाना पड़े तो भी ठीक। पर- सब दुख दुसह सहावहुं मोहीं,लोचन ओट राम जनि होही।

क्या हम भी विधाता से यह याचना करें कि रामजी कभी नेत्रों से अलग न होवे-

**अस मन गुनइ राउ नहिं बोला, पीपर पात सरिस मन डोला।**

पिता को प्रेम वश जान, माता फिर कुछ कहेगी तो उन्हें दुख होगा इसलिए नम्रता से बोले, पिताजी मेरी बातों को बाल बुद्धि जानकर क्षमा करना। बहुत छोटी बात के लिए इतने दुखी हुए हो। मुझे पहले ही बता दिया होता। अब मंगल के समय, स्नेहवश शोक त्यागकर, जाने की आज्ञा दीजिए। ऐसा कह शरीर पुलकित हो गया। बाबा कहते हैं -

**धन्य जनम जगतीतल तासू, पितुहिं प्रमोद चरित सुनि जासू।**
**चारि पदारथ करतल ताके, प्रिय पितु मातु प्राण सम जाके।**

आज्ञा पालन कर जन्म का फल पाके शीघ्र आउंगा। माता से विदा मांग आपको प्रणाम करके जाऊंगा। ऐसा कह राम चले। शोक वश महाराज ने कोई उत्तर न दिया।

मूल रामायण 06-

पुरवासिन कर विरह विषादा,कहेसि राम लक्ष्मण संवादा।

अब तो नगर में बिच्छू के जहर सी बात फेल गई। सब अग्नि को देख बेल की भांति कुम्हलाए। किसी को धीरज न रहा। मुख सूख गया, नेत्र बरसने लगे। शोक जैसे हृदय में समा ही नहीं रहा है। ऐसा लगा मानो करुणारस के कटक ने नगाड़े बजाकर अवध में डेरा डाल लिया है। विधाता ने बनी बनाई बात बिगाड़ दी। यहां वहां कैकई को गाली देते हैं। इस पापिनी ने छाए भवन पर आग रख दी-

**निज कर नयन काढ़ि चह दीखा, डारि सुधा विष चाहत चीखा।**
**(चीखा- चखना)**

रघुवंश वन को जलाने को आग हुई है। डाली पर बैठ पेड़ काटा। राम सदा प्यारे थे अब क्यों कुटिल हुई है। सच में कोई दर्पण में अपनी परछाई भले पकड़ ले पर नारी की गति नहीं जानी जावे-

**काह न पावक जरि सके, का न समुद्र समाय।**
**का न करै अबला प्रबल, काल काह नहिं खाय।।**

क्या सुनाकर विधाता ने क्या सुना दिया। क्या दिखाना चाहता था और क्या दिखा दिया। राजा ने पापिनी को वर विचार कर नहीं दिया। अबला वश ज्ञान, गुण सब गवां दिया। कुछ लोग राजा को दोष नहीं देते। शिबी, दधीचि, हरिश्चंद्र की कथा कहते हैं। कुछ भरत की सम्मति बताते, कुछ उदासीन हो रहे। कुछ कान मूंद, दांतों से जीभ दबाकर कहते हैं, यह मिथ्या है। ऐसा कहने से तुम्हारे पुण्य नष्ट हो जाएंगे। भरत राम को प्राणों से अधिक प्रिय हैं। बाबा कहते हैं -

चंद्र चुअइ बरु अग्नि कण,सुधा होय विष तूल। सपनेहु कबहुं न करहिं कछु,भरत राम प्रतिकूल।।

(विष तूल- विष के जैसा)

एक विधाता को दोष देता है जिसने अमृत दिखाकर विष दे दिया। ब्राह्मणों की पत्नियां, कुल की बड़ी जो कैकई को प्रिय थी उसके पास जाकर, सीख देने लगी। तुम सदा कहती थी भरत मुझे राम सा प्रिय नहीं है। आज किस अपराध से वनवास दे रही हो। कभी सोतिया डाह न किया। कौशल्या ने क्या बिगाड़ा जो अवध पर वज्र डाला। उनके वचन उसे बाण से लगे। वे बोली सोचो तो-

**सीय कि पिय संग परिहरहिं, लषण कि रहिहहिं धाम।**
**राज कि भुंजब भरतपुर, नृप कि जियहिं बिन राम।।**

ऐसा विचारकर क्रोध त्यागो। कलंक का कारण न बनो। हां भरत को युवराज बनालो पर राम को वनवास क्यों। राम राज्य के भूखे नहीं हैं। विषयों से विरागी हैं। धर्म जानने वाले हैं।

वे गुरु के घर रह लेंगे ऐसा दूसरा वर मांग लो।जो हमारी बात न मानोगी तो तुम्हारे हाथ कुछ लगने वाला नहीं है। हां यदि मजाक किया हो तो अब बस करो। अरे राम जैसा बेटा वनवास योग्य है क्या। लोग सुनेंगे तो क्या कहेंगे। उठो। वह करो जिससे कलंक न लगे। जैसे सूर्य के बिना दिन, चंद्र के बिना रात वैसे ही राम के बिन अवध हे।

कुबड़ी की चेली पर कुछ असर न हुआ। उनकी ओर ऐसे देखा जैसे हिरनियों को बाघिन देखती है। असाध्य व्याधि जानकर, उसे मंद, अभागी कहकर लौटी। राज्य करती हुई इसे देव ने नष्ट कर दिया। ऐसा करवाया जो कोई न करे। पुरवासी विलाप कर, कुचालिनी को गाली देते हैं। रामजी बिना जीवन कैसा। सूखते पानी को देख मीन की भांति प्रजा अकुलाई।

लोग विषाद में। पर राम प्रसन्न मुख। चौगुन उत्साह से (भरत राजा होगा, भूमि का भार हटेगा) मां के पास गए। बाबा ने बहुत उचित गाया-

**नव गयंद रघुवंशमणि, राज्य अलान समान।**
**छूट जानि वन गमन सुनि, उर आनंद अधिकान।।**

(गयंद- हाथी, अलान- बंधन)

मां को प्रणाम किया। मां ने हृदय से लगाया। आशीष देकर न्योछावर की। बार बार मुख चूमा। अश्रु बहे। शरीर पुलकित है। गोद बैठा, हृदय से लगाया। स्तनों से दूध बह चला।प्रेमाधिक्य से बोल न पाई। संभल कर पूछा लाल, लग्न कब का है। जल्दी नहालो। जो भावे खालो। फिर पिता के पास जाना। देर होगई है।

रामजी कोमल वाणी बोले, मैया - पिता दीन्ह मोहिं कानन राजू,जहं सब भांति मोर बड़ काजू।

प्रसन्न होकर आज्ञा दो। डरना मत। सब मंगल होगा। चौदह वर्ष वन में रह, पिता की आज्ञा पालन कर फिर दर्शन करूंगा। मन मलीन मत करना।

रामजी के मीठे वचन भी मां को तीर से लगे।

सिंहनाद से हरिणी की भांति सूख गई। मांजा खाकर मीन की भांति व्याकुल हुई। अश्रु बहने लगे। देह कांपी। धीरज धरकर बोली, बेटा पिता को तुम प्राणों से अधिक प्रिय हो। वे तुम्हें देख प्रसन्न होते थे। किस अपराध से राज्य की जगह वन जाने को कहते हैं। कौन है जो सूर्यकुल को जलाने को अग्नि बना।

कौशल्याजी बोली –

**हे राम जगत में देव बड़ा, यह आज सिद्धि को पाता है।**
**तुम जैसा जन जन का प्रिय भी, वनवास भोगने जाता है।।**
**तेरे वियोग की दावा में, इतना अवश्य हो जाएगा।**
**मेरी काया को रामचंद्र, यह आज भस्म कर जायेगा।।**
**- कमल-वा.रा.अ.24**

*कौशल्याजी ने कहा कि मुझे सबसे अधिक दुख इसका है की मेरे द्वारा पुत्र के सुख के लिए किएगये सभी व्रत, दान, संयम, तप आदि सब ऊसर में बोए बीज की तरह निष्फल हो गए।

**- वा.रा.अ.20.52**

राम का रुख देख, सुमंत सुत अभिनंदन ने विस्तार से सब बताया जिसे सुन कौशल्याजी मूक होगई। उनकी दशा का वर्णन नहीं हो सकता। न रोक सकती है न जाने का कह सकती है। दोनो तरह से हृदय जलता है। चंद्रमा लिखते लिखते राहू लिख दिया। विधाता की गति सबको सदा विपरीत ही होती है।-

**धर्म सनेह उभय मति घेरी, भई गति सांप छछुंदर केरी।**
**(सांप छछुंदर को छोड़े तो अंधा हो, खाए तो मरे)**

सोचा, हठ कर रोक लूं तो धर्म जावे। बंधु विरोध हो। जाओ कहूं तो हानि। फिर भरत और राम दोनो को समान जानकर बोली, बेटा तुमने जाने का निश्चय कर, अच्छा किया। पिता की आज्ञा पालन श्रेष्ठ धर्म है। पर भरत और प्रजा को कष्ट होगा। राम की मां को जो कहना चाहिए वही कहा। बेटा। यदि केवल पिता का आदेश है तो मुझे बड़ी मां जान कर, मेरा कहा मानकर, मत जाओ। लेकिन -

जो पितु मातु कहेउ बन जाना,तौ कानन शत अवध समाना।

पिता से माता का गौरव अधिक है किंतु विमाता की आज्ञा दस गुना अधिक मानने का नियम है। वनदेव, वनदेवी माता-पिता। खग मृग सेवक होंगे। वैसे भी राजा को अंत में वन जाना उचित ही है। बस तुम्हारी उम्र देख हृदय में घबराहट होती है। वन भाग्यवान, अवध अभागी है। मैं साथ चलने का कहूं तो आश्चर्य मत करना। लाल।

तुम सबके लाड़ले हो। सबके प्राण हो। जीवन हो।

सौरठ –

**राम हौं कौन जतन घर रहि हौं।**
**बार बार भरि अंक गोद ले, ललन कौन सो कहिहौं।।**
**इहि आंगन विहरत मेरे बारे, तुम जो संग शिशु लीन्हे।**
**कैसे प्राण रहत सुमिरत सुत, बड़ विनोद तुम कीन्हे।।**
**जिन श्रवणन कल वचन तिहारे, सुनति रहौं अनुरागी।**
**तिन श्रवणन वन गमन सुनत हौं, मोते कौन अभागी।।**
**युग सम निमिष जाहिं रघुनंदन, वदन कमल बिनु देखे।**
**जो तनु वदन रहे वाते बलि, कहा प्रीति यहि लेखे।।**
**तुलसीदास प्रेम वश श्री हरि, देख विकलमहतारी।**
**गदगद कंठ नैन जल भरि फिरि, आवन कह्यो खरारी।।**

कौशल्याजी बोली, राम! सब अनादि देव तुम्हारी रक्षा करे। दंडक वनवासी आनंद दे। अग्नि, वायु, यज्ञ का धुंआ, ऋषियों के मुख से निकले मंत्र, आचमन करते में रक्षा करे। बलिहारी जाऊं। जग स्वामी, जग कर्ता, असुर निकंदन ऋषि वनवास में रक्षा करे। छह ऋतु, सात समुद्र, चार वेद, सात द्वीप, तीन लोक, दस दिशाएं सुखदायक हो। मंगल दे, अमंगल हरे। यह कह अक्षत डालकर तिलक किया, चंदन लगाया-

**बांधी औषधि भुजन में, देवी देव मनाय।**
**विदा किये रघुवंश मणि, दशा कही नहिं जाय।।**

*कौशल्याजी ने श्रीराम को चंदन रोली का तिलक लगाया और उनके हाथ पर विशल्यकरणी नामक शुभ औषधि मंत्र पढ़कर बांधी।

- वा.रा.अ.25.38

जैसे जल बिना मछली वैसे ही अवधि रूपी जल घटते ही, सब प्रिय जन, मृतक हो जायेंगे। आज सब का सुकृत बीत गया। ऐसा कह चरणों में लिपट गई। हृदय के दारूण दाह का वर्णन नहीं हो सकता। रामजी ने माता को उठाकर हृदय से लगाया। समझाया।

उसी समय समाचार सुनकर सीता उठ आई।सासू को प्रणाम कर बैठ गई। सोचती हैं साथ तो चलना है। पता नहीं क्या जाएगा -

**की तनु प्राण कि केवल प्राना, विधि करतब कछु जात न जाना।**

सुंदर चरण नखों से धरती पर लिखती है जैसे माता से सहायता मांग रही हों या संकेत कर रही है कि साथ लेलो नहीं तो धरती में समा जाऊंगी।

अश्रु बहाने लगी। यह देख मां बोली, राघव जानकी सुकुमारी, सब को प्यारी है। पिता जनक। श्वसुर दशरथ। राम से भरतार। मैने कल्पलता समान पोषण किया। अब फूलते फलते समय विधाता वाम हुआ। क्या परिणाम होगा कहा नहीं जा सकता-

पलंग पीठ तजि गोद हिंडोरा,सिय न दीन्ह पग अवनि कठोरा।

(पीठ- सिंहासन)-

जियनमूरि जिमि जुगवत रहेऊं,दीप बाति नहिं टारन कहेऊं।

(जियनमूरि- संजीवनी बूटी, जुगवत- देखती)-

(एक राक्षस अवध में उत्पात करता था। वशिष्ठजी कहते हैं कि सीता दीप बाती उसको दे (खिसका दे, आगे बढ़ा दे) तो संकट हटे। फिर भी कष्ट होगा इस कारण कौशल्याजी ने नहीं कहा।)

वन में निशाचर, घोर जंतुओं के बीच, सीता रूपी संजीवनी कैसे रहेगी। कोल किरातों की कन्याएं जो विषय रस से अनभिज्ञ हैं जिनका पाषाण कीटों सा निर्भीक स्वभाव है या तपस्वियों की नारियां जिन्होंने तपहित भोग तज दिया है वे वन योग्य हैं पर-

सिय वन वसहिं तात केहि भांती,चित्र लिखे कपि देख डराती।-

मानसरोवर की हंसकुमारी, डाबर जल में कैसे रहेगी। ये घर रहेंगी तो मुझे सहारा होगा।

रामजी मां की सीख सिर धर, सकुचा कर, विपतकाल जान, सीता को वन के गुण दोष बता, समझाने लगे। गालव ने विश्वामित्र से गुरु दक्षिणा और नहुष ने शची के साथ रति याचना की जिदकर कष्ट पाया था।

*1- गालव ऋषि विश्वामित्रजी के शिष्य थे। शिक्षा ग्रहणकर गुरु दक्षिणा देने लगे। गुरु ने मना करदिया। गालव जिद करने लगे तो विश्वामित्रजी ने 800 श्यामकर्ण घोड़े मांगलिए। गालव विचार करते गरुड़ के साथ ययाति राजा के पास गए। ययाति ने घोड़े नहीं होने के कारण एक कन्या दी। कहा कि जो 200 घोड़े देगा वह इस कन्या में एक पुत्र उत्पन्न करेगा। यह फिर कन्या भाव को प्राप्त होजाएगी। मुनि उसे लेकर तीन राजाओं के पास गए और तीन पुत्र उत्पन्न करवा कर 600 घोड़े लाए। अंत में 200 घोड़ों की दक्षिणा के बदले गुरु को वह कन्या ही दे दी।

*2- देवराज इंद्र जब ब्रह्महत्या के डर से छिपे हुए थे तब नहुष अपने सुकृतों से इंद्र हुए। इंद्राणी शचि से भोग करना चाहा। इंद्राणी ने हठ देखकर कहा कि यदि ब्राह्मणों के वाहन पर आओगे तो तुम्हारी सहचारिणी बनूंगी। राजा ने ऋषियों को वाहन

में जोतकर शीघ्रता से चलने (सर्प सर्प) को कहा। दुर्वासा ने क्रोधकर श्राप दिया "जा अजगर होजा"। राजा पृथ्वी पर अजगर हुआ जो युद्धिष्ठिर के दर्शन से श्रापमुक्त हुआ।)

मेरी आज्ञा, सासू की सीख मानकर, उन्हें सहारा देने के लिए यहीं रहो।

बाबा गाते हैं -

रहहु भवन हमरे कहे भामिनि।

**सादर सासु चरण सेवहु नित, जो तुम्हरे अति हित गृहस्वामिनि।।**
**राजकुमारि कठिन कंटक मग, क्यों चलिहौं मृदु पद गजगामिनि।**
**दशा बात वर्षा हिम आतप, किमि सहिहौं अगणित दिन यामिनि।।**
**हौं पुनि पितु आज्ञा प्रमाण करि, ऐहौं बेगि सुनहु ध्युतिगामिनि।**
**तुलसिदास प्रभु विरह वचन सुनि, सहि न सकी मूर्छित भइ भामिनि।।**

*रामजी ने सीताजी को समझाया कि तुम मेरे वन जाने के बाद भरत के सामने मेरे गुणों की प्रशंसा मत करना क्योंकि -

ऋद्धियुक्ता हि पुरुषा न सहन्ते परस्तवम्।

(ऋद्धियुक्ता - समृद्धिशाली)

- वा.रा.अ.26.25

सीताजी बोली -

**भर्तुर्भाग्यं तु नार्येका प्राप्नोति पुरुषर्षभ।**
**अतश्चैवाहमादिष्टा वने वस्तव्यमित्यपि।।**
**-वा.रा.अ.27.05**

इसलिए मुझे भी वन में रहने की आज्ञा मिल गई है।-

ईर्ष्या रोषम् बहिष्कृत्य भुक्तशेषमिवोदकम्।

(ईर्ष्या- वन जाने का साहस, रोषम्- बात नहीं मानने का, बहिष्कृत्य- त्याग कर, भुक्तशेषमिवोदकम्- बीहड़ में जाते हुए पीत शेष जल की तरह साथ ले चलो)

- वा.रा.अ.27.08

ओर

*मुझे किसके साथ कैसा व्यवहार करना है इसकी शिक्षा मेरे माता पिता ने दे रखी है अतः यह ज्ञान न दें। आप वीर हैं। मेरी रक्षा करना कौनसी बड़ी बात है। वैसे भी मैं अपने पिताजी के घर ज्योतिषियों और ब्राह्मणों और एक शांति परायणा भिक्षुणी से सुन चुकी हूं की मुझे बहुत काल तक वन में रहना पड़ेगा अतः मैं मानसिक रूप से उस हेतु पहले से तैयार हूं।

- वा.रा.अ.27,29

रामजी बोले, हे सीते -

दिवस जात नहिं लागहिं बारा,सुंदरि सिखवन सुनहुं हमारा।

वन कठिन, जाड़ा, हिम, पवन, धूप, कुश, कंटक, पैदल चलना। मार्ग भी समान नहीं। उतार चढ़ाव, कंदरा, गुफा, नदी, नाले, पहाड़, वन जीव -

**भूमि शयन वल्कल वसन, असन कंद फल मूल।**
**ते कि सदा सब दिन मिलहिं, समय समय अनुकूल।।**
**(कंद- वर्तुलाकार, मूल- लंबा)**

राक्षस मनुष्यों का आहार करते हैं। चुरा लेते हैं। क्या क्या बखान करूं। -

हंसगमनि तुम नहिं बन जोगू,सुनि अपयश मोहिं देइहहिं लोगू।

मानस हंसिनी सिंधु जल में कैसे जिएगी। सबकी सीख मानकर घर रहो। इसी में भलाई है।

सीताजी के नेत्रों में जल भर आया। शीतल सीख भी दाहक हुई। व्याकुल होगई। सासू के चरण पकड़कर बोली, मां क्षमा करना। प्राण पति की सीख उत्तम है किंतु पति से वियोग से बड़ा दुख भी तो नहीं।-

**प्राणनाथ करुणायतन, सुंदर सुखद सुजान।**
**तुम बिन रघुकुल कुमुदविधु, सुरपुर नरक समान।।**
**व्रतोपवासनिरता या नारी परमोत्तमा।।**
**भर्तारं नानुवर्तेत सा च पापगतिर्भवेत।**
**भर्तुह् शुश्रुषया नारी लभते स्वर्गमुत्तमम्।।**
**- वा.रा.अ.24.25,26**

माता, पिता, बहिन, भाई, परिजन, शुभचिंतक, सास, श्वसुर, गुरु, समधी, सुखदाता सुपुत्र सब हों पर पति बिना ये सब शोक का समाज है। आपके बिना जग में कुछ भी सुखदाई नहीं-

जिय बिनु देह नदी बिनु वारी,तैसी अनाथ पुरुष बिन नारी।

वनदेवी, देव सास श्वसुर। कुश पल्लव साथरी कामदेव की सेज -

कंद मूल फल अमिय अहारू,अवध सौध शत सरिस पहारू।

(सौध- अटारी)

वन के दुख आपके विरह के सामने लवलेश भी नहीं। आपके चरण दर्शन से सब भला होगा। अतः मुझे साथ लेचलें। अवध में रखोगे तो आपके विरद को कलंक और मेरे प्राणों का अंत अवश्य होगा। आपके चरण कमल दर्शन से मार्ग का कोई कष्ट नहीं होगा। सेवा करूंगी। वृक्ष की छाया में बैठ पल्लू से पवन करूंगी। आपका दर्शन श्रम हरेगा। पल्लव, तृण बराबरी पर धर, रातभर चरण दबाऊंगी। आपके साथ मुझे कौन हाथ लगा सकता है।-

मैं सुकुमारि नाथ वन योगू,तुमहिं उचित तप मो कहं भोगू।

वियोग से प्राण अवश्य छूट जायेंगे।

बाबा बोले-

**कृपा निधान सुजान प्राण पति, संग विपिन हौं आऊंगी।**

**गृह ते कोटि भांति सुख मारग, चलत साथ सचु पाऊंगी।।**
**थके चरण कमल चापूंगी, श्रम भये पवन डुलाऊंगी।**
**नयन चकोरन मुख मयंक छवि, सादर पान कराऊंगी।।**
**जो हठि नाथ साथ नहिं लैहों, तो संग प्राण पठाऊंगी।**
**तुलसिदास प्रभु बिन जीवन रहें, क्यों फिर वदन दिखाऊंगी।।**

रामजी ने सोचा यह प्राण त्याग देगी। बोले, चलो।

*श्रीराम ने सीताजी को वन में चलने की स्वीकृति दी। कहा कि जो अच्छे वस्त्र, रमणीय पदार्थ, मनोरंजन की सामग्रियां, शय्याएं, सवारियां आदि ब्राह्मणों को और बची सेवकों को दान करदो। लक्ष्मण यह सब सुनकर गए और दान आरंभ कर दिया।

- वा.रा.अ.30,31

जल्दी करो अन्यथा लोग कहेंगे कि देर लगा रहे हैं। जाना नहीं चाहते।

मां को प्रणाम किया। मां बोली, विधाता, मेरी दशा कब फिरेगी, जब इस मनोहर जोड़ी को निरखूंगी।-

**बहुरि वत्स कहि लाल कहि, रघुपति रघुवर तात।**
**कबहिं बुलाय लगाय उर, हर्षि निरखिहौं गात।।**

मां विकल हुई, राम ने समझाया। जानकी ने प्रणाम किया। बोली मां। क्षमा करना। सेवा के समय बिछोह हो रहा है। कर्म कठिन है। मेरा दोष नहीं। मां ने गले लगाया। शिक्षा दी आशीर्वाद दिया -

अचल होउ अहिवात तुम्हारा,जब लगि गंग जमुन जल धारा।

प्रणाम कर दोनो विदा हुए। बाबा दुखी हुए-

**जब रघुपति संग सीय चली।**
**विकल वियोग लाग सुर तिय कहं,अति अन्याय अली।।**
**कोउ कह मणि गण तजत कांच लगि,करत न भूप भली।**
**एक कहै बन योग जानकी, विधि बड़ विषम बली।।**
**कोउ कहै कुल कुबेल कैकेई, दुख विष फलनि फली।**
**तुलसी कुलिशहु की कठोरता, तेहि दिन दलकि दली।।**

उधर -

समाचार जब लक्ष्मण पाये,व्याकुल विलखि वदन उठि धाये।

रामजी के चरण पकड़े। जल से निकाली मछली की भांति देखते हैं। सोचा मुझे साथ लेंगे या छोड़ देंगे। रामजी ने देखा कि भाई घर और शरीर का मोह, तृण समान त्यागकर आया है। बोले, भैया गुरु, माता, पिता की सीख मानना चाहिए। भरत शत्रुघ्न घरपर नहीं है। महाराज को मेरा दुख है। ऐसे में तुम्हें भी साथ लूं तो अवध अनाथ होजाएगा। प्रजा दुखी होगी। और -

जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी,सो नृप अवशि नरक अधिकारी।

**।।क्षत्रियस्य परो धर्मो प्रजानां एव पालनम।।**

यह सुन लक्ष्मण पाले से ग्रस्त कमल जैसे सुख गए।

*लक्ष्मण बोले भैया, इस तरह निर्दोष को देश निकाला कदापि उचित नहीं है। आप इसे अस्वीकार कर दीजिए। विरोध करने वाले मनुष्यों से मैं अयोध्या को शून्य कर दूंगा। वृद्ध महाराज विरोध करें तो या तो कैद या वध। मां, रामजी के लिए मैं तप्त अग्नि में और घोर वन में भी प्रवेश कर सकता हूं।-

**।।हनिष्ये पितरं वृद्दं कैकेय्यासक्तमानसम्।।**

- वा.रा.अ.21.19-

**ना शोभार्थाविमौ बाहू न धनुर्भूषणाय मे।**
**नासिराबंधनार्थाय न शराः स्तंभहेतवे।।**
**अमित्रमथनार्थाय सर्वमेतच्चतुष्टयम्।**

- वा.रा.अ.23.30,31

रामजी बोले -

शोकः संधार्यतां मातहृदये।

*केवल धर्महीन राज्य के लिए मैं धर्म पालन रूप सुयश का परित्याग नहीं कर सकता। जीवन लंबा नहीं है कि जिसके लिए अधर्म पूर्वक राज्य लिया जावे।

- वा.रा.अ.21.48,63

*जिसके विषय में कभी सोचा न गया हो वही देव विधान है। जिसने मेरा राज्य और केकई की निर्मल मति हर ली। सुख दुख, भय क्रोध, लाभ हानी, उत्पत्ति, विनाश तथा अन्य परिणाम जिनका कोई कारण समझ में नहीं आता वे सब दैव के ही कर्म हैं।-

**असंकल्पितमेवेह यादकस्मात प्रवर्तते।**
**निवर्त्यारब्धमारम्भैर्ननु देवस्य कर्म तत्।।**
**- वा.रा.अ.22 से 24**

*जो बिना सोचे विचारे अकस्मात सिरपर आ पड़े ओर प्रयत्नों द्वारा आरंभ किए कार्य को रोककर एक नया ही कांड उपस्थित कर देती है वह अवश्य ही दैवीय विधान हैं। इस तात्विक बुद्धि से मन को स्थिर करके काम करना चाहिए जिससे मन को संताप नहीं होता।-

**मा च लक्ष्मण संतापं कार्षीर्लक्ष्म्या विपर्यये।**
**राज्यं वा वनवासो वा वनवासो महोदयः।।**

**(कार्षी- किंचित, कोई, विपर्यये- उलटफेर, महोदयः- अभ्युदयकारी)**

**- वा.रा.अ.22.29**

लक्ष्मण चरण पकड़कर बोले, नाथ, मैं दास हूं। तजोगे तो क्या कर सकता हूं। सीख भली दी किंतु मुझे अगम है। मैं बालक, कहीं हंस से सुमेरु उठता है। गुरु, माता, पिता किसी को नहीं जानता -

मोरे सबइ एक तुम स्वामी,दीनबंधु उर अंतर्यामी।

धर्म नीति का उपदेश उसे दीजिए जिसे कीर्ति, ऐश्वर्य, शुभगति की अभिलाषा हो।

लक्ष्मण के वचन सुन रामजी बोले, जाओ मां से विदा मांगकर आओ।

*रामजी ने लक्ष्मण से कहा कि महाराज जनक द्वारा मुझे दहेज में वरुण से प्राप्त जो दो दिव्य धनुष, दो अभेद्य कवच, अक्षय बाणों से भरे तरकस, दो दिव्य स्वर्ण भूषित खड्ग आचार्य के घर से सादर ले आओ।

-वा.रा.अ.31.29,31

*श्रीराम ने वशिष्ठजी के पुत्र सुयज्ञ को बुलाकर सीताजी के आभूषण, मणिमय पलंग, अपने मामा द्वारा भेंट शत्रुंजय नामक हाथी भेंटकर आशीर्वाद पाया।

-वा.रा.अ.32

लक्ष्मण गई निधि पाई हो। अंधे को आंखे मिल गई हो। ऐसे प्रसन्न होकर, माता के पास गए। मन राम सीता के पास रहा। मां को सब सुनाया। मां चारों तरफ अग्नि देखकर सभीत हिरनी जैसी हो गई। लक्ष्मण को लगा यह अनर्थ करेगी। रोकेगी। सुमित्रा ने सोचा कैकई पापिनी ने कुदाव चला है पर अवसर जान, धीरज धरकर बोली, बेटा सीता तुम्हारी मां और राम पिता समान है। जहां राम वहीं अयोध्या। जहां सूर्य वहां दिन।–

जो पै सीय राम वन जाहीं,अवध तुम्हार काज कछु नाहीं।

गुरु, पिता, माता, बंधु, देवता, स्वामी सबकी प्राणों के समान सेवा करनी चाहिए। राम तो प्राणों के प्रिय हैं। सब उन्हीं के नाते से पूजनीय हैं। -

अस जिय जानि संग वन जाहू,लेहु तात जग जीवन लाहू।

मैं भाग्यवान हूं -

पुत्रवती युवती जग सोई,रघुवर भक्त जासु सुत होई।

नतरू बांझ भलि वादि बियानी,राम विमुख सुत ते हित हानी।
(बियानी- ब्यायी, प्रसव किया "ब्यायी- परमेश्वर से विमुख पशु ही तो है।")
तुम्हारे ही भाग से (पापियों का भार पृथ्वी पर, पृथ्वी का भार तुम पर) राम वन जाते हैं। सभी सुकृतों का फल सीता-राम के चरणों में स्नेह है। ध्यान रहे। स्वप्न में भी राग, रोष, ईर्ष्या, मद, मोह के वश मत होना।

(कहीं ये हावी न होजावें, इसलिए लक्ष्मण चौदह वर्ष सोए ही नहीं। न स्वप्न आएगा न विकार होंगे।)

सब विकार त्यागकर सेवा करना। वह करना जिससे राम-सीता को वन में क्लेश न होवे। अयोध्या की सुरत (याद) भूला देना। राम सीता के चरण में तुम्हारी उज्जवल प्रीति हो।

आशीर्वाद दिया।

प्रणाम करके तुरंत चले। भय था कहीं मना न कर दे। राम चले न जाएं। रामजी के साथ महाराज के मंदिर गए।

नगर के लोग हाथ मलते हैं। विधाता को दोष लगाते हैं। राजद्वारे भीड़ होगई।

मंत्री ने राजा को बैठाया। तीनों को देखकर महाराज व्याकुल हुए। हृदय से लगाया। बोल न पाए। रामजी ने प्रणामकर विदा मांगी।-

प्राप्स्यामि यानद्य गुणान् को मे श्वस्तान् प्रदास्यति।

**हे महाराज वनजाने से, जो गुण मुझमें आ जाएंगे।**
**फिर आप कहो किन कर्मों से, मुझ जैसे उनको पाएंगे।।**
**दुर्धर्ष सरित स्वामी समुद्र, मर्याद न ज्यों निज तकता है।**
**त्योंही यों विचलित होने का, यह भाव न नृप पर रूचता है।।**
**- कमल- वा.रा.अ.34.40,46-**
**नैवाहं राज्यमिच्छामि न सुखं न च मेदिनीम्।**
**नैव सर्वानिमान् कामान् न स्वर्ग न च जीवितुम।।**
**(मेदिनीम्- पृथ्वी, सर्वानिमान् कामान्- सब भोगों की, जीवितुम- जीवन)-**
**नहिं चाह राज्य सुख पृथ्वी की,नहिं स्वर्ग भोग जीवन इच्छा।**
**बस सत्य आपका शाश्वत हो,प्रण निभ जाए इतनी इच्छा।।**
**-कमल-**
**त्वामहं सत्यमिच्छामि नानृतं पुरुषर्षभ।**
**प्रत्यक्षं तव सत्येन सुकृतेन च ते शपे।।**

(त्वामहं- आप, सत्यमिच्छामि- सत्यवादी बने, नानृतं- आपका वचन मिथ्या न हो, प्रत्यक्षं तव- आपके सामने, सत्येन सुकृतेन- सत्य और सुकृतों की, ते शपे- आपके सामने शपथ लेता हूं)

- वा.रा.अ.34.47,48

बोले, पिताजी, हर्ष समय में विस्मय मत करो। मोह करने से यश की हानि होती है। राजा ने बांह पकड़कर पास बैठाया। बोले, तुम्हें मुनि चराचर का स्वामी कहते हैं। मनुष्य कर्म से फल पाता है। यहां तो उल्टा होरहा है। -

और करै अपराध कोउ,और पाव फल भोग।अति विचित्र भगवंतगति,को जग जानै योग।।

राजा ने बहुत प्रयत्न किया पर लगा कि राम नहीं मानेंगे तो सीता को हृदय से लगाकर, वन के दुख कह, रोकने का प्रयास किया। औरों ने, सचिव, गुरुपत्नी ने भी समझाया। तुम्हें वनवास नहीं दिया है। शीतल सीख सीता को अच्छी न लगी पर बोली नहीं। तभी -

**क्रोधित सुमंत ने आगे आ, कैकेई को फटकारा है।**
**क्या दशा अवधपति की कर दी, उनका सब तेज उतारा है।।**
**सदियों से सुनता आया हूं, पर आज सामने देख लिया।**
**सब पूत पिता पर जाते है, तुम ने माता का मार्ग लिया।**
**-कमल-वा.रा.अ.34**

महाराज ने सुमंत से राम के साथ सेना, धन भेजने को कहा। रामजी बोले -

**महाराज भला गज दानी को, रस्से पर मोह न भाता है।**
**बस उसी भांति वन जाने में, सेना धन नहीं सुहाता है।**
**-कमल-वा.रा.अ.37**

तभी कैकई ने तमककर मुनि वस्त्र, मृग छाला, तुलसी, कमलाक्षादि पात्र, तुम्बादि लाकर रखे बोली। राजा को तुमपर बहुत स्नेह है। जाने को नहीं कहेंगे। राजा को उसके वचन बाण से लगे। राम लक्ष्मण ने मुनि वस्त्र पहने जिन्हें देख जानकी सहम गई।-

हाथ लिये वल्कल सुकुमारी,ठाड़ी भई लाज उर भारी।

पहिरि न जानत मन अकुलानी,राम और लखि कह मृदु बानी।

मुनि जन केहि विधि बांधत चीरा,सो नहिं मैं जानत रघुवीरा।

ऐसा कहते ही अश्रु प्रवाहित होने लगे। रामजी उठे-

निज कर सों पहिरावन लागे,लखि नरनारि महा दुख पागे।

तब वसिष्ठजी ने उठकर निवारण किया कि सीता यह वस्त्र नहीं पहनेगी। सुंदर वस्त्र आभूषण में ही वन जाएगी। तब रामजी ने वल्कल पहनाना छोड़ दिया।।

* रामजी ने कौशल्याजी के साथ ही रोती हुई अपनी साढ़े तीन सो माताओं से विदा ली।

- वा.रा.अ.39

मूल रामायण 07-

विपिन गमन केवट अनुरागा,सुरसरि उतरि निवास प्रयागा।

लोगों को विकल, राजा को मूर्छित देख माता पिता, ब्राह्मणों, गुरु के चरणों में प्रणामकर चले।

*राजा दशरथ और कौशल्याजी रामजी के रथ के पीछे दौड़े। वे रथ रोकने, रामजी रथ आगे बढ़ाने और नगर वासी साथ चलने का बोलने लगे। कोलाहल मच गया।

- वा.रा.अ.40

सवैया -

**कागर कीर ज्यों भूषण चीर,शरीर लस्यो तजि नीर ज्यों काई।**
**मातु पिता प्रिय लोग सबै, सन्मानि सुभाइ सनेह सगाई।।**
**संग सुभामिनि भाइ भलो दिन, है जनु औधहुते पहुनाई।**
**राजिव लोचन राम चले तजि, बाप को राज बटाउ कि नाई।।**

वशिष्ठजी के द्वारपर जाकर खड़े हुए। लोगों को विकल देख समझाया। विप्रो को चौदह वर्ष लायक द्रव्य दिया। क्षत्रियों को विनय और याचकों को दान, मान, मित्रों को प्रेम से तुष्ट किया। दासी दासों को बुलाया। गुरुजी से कहा, इनकी माता पिता के समान संभाल करना। सब से कहा, वही मेरा हित है जिसमे महाराज सुखी रहें। माताएं दुखी न हों। सब को समझा, गुरु को प्रणाम कर गणपति, गौरी, गिरीश मना, आशीर्वाद लेकर चले।

*वनवास पर जाते समय श्री राम की आयु पच्चीस और जानकी की अठारह वर्ष थी।

- वा.रा.अ.47

पुर में हाहाकार हुआ। लंका में अपशकुन हुए। देवता हर्ष विषादरत हुए।

इधर मूर्छा गई तो महाराज सुमंत से बोले, मित्र, राम गए पर प्राण नहीं निकल रहे। अब किस सुख के लिए तन में बसे हैं। इससे अधिक क्या व्यथा होगी जिससे प्राण निकलेंगे। सुनो, तुम रथ लेजाओ। सब कोमल हैं। चार दिन वन दिखा, वापिस ले आना। दोनो भाई नहीं आएं तो मिथिलेश कुमारी को ही ले आना। जनकजी को क्या मुंह दिखाऊंगा। जब सीता वन में डरे ना तो वन के क्लेश कह, लौटा लाना। कहना -

पितु गृह कबहुं कबहुं ससुरारी,रहेउ जहां रुचि होय तुम्हारी।

जो जानकी आजाएगी तो प्राणों को सहारा होगा। नहीं तो मृत्यु अवश्य है। ऐसा कह फिर राम-सीता कहते मूर्छित होगये।

सुमंत तुरंत रथ ले राम के पास गए। विनय करके बैठाया। अयोध्या को प्रणामकर, रामजी भाई और भार्या संग चले। रामजी के चलते ही अयोध्या अनाथ लगी। सब लोग साथ चल दिए। रामजी के समझाने पर फिरते है किंतु तुरंत लौटकर साथ चलने लगते हैं -

**लागत अवध भयानक भारी, मानहुं कालरात्रि अंधियारी।**
**घोर जंतु सम पुर नरनारी, डरपहिं एकहिं एक निहारी।**
**घर मसान परिजन जनु भूता,सुत हित मीत मनहुं यमदूता।**

बागों की बेल कुम्हलाई। नदी, ताल भयावने हुए-

**हय गय कोटिन्ह केलि मृग, पुरपशु चातक मोर।**
**पिक रथांग शुक सारिका, सारस हंस चकोर।।**
**(पुरपशु- गाय)-**

राम वियोग विकल सब ठाढ़े,जहं तहं मनहुं चित्र लिखि काढ़े।

नगर वन, नागरिक वनचर से लग रहे थे।-

विधि कैकई किराततिनि कीन्हीं,जेहि दव दुसह दशहुं दिशि दीन्ही।

(दव- अग्नि)

विरहाग्नि नहीं सह सके। सब लोग अवध छोड़ चले। जहां राम वहां सब कुछ है ऐसा विचारकर दुर्लभ सुख सदन त्याग चले। बाबा कहते हैं - राम चरण पंकज प्रिय जिनहीं,विषय भोग वश करहिं कि तिनहीं।

बालक वृद्धों को घर छोड़ सब चले।

* अठारहवें वर्ष की माघ शुक्ल बसंत पंचमी को रामजी ने अयोध्या से तमसा की ओर प्रस्थान किया था।

- आनन्द रामायण

प्रथम दिवस तमसा नदी के तटपर विश्राम किया। प्रजा को प्रेमवश देख दयालु विशेष दुखी हुए। प्रिय वचन कह समझाया, धर्मोपदेश दिया फिर भी लोग नहीं फिरे। सब असमंजस में घिर गए। कुछ श्रम, कुछ देव माया से सब सो गए।

दो पहर रात्रि बीतने पर तीनो शंकरजी को प्रणामकर रथ में बैठे।

*रात में चलना मना है। गणों से विघ्न का भय रहता है। अवधवासियों की रक्षा के हित, रावण मारने के लिए सहायतार्थ शंकरजी को मनाया।

सचिव से कहा तात, चिन्ह मिटाकर रथ हांको। मंत्री ने पीछे झांखर बांध रथ चलाया।

भोर हुई। सब जागे। लगा जो सोया उसने राम को खोया। 'चले गए' बस यही शब्द सुनाई देता है। रथ के पहिए के निशान न देख राम राम कहते चारों ओर दौड़ते है जैसे डूबते जहाज में व्यापारी हों। उपदेश देते है। हमें क्लेश जानकर छोड़ गए-

निंदहिं आपु सराहहिं मीना,धिग जीवन रघुवीर विहीना।

(मीना- मछली जो जल बिना मर जाती है। हम रामजी के बिना जीवित हैं। आदिवासी, वनवासी समाज जो अब रामजी का दर्शन पाएगा)

बिना मांगे वियोग दिया तो मांगे मरण भी देना था। विलाप, कलाप करते दुखित अयोध्या आए और-

**राम दरश हित नेम व्रत, लगे करन नरनारि।**
**मनहुं कोक कोकी कमल, दीन विहीन तमारि।।**

(विहीन- बिना, तमारि- सूर्य के)

राम श्रृंगवेरपुर पहुंचे। सब सुखकर्ता, सब दुख हर्ता, गंगाजी को सबने प्रणाम किया। प्रभु ने अवतरण कथा सुनाई। जल पानकर श्रम हरा।-

सुमिरत जाहि मिटहिं श्रम भारू,तेहि श्रम यह लौकिक व्यवहारु।

नर लीला जो कर रहे हैं।

गुह को खबर लगी। बंधुओं को बुला, फल फूल भेंट ले मिलने चला। भेंट धर, दंडवत कर, अनुराग से देखने लगा। रामजी ने निकट बिठाया, कुशल पूछी। गुह बोला, नाथ, जबसे आपके चरण कमलों का दर्शन किया है तब से अत्यंत कुशल हूं और भाग्यवान, भक्तों की गिनती में आगया हूं। सब आपका है नाथ। पुर पधारो। प्रभु बोले, मुझे चौदह वर्ष ग्राम, पुर, नगरवास उचित नहीं। ग्रामवासी इनको देखकर कहने लगे -

ते पितु मातु कहो सखि कैसे,जिन पठये बालक वन ऐसे।

एक बोला अच्छा ही किया जो हमे दर्शन होगया। निषाद ने रामजी को एक शीशम दिखाया। उन्हें भी भाया। पूजन कर लोटे। राम संध्या करने लगे। गुह ने कुश और पत्तों की सेज बनाई। दोना भर भर मीठे जानकर फल ला लाकर रखे। सबने फल खाए। रामजी सोने गए। लक्ष्मण चरण दबाने लगे। फिर सुमंत को सोने का कह लक्ष्मण वीरासन में बैठे। गुह ने भी पहरेदार बैठाए और स्वयं धनुष, बाण ले लक्ष्मण के पास जा बैठा।

रामजी को इस तरह सोता देख निषाद, विषादग्रस्त हो लक्ष्मण से बोला, शोभायमान सर्वसुविधायुक्त भवन में शयन करने वाले रामजी, साथरी पर, बिना वस्त्र सोते, देखे नहीं जाते। जो सबके प्राण हैं वे भूमि पर शयन कर रहे। जिसका पिता जनक, श्वसुर दशरथ, पति राम, वह सीताजी भूमि पर सोती है। यह सिद्ध करता है कि विधाता किसे वाम नहीं।-

**सिय रघुवीर कि कानन योगू, कर्म प्रधान सत्य कह लोगू।**
**मंदमति कुटिल कैकई ने सुख अवसर में दुख दिया।**

निषाद को विषादग्रस्त देख लक्ष्मण बोले -

काहु न कोउ सुख दुख कर दाता,निज कृत कर्म भोग सब भ्राता।

संयोग-वियोग, भोग-योग, भला-बुरा, हित- अहित, जन्म-मृत्यु, संपत्ति-विपत्ति, कर्म, काल, धरती, घर, धन, पुर, परिवार, स्वर्ग, नर्क ये सब जगत के जाल हैं -

**सपने होय भिखारि नृप, रंक नाकपति होय।**
**जागे लाभ न हानि कछु, तिमि प्रपंच जिय जोय।।**
**(नाकपति- इंद्र)**

सब मोह निशा में सोने वाले हैं। किसी को दोष नहीं देना चाहिए। तभी जागा हुआ जानो जब सब विषय विलास से वैराग्य हो। फिर मोह जाय। फिर राम चरण में अनुराग हो। यही परमार्थ है। रामजी ब्रह्म हैं जो भक्त, भूमि, भूसुर, सुर, सुरभी के लिए लीला करते हैं। उनका चरित्र सुन जगत जाल मिट जाता है। इसलिए मित्र, सोच त्यागो।

बात करते सवेरा हुआ। राम जागे। प्रातक्रिया की। वट क्षीर मंगाया। लक्ष्मण सहित जटा बनाई। सुमंत रो दिए। बोले महाराज ने वापस ले आने का कहा था। ऐसा कह बच्चों जैसे रोने लगे। रामजी ने समझाया। शिबि, दधीचि, हरिश्चंद्र, रंतिदेव की, सत्य हित कष्ट सहने की कथा कही-

धर्म न दूसर सत्य समाना,आगम निगम पुराण बखाना।

मैने वह धर्म पाया। अब त्यागने पर अपयश होगा जो मरण समान है। पिताजी से कहना मेरी चिंता न करे। आप वही करना जिससे पिताजी को कष्ट न हो। निषाद दुखी हुए।

सीताजी को लोटने की सीख दी। सीताजी बोली, तात, घाम सूर्य को, किरण चंद्र को कैसे तजे। मेरे उत्तर देने को क्षमा करें पर आर्यपुत्र के अलावा सभी नाते व्रथा हैं। पिता जनक, श्वसुर दशरथ, माताएं हैं पर -

बिनु रघुपति पद पद्म परागा,मोहि कोउ सपनेहु सुखद न लागा।

मुझे यहां कोई दुख नहीं। मेरी चिंता न करें।

सुमंत की दशा खराब हुई। रामजी ने समझाया।लक्ष्मण ने सुमंत को राजा के बारे में कटु वचन कहे।-

**अनुचित और उचित विचार बिना,बुद्धी की कमी दिखाई है।**
**वनवास भेजकर राघव को, निज तुच्छ सोच दर्शाई है।।**
**- कमल -वा.रा.अ.58.30**

विदा किया। तीनों के चरणों में सिर नवाकर, सारा धन खो देने वाले व्यापारी की भांति लोटे। घोड़े मुड़ मुड़कर श्रीराम को देख हिनहिनाते हैं। यह दशा देख निषाद को बहुत विषाद हुआ।-

जासु वियोग विकल पशु ऐसे,प्रजा मातु पितु जीवहिं कैसे।

रामजी ने बरबस सुमंत को भेजा और आप गंगा तट पधारे। यहां बड़ा अचरज हुआ-

मांगी नाव न केवट आना,कहै तुम्हार मरम मैं जाना।

सवैया -

**नाम अजामिल से खल कोटि, अपार नदी भव बूढ़त काढ़े।**
**जो सुमिरे गिरि मेरु शिला कण,होत अजा खुर वारिधि बाढ़े।।**
**तुलसी जेहि के पद पंकज ते, प्रगटी तटिनी जो हरे अघ गाढ़े।**
**ते प्रभु या सरिता तरिबे कहं, मांगत नाव करार पै ठाढ़े।।**

बोला, आपके चरणों की धूल में जादू है। छूती है, मनुष्य कर देती है। शिला नारी होगई तो काठ तो और कोमल होताहै। मेरी नौका भी नारी हो जावे तो यह रास्ता ही बंद होजाए। मैं तो-

**यहि प्रति पालऊं सब परिवारु, नहिं जानऊं कछु और कबारू।**

पार अवश्य जाना चाहते हो तो मुझे चरण धोने की आज्ञा दो। फिर पार करूंगा। संकोच मत करो। उतराई भी नहीं लूंगा। मुझे आपकी आन और सत्यवादी दशरथजी की शपथ। चाहे लक्ष्मणजी तीर मारें पर पांव धोए बिना नाव में नहीं चढ़ाऊंगा।-

**सुनि केवट के बैन, प्रेम लपेटे अटपटे।**
**विहंसे करुणा एन, चितै जानकी लषण तन।।**

(अटपटे - 1- जनकजी ने तो कन्यादान के लिए धोए। यह यूं ही धोना चाहता है। 2- तुम दोनो की सेवा में भागीदार बनना चाहता है। 3- निषाद के सेवक भी चतुर हैं। 4- हमारे चरणों के प्रेमी देखो। तुम एक एक पेर के पर यह दोनो का सेवक बनना चाहता है)। अन्यथा -

**तुलसी अवलंबू न और कछू,लरिका केहि भाँति जिआइ हो जू।**
**एहि घाट ते थोरिक दूरि अहे कटि लौं जल थाह देखाइ हो जू।**
**परसे पगधूरि तेरे तरनी, घरनी घर क्यों समुझाइहो जू।**
**तुलसी अवलंबू न और कछू, लरिका केहि भाँति जिआइ हो जू।**
**बरु मारिए मोहि, बिना पग धोएं हों नाथ न नाव चढ़ाइहो जू।।**
**रावरे दोष न पायन को, पगधूरि को भूरि प्रभाउ महा है।**
**पाहन ते बन-बाहन काठ को कोमल है, जल खाइ रहा है ।।**
**पावन पाय परखारि के नाव चढ़ाइहों, आयसु होत कहा है।**
**तुलसी सुनि केवट के बर बैन हंसे प्रभु जानकी और हहा है।।**

**कवित्त -**

**जिनको पुनीत वारि शिर शिव है पुरारि, त्रिपथ गामिनि अस वेद हूं जो गायकै।**
**जिनको योगिंद्र मुनिवृंद देव देह धरि, करत विविध विधि योग जप मन लायकै।।**
**तुलसी जो चरण की धूरि छू अहल्या तरी, गौतम सिधाय गृह बौना सो लिवाय कै।**
**तेइ पांय पायकै चढ़ाय नाव धोए बिन, खैहों न पठावनी कहै हौं ना हंसाय कै।।**

प्रभु बोले वही करो जिससे नाव (पार जाने का साधन, मोक्ष मार्ग मिले) न जाए। जल्दी पार करो।

जिनका नाम भवसागर पार करता है वे केवट से निहोरा कर रहे हैं। गंगाजी को हर्ष हुआ। बहुत दिन बाद अपने निवास, पीहर, नैहर, उद्गम प्रभू के पद नख के दर्शन और स्पर्श का सौभाग्य मिला। अब भी जल्दी जाना चाहते हैं। सोचा। नाव नहीं, ये पैदल उतरते तो और अच्छा होता। केवट न आया और ये उलांघ कर गए तो भी चरण स्पर्श न कर पाऊंगी। तभी -

केवट राम रजायसु पावा,पानि कठौता भरित लै आवा।

(परिक्षार्थ। जो कठौता नारी न बना तो नाव भी बच जाएगी।)

कवित्त-

**प्रभु रुख पाय कै बुलाय बाल घरनिहि, बंदि के चरण चहुं दिशि बैठे घेरि घेरि।**
**छोटो सो कठौता भरि आने पानी गंगा जू को, धोय पांय पियत पुनीत बारि फेरि फेरि।।**
**तुलसी सराहैं ताको भाग अनुराग सुर, बरशें सुमन जय जय कहैं टेरि टेरि।**
**विविध सनेह सानी वानी असयानी सुनि, हंसैं राघौ जानकी लषण तन हेरि हेरि।।**

**देवों ने पुष्प वृष्टिकर कहा कि इस जैसा पुण्यात्मा और नहीं। केवट भी-**

**अति आनन्द उमंगि अनुरागा, चरण सरोज पखारन लागा।**
**पद पखारि जल पान करि, आप सहित परिवार।**
**पितर पार करि प्रभुहिं पुनि, मुदित गयेउ लै पार।।**

**कवि कहते हैं -**

**जी भरकर दर्शन करने को, धारा ठहराई गंगा ने।**
**भगवान चढ़े तो माथे पर, वह नाव उठाई गंगा ने।।**
**-राधेश्याम रामायण**

जब भगवान गंगा पार कर रहे थे तो सूर्य दर्शन करने आए। बीच में बादल को देख उन्हें हटाने लगे। बोले, ये मेरे कुल के हैं। मुझे दर्शन करने दो। बादल बोले-

**वे भी घनश्याम कहाते हैं, हम भी घनश्याम कहाते हैं।**
**इस श्याम रंग के नाते से, हम एक बखाने जाते हैं।।**
**बढ़ गई रार तो हवा चली, उसने यों बीच बचाव किया।**
**थोड़ा थोड़ा मौका देकर, दोनों का पूरा चाव किया।।**
**- राधेश्याम रामायण**

पार जाकर गुह सहित गंगा की रेत पर खड़े हुए। मल्लाह ने दंडवत किया। प्रभु सकुचे, इसे कुछ नहीं दिया।-

**पिय हिय की सिय जानन हारी, मणि मुदरी मन मुदित उतारी।**

प्रभु मुद्रिका भेंट करने लगे तो मल्लाह ने चरण पकड़ लिए। बोला-

नाथ आज मैं काह न पावा,मिटे दोष दुख दारिद दावा।

(दावा- जलन)

जन्मों की मजूरी (श्रम) की आज एकमुश्त मजूरी (मेहनताना) पाई है। अब कुछ नहीं चाहिए। फिरती बार जो देंगे लेलूंगा। इस बहाने फिर बुलाया। सबके आग्रह के बाद भी कुछ नहीं लिया। प्रभु ने कुछ तो देना पड़ेगा यह सोच उज्ज्वल भक्ति देकर विदा किया।

रामजी ने मज्जन कर पार्थिव पूजन किया। सीता ने कहा, मां मेरे मनोरथ पूर्ण करो। पति, देवर के साथ आकर आपकी पूजा करूं। यह सुन सुरसरि के स्वच्छ जल से उज्ज्वल वाणी हुई-

"हे रघुनाथजी की प्यारी, जनकसुता, आपका प्रभाव जग जानता है। आपकी कृपा इंद्र, कुबेर का सृजन करती है। सिद्धियां सेवा करती है। आपने विनय कर मुझे बढ़ाई दी है। आप प्राणनाथ, देवर के साथ कुशलतापूर्वक लौट कर आओगी और सर्वत्र आपका यश छा जाएगा।"

यह सुन जानकीजी प्रसन्न हुई।

तब प्रभु ने निषाद से घर जाने का कहा तो उसका मुख सुख गया। बोला दो चार दिन साथ रह, रास्ता दिखाकर सेवा का अवसर प्रदान करें।

जिस वन जाएंगे, पर्ण कुटि बनाऊंगा फिर जो कहेंगे करूंगा। साथ लिया और गणपति और शंकर का स्मरण कर, गंगा को नमन कर, वन गमन किया। कवि की कल्पना का दर्शन कीजिए -

सवैया -

**तट ते जु चली रघुवीर वधू, धरि धीर दिए मग में पग द्वै।**
**झलकी भरि माल कनी चटकी, पटु सूख गये मधुराधर द्वै।।**
**फिरि बुझति हैं चलनौजु कितौ, पिय पर्णकुटी करि हैं कित ह्वै।**
**तिय की लखि आतुरता पिय की,अंखियां अति चारु चली जल च्वै।।**

दूसरे दिन तीर्थराज पहुंचे। गोस्वामीजी ने प्रयाग की महिमा का गान किया। प्रभु ने प्रयाग का माहात्म्य कहा। त्रिवेणी के दर्शन किए। शिवजी का पूजन किया। फिर भरद्वाजजी के आश्रम पधारे। दंडवत किया। मुनि ने हृदय से लगाया। आशीष दी। कुशल पूछी। आसन दिया। कंद, मूल, फल अर्पित किए जिन्हें ग्रहण कर सब प्रसन्न हुए।

मुनि बोले, रघुनाथ जी, आपके दर्शन से सब व्रत, तप, दान, जप, योग, वैराग्य सफल हुआ। अब आपके चरण कमल में सहज स्नेह का वर दो क्योंकि कर्म, वचन, मनसे छल का परित्याग न करे तब तक कोई आपका नहीं हो सकता। तब तक स्वप्न में भी सुख संभव नहीं। चाहे कितने उपाय कर ले।

रामजी सकुचाए। सब को मुनि का सुयश सुनाया। बोले वही बड़ा, गुणागार है जिसे आप आदर दें। दोनो परस्पर नमन करते हैं। रामजी के आने की खबर पाकर प्रयाग निवासी तपस्वी, मुनि, सिद्ध, ब्रह्मचारी सब दर्शन करने आए। सबको राम ने प्रणाम किया। आशीष दे, सुंदरता

की सराहना करते फिरे। रामजी ने वहीं विश्राम किया और प्रातः स्नानकर मुनि को वंदनकर प्रस्थान किया। रामजी ने पूछा किस राह पर जाए। मुनि बोले -

**मुनि मन बिहंसि राम सन कहहीं, सुगम सकल मग तुम कहं अहही।**

मुनि ने कुछ शिष्य बुलाए। बहुत जन्म तक पुण्य करने वाले चार बटुक साथ किए। ग्राम के पास से निकलते हैं तो सब दौड़कर दर्शन करते हैं।

बटुकों को विदा किया और यमुनाजी में स्नान किया। यमुना तटवासी अपने काम तज दर्शन हित दौड़े। लालसा रही पर नाम, गांव पूछने में संकोच हुआ। सयाने वृद्धों ने पहचाने और सबको बताया।

तभी एक तरुण तेजपूंज तपस्वी आया, रामजी को प्रणाम किया।

(यह स्वयं अग्नि थे जो सदा साथ रहे। या चित्रकूट ही रामजी को लेने बटुक रूप धर आए। या ये स्वयं तुलसीदासजी ही थे।)

रामजी ने हृदय से लगाया। राम लक्ष्मण को प्रणाम कर आशीष पाया। निषाद ने प्रणाम किया।

निषाद को विदा किया। यमुना की सराहना (सूर्य पुत्री होने से रामजी की बड़ी बूढ़ी थी) करते आगे बढ़े। रास्ते में लोग मिलते। कहते आपके राजाओं से लक्षण हैं फिर भी पैदल विहड़ वन में, सुकुमारी नारी संग घूमते हो। हमें ज्योतिष पर अविश्वास

होता है। हम साथ चलें। कहां जाना है। रामजी उन्हें विनीत भाव से विदा करते हैं। जिस गांव नगर के निकट वास करते उनकी सभी सराहना करते।-

जहं जहं राम चरण चलि जाहीं,तिन्ह समान अमरावति नाहीं।

राह के पास के निवासियों की सराहना देवलोकवासी भी करते हैं। जिन नदी, ताल में स्नान करते हैं उन्हें मानसरोवर और गंगाजी सराहती हैं। जिस वृक्ष की छाया में बैठते उसे कल्पवृक्ष सराहता। पृथ्वी पद स्पर्श कर धन्यभाग हुई। बादल छाया करते, देव फूल बरसाते, राम आगे बढ़ते जाते। जो देखता बस देखता रहजाता। कुछ तो संग हो लिए -

**एक देखि वट छांह भल, डासि मृदुल तृण पात।**
**कहहि गवांइय छिनक श्रम, गमनब अबहि कि प्रात।।**

कोई कलश भर जल अर्पित करता। सीताजी को श्रमित जान, रामजी ने रुकने का निर्णय किया। नर नारी रूप देख मोहित हुऐ। सबको रामजी का मुख ही दिखाई देता है। उनकी शोभा का वर्णन करना कठिन है। सब देखते रहे। ग्राम की नारियां सीताजी के निकट जाकर, सकुचाती हुई पूछती हैं -

**कोटि मनोज लाजावन हारे, सुमुखि कहहु को अहहि तुम्हारे।**

सीताजी सकुचाकर धरती को देखती हैं फिर बताती है -

**सहज स्वभाव सुभग तनु गोरे, नाम लखन लघु देवर मोरे।**
**(इनसे बड़े भरत हैं इसलिए कहा ये छोटे देवर हैं)**
**बहुरि बदन विधु अंचल ढांकी, पिय तन चितै भौंह करि बांकी।**
**खंजन मंजु तिरीछे नयननि,निज पति कहेउ तिनहि सिय सैननि।**

रंकों ने जैसे निधि लूट ली हो। वे प्रसन्न हुई।-

**अति सप्रेम सिय पांय परि, बहु विधि देहिं अशीश।**
**सदा सुहागिनि होहु तुम, जब लगि महि अहि शीश।।**

पार्वती सी पति प्रिय होवो। इसी मार्ग से आओ तो दर्शन देना।

रामजी का रुख जान लक्ष्मणजी ने लोगों से रास्ता पूछा। सब दुखी हुए जैसे विधाता ने दी निधि छीन ली। धीरज धर सीधा मार्ग बताया।उन्हें सांत्वना दे, वापिस कर, रामजी चले। लोटते समय सब कहते कि विधाता के सब करतब उलटे हैं।–

**निपट निरंकुश निठुर निशंकू, जेहि शशि कीन्ह सरूज सकलंकू।**
**(सरूज- रोगी)-**
**रुख कल्पतरू सागर खारा, तेहि पठये बन राजकुमारा।**
**(रुख- वृक्ष)**

इन्हें वनवास दिया तो भोग विलास व्रथा बनाए।ये पैदल तो वाहन व्रथा बनाए।

ये कुश, पत्ते पे सोते हैं तो कोमल शैय्या व्रथा बनाई।

ये वृक्षों के नीचे सोते हैं तो ऊंची अट्टालिकाएं व्रथा बनाई।

ये मुनि के वस्त्रों में हैं तो सुंदर वसन आभूषण व्रथा बनाए।

ये कंद, मूल, फल खाते हैं तो सुस्वाद अन्न व्रथा बनाया।

एक ने कहा अरे ये आप प्रकटे हैं। विधाता ने नहीं बनाए। चौदह भुवन देखलो, ऐसे पुरुष और नारी कहां होंगे। विधाता इनके समान दूसरे बनाना चाहता होगा। नहीं बना सका तो इन्हें वन भेज दिया। पर हमतो इतना ही कहेंगे कि जिन्होंने देखा, देखते हैं और देखेंगे वे पुण्यात्मा हैं। ऐसा कह कह नैनों में नीर भर सोचते हैं कि ये दुस्तर मार्ग में कैसे चलेंगे। नारियां स्नेह से प्रार्थना करती हैं –

**जो जगदीश इनहिं वन दीन्हा, कस न सुमन मय मारग कीन्हा।**
**जो मांगे पाइय विधि पाहीं, ये रखियहिं सखि आंखिन माहीं।**

जिन्होंने नहीं देखे वे पूछते हैं, कहां तक गए होंगे। समर्थ दौड़कर दर्शन कर धन्य होते। अबला, बालक, वृद्ध पछताते। जहां जाते वहां यही आनंद। कोई राजा रानी को दोष लगाता है।

सवैया -

**रानि मैं जानि समान महा पवि, पाहनहू ते कठोर हियो है।**
**राजहु काज अकाज न जान्यो,कहो तिय को जेहि काम कियो है।।**
**ऐसी मनोहर मूरति वे, बिछुरे कस प्रीतम लोग जियो है।**
**आंखिन में सखि राखिबे योग, इन्हें कस कै वनवास दियो है।।**

कोई कहता ठीक ही किया जो हमने दर्शन पाए। वह मां, बाप जिन्होंने जन्म दिया वे धन्य हैं। वह देश, गांव, वन, पर्वत धन्य है जहां ये जाते हैं। इस प्रकार रामजी सबको सुख देते चले। आगे राम पीछे लक्ष्मण और -

**उभय बीच सिय सोहति कैसी, ब्रह्म जीव बिच माया जैसी।**
**जैसे ब्रह्म के पीछे माया उसके पीछे जीव।**
**जैसे बसंत और कामदेव के मध्य रति।**

जैसे बुध और चंद्रमा के बीच रोहिणी।-

**प्रभुपद रेख बीच बिच सीता,धरति चरण मग चलति सभीता।**

कहीं रामजी के चरणचिन्ह पर पग न धरा जावे, बच बच कर संभल कर चलती है।-

**सीय राम पद अंक बराये, लषण चलहिं मगु दाहिन लाये।**

लक्ष्मण दोनों के चरण चिन्ह बचाते, परिक्रमा करते चलते हैं। तीनो की प्रीति अलौकिक है।जिन्होंने देखा वे संसार सागर से पार हो गए। रामजी सीता को थका जान, वट के नीचे बैठ कंद, मूल, फल खा जल पी प्रातः स्नान कर चले।

मूल रामायण 08-

वाल्मीकि प्रभु मिलन बखाना,चित्रकूट जिमि बस भगवाना।

वन, पर्वत, सरिता, सर देखते वाल्मिकीजी के सुंदर आश्रम पधारे जहां सुंदर पर्वत, वन और पवित्र जल था।

रामजी का आगमन जान मुनि अगवानी करने आए। राम ने दंडवत किया। मुनि ने आशीर्वाद दिया। नेत्र जुड़ गए। आश्रम लाए। सुंदर आसन दे कंद, मूल, फल अर्पित किया। श्रीरामजी के दर्शन करके वाल्मिकीजी के मन में बहुत आनंद हुआ।

रामजी ने वनवास की कथा कही। माता पिता के वचन का पालन, भरत को राज्य और आपका दर्शन मेरे लिए पुण्यों का फल है। अब जहां मुनि, तपस्वी दुख न पावे वहां रहूं क्योंकि जिनसे ये दुख पाते हैं वे राजा बिना पावक के नष्ट होजाते हैं। ऐसा जान वह स्थान कहो जहां सीता सौमित्र के साथ रहूं। मुनि साधु साधु कहने लगे। बोले -

**राम स्वरूप तुम्हार, वचन अगोचर बुद्धि बल।**
**अविगत अकथ अपार, नेति नेति जेहि निगम कह।**

(अगोचर- परे, अलभ्य, अविगत- अनजाना, निगम- वेद)

आप द्दष्टा और जगत दृश्य है। आप ब्रह्मा, विष्णु, महेश को बनाने वाले हैं। वे भी आपका भेद नहीं जानते तो औरों का क्या कहना।-

सो जानै जेहि देहु जनाई,जानत तुम्हें तुमहिं होइ जाई।

आपके चिदानंद मय, विकार रहित देह को अधिकारी ही जान सकता है। आपके नचाए नाचता है। आप ने पूछा कहां रहूं -

पूछेउ मोहि कि रहौं कहं,मैं पूछत सकुचाउं।

जहं न होउ तहं देहुं कहि,तुमहिं दिखावौं ठाउं।। प्रेम और रस युक्त वचन सुन राम मुस्काए। मुनि हंस कर बोले –

सुनहु राम अब कहहुं निकेता,बसहुं जहां सिय लषण समेता।

01- जिनके श्रवण समुद्र समाना,कथा तुम्हारि सुभग सरि नाना।

(सुभग- सुंदर, सरि- नदी)-

भरहिं निरन्तर होहिं न पूरे,तिनके हिय तुम कहं गृह रूरे।

(हिय- हृदय, रूरे- श्रेष्ठ)

02- निदरहिं सिंधु सरित सर भारी,रूप बिंदु लहि होहिं सुखारी। (निदरहिं- त्याग करता है, सरित सर- अन्य

साधन रूपी, रूप बिंदु लहि- आपके स्वरूप की एक बूंद पाकर) तिनके हृदय सदन रघुनायक,बसहु लषण सिय सह सुख दायक।

03- जिनकी जिव्हा आपके गुण रूपी 'मानस कौस्तुभ' ही चुगती है। आप उसके हृदय में वास करिए।

04- आपके प्रसाद की सुंदर गंध जिनकी नासा प्रतिदिन आदर से ग्रहण करती है जो तुमहिं निवेदित भोजन करहीं,प्रभु प्रसाद पट भूषण धरहीं।

05- जो देवता गुरु ब्राह्मण को सिर नवा विनती करते हैं।

06- जिनके कर नित करहिं राम पद पूजा,राम भरोस हृदय नहिं दूजा। चरण राम तीरथ चलि जाहीं,राम बसहु तिनके मन माहीं।

07- जो आपके मंत्रराज (राम) का नित्य कुटुंब (दोनो ओर) सहित जाप करते हैं।–

**।।सप्त कोटि महा मंत्राश्चित्तविभ्रमकारकाह।**

एक एव परो मंत्रो राम इत्यक्षरद्वयम।।

08- जो तर्पण होम कर ब्राह्मणों को भोजन करा, दान देते हैं। आप से अधिक गुरु का सर्वभाव से सम्मान करते हैं। इन सब सेवाओं का एक फल आपके चरणों में प्रीति ही मांगते है। उनके मन मंदिर में सीता लक्ष्मण सहित वास कीजिए।

09- काम क्रोध मद मान न मोहा,लोभ न क्षोभ न राग न द्रोहा।

जिनके कपट दंभ नहिं माया,तिनके हृदय बसहु रघुराया।

10- सबके प्रिय सबके हितकारी,सुख दुख सरिस प्रशंसा गारी।

कहहिं सत्य प्रिय वचन विचारी,जागत सोवत शरण तुम्हारी।

तुमहिं छाड़ि गति दूसरि नाहीं,राम बसहु तिनके उर माहीं।

11- जननी सम जानहिं पर नारी,धन पराय विष ते विष भारी।

जे हर्षहिं पर संपति देखी,दुखित होहिं पर विपति विशेखी।

12- जिन्हें रामजी आप प्राणों के समान प्रिय हो। स्वामी, सखा, पिता, माता, गुरु सब आप है उनके हृदय में आपके लिए सुंदर घर है।

13- जो अवगुण तज सबके गुण ग्रहण करते हैं। गऊ ब्राह्मण हित संकट सहते हैं। नीति में चतुर, जगत में मर्यादा वाले हैं। आपका गुण स्वयं का दोष समझते हैं। सब भांति आपका भरोसा है। राम भक्त जिन्हें प्रिय है। उनके मन में आपका घर है।

14- जो जात, पांत, धन, धर्म, बढ़ाई, कुटुंब, सुखदाई घर को छोड़ आपमें ही लौ लगाए रहते हैं। स्वर्ग, नर्क, अपवर्ग समान हैं। जिन्हें आप हर जगह धनुष बाण धारण किए दिखाई देते हो। जो मन, वचन, कर्म से आपका चेरा है। उनके मन में वास करो।-

**जाहि न चाहिय कबहुं कछु, तुम सन सहज सनेह।**
**बसहुं निरंतर तासु उर, सो राउर निज गेह।।**

जो मनुष्य इन चौदह में से एक स्थान भी रामजी में लगा देता है उसमें रामजी का वास होजाता है। वाल्मिकीजी ने कितना सुंदर पता दे दिया है, ईश्वर के निवास का या उन्हें ठहराने का। फिर भी 'कमलजी' तुम उन्हें नहीं पा सके तो यह तुम्हारा ही दुर्भाग्य है।

इतना कह वाल्मिकीजी ने चित्रकूट में वास करने को कहा जहां सब भांति सुभीता होगा। जहां पशु पक्षी निर्वैर रहते हैं। वहां अत्रि मुनि की पत्नी अनुसुइया द्वारा अपने तपबल से (वृद्धों को गंगा स्नान हेतु जाने में श्रम होता था।) मंदाकिनी नाम गंगा की धारा लाई हुई है जो पाप नाशिनी है।

रामजी ने वहां जाकर मंदाकिनी में श्नान किया। नदी के उत्तरी किनारे पर लक्ष्मणजी ने वास चयन किया।

वहां इंद्र के साथ सभी देवगण -

**कोल किरात वेश धरि आये, रचेउ पर्णतृण सदन सुहाये।**

एक छोटी एक बड़ी उत्तम शाला में तीनो, मानो वसंत और रति संग रतिपति वास करते हों। देवता नाग किन्नर दिकपाल आए। दर्शन लाभ लिया। अपने दुख सुना अपने धाम गए। मुनियों के वृंद आए। दर्शन कर जीवन धन्य जाना।रामजी ने सब को प्रणाम किया। देखलो 'कमलजी' देवता दुखी हैं और मुनि प्रसन्न। कोल किरात समाचार पा कंद, मूल, फल लेकर जैसे कंगाल सोना लूटने आए। रामजी को देख चित्रलिखे से खड़े रहे। किरातिन कहती है -

**ये उपही कोउ कुंवर अहेरी।**
**श्याम गौर धनु बाण तूणधर, चित्रकूट अब आय रहे री।।**
**इनहिं बहुत आदरत महा मुनि, समाचार मेरे नाह कहे री।**
**वनिता बंधु समेत बसत बन, पितु हित कठिन कलेश सहे री।।**

**वचन परस्पर कहति किराततिनि, पुलक गात जल नैन बहे री।**
**तुलसी प्रभुहिं विलोकत इक टक,लोचन जनु बिनु पलक लहे री।।**
**(उपही- अजनबी, अपरिचित, नाइ- स्वामी)**

बोले -

**हम सब धन्य सहित परिवारा, देखि नयन भरि दरश तुम्हारा।**

हम हिंसक पशुओं से आपकी रखवाली करेंगे।सारा क्षेत्र हमारा देखा है। हम सभी थल आपको दिखाएंगे। आप आज्ञा देने में संकोच मत करना।वेद और मुनियों के मन में अगम रामजी उनके वचनों से प्रसन्न हुए। क्यों -

**रामहिं केवल प्रेम पियारा, जानि लेहु जो जानन हारा।**

रामजी ने सब को स्नेहपूर्वक विदा किया। वे सराहना करते लोटे। जबसे रामजी ने वास किया, वन और मंगलमय होगया। वृक्ष मानो कल्पतरू हुए। त्रिविध समीर बहने लगी। भांति भांति के पक्षी मधुर स्वर करते। पशु वैर बिसराकर रहते। सारे नदी, नद मंदाकिनी के भाग्य को सराहते। सभी शैल चित्रकूट का महिमा गान करते हैं। देव प्रशंसा करते न थकते। नयनवंत दर्शन कर, स्थावर चरण रज पाकर धन्य हुए। जहां अयोध्या, क्षीर सागर तज रामजी वास करे वह क्यों धन्य न हो। लक्ष्मण सब की याद भूलकर सेवा करते। सीताजी रामजी का मुख देख, सब भूल, वन में आनन्द से रहने लगी।

पर्णकुटी प्रीतम, हिरण और पक्षी कुटुंबी, मुनि, मुनितिय श्वशुर सास। कंद, मूल, फल अमृतमय आहार। कुश पात का बिछौना काम सेज सा लगा। सीता लक्ष्मण जो कहे वैसा प्रभु मन भावे। नित्य कथा होती। जब जब राम अयोध्या, माता, पिता, परिजन, भरत के शील का स्मरण करते, नेत्रों में जल भर आता। परछाई के समान दोनो अनुसरण करते। दोनो को धीरज दिलाने हेतु फिर कथा कहने लगते। रामजी पर्णकुटी में शची, जयंत के साथ इंद्र जैसे निवास करते हैं।–

जुगवहिं प्रभु सिय अनुजहिं कैसे, पलक विलोचन गोलक जैसे।

**सेवहिं लषण सीय रघुवीरहि, जिमि अविवेकी पुरुष शरीरहि।**
**यह राम वन गमन कहा अब वह सुनो जैसे सुमंत अयोध्या आए।**

मूल रामायण 09-

**सचिवागमन नगर नृप मरना, भरतागमन प्रेम बहु बरना।**

निषाद ने लोटकर मंत्री को देखा। उनका विषाद कहा नहीं जा सकता। राम-राम, सीता, लक्ष्मण जपता, धरती पर लोट रहा है। घोड़े, दक्षिण दिशा की ओर देख हिनहिना रहे हैं जैसे बिना पंख के पक्षी हों।-

**नहिं तृण चरहिं न पियहिं जल, मोचत लोचन वारि।**
**व्याकुल भयउ निषादपति, रघुवर बाजि निहारि।।**

निषाद ने स्वयं को संभाला और सुमंत से कहा कि विधाता को वाम जानकर धीरज धरो। अनेक कथा कह बरबस रथ में बैठाया। राम विरही से रथ हांका न गया। घोड़े मुड़ मुड़कर देखते हैं जैसे वन मृग जोत लिए हों। कोई राम, लक्ष्मण, सीता कहता उसे प्रेम से देखते। घोड़े मणि विहीन सर्प से हुए। यह दशा देख निषाद ने चार सेवक, सारथी के साथ किए और लोटे।

उधर राम विरह दुख से दुखी सुमंत सोचते हैं कि रामजी के बिना जीवन धिक्कार है। यह तन अंत में नहीं रहने वाला फिर भी रामजी से बिछड़ते ही तन तजकर यश नहीं पा सका। प्राण अपयश भाजक हुए हैं-

अहह मंद मति अवसर चूका,अजहुं न हृदय होत दुइ टूका।

सब पूंजी गवाने वाले व्यापारी सा, भागे योद्धा सा, हाथ मल पछताता है। जैसे कोई वेदज्ञ ब्राह्मण, धोखे से मदपान कर ले वैसे सोच करने लगा। पतिव्रता ज्यों पति को त्याग दुखी हो वैसे दुखी हुए। नेत्रों में जल से दृष्टि छोटी, व्याकुल मति से कान बंद, होठ सूख गए। मुख पर स्याही सी लगी। माता पिता के हत्यारे सा विवर्ण हुआ- हानि गलानि विपुल मन व्यापी,यमपुर पंथ सोच जिमि पापी।

सोचा, अवध में राम विमुख रथ देखने वालों से हृदय पर पत्थर रखकर क्या कहूंगा। लक्ष्मण की मां, बछड़े को याद कर दौड़ती गाय की तरह आती रामजी की महतारी से क्या कहूंगा।महाराज से जिनका जीवन राम आधीन है, क्या कहूंगा। सब तृण समान तन तज देंगे। -

**हृदय न बिदरेउ पंक जिमि, बिछुरत प्रीतम नीर।**
**जानत हौं मोहिं दीन्ह विधि, यमयातना शरीर।।**
**(बिदरेउ- फटा)**

पछताता तमसा तीर आया। निषादों को विदा किया।-

**पैठत नगर सचिव सकुचाई, जनु मारेसि गुरु ब्राह्मण गाई।**
**बैठि बिटप तर दिवस गवावा, सांझ समय तब अवसर पावा।**

अंधेरे में अवध में प्रवेश कर रथ द्वार पर रख भीतर गया। लोगों ने रथ और घोड़ों की दशा देखी तो ओलों से गल गए। जल बिना मीन से व्याकुल हुए। रनिवास व्याकुल हुआ। भवन जैसे प्रेत का निवास हो। रानी पूछती हैं यह उत्तर नहीं दे पाता। नेत्रों से दिखता, कानों से सुनाता नहीं।बस यही बोला, राजा कहां है। विकल देख दासियां कौशल्याजी के घर ले गई जहां राजा को अमृतविहीन चंद्र की भांति मलिन देखा।

कौशल्या कह रही थी -

**माई री, मोहि न कोउ समुझावे।**
**राम गमन सांचो किधौ सपनो, मन परतीति न आवै।।**
**लगइ रहत मेरे नैनन आगे, राम लषण अरु सीता।**
**तदपि न मिटत दाह यह उर को,विधि जो भयो विपरीता।।**
**दुख न रहै रघुपतिहिं बिलोकत, तनु न रहै बिनु देखे।**
**करत न प्रान प्रयान सुनहु सखि, अरुझि परी यहि लेखे।।**
**कौशल्या के विरह वचन सुनि, रोइ उठी सब रानी।**
**तुलसिदास रघुवीरसिंह की, पीर न जात बखानी।।**

राजा भोजन, शयन, गहनों से हीन, वैकुंठ से गिरे ययाति समान, पृथ्वी पर पड़े हैं।

(अनेक यज्ञ कर ययाति सदेह स्वर्ग गए। इंद्र के पूछने पर, अभिमान वश सब कहा जिससे पुण्य क्षीण होगया। तब इंद्र ने धक्का दे पृथ्वी पर गिरा दिया )

जले पंख से संपाती की भांति, राम, लक्ष्मण, जानकी कह उसांस लेते हैं। सुमंत ने जय जीव कहा। दंडवत किया। राजा ने व्याकुल हो, उठकर पूछा। सुमंत, राम कहां है।

सुमंत को गले लगाया जैसे डूबते को आधार मिला। नेत्रों में जल भर आया। पास बिठाकर पूछा, लौटा लाए या चले गए। सुमंत रोने लगे। राजा ने पूछा बोलो उन्होंने क्या कहा। राज्य देने का कह वनवास दे दिया फिर भी मन में प्रसन्नता या दुख न हुआ-

**सो सुत बिछुरत गये न प्राना, को पापी जग मोहि समाना।**

मित्र, जहां राम, लक्ष्मण, जानकी हैं वहां मुझे पहुंचाओ अन्यथा प्राण चलना चाहते हैं। उनका संदेश कहो। उनके दर्शन कराओ। सुमंत बोले, महाराज, आप ज्ञानी हैं। साधु संग किया है। जीना-मरना, सुख-दुख, मिलन-वियोग, हानी- लाभ सब रात-दिन जैसा काल कर्म के वश हुवा करता है। सुख में प्रसन्न और दुख में रोना अधीरों का काम है। धीरज धरो। प्रजा हितकर करो।

फिर बताया। प्रथम तमसा और दूसरे दिन गंगा में स्नान किया। केवट ने सेवा की। वह रात्रि श्रृंगवेरपुर में बिताई। वट क्षीर से जटा बनाई।

नाव पर चढ़कर पार गए। मुझसे कहा कि पिताजी से कहना मेरी चिंता न करे। वन में आपकी कृपा से सब मंगल होगा। जल्दी ही आकर आपके दर्शन करूंगा। मुझे आपकी सेवा और गुरु से महाराज दुखी न हों वही करने को कहा है। पुरजनों को कहा कि वही करें जिससे महाराज सुखी रहें। भरत प्रजा और सभी माताओं पर समान भाव रखे। भाईपन रखना।

जानकीजी स्नेह से शिथिल होने के कारण कुछ कह न सकी। उसी समय राम आज्ञा पाकर केवट ने नाव चला दी और मैं वज्र का हृदय कर देखता रहा। मैं रामजी का संदेश ले जीवित लोट आया।

यह सुन महाराज मूर्छित होकर धरती पर गिरे। हृदय में दाह हुआ। मोह वश तड़पने लगे। रानियां रोने लगी। महाविपत्ति का वर्णन नहीं हो सकता।-

सुनि विलाप दुखहू दुख लागा,धीरजहू कर धीरज भागा।

रानियों के रोने से नगर में कोलाहल हुआ। मानो रात्रि में पक्षियों पर इंद्र का वज्र गिरा हो। मणि बिना सर्प, जल बिन कमल की भांति महाराज के प्राण कंठ में आगये। कौशल्या ने जाना कि अब रविकुल रवि अस्त होने वाला है। सोचा

*नारी के लिए पति, पुत्र, पिता बंधु बांधव ही सहारा हैं । आप मेरे हैं नहीं, राम वन में और बंधु बांधव दूर हैं अतः मैं तो मारी गई।

**- वा.रा.अ.59.17**

धीरज धरकर बोली महाराज। राम विरह का सिंधु अपार है। आप ही मल्लाह हैं। धीरज धरेंगे तो पार होगा नहीं तो सब डूब जायेंगे। धीरज धरो। सब फिर मिलेंगे। विलाप करते महाराज को रात बहुत लंबी हुई। फिर अंधे तपस्वी का स्मरण हुआ। बोले।

प्रिया, एक बार मैं सेना लेकर मृगया के लिए गया। रात में बेतों के वन में सरोवर के तटपर बैठा था कि -

ताही समय लिए घट कर में,सरवन आए जल हित सर में।

उसने घट जल में डुबाया। मेरे मन भाया शब्द सुन मैंने तीर चलाया जो उसके हृदय में जा लगा। आह शब्द से पता चला कि ये मनुष्य है। मैं उसके निकट गया। वह बोला मेरी चिंता मत करो। मेरे माता पिता वृद्ध और नेत्रहीन हैं। उनकी प्यास बुझाने जल लेने आया था कि आपने बाण मार दिया। अब इसे जल्दी निकालो प्राण निकलना चाहते हैं। अब उनके निकट जाकर पहले जल पिलाना फिर मेरा हाल कहना। आप उन्हें उपदेश देना जिससे मेरा शोक न करे।

ज्यों ही मैंने बाण निकाला, औंकार शब्द कर उसके प्राण निकल गए।

मैं घट ले उनके पास गया। बिन बानी पानी पिलाने लगा। वे बोले, लाल बात क्यों नहीं करते, क्या हुआ बताओ -

बिन बोले हम पियहिं न नीरा,सुन भये दशरथ अधिक अधीरा।

मैंने सब समाचार कहा तो भूमि पर गिर, अकुलाने लगे। मुझसे बोले, हमें उसके पास लेचलो। पास जाकर पुत्र को गोदी में ले, मां रुदन करने लगी। दोनो बोले, राजा, चिता बना दो। मैंने चिता बनाई। जिसमें दोनो अपने पुत्र को लेकर बैठे। योग अग्नि में अपना शरीर जलाते समय उन्होंने कहा –

**जिमि हम पुत्र वियोग में, दशरथ त्यागहिं प्राण।**
**ऐसे ही तनु तजहुं तुम, मानहुं वचन प्रमाण।।**

यह कह वे तो देवलोक गए पर मेरे मन में दुख हुआ। फिर मन में विचारा की तपस्वी ने विचार कर नहीं कहा। क्योंकि -

पुत्र नहीं कोउ गेह हमारे,किहि त्यागहिं तनु वचन तुम्हारे।

इसलिए शोक त्याग घर आया और आज तक तुमसे भी नहीं कहा था। आज उसकी बात सच हुई -

प्राण पियारे वनहिं सिधारे,अब तक प्राण न गये हमारे।

अब उनके बिना जीवन में क्या सुख मिलेगा। सरवन की कथा से अब मुझे लगा वे पुत्र बिना नहीं जीने वाले धन्य थे।

कथा सुना महाराज व्याकुल होगए। बोले -

हा रघुनंदन प्राण पिरीते,तुम बिन जियत बहुत दिन बीते।-

**हा राघव महाबाहो हा ममायासनाशन।**
**हा पितृप्रिय मे नाथ हा ममासि गतः सुत।।**
**(ममायासनाशन- मेरे कष्ट दूर करने वाले, मे नाथ- मेरे नाथ, ममासि- मेरे बेटे)**
**-वा.रा.अ.64.75-**
**हा कौसल्ये न पश्यामि हा सुमित्रे तपस्विनि।**
**हा नृशंसे महामित्रे कैकेई कुलपांसनि।।**

**(न पश्यामि- कुछ नहीं नजर आता, कुलपांसनि- कुलांगार)**
**- वा.रा.अ.64.76**

हा जानकी, हा लक्ष्मण -

**राम राम कहि राम कहि, राम राम कहि राम।**
**तनु परिहरि रघुवर विरह, राउ गये सुरधाम।।**
**(अभी देवलोक गए। फिर राज्याभिषेक देख साकेत गए।)**

बाबा कहते हैं -

**जियन मरन फल दशरथ पावा, अंड अनेक अमल यश छावा।**
**(अंड- ब्रह्मांड)**

जिए तो राम को देखकर और राम के विरह में ही प्राण त्याग दिया। रानियां उनका रूप, शील, बल बखान पृथ्वी पर गिर, अनेक प्रकार विलाप कर, रोने लगी। दास-दासी और पुरवासी घर घर विलाप करते हैं। सब कैकई को गाली देते हैं । विलाप करते रात बीती। प्रातः सब महामुनि आए।

वशिष्ठजी ने अनेक इतिहास कह सबका शोक निवारण किया। जो उत्पन्न होता है वह मरता ही है। सुनो -

01- अवक्षिति के पुत्र राजा मरुत, जिनके राज्य में बिना जोते पृथ्वी धान्य उत्पन्न करती थी। जिनके यज्ञों में देवता सोमपान कर तृप्त हुए। देव, मनुष्य, गंधर्व दक्षिणा उठा न पाए। वे भी चले गए।

02- उतथि के पुत्र सुहोत्र भी गए, जिनके राज्य में इंद्र ने एक वर्ष तक सुवर्ण की वर्षा की थी। नदियां सुवर्ण वाहिनी थी जिसमें मछली, कछुए, मगर भी सोने के थे। जिनका राजा ने कुरुजांगल में ब्राह्मणों को दानकर दिया था। वे भी चले गए।

03- अंग देश के व्रहद्रथ राजा ने यज्ञ कर दशलक्ष श्वेत घोड़े, हाथी, दस लाख सुवर्ण शोभित कन्याएं, स्वर्ण माला वाले एक करोड़ वृषभ और हजार गौ दक्षिणा में दी थी। इंद्र और ब्राह्मण सोमपान से उन्मत्त होगए थे। ऐसे सो यज्ञ किए थे। वे भी चले गए।

04- राजा शिबि ने रथ में बैठ अकेले ही समस्त भूमंडल को जीत लिया और यज्ञ में सब कुछ दान कर दिया था। वे भी चले गए।

05- ऐश्वर्यवान शकुंतलानंदन भरत ने यमुना किनारे तीन सो, सरस्वती तट बीस, गंगा तटपर चौदह। इस प्रकार हजार अश्वमेध, सो राजसूय किए थे। महर्षि कण्व को हजार पद्म द्रव्य दिया था। वे भी चले गए।

06- महाराज भागीरथ को गंगा पिता मानती थी। गोद में बिठाने के कारण उर्वशी नाम रखा। उन्होंने यज्ञ में सुवर्ण से शोभायमान दस लाख कन्याएं दक्षिणा में दी। वह कन्याओं का समूह चार चार घोड़े वाले रथों में था। जिनके पीछे सो हाथी। एक हाथी के पीछे सो गौ। प्रत्येक गौ के पीछे एक हजार भेड़, बकरी दान की। वे भी चले गए।

07- राजा दिलीप से उनके पुरोहित ने हजार हाथियों की दक्षिणा ली थी। यज्ञ में सुवर्ण के खंबे गाड़े गए थे। यज्ञ में विश्वावसु गान और गंधर्व नृत्य करते थे। वे भी।

08- युवनाश्व के पुत्र मांधाता ने एक ही दिन में सारी पृथ्वी को जीता था। सो अश्वमेध, सो राजसूय किए। दस योजन लंबा एक योजन चौड़ा स्वर्ण मत्स्य दक्षिणा में दिया था। वे भी।

09- नहुष पुत्र ययाति जहां बैठते वहां से युगकीलक (शम्यापात) फैंकते। जितनी दूर कीलक गिरता, वहीं वेदी बनाते। सो प्रधान, सो वाजपेई यज्ञ कर सुवर्ण के तीन पर्वत ब्राह्मणों को दान किए। वे भी।

10- नाभाग पुत्र अंबरीश ने दस लाख राजाओं को ब्राह्मणों की सेवा में नियुक्त किया था। वे राजा भी दक्षिणा में दे दिए। वे भी।

कौशल्या,

11- राजा शशबिंदु के दस लाख पुत्र थे। एक एक पुत्र को सो सो कन्याएं ब्याही थी। जिनके पीछे सो सो हाथी। एक हाथी के पीछे सात सात रथ। एक रथ के पीछे सुवर्ण शोभित सो सो घोड़े। प्रत्येक घोड़े के पीछे सो सो गौ। एक गौ के पीछे सो भेड़ और बकरा दायज में आए। उन्होंने सब यज्ञ में दान कर दिया। वे भी गए।

12- राजा अमूर्तर्या के पुत्र गय ने सो वर्ष यज्ञ से बची वस्तु का भोजन किया। यज्ञ अग्नि प्रसन्न हुए। उनसे दान में धन खर्च न हो यह वर मांगा।उन्होंने दर्श, पौर्णमास, चातुर्मास, अश्वमेध यज्ञ किए। स्वाहा से देवगण, स्वधा से पितृ तृप्त हुए। सुवर्णमई पृथ्वी ब्राह्मणों को दान दी। गंगा की बालू के कण जितनी गौ दान की। वे भी।

13- राजा सगर भी।

14- वेन के पुत्र पृथु को दंडकवन में राजतिलक किया। वे क्षत (नाश) से त्राण (रक्षा) करते इसी से क्षत्रिय शब्द चरितार्थ किया। पृथ्वी बिना कर्षण के धान्य उत्पन्न करती थी। प्रत्येक पत्र में मधु उत्पन्न होता था। प्रजा निरोग, निर्भय। राजा जल में चलते तो नदी, समुद्र स्थिर होजाते।उन्होंने अश्वमेध यज्ञ में सुवर्ण के इक्कीस पर्वत दान किए। वे भी चले गए तो आप महाराज दशरथ का व्रथा शोक करती हो।

इतना समझाकर, तेल भरी नाव में राजा का शव रखा। धावकों को बुलाया और भरत को शीघ्र आने का संदेश दिया। दूतों को समझाया कि राजा की मृत्यु की सूचना नहीं देनी है। बस इतना कहना है कि गुरुजी ने दोनों भाइयों को शीघ्र बुलाया है।

*वशिष्ठजी ने पांच अश्वसवार दूतों सिद्धार्थ, विजय, जयंत, अशोक, नंदन को भरतजी के पास जाकर उन्हें अयोध्या के दुखद समाचार कहे बिना अयोध्या शीघ्र आने का संदेश पहुंचाया।

**- वा.रा.अ.68**

श्रेष्ठ घोड़ों को भी लज्जित करते धावक दौड़े।

जब से अवध में अनर्थ होने लगा तभी से भरत को कुशकुन होने लगे थे। रात भयानक स्वप्न देखा। उठकर कटु कल्पना करने लगे। प्रातः ब्रह्मभोज, दान, शिव अभिषेक कर माता पिता भाइयों की कुशल कामना करते हैं। चतुर्दशी को धावक पहुंचे। मामा से तुरत विदा ले, पवन वेगवान अश्वों पर सवार हो, वन, नदी, पर्वत लांघते, मानो उड़कर पहुंच जाए, ऐसे चले। एक निमेष भी एक वर्ष सा लग रहा था। यही सोचते सोचते नगर के निकट आए।

प्रवेश किया तो अपशकुन हुए। कौवा, खर, श्रगाल प्रतिकूल बोलते हैं। नदी, वन, बाग शोभाहीन हैं। नगर भयावना लगा। पशु-पक्षी, नर-नारियों का हाल देखा नहीं जाता। जो मिलता बस जुहार करता। हाट बाट देखे नहीं जाते।

*भरत को आया देख कर कैकेई स्वर्ण सिंहासन से उछलकर खड़ी हुई।

**- वा.रा.अ.72**

बेटे का आना जान कैकई जो सूर्यकुल कमल को नष्ट करने वाली है, हर्षित होकर, आरती ले, द्वार पर मिल, भवन ले आई। कैकई ऐसी प्रसन्न हे जैसे किरातिनी आग लगाकर होती है। पुत्र को चिंतित देख अपने नैहर का हाल पूछा-

**सकल कुशल कहि भरत सुनाई, पूछी निज कुल की कुशलाई।**

पूछा पिताजी, माताएं और श्रीराम, सीताजी, लक्ष्मण कहां है। नेत्रों में जल भरकर पापिनी भरत के हृदय में शूल से वचन बोली। बेटा, मेने मंथरा के सहयोग से बात बना ली थी पर विधाता ने कुछ काम बिगाड़ दिया। महाराज देवलोक सिधार गए।

यह सुनते ही भरत, सिंह की गर्जना से गज की भांति व्याकुल हुए। विषादवश तात तात कहते भूमि पर गिरे। बोले, चलते समय दर्शन भी नहीं कर पाया। आपने मुझे रामजी को सौंपा भी नहीं।

*महाराज की मृत्यु के समाचार सुन धरती पर लौटते भरत को केकई ने महाराज कहकर उठाया।

**- वा.रा.अ.72**

फिर धैर्य धर उठे। पूछा माता, पिताजी की मृत्यु का कारण तो कहो। जैसे घाव पर विष लगाती सी प्रसन्न होकर आदि से अंत तक अपनी कुटिल करनी सुना दी-

**भरतहिं बिसरेउ पितु मरन, सुनत राम वन गौन।**
**हेतु अपनपउ जानि जिय, थकित रहे धरि मौन।।**

जले पर नमक की भांति समझाने लगी। बेटा, राजा ने बहुत यश और भोग भोगा है। उनका शौच मत करो। उन्होंने जन्म का फल पा लिया। अब समाज सहित पुर का राज्य करो। पके घाव पर अंगार रख दिया हो ऐसे भरत सहमें। उसांस लेकर बोले, पापिनी, तूने कुल का नाश कर दिया। (महाराज का मरण, राम वनवास, छोटे को कुल की परंपरा के विरुद्ध राज्य)। जो तुम्हारे मन में ऐसी कुरुचि थी तो मुझे जन्मते ही मार क्यों नहीं दिया -

**पेड़ काटि ते पल्लव सींचा, मीन जियन हित बारि उलीचा।**
**(पेड़ दशरथ, बारि रघुवीर)-**
**हंस वंश दशरथ जनक, राम लषण से भाय।**
**जननी तू जननी भई, विधि सन कछु न बसाय।।**

तू अपनी मां जैसी हुई।

(कैकेई के पिता को एक ऋषि ने सब जीवों की बोली समझने का वर दिया। कहा कि यह भेद किसी को बताया तो मृत्यु होगी। एक दिन एक चींटी की बात पर राजा हंसे। रानी ने हंसने का कारण पूछा। बोले बताने पर प्राणों का संकट है। बोली जो हो सो हो पर बताओ तो। महाराज ने घर से बाहर निकाल दिया।)

भरतजी ने कहा -

**न त्वमश्वपतेः कन्या धर्मराजस्य धीमतः।**
**राक्षसी तत्र जातासि कुलप्रध्वंसिनी पितुः।।**
**- वा.रा.अ.74.09**

ऐसी कुमति जागते ही तुम्हारा हृदय खंड खंड नहीं होगया -

**वर मांगत उर भई न पीरा, जरि न जीह मुंह परे न कीरा।**

राजा ने तुम्हारा विश्वास कैसे कर लिया। शायद मरण समय विधाता ने मति हर ली हो। ऐसा कोन जीव जंतु है जिसे राम प्राणप्रिय नहीं। मनुष्यों की तो बात ही क्या। ऐसे राम भी तेरे शत्रु हुए तो बता तू कौन है। जो हो सो हो। अब मुंह काला कर। मेरी आंखों से दूर होजा। विधाता ने मुझे, तेरे राम विरोधी हृदय से उत्पन्न किया है। मैं ही पापी हूं। तुझे क्या दोष दूं।

शत्रुघ्न का शरीर माता की कुटिलता पर जलने लगा। पर क्या करे। तभी श्रृंगार करी कुबड़ी को देखा। क्रोध में कूबड़ पर लात मारी। जिससे वह मुंह के बल जा गिरी। कूबड़, दांत, कपाल टूट गए। बोली, अरे भला करते बुरा फल पाया। नखशिख खोटी जान केश पकड़ घसीटने लगे। दया कर भरत ने छुड़ाया। दोनो कौशल्याजी के पास गए। देखा –

**मलिन वसन विवरन विकल, कृष शरीर दुख भार।**
**कनक कल्प बर बेलि वन, मानहु हनी तुषार।।**
**भरतहिं देखि मातु उठि धाई,मूर्छित अवनि परी झईं आई।**
**(झईं- चक्कर)**

भरत उनके चरणों में गिरे।
बोले माता, पिताजी और दोनो भाई कहां हैं। उन्हें दिखादो -

**कैकई कत जनमी जग मांझा, जो जनमी भई काहे न बांझा।**

जिसने मुझ कुल कलंक, अपयश भाजक और प्रियजन द्रोही को उत्पन्न किया। त्रिलोकी में मेरे समान कौन अभागी है जिसने आपकी यह दशा की है। पिता सुरपुर, रामजी वन में। इन सब अनर्थ का कारण बस मैं हूं।

माता ने उठकर भरत को हृदय से लगाया।

मानो रामजी ही लोट आए। शत्रुघ्न से मिली। भरत को गोदी में बिठाकर आंसू पोंछकर बोली, बेटा कुसमय जानकर धीरज धरो। शोक त्यागो। काल और कर्म की गति अमित है। किसी को दोष मत दो। मुझसे ही विधाता रूष्ट हुआ है।

बताने लगी। रघुनाथ ने पिता की आज्ञा से राजसी वस्त्र तज, वल्कल धारण किए। मन में कुछ हर्ष विषाद नहीं था। लक्ष्मण और जानकी के साथ, सब को समझाकर, वन को चले गए। पर प्राण नहिं गए। जीने मरने का फल महाराज ने पा लिया।

कौशल्याजी के वचन सुन पूरा रनिवास, दास, दासी अत्यंत व्याकुल हो रोने लगे। राजमहल जैसे शोक का भवन होगया। दोनो भाई विलाप करने लगे। कौशल्याजी ने हृदय से लगाया। ज्ञान युक्त वचनों से समझाया।

भरतजी ने भी सबको बोध दिया। छल रहित, पवित्र वाणी से, हाथ जोड़कर बोले, मां-

**मात पिता गुरुदेव पत्नि, शिशु मित्र नृपति के वध ने में।**
**भूसुर पुर, पुरपशु के संग में, ग्रामों देवालय दह ने में।।**
**जो चोरी जूठ सुरा पीने, हत्या ब्राह्मण की करने में।**
**वह सभी पाप मुझपर आवे, यदि हो मेरा मत इस सब में।।**
**- 'कमल'**

यदि मेरा मत हो तो मुझे भूत उपासकों की गति मिले। वेद विक्रेता, चुगलखोर, पराए पाप के प्रचारक, वेद निंदक, लोभी, व्यभिचारी, परधन, परनारी को ताकने वालों की गति पाऊं जो इसमें मेरा मत हो। जिन्हें साधुओं का संग प्यारा नहीं। जो परमार्थ पथ से विमुख हैं। जिन्हें हरि हर का यश नहीं भाता। वेद तज उल्टे मार्ग चलते हैं। जग को ठगते हैं। उनकी गति, शंकरजी मुझे दें यदि रामजी के वनवास में मेरा मत हो। मां, मैं मन, वचन, कर्म से रघुनाथजी का दास हूं।

इतना कह, रोने लगे। मां ने हृदय से लगाकर कहा, बेटा, तुम रामजी को अत्यंत प्रिय हो। प्राणों से प्यारे हो। रामजी के प्राणों से तुम्हारे प्राण हैं -

**विधु विष चुवै स्रवै हिम आगी, होहिं वारिचर वारि बिरागी।**
**(वारिचर- जल जंतु)**
**भए ज्ञान बरु मिटइ न मोहू, तुम रामहिं प्रतिकूल न होहू।**
**(मोहू- अज्ञान)**

यदि राम वन गमन में तुम्हारा कोई मत बताता है तो उसे सुगति न मिले। ऐसा कह हृदय से लगाया। नेत्रों से जल और स्तनों से दूध बहने लगा। विलाप करते रात बीत गई।

मूल रामायण 10-

करि नृप क्रिया संग पुरवासी,भरत गए जहं प्रभु सुख रासी।

प्रातः वामदेव, वशिष्ठजी ने आकर भरत को उपदेश दिया। उनके निर्देश पर नृपतन को श्रान करवाया। अद्भुत विमान बनवाया। भरत ने चरण पकड़, माताओं को सती होने से रोका। चंदन अगर से सरयू तटपर चिता बनाई। दाह क्रिया कर, श्रान किया। तिलांजलि दी। शुक्ल पक्ष एकादशी के दिन दशगात्र विधान किया। गहने, वस्त्र, धन, धरणी, सिंहासन का दान दिया।

राजा दशरथ के तीन पत्नियों के अलावा 60000 रानियां और थी जो सती हुई।

-कम्ब रामायण

पिता के लिए जो भरत ने किया उसका वर्णन नहिं किया जा सकता। फिर शुभ दिन देख गुरु वशिष्ठ पधारे। मंत्री सहित महाजनों को भी राजसभा में बुलाया। दोनो भाइयों को बुलाया।नीति धर्म के वचन कहे। कैकई की करनी, राजा की सत्यशीलता, देहत्याग, प्रेम का वर्णन किया। रामजी के गुण, स्नेह, शील, त्याग का वर्णन करते हुए नेत्रों में जल भर आया। शोक मग्न हो बोले -

**सुनहुं भरत भावी प्रबल, बिलखि कहेउ मुनि नाथ।**
**हानि लाभ जीवन मरण, यश अपयश विधि हाथ।।**

अवधवासियों की हानि। देवों, वनवासियों का लाभ। विभीषण, सुग्रीव को जीवन। रावणादि का मरण। भरत, लक्ष्मण को यश। कैकई और मंथरा को अपयश। यह बात बिलख या विशेष विचार कर कही। ऐसा विचार कर किसे दोष दें। किस पर रोष करें। महाराज शोच करने योग्य नहीं हैं। शोच किसका करना चाहिए -

**शोचिय विप्र जो वेद विहीना, तजि निज धर्म विषय लवलीना।**
**शोचिय नृपति जो नीति न जाना, जेहि न प्रजा प्रिय प्राण समाना।**

वह वैश्य शोचनीय है जो धनवंत होकर कृपण है। अतिथि और शिव भक्त नहीं है। ब्राह्मणों का अपमान करने वाला, मानी, ज्ञान गुमानी शोचनीय है। पति के विपरीत आचरण वाली, कुटिल, कलहप्रिय नारी, अपना ब्रह्मचर्य छोड़ गुरु आज्ञा न मानने वाला बटुक, धर्म पथ को त्यागने वाला गृहस्थ, पाखंडी सन्यासी जिसे ज्ञान वैराग्य न हो। तप तज भोगरत वानप्रस्थ, अपना ही पोषक, लोभी, कामी, देव, वेद निंदक शोचनीय है -

**शोचनीय सब ही विधि सोई, जो न छांडि छल हरिजन होई।**

महाराज सोचने योग्य नहीं। जिनका चौदह भुवन में प्रभाव प्रकट है -

**भयउ न अहै न अब होनिहारा, भूप भरत जस पिता तुम्हारा।**

सब उनका गुणगान करते हैं। आपसे पुत्र हैं, फिर क्या प्रशंसा करें। शोक तजो। राजाज्ञा का पालन करो। पिता का वचन सत्य करो। जिनने वचन के निमित्त राम और प्राणों का त्याग कर दिया। इसलिए राजा के वचनों का पालन करने में ही भलाई है। परशुराम, पुरु का स्मरण करो। बेटा -

**अनुचित उचित विचार तजि, जे पालहिं पितु बैन।**
**ते भाजन सुख सुयश के, बसहिं अमरपुर ऐन।।**

अतः राजा का वचन पालन कीजिए। राजा भी प्रसन्न होंगे। वेद कहता है जिसे पिता राज्य दे वही राजा। मेरा वचन मान राज्य करो। रामजी, जानकी सुनकर सुख पाएंगे। कौशल्यादि माताओं को भी भला लगेगा। राम के आने पर या तो राज्य सौंप देना या स्वयं ही करना।

मंत्रियों ने भी गुरु वाक्यों का अनुमोदन किया। कौशल्याजी ने कहा बेटा। तुम सभी के अवलंब हो। गुरुजी, मंत्री का कहा मानो। कालगति जान, प्रजा का पालन करो।

गुरु, मंत्री और माता की स्नेहमई वाणी सुन, भरत और व्याकुल हुए। नेत्रों से जल बरसने लगा। हाथ जोड़ अमृतमई वाणी बोले, आपके उपदेश का अवश्य पालन करना चाहिए। गुरु, माता, पिता, स्वामी की वाणी अनुचित उचित विचार तज पालन करना ही धर्म है। किंतु मुझे संतोष नहीं होता। अब कुछ मेरी विनय भी सुनें।

दुखी के दोषों पर साधु ध्यान नहीं देते -

**पितु सुरपुर सियराम वन, करन कहहुं मोहि राज।**
**यहिते जानहुं मोर हित, कै आपन बड़ काज।।**

मेरा हित रामजी की सेवा में है जो मां की कुटिलता ने हर लिया। उनके चरण दर्शन बिना राज्य किस गिनती में है -

**बादि वसन बिनु भूषण भारु, बादि बिरति बिनु ब्रह्म विचारु।**
**सरुज शरीर बादि बहु भोगा, बिनु हरि भगति बादि जप योगा।**

रघुनाथजी के बिना मेरा सबकुछ व्यर्थ है। मुझे स्नेहवश आपलोग राजा बनाकर, अपना हित देखते हो पर मेरा हित इसमें है कि में रामजी के पास जाऊं। मैं -

**कैकेई सुत कुटिल मति, रामविमुख गतलाज।**
**तुम चाहत सुख मोहवश, मोहिते अधम के राज।।**

राजा धर्मशील होना चाहिए -

**मोहि राज्य हठि दैहहु जबही, रसा रसातल जाइहि तबही।**

मुझ पापी के कारण रामजी वन में हैं। उनके वियोग में महाराज स्वर्गवासी हुए और मैं मूर्ख जो सब अनर्थों की जड़ हूं, वह सभा में वज्र सा बैठा है। फटा नहीं। आखिर कैकई से जो जन्मा हूं। अभी प्राण नहीं निकले तो आगे इन्हें और भी बहुत कुछ देखना है। कैकई ने

अपनी कुटिलता से वैधव्य पाया। मुझे राज्य अधिकारी बनाकर दुख दिया। अब आप लोग भी टीका करना चाहते हो। उसके उदर से जन्म लेने से यह कलंक भी लगेगा ही। और क्या बचा है -

**ग्रह गृहीत पुनि वातवश, तेहि पुनि बीछी मार।**
**ताहि पियायी वारूणी, कहहु कौन उपचार।।**

(वात- सन्निपात, बीछी- बिच्छू)

(कैकई से जन्म ग्रह पीड़ा। पिता मरण सन्निपात। राम वनवास बिच्छू का काटना और अब राज्य रूपी वारूणी और देदो तो मेरे बचने का कोई उपाय न रहे।)

आप राजतिलक करना चाहते हो ओर मैं अस्वीकार कर रहा हूं। इसमें कोई तो कारण होगा। करो। जिसको जो अच्छा लगे करो। किस किस को उत्तर दूं। रामजी की मां अत्यंत सहज, स्नेहमई हैं। गुरु ज्ञान के सागर हैं। जब वे भी राज्य देना चाहते हैं तो लगता है, विधाता विमुख होता है तो भले भी ऐसी वाणी बोलने लगते हैं। रामजी जानकीजी को छोड़ कोई नहीं कहेगा कि इसमें मेरा मत नहीं पर कीच वहीं होता है जहां पानी होता है।

मुझे नीच कहाने, परलोक बिगड़ने का सोच नहीं। यही सोच है कि वे मेरे कारण वन में हैं-

जीवन लाहु लषण भल पावा,सब तजि रामचरण मन लावा।

अब तो उनके चरण देखे बिना जी की जलन नहीं जाएगी। प्रातः उनके दर्शन को जाऊंगा।यद्यपि ये उपाधियां मेरे कारण हुई है फिर भी वे करुणासागर हैं -

अरिहुक अनभल कीन्ह न रामा,मैं शिशु सेवक यद्यपि वामा।

आपभी आशीर्वाद दो कि मेरी विनय सुन रामजी अयोध्या लोट आवे -

**यद्यपि जन्म कुमातु ते, मैं शठ सदा सदोश।**
**आपन जानि न त्यागि हैं, मोहिं रघुवीर भरोस।।**

रामजी के पास जाना है। इस संजीवन शब्द से जैसे सब जीवित हुए। सब को अच्छा लगा। सब सराहने लगे। भरत, राम की प्रेममूर्ति हैं। जो आपको दोषी माने वह करोड़ों जन्म नर्कवासी होगा -

**अहि अघ अवगुण मणि नहिं गहहिं, हरै गरल दुख दारिद दहई।**

अवश्य चलेंगे, सब चलेंगे। अरे शोक सागर में डूबने वालों को आपने किनारा दिया है। इस निर्णय से भरतजी सबको और प्यारे होगये।

मुनि और भरत को नमस्कार कर प्रशंसा करते घर गए। चलने की तैयारी करने लगे। अब तो-

**जेहि राखहिं घर रहु रखवारी, सो जानई जनु गर्दन मारी।**

कोई बोला। किसी से घर रहने का मत कहो। अरे सीता रामजी किसे प्रिय नहीं-

**जरउ सो संपति सदन सुख, सुहृद मातु पितु भाय।**
**सम्मुख होत जो राम पद, करइ न सहज सहाय।।**

घर घर वाहन सजने लगे। प्रातः जाना जो है।भरत ने सोचा -

**संपति सब रघुपति की आही, जो बिनु जतन चलौं तजि ताही।**
**इसे सुरक्षित किए बिना चलने में भलाई नही।**

विश्वस्त सेवकों को बुलाकर समझाया कौशल्याजी के पास गए। सभी माताओं के लिए सुखद पालकी तैयार करवाई। चकवा चकवी की भांति अवधवासियों ने जागकर रात बिताई। मंत्रियों से राजतिलक की सामग्री रखने को कहा। गुरुजी वन में ही तिलक करेंगे। अरुंधति संग वशिष्ठजी प्रथम रथपर चढ़े। फिर विप्रवृंद, नागरिकों ने भी विविध वाहनों से चित्रकूट की ओर प्रयाण किया। सुंदर पालकियों पर सभी माताओं को बिठा, नगर को सुरक्षित कर, रामजी का स्मरण कर, भरत चले।

राम-सीता को वन में जान, भरत पैदल चले। लोगों ने देखा और सब पैदल चलने लगे। कौशल्याजी यह देख, पालकी रुकवाकर भरत से बोली, बेटा, रथपर चढ़ो। सब पैदल जाते हैं।आज्ञा मान रथपर चढ़े। प्रथम तमसा दूसरे दिन गौमती तटपर वास किया। एक बार रात्रि में ही दूध, फलाहार करते।

(तमसा घाघरा की शाखा है। गौमती पीलीभीत के निकट एक झील से निकलकर गंगा में मिलती है।)

श्रृंगवेरपुर पहुंचे तो समाचार पाकर निषाद विषाद ग्रस्त हुआ। भरत वन क्यों जाते हैं? कटक साथ क्यों? कोई तो कुटिलता है। सोचा होगा राम को मारकर निष्कंटक राज्य करूंगा। यह न सोचा कि पहले कलंक और अब जीवन की हानि होगी। सुर और असुर भी रामजी को नहीं हरा सकते।

सोचा - का आचरज भरत अस करहीं,नहिं विष बैलि अमिय फल फरहीं।

(अमिय- अमृत)

है तो कैकई की औलाद। सब स्वजनों को बुलाया। नावों को डूबोकर, घाट रोकने को कहा। युद्ध की तैयारी करो। भरत को गंगापार नहीं जाने देना है। गंगा का तट, रामकाज, युद्ध में मृत्यु, भरत से युद्ध, भाग्य से मिलता है। जिसका साधु समाज में लेखा नहीं, उसका जीवन व्यर्थ है। सब सहर्ष तैयार होगए। अस्त्र-शस्त्र ले जीव को प्रणाम कर चले। निषाद बोला भाइयों धोखा मत देना। बोले पीठ नहीं दिखाएंगे।

टोली तैयार देख, वाद्य बजाने को कहा। तभी छींक हुई। शकुन जान प्रसन्न हुए। एक बूढ़ा बोला। भरत से मिलो। लड़ाई नहीं होगी। शकुन कहता है, भरत रामजी को मनाने जारहा है। -

**सुनि गुह कहई नीक कह बूढ़ा, सहसा करि पछिताहिं विमूढ़ा।**

पहले भेद लेते हैं फिर जो उचित होगा सो करेंगे-

**लखन सनेह सुभाव सुहाये, बैर प्रीति नहिं दुरत दुराये।**

भेंट तैयार की।

(कंद मूल फल- मित्रता, सत्वगुण/ खग-मृग उदासीनता रजोगुण/ मीन से शत्रुता की परीक्षा तमोगुण)

शुभ शकुन हुए। दूर से मुनि को प्रणाम किया ।मुनि ने राम का मित्र कह, परिचय करवाया।रामजी का मित्र जान, घोड़े से उतर, गले से लगाया। मानो लक्ष्मण से मिले। देवता धन्य धन्य बोल उठे। वाह क्या प्रेम की रीति है। यह राम से भेंट का प्रताप है -

**राम राम कहि जे जमुहाहीं, तिनहिं न पाप पुंज समुहाहीं।**
**उलटा नाम जपत जग जाना, वाल्मीकि भये ब्रह्म समाना।**

भरत ने कुशल पूछी। निषाद देह सुधि भूल गया। एक टक देखता रह गया। विदेह हो गया।

बोला, मेरी दशा देखकर भी जो रामजी को न भजे उसे विधाता द्वारा वंचित किया जानो।

मुझ जैसे को जब से रामजी ने अपनाया तभी से संसार का भूषण होगया। शत्रुघ्नजी बार बार मिले। सब रानियों से निषादराज मिले। अवधवासियों ने भाग्य की सराहना की। सबको अपने स्थान पर लेगया।

स्वजनों को वास बनाने का संकेत किया। भरत, निषाद के कंधेपर हाथ धरे, ऐसे लग रहे थे, मानो विनय और अनुराग ने देह धरी हो।

गंगा के रामघांट को प्रणाम किया। नगर के लोगों ने प्रणाम कर, रामजीके चरणों में प्रीति मांगी। भरतजी ने मांगा -

जोरि पाणि मांगहिं वर एहू,सीय राम पद सहज सनेहू।

सब के श्नान के पश्चात सबको डेरा करवाया। भरतजी ने सबकी खबर ली। गुरु सेवा के बाद मां के पास गए। सबकी चरण सेवा की। फिर शत्रुघ्न को सेवा सौंपी। निषाद के हाथ में हाथ देते ही नेत्रों में जल भर आया। पूछा, वह स्थान दिखाओ जहां रात में सीता-रामजी सोए थे। शीशम को देख दंड प्रणाम किया। साथरी की परिक्रमा की। चरण रज नेत्रों से लगाई। क्या कहने। दो साड़ी के सोने के तार उठाकर सिर पर लगाए। पिता जनक, श्वसुर अवध भुआल, पति रघुनाथ -

"जो बड़ होत सो राम बढ़ाई।"

उनकी यह दशा देखकर भी, मेरा पाषाण हृदय विदीर्ण नहीं होता-

लालन योग लषण लघु लोने,भए न भाइ अस अहहिं न होने।

(लोने- सुख भोगने वाले)-

वैरिउ राम बढ़ाई करहीं,बोलनि मिलनि विनय मन हरहीं।

वे तीनों वन में साथरी पर सोते हैं। विधाता की गति अकथनीय है। बलवान है। -

**न नूनं देवतं किंचित् कालेन बलवत्तरम्।**
**यत्र दाशरथी रामाे भूमावेवमशेत सह्।।**
**- वा.रा.अ.88.11**

माता पिता के अत्यंत प्रिय रामजी, अब कंद, मूल, फल खाकर, वन में वास करते हैं। इसकी हेतु कैकई को धिक्कार है। जिसके हेतु यह किया गया उस कुल कलंक, स्वामीद्रोही, मुझे धिक्कार है।

निषाद ने समझाया। आप रामजी को प्यारे हो। दोष विधाता का है जिसने माता को बौरा दिया। उस रात रामजी आपके शील और स्नेह की ही बात करते रहे। अंत में परिणाम भला ही होगा। चलकर विश्राम कीजिए।

नागरिक आए। परिक्रमा की। कैकई और विधाता को दोष देने लगे। निषाद की प्रशंसा की। रातभर जागे। सुबह अच्छी नाव पर गुरु, नई नाव पर माताओं को चढ़ा, चार घड़ी में सब पार होगये।

*वृहस्पतिजी के अनुसार पंद्रह मुहूर्त (दो घड़ी 'दण्ड' का एक मुहूर्त) होते हैं उनके नाम हैं - रौद्र, सार्प, मैत्र, पैत्र, वासव, आप्य, वैश्व, ब्राह्म, प्राज, ईश, ऐंद्र, ऐंद्राग्न, नैऋत, वारुणार्यमण तथा भगी। भरत की सेना ने गंगा पार कर मैत्र नामक मुहूर्त में प्रयाग वन की ओर प्रस्थान किया।

**- वा.रा.अ.89.21**

भरत पैदल ही जाते हैं। सेवक अश्वों को साथ लेकर चले। कई बार कहा, नाथ, बैठ जाइए। बोले, रामजी पैदल गए हैं। हमें रथ, हाथी, घोड़े शोभा नहीं देते।–

**शिर भर जाउं उचित अस मोरा, सबते सेवक धरमु कठोरा।**

सेवकों को ग्लानि हुई। तीसरे पहर प्रयाग पहुंचे। दर्शन कर रामसीता-रामसीता जपने लगे-

झलका झलकत पांयन कैसे,पंकज कोश ओस कण जैसे।

(झलका- छाले, पंकज कोश- कमल कली)

आज फिर भरत पैदल आए हैं। यह सुन सब दुखी हुए। त्रिवेणी आए। संगम पर स्नान किया ।सब की खबर ली। दान दिया-

**देखत श्यामल धवल हिलोरे, पुलक शरीर भरत कर जोरे।**
**तीर्थराज सब कामनाओं का देने वाला है। जगत में प्रभाव प्रकट है।**
**अतः -मांगो भीख त्यागि निज धरमू, आरत काह न करहिं कुकरमू।**
**मांगा-**
**अर्थ न धर्म न कामरुचि, गति न चहौं निर्वान।**
**जन्म जन्म रति राम पद, यह वरदान न आन।।**

रामजी भी कुटिल कहे। गुरु, स्वामी का द्रोही कहे पर आपके अनुग्रह से-

**सीताराम चरण रति मोरे, अनुदिन बढै अनुग्रह तोरे।**

ज्यों चातक का मेघों से प्रेम है उसी से जग में भलाई है। ज्यों अग्नि में दाह होने से सोने की बान चढ़ती है। उसी भांति कितना भी क्लेश हो, स्वामी श्रीराम के चरणों में मन लगाने से मेरी शोभा हो। यह सुन त्रिवेणी से मंगलदायक वाणी हुई-

**तात भरत तुम सब विधि साधू, राम चरण अनुराग अगाधू।**

ग्लानि मत करो। आपके समान रामजी को कोई और प्रिय नहीं है। यह सुन भरत पुलकित हुए। देवों ने पुष्पवृष्टि की। तीर्थराज वासियों ने भरत के प्रेम की प्रशंसा की।

भरत, भरद्वाज मुनि के आश्रम पहुंचे। दंड प्रणाम किया। मुनि ने अपने भाग्य सराहे। दौड़कर उठाया। हृदय से लगा आशीर्वाद दिए। आसन दिया। भरत सकुचाकर बैठे। मुनि कुछ पूछेंगे। मुनि बोले भरत, विधाता के कर्तव्य पर कुछ नहीं चलता। कैकई का भी दोष (लोक मत) नहीं। शारदा ने मति बिगाड़ी थी। गिरा का भी दोष (वेद मत) नहीं क्योंकि यह सब प्रभु की इच्छा से हुआ। आपका यश लोक और वेद दोनों में बढ़ाई पावेगा। पिता जिसे राज्य दे सो पावे पर राम का वनवास लेकर, रानी अनर्थ का मूल हुई। आपका अपराध बताने वाले नीच, निर्बुद्धि, असाधु होंगे। आप राज्य करते तो भी रामजी प्रसन्न होते। यह भी आपने भला किया। आपसा कौन बड़भागी होगा। क्यों न हो। दशरथ के पुत्र, राम के भाई जो हो। राम, लक्ष्मण, सीता की सारी रात तुम्हारी प्रशंसा में बीती-

जाना मर्म नहात प्रयागा,मगन हाेहि तुम्हरे अनुरागा।

श्नान करते समय तुम्हारा स्मरण कर मगन होजाते। जब संकल्प पढ़ा 'जंबू द्वीपे भरत खंडे' तब तुम्हारा नाम लेते ही स्मरण कर, अनुराग में मग्न होगये-

तुमपर अस सनेह रघुवर के,सुख जीवन जग जस जड़ नर के।

जैसा मूर्खों को सुख से जीने पर स्नेह होता है।

रामजी, प्रणाम करने वाले के भी कुटुंब का पालन करते हैं -

तुम तो भरत मोर मत ऐहू,धरे देह जनु राम सनेहू।

आपने इस घटना को कलंक माना। यह हमारे

लिए उपदेश हुआ। रामभक्ति का श्रीगणेश आपने ही किया है।-

तुम कहं भरत कलंक यह,हम सब कहं उपदेश।रामभक्ति रस सिद्धि हित,भा यह समय गणेश।। तुम्हारा यश त्रिलोकी में अमिट रहेगा। रामजी का प्रताप रवि, आपके यश रूपी चंद्रमा की छवि का हरण नहीं करेगा। कैकई का कर्म भी राहू बन नहीं ग्रसेगा। आपने सब को रामभक्ति से परिपूर्ण करदिया। आपका कुल वंदनीय है।भागीरथ गंगा लाए। दशरथ तो रामजी को ही ले आए। आपने रामप्रेम को शाश्वत करदिया। डरो मत। पारस पाकर दरिद्रता का डर मतकरो।-

सुनहुं भरत हम झूठ न कहहीं,उदासीन तापस वन रहहीं।

(उदासीन- जिसका कोई मित्र या शत्रु न हो)-

**सब साधन कर सुफल सुहावा, लखन राम सिय दरशन पावा।**
**तेहि फल कर फल दरश तुम्हारा, सहित प्रयाग सुभाग हमारा।**

आप धन्य हो। ऐसा कह मुनि मग्न हुए। सभी सभासद प्रसन्न हुए। देवों ने फूल बरसाए। आकाश और प्रयाग में धन्य धन्य की धुन व्याप गई। गदगद कंठ हो भरत बोले। मुझे न माता के करतब न कायर समझे जाने का, न परलोक का, न पिता के मरण का (उन्होंने राम विरह में तन तज दिया) शोच है। बस रामजी, लक्ष्मण, सीताजी नंगे पैर, मुनि वेश में, वनवन फिरते हैं। मृगचर्म, फलाहार, कुश का बिछौना, पृथ्वी पर शयन, वृक्षों के नीचे निवास। सर्दी, गर्मी, बरसात सहते हैं। इन सब का कारण मैं हूं-

**यहि दुख दाह दहै नित छाती, भूख न वासर नींद न राती।**
**(वासर- दिन)-**
**यहि कुरोग कर औषधि नाहीं, शोधेउं सकल विश्व मन माहीं।**
**(मन माहीं- मन में सोध लिया।)**

माता की कुबुद्धी ने मुझे राज्य देने के विचार को बसूला बनाकर, हमारे क्लेश रूपी कुमंत्र को, मंथरा के वचनों से गढ़, राम वन गमन कुमत्र पढ़, अवध में गाड़दिया। मुझे बारहबाट का कर दिया।-

**मोहो, दैन्यम, भयम, ह्रासो, हानिरग्लानि, क्षुधा, तृषा।**
**मृत्युः, क्षोभो, वृथा, अकीर्तिर्वाटा ह्येते हि द्वादश।।**
**(दैन्यम- हीनता)-**
**मोह दीनता ह्रास भय, क्षुधा क्षोभ तृष हानि।**
**वृथा मृत्यु संग 'कमलजी', अपकीरति ओर ग्लानि।।**
**- 'कमल'**

रामजी के लोटने पर ही यह रोग मिटेगा और अवध बसेगी। मुनि ने समझाया। कंद, मूल, फल भेंट किए। प्रयाग में ब्राह्मण का अन्न कैसे पावें। बड़ा संकोच हुआ। बोले -

शिर धरि आयसु करिय तुम्हारा,परम धरम यह नाथ हमारा।

प्रसन्न होकर मुनि ने पवित्र सेवक बुलाकर पहुनाई हेतु कंद, मूल, फल लाने को कहा। वे जो आज्ञा कह चले। पर -

**मुनिहिं शोच पाहुन बड़ नेवता, तसि पूजा चाहिय जस देवता।**

मुनि के आवाहन पर रिद्धि सिद्धि आई। जिनसे राम विरही भरत की पहुनाई करके श्रम हरने को कहा। दोनो बोली-

**कहहि परस्पर सिधि समुदाई, अतुलित अतिथि राम लघु भाई।**

मुनि के चरणों की वंदना कर, ऐसे सुंदर घर बनाए जिनको देख विमान लज्जित होजायें।भोग सामग्री देख देवता अभिलाषा करते हैं। दासी-दास मन की इच्छा जानने वाले है। पल में, सुरपुर को स्वप्न में भी न मिले, एसी व्यवस्था करके, सबको रुचि अनुरूप वास करवाया। मुनि का प्रभाव देख, भरत को लोकपति के लोक भी छोटे लगे जिन्हें देख ज्ञानियों का ज्ञान और वैराग्य छूटा जाता था। आसन, शयन, वसन, वाटिका, विहंग, फूल, फल, ताल, अमृतोपम भोजन। सबके द्वारे कामधेनु और कल्पवृक्ष। वसंत छाया, त्रिविध पवन बहने लगी किंतु -

**संपति चकई भरत चक, मुनि आयसु खेलवार।**
**तेहि निशि आश्रम पींजरा, राखे भा भिनुसार।।**

संपति रूपी चकई से भरत रूपी चकवे का मिलन ही नहीं हुआ और भोर होगई। जागकर समाज सहित प्रयाग स्नान, मुनि वंदन कर, निषाद के कंधे पर हाथ रख, चित्रकूट को चले। कैसे चले -

**नहिं पदत्राण शीश नहिं छाया, प्रेम नेम व्रत धर्म अमाया।**
**(अमाया- माया रहित)**

सखा से सीता रामजी की यात्रा कहानी पूछते। रहने का स्थान देख स्नेह उमड़ता। यह दशा देख देवता फूल बरसाने लगे। पृथ्वी मंगलमूल, कोमल हुई। -

**किए जाहिं छाया जलद, सुखद बहै वर वात।**
**तस मग भयउ न रामकहं, जस भा भरतहिं जात।।**
**(वर वात- सुंदर पवन)**

राम को लौटाने का जबतक विचार था, देवता विघ्न कर रहेथे। छाले पड़गए। जब भरद्वाजजी से भक्ति मांगी तब सब सहायक होगए। मार्ग के लोग जो भवरोग से ग्रस्त होगये थे, भरत को देख परमपद के अधिकारी हुए।

यह भरत की बढ़ाई नहीं, रामनाम का प्रताप है-

**वारेक राम कहत जग जेऊ, होत तरण तारण नर तेऊ।**
**(वारेक- एक बार भी, तरण तारण- स्वयं तरता औरों को भी तार देताहै)**

क्यों न हो। भरत रामजी के स्नेही, छोटे भाई जो हैं। इंद्र डरा। गुरु से कुछ करने का आग्रह किया। ये रामजी को लौटा न लावे। भेंट ही न हो सो करो। बात बिगड़ने वाली है।

गुरु ने सोचा यह अंधा है। हजार नेत्रों के होते हुए भी अंधा है। बोले, देवराज, वृथा ईर्ष्या, छल, कपट छोड़ो –

**मायापति सेवक सन माया, करियत उलहि परै सुर राया।**
**(उलहि परै- उल्टी पड़ेगी)**

पहले रामजी का रुख देखकर किया था। अब कुचाल से हानि होगी।-

**सुन सुरेश रघुनाथ सुभाऊ, निज अपराध रिसाहिं न काऊ।**
**जो अपराध भगतकर करई, राम रोष पावक सो जरई।**

दुर्वासा, अंबरीश पर कोप करने के कारण यह महिमा भलीभांति जानते हैं।-

**भरत सरिस को राम सनेही, जग जपु राम राम जपु जेही।**
**सुनु सुरेश उपदेश हमारा, रामहि सेवक परम पियारा।**

**सवैया -**

**वेद विरुद्ध महा मुनि सिद्ध, सशोक सुरासुर लोक उजार्यो।**
**और कहा कहुं सीय हरी, तबहूं करुणानिधि कोप निवार्यो।।**
**सेवक छोभ ते छांडि छमा, तुलसी लख्यो राम सुभाव तुम्हार्यो।**
**तौलौं न दाबि दलो दशकंधर, जालौं विभीषण लात न मार्यो।।**

उनको सब समान है। न राग न द्वेष, न पाप न पुण्य। गुण दोष सब समान है किंतु उन्होंने कर्म प्रधान कर रखाहै-

कर्म प्रधान विश्व करि राखा,जो जस करई सो तस फल चाखा।

रामजी ने सखा और सेवक की रुचि सदा रखी है। अतः कुटिलाई त्यागो। भक्त परहित निरत होते हैं। भरत से मत डरो। अज्ञानी मत बनो। इंद्र को बोध हुआ और फूल बरसाने लगा।

भरत चले। वे जब भी रामनाम लेकर उसांस लेते हैं, चारों तरफ प्रेम उमड़ आता है। यमुनातट पहुंचे। राम वर्ण का नीर निरख व्याकुल हुए। रात्रि विश्राम कर, प्रातः नावों से एक ही बार में पारकर, श्रान करके चले। सबसे आगे श्रेष्ठ वाहन पर मुनिराज फिर समाज और सबसे पीछे, सादे वेश में भरत। ग्रामवासी दर्शनकर धन्यहुए। सोचा, ये राम लक्ष्मण जैसे ही हैं पर वैसा वेश और साथ में सीता नहीं है। दुखी भी हैं। उसकी सराहनाकर कहा -

**चलत पयादे खात फल, पिता दीन तजि राज।**
**जात मनावन रघुवरहिं, भरत सरिस को आज।।**

रामजी का भाई है। ऐसा ही होगा। ये कैकई से पैदा होने योग्य तो नहीं है। कोई कहती यह विधि की करनी है। कोई कहती यह हमारा सौभाग्य जो दर्शन पाए। कुदेश, कुगांव में बसे हैं पर पुण्य फले हैं जो इनका दर्शन पाया। मरुभूमि में कल्पतरू आगया।

भरत सब सुनते। तीर्थ में श्रान, आश्रम को प्रणाम करते। बटुकों, संन्यासियों से रामजी के जाने का पंथ पूछते हैं। सब को मंगल शकुन होने लगे। राम प्रेम में शिथिल हैं। पग डगमग डोल रहे हैं।

निषादराज ने दूर से चित्रकूट दिखाया जिसके निकट नदी के तटपर रामजी का वास है । सबने ऐसे प्रणाम किया मानों रामजी फिर आए। दशा अवर्णनीय है। चलते चले।

उधर।

सीताजी ने स्वप्न देखा कि भरत आए हैं। माताओं का वेश अमंगल है। यह सुन शोक हरने वाले रामजी शोकमग्न हुए। लक्ष्मण से कहा कि यह स्वप्न शुभ नहीं है। श्रानकर शिवजी को पूजा। मुनियों को प्रणामकर बैठे। उत्तर की ओर धूल उड़ती, पक्षियों को आश्रम की ओर उड़ता देख उठे।

तभी भीलों ने आकर भरत के आने का संदेश दिया। रामजी सोच में डूबे।

भरत क्यों आया है ?

मां ने भरत के राज्य को भंग तो नहीं कर दिया? किसी ने आक्रमण तो नहीं किया?

प्रजा ने विद्रोह तो नहीं कर दिया ?

तभी एक और बोला कि साथ में चतुरंगिणि सेना भी है।

रामजी को और चिंता हुई। इधर पिता का वचन उधर भाई का संकोच। वापिस जाने का आग्रह न करे। फिर सोचा भरत आज्ञाकारी, चतुर महात्मा है।

रामजी को व्याकुल देख लक्ष्मण बोले, नाथ मैं सेवक हूं। मेरी धृष्टता क्षमा करना। आपका हृदय सरल है। आप शीलवान हो। सब को अपना मानते हो। सब पर प्रेम करते हो। विश्वास करते हो। लेकिन विषयी जीव, प्रभुताई पाकर अभिमान वश, किसी को अपने बराबर नहीं समझते हैं। भरत साधु है, सुजन है, आपका भक्त है। वो भी राज्य पाकर मर्यादा मिटाने चला है-

कुटिल कुबंधु कुअवसर ताकी,जानि राम वनवास एकाकी।

आपको पिता का वचन पालन न कर पुनः लौटाने आया है। या दोनो भाई कुमंत्रकर, समाज साज, अकंटक राज्य करने के लिए, दलबल सहित आए हैं। अन्यथा -

जो जिय होत न कपट कुचाली,केहि सुहात रथ बाजि गजाली।

(बाजि- घोड़े, गजाली- हाथी)

किंतु भरत का भी क्या दोष। राज्य पाकर कौन नहीं बौराया।-

शशि गुरुतियगामी नहुष,चढ़े भूमिसुर यान।

लोक वेद ते विमुख भा,अधम को वेन समान।।(मन रूप चंद्रमा ने, तारा रूप ब्रह्मविद्या का हरण किया जिससे बुध हुआ।)-

सहसबाहु सुरनाथ त्रिशंकू,केहि न राजमद दीन्ह कलंकू।

सहस्त्रबाहु ने राजमद में जमदग्नि की कामधेनु हर ली।-

**भरत कीन्ह यह उचित उपाऊ, रिपु ऋण रंच न राखब काहू।**

पर उसने एक काम अच्छा नहीं किया जो आपको अकेला जाना। आपके साथ दूसरा धनुष बाण हमारे हाथ में हैं-

क्षत्रि जाति रघुकुल जनम,राम अनुज जग जान।लातहु मारे चढ़त शिर,नीच को धूलि समान।।

इतना कह, आज्ञा मांगी। जटा बांधी। बोले, आज राम सेवक बनकर यश लूंगा। भरत को शिक्षा दूंगा। रामजी के निरादर का फल, दोनो भाई, समर सेज पर सोकर पाएंगे। जैसे सिंह हाथियों को, बाज चिड़ियों को, वैसे ही भरत को सानुज समर में परास्त करूंगा। रामजी की शपथ यदि शंकरजी भी सहायता करने आएं तो भी मैं उसे मार दूंगा।

लोकपति कांपे। आकाशवाणी हुई। है तात, तुम्हारा प्रताप कौन नहीं जानता। किंतु जो करो विचारकर करना चाहिए-

**सहसा करि पाछै पछिताहीं, कहहिं वेद बुध ते बुध नाहीं।**

लक्ष्मण सकुचाए। राम-सीता ने सम्मान किया।बोले, भाई, तुमने नीतियुक्त बात कही है। राजमद बड़ा कठिन है।

लक्ष्मण को लगा मेरे कोप का समर्थन किया है। तन गये। रामजी बोले, राज मद का पान करते ही, वे नृप मत्त होजाते हैं- लक्ष्मण खड़े हो गए। धनुष संभाला। रामजी बोलते गए, जिन्होंने साधुसभा का सेवन नहीं किया। सुनो लक्ष्मण। भरत जैसा भला, विधाता की सृष्टि में न देखा न सुना। लक्ष्मण ने धनुष नीचे करलिया। राम कहते रहे-

भरतहिं होय न राज मद,विधि हरि हर पद पाय।कबहुं कि कांजी शीकरिन्ही,क्षीर सिन्धु बिनसाय।।

(कांजी शीकरिन्ही- खटाई की बूंदों से, बिनसाय- फट सकता है)

जेठ के सूर्य को अंधेरा निगल सकता है। अकाश में मेघों को रास्ता न मिले। अगस्त्यजी गाय के खुर में डूब जाए। पृथ्वी क्षमा तज दे। मच्छर की फूंक से मेरु उड़जावे। पर, भरत को राज्यमद नहीं होगा -

**लषण तुम्हार शपथ पितु आना, शुचि सुबंधु नहिं भरत समाना।**

भरत हंस हैं, जिन्होंने नीरक्षीर को विलग किया है। गुण ग्रहणकर अवगुण तजे हैं। इतना कहते रामजी भरत के प्रेम में मग्न होगए। देव सराहना करने लगे-

जो न होत जग जनम भरत को,सकल धर्म की धरणि धरत को।

देवों की वाणी सुनकर राम, सीता, लक्ष्मण प्रसन्न हुए।

यहां भरत ने सभी के साथ मंदाकिनी में श्नान किया। सबको नदी तटपर रुकने का कह, आज्ञा ले, निषाद और शत्रुघ्न के साथ, सीता रामजी के पास चले। माता की करनी जान, सकुचाकर अनेक कुतर्क करते हैं। मेरा आना सुन कहीं और न चले गए हों। मेरे दोष हैं पर उनकी कृपा भी तो है। मेरी शरण स्थली तो उनकी पनही (पादुकाएं) है। चलते जाते हैं। शरीर शिथिल है। माता की करनी पीछे, भक्तिबल आगे लेजाता है। रामजी के स्वभाव का स्मरण करते हैं तो उतावले पांव पड़ते हैं –

भरत दशा तेहि अवसर कैसी,जलप्रवाह जलअलि गति जैसी।

(जलअलि- पानी का भंवरा)

भरत दशा देख निषाद विदेह होगए। आश्रम के निकट जाकर शैल समाज देखा तो ऐसे प्रसन्न हुए जैसे भूखे को नाज मिलगया।

(ईति भीति - अतिवृष्टिरनावृष्टि मूशकाह शलभाह शुकाः। स्वचक्रम,परचक्रम च सप्तैता ईतयः स्मृताः।। अर्थात बहुत वर्षा, अवर्षा, चूहा, टिड्डी, तोता, समीपवर्ती राजा और शत्रु ये सात ईति है। देव भय ईती, चोर राजा का भय भीति है।)

चित्रकूट में आकर जैसे प्रजा सुखी हो गई। रामजी के पर्वत की शोभा से, भरत का मन प्रसन्न होगया -

तब केवट ऊंचे चढ़ि धाई,कही भरत सन भुजा उठाई।

वे जो पाकर, जामुन, आम, तमाल के तरु देखते हो। उनके मध्य बड़ा सुंदर वटवृक्ष है। नीले पत्ते, लाल फल, घनी छाया। उसी के नीचे रघुनाथ ने नदी तटपर कुटी बनाई है। वहां मुनियों के साथ बैठ, नित्य पुराण कथा सुनते हैं। विटप निहार, भरत के नेत्रों में जल भरआया। चले। रघुनाथ के चरण चिन्ह देख जैसे रंक ने पारस पालिया हो ऐसे प्रसन्न होते हैं -

रज शिर धरि हिय नैननि लावहिं,रघुवर मिलन सरिस सुख पावहिं।

भरत की गति देख खगमृग मगन हुए।-

सखहिं सनेह विवश मगु भूला,यहि सुपंथ सुर वर्षहिं फूला।

बाबा कहते हैं -

होत न भूतल भाव भरत को,अचर सचर चर अचर करत को।

वनवास का विरह मंदर, भरत क्षीरसिंधु हैं। रामजी ने सुर, साधु के लिए मथकर प्रेमामृत प्रकट किया है। सघन वन के कारण लक्ष्मण नहीं देख सके। भरत ने प्रभु आश्रम देखा -

करत प्रवेश मिटा दुख दावा,जनु योगी परमारथ पावा।

देखा लक्ष्मण कुछ पूछ रहेहैं। प्रभु उत्तर देते हैं। पेड़ों की छाल के वस्त्र, शिर पर जटा, श्यामवर्ण, हाथों में धनुष बाण। मुनि मंडली में रघुनाथ ऐसे शोभित हो रहेहैं जैसे ज्ञान की सभा में शरीर धारण किए भक्ति और सच्चिदानंद शोभित हों। भरत दुख भूलकर बोले -

पाहि नाथ कहि पाहि गुसाईं,भूतल परे लकुटि की नाईं।

लक्ष्मण ने आवाज पहचानी। भरत को जाना।इधर भाई का स्नेह, उधर साहब की सेवा। न मिल सके न रामजी को उत्तर दे सके। न मिला जाता न सेवा में स्थिरता है। पतंग की भांति कभी भरत और कभी सेवा में मन लाते। सह न सके तो रामजी के चरणों में प्रणामकर प्रेम से बोले, है नाथ भरत भैया प्रणाम कर रहेहैं।

जैसे ही सुना –

**उठे राम सुनि प्रेम अधीरा,कहुं पट कहुं निशंग धनु तीरा।**
**बरबस लिए उठाई उर, लाये कृपा निधान।**
**भरत राम की मिलनि लखि, बिसरे सबहिं अपान।**

लगा सब विदेह होगये। कवि इस मिलन का वर्णन नहीं कर सकता। कर्म, मन, वाणी को वह प्रीति अगम है। दोनो, मन-बुद्धि, चित्त, अहंकार भुलाकर जो मिले हैं। उसे प्रकट कैसे करें। कवि, वक्ता तो अर्थ, अक्षर का खिलाड़ी है। प्रेम कैसे पढ़े।

इधर इनका प्रेम देख देवों की धड़कने बढ़गई। वृहस्पतिजी के समझाने पर जागे और पुष्पवृष्टि की।

रामजी शत्रुघ्न और केवट से मिले। लक्ष्मण भरत को प्रणाम कर, ललककर शत्रुघ्न से मिले निषाद को गले लगाया। दोनो ने मुनियों का वंदनकर आशीर्वाद लिया। अनुज सहित भरत ने सीताजी को प्रणाम कर, चरणरज सिरपर लगाई। आशीर्वाद पाया। सीताजी ने मन में ही आशीष दिए। दोनो देह सुध भूलगए। कोई कुछ नहीं कहता। सब प्रेम में मग्न हुए। तभी निषाद ने कहा नाथ, साथ में मुनि, माताएं, सेवक, सचिव, पुरवासी सब आए है। यह सुन श्रीराम शत्रुघ्न को जानकी के पास छोड़, सबकी अगवानी को चले।

गुरुजी को प्रणाम किया। केवट ने गुरुजी को दूर से प्रणामकर नाम बताया। वह भूल ही गया कि मैं तो इनके साथ ही आया हूं। ऋषि ने गले से लगाकर निधि लूट ली। देवता सोचते हैं कि निषाद और ऋषि में कितना अंतर है पर राम भजन के प्रताप से आज दोनो स्नेहपूर्वक मिल रहेहैं। सब की आर्तता देख पल में सब से मिले। अवधवासी, केवट के भाग्य की सराहना करते हैं।

फिर -

प्रथम राम भेंटी कैकेई,सरल स्वभाव भक्ति मति भेई।

(मति भेई- मति गीली, नम करदी।)

काल, कर्म और विधि को दोष दिया अथवा अपना स्वरूप दिखाकर सब दोष अपने ऊपर ले लिया।

सब माताओं से मिलकर कहा। सब ईश्वर के अधीन है। किसीको दोष न दिया जावे। गंगा और गौरी समान विप्र पत्नियों को प्रणाम किया। सुमित्रा ने कंगाल ने खोई निधि पाई हो ऐसे गोदी में बिठाकर हृदय से लगाया। कौशल्या मां ने स्नेह जल से नहलाया। गूंगा जैसे स्वाद का बखान नहीं कर सकता वैसे ही वक्ता है। सब को आश्रम लाए। गुरु की आज्ञा से लोग जहांतहां रुके।

सीताजी ने मुनि और मुनि पत्नियों को प्रणामकर आशीष ली -

**सासु सकल जब सीय निहारी, मूंदेऊ नयन सहमि सुकुमारी।**

सासू को देख सीता और सीता को देख सासू सहम गई। सभी सासुओं का वंदनकर अचल सुहाग आशीष पाया। सब बैठे। गुरु ने ज्ञानोपदेश देकर नृप का सुरपुर गमन कहा।

सुनकर रामजी व्याकुल हो गए। सब रोने लगे जैसे महाराज आज ही सिधाए। मुनि ने रामजी को समझाया। गंगा नहाए। उस दिन सबने निरंबु व्रत किया। प्रातः पिता की वेद विहित क्रिया कर, वे जिनका नाम पातकहारी, मंगलकारी है वे शुद्ध हुए। उनके करने से कर्म शुद्ध हुए। इंगुदी के गुदे से पिंड दान किया।-

**श्रुतिस्तु खल्वियं सत्या लौकिकी प्रतिभाति मे।**
**यदन्नह् पुरुषो भवति तदन्नास्तस्य देवताः।।**

यह श्रुति सत्य ही है कि जिस अन्न को मनुष्य खाता है उसके देवता भी उसी को ग्रहण करते हैं।

**- वा.रा.अ.104.15**

दो दिन बाद रामजी ने गुरु से कहा नाथ, सब को दुखी देख, मुझे भी दुख होता है। आप यहां, पिताजी अमरपुर। गुरुजी ने कहा, आपका दर्शन उन्हें विश्राम देता है। राम वचन सुन सारा समाज, समुद्र में पवन से जहाज की तरह, व्याकुल हुआ। गुरु के वचन सुन लगा जैसे पवन अनुकूल हो गई हो। वे तो -

**पावनपय तिहुं काल अन्हाई, जेहि विलोकि अघ ओघ नशाई।**
**(पावनपय- मंदाकिनी, अघ ओघ- पाप समूह)-**

मंगल मूरति लोचन भरि भरि,निरखहिं हर्षि दंडवत करि करि।
झरना, पर्वत, नाना भांति के वृक्ष, फल फूल, कमल, पशु पक्षी, सुस्वाद मधु। सब बिना मोल। निषाद कहते आपका दर्शन, हमें मरुभूमि में गंगाजल सदृष्य हैं। आपतो फल लो और हमें कृतार्थ करो। हमारे भाग्य जो आपकी सेवा मिली। अरे हम तो-

**यह हमारि अति बड़ि सेवकाईं, लेहिं न बासन बसन चुराई।**

हम रातदिन पाप करते हैं। न कमर पर कपड़ा न पेटभर भोजन। जबसे प्रभु के दर्शन हुए, हमारे दुसह दुख दोष मिटगए।

अवधवासी उनके भाग्य को सराहते हैं। राम दर्शन से अवधवासी प्रसन्न हैं। दिन पल से बीते। जानकीजी कई रूपधर सासुओं की सेवा करती। यह मर्म मायापति के अलावा कोई नहीं जानपाया। कैकई पछताई। सोचा पृथ्वी में समाजाऊं। कैसे मर जाऊं। राम विमुखों को नर्क में भी स्थान नहीं मिलता। सब लोग सोचते राम लोटेंगे या नहीं। भरत को -

**निशि न नींद नहिं भूख दिन, भरत विकल सुठि शोच।**
**नीच कीच बिच मगन जस, मीनहि सलिल संकोच।।**
**(विकल- व्याकुल, सुठि- बड़े, मगन- डूबी हुई, संकोच- चिंता)**

माता ने कुसमय कुचाल चली। तोता बनकर पकी फसल काट दी। अब क्या श्रीराम गुरु आज्ञा मानकर लोटेंगे। पर गुरुजी भी उनका रुख देखकर ही आज्ञा देंगे। माता के कहने से लोट सकते हैं। पर वे भी उनकी ही तो मां हैं। मैं कहूं। पर मेरी बात ही क्या। सेवक का धर्म कठिन है। इसे शिवजी जानते हैं। उन्होंने रामजी के कारण सती तजदी थी। विंध्याचल आजतक झुका है।

एक भी युक्ति नहीं ठहरी। सोचते सोचते सुबह होगई। प्रातः स्नानकर, रामजी को प्रणाम करके बैठे ही थे कि गुरुजी ने बुलालिया। गुरुजी के पास जा, प्रणामकर, आज्ञा पाकर बैठे ब्राह्मण, सचिव, महाजन सब आए।

गुरु बोले, रामजी धर्म धुरीन हैं। पिता की आज्ञा का उल्लंघन कैसे करें। सूर्य हैं तो सब जगह प्रकाश करेंगे ही। राम हैं तो सब में रमे हैं। सत्य संकल्प हैं। भार उतारने को अवतार धारा है। वेद मर्यादा रखने, मंगल करने वाले हैं -

नीति प्रीति परमारथ स्वारथ,कोउ न राम सम जान यथारथ।

सब देव, दिकपाल, जीव, महीप उनकी आज्ञा में हैं। उनका रुख, उनकी आज्ञा में हमारा भी हित है। सब बताओ क्या किया जाए। उनका अभिषेक, उनका लोटना सबके लिए सुखदायक है। समझकर कहो सो करें।

मूल रामायण 11-

पुनि रघुपति बहुविधि समुझाए,लै पादुका अवधपुर आए।

सब मौन। तब सिर नवाकर भरतजी बोले।

गुरुदेव, सूर्यवंश में अनेक प्रतापी राजा हुए लेकिन आपने सूर्यवंशी राजाओं के प्रारब्ध के कुअंक मेंट दिए हैं। आप मुझसे उपाय पूछते हो यह मेरा अभाग्य है। यह सुन वशिष्ठजी प्रसन्न हुए। बोले, राम कृपा से सब सिद्ध होता था। पर राम विमुख होने से सपने में भी सिद्धि नहीं है- सकुचौं तात कहत इक बाता,अर्ध तजहिं बुध सरबस जाता।

तुम दोनो भाई वन जाओ और राम, लक्ष्मण जानकी को लोटा दो। यह सुन दोनो प्रसन्न होगए जैसे राम राजा होगये हों। रानियां सम सुख दुख जान रोने लगी।

भरत बोले, यदि ऐसा होजावें तो आप उन्हें लोटा ले चलो। मैं जन्मभर वन में रहूंगा। यह सुन मुनि सभा सहित विदेह होगए। भरत की महिमा में गुरु लघु हो गए। सब रामजी के पास आकर बैठे।

गुरुजी बोले, राम! आप सर्वज्ञ, सुजान, नीति, धर्म, ज्ञान के निधान हो। आप अंतर्यामी हो। जिससे सबका हित हो सो करो -

**आरत कहहिं विचारि न काऊ, सूझ जुआरिहिं आपन दाऊ।**

रामजी बोले, नाथ जो आज्ञा हो वह कहिए। आप सब (केवल भरत ही नहीं देव, ऋषि, मुनि, पृथ्वी) के कल्याण चिंतक हैं। मुनि बोले आप सत्य कहते हो। भरत की भक्ति के कारण मेरी मति भोरी हो गई थी। आप भरत की रुचि रख जो करो वह उचित होगा। भरत की विनय सुनो। फिर लोक, साधु, राजनीति के अनुसार निर्णय लो।

गुरुजी का अनुराग भरत पर देखकर रामजी के हृदय में विशेष आनंद हुआ। गुरु के हाथ में निर्णय होता तो जो वो कहते करना पड़ता।

भरत धर्मधुरंधर हैं। मन, वचन से अनुकूल हैं। रामजी बोले -

नाथ शपथ पितु चरण दुहाई, भयउ न भुवन भरत सम भाई।

फिर जिस पर आपका अनुराग हो। उसके भाग्य के क्या कहने। जो भरत कहे वही करने में भलाई है। ऐसा कह राम चुप हुए।

गुरु बोले भरत, अब जो हृदय की बात हे वह बोल दो। दोनो की अनुकूलता देख भरत संतुष्ट हुए। नेत्रों में जल भर आया। खड़े हुए। बोले, मैं क्या कहूं। स्वामी और मुनि ने कह ही दिया है।

मेरे स्वामी अपराधी पर भी क्रोध नहीं करते।मुझसे तो खेल में भी खुनस नहीं की। हारने पर भी जिता देते थे। मेरे नेत्र तो दर्शन के प्यासे थे, हैं और रहेंगे। अब जो आज्ञा हो सो करूं।

आपका मेरे प्रति प्यार विधाता भी नहीं सह सका। मां के बहाने से भेद करदिया। पर मां का ही दोष नहीं। मैं स्वयं को कैसे निर्दोष कहूं -

**फरै की कोदव बालि सुशाली, मुक्ता प्रसव कि शंबुक ताली।**

'कहीं कोंदो (एक प्रकार का अनाज) में धान की बाली और पोखर की सीप (घोंघा) में मोती लगते हैं।'

किसी का दोष नहीं। बस मेरा अभाग्य ही है। मां को व्यथा दोष दिया। हृदय से हार गया हूं। अब एक आप और श्री सीता रामजी का ही सहारा है। महाराज का मरण, मां की कुचाल, माताओं, पुरजनों की दशा देखी नहीं जाती-

मैं हि सकल अनरथ कर मूला,सो सुनि समुझि सहेउं सब शूला।

इनको पैदल वन जाने का सुनकर भी जीवित रहा। निषाद इनके खातिर प्राण देने को आतुर था। तब भी मेरी छाती नहीं फटी। जिन्हें मार्ग में देख सांप, बिच्छू अपना विष त्याग देते हैं। वे ही श्री सीता रामजी, मेरी मां को बुरे लगे। उसके पुत्र को छोड़ देव किसे असह्य दुख सहावेगा।

भरत की प्रीति, दुख, विनय, राजनीतियुक्त बात सुन, सभापर जैसे पाला पड़ा। मुनि ने कथा

कहकर समझाया।

रामजी बोले तात ग्लानि मत करो। ईश्वर आपके वश है। हृदय में भी, तुम पर कुटिलता लाने वाले का, लोक परलोक बिगड़ जाएगा। जिन्होंने साधुसंग नहीं किया वे ही मां को दोष देंगे आपका नाम लेने से लोगों के अमंगल कट जायेंगे। यह भूमि तुम्हारे राखे ही रहेगी। तुम सब में भक्ति का भरण पोषण करने वाले हो। जो तुम कहो सो करें। तुम मन में कुतर्क मत करो। वैर, प्रेम छुपाए नहीं छुपता। जो पशु पक्षी, मुनियों के पास निर्भीक चले जाते हैं वे हिंसक जीव देख भाग जाते हैं -

**हित अनहित पशु पक्षिउ जाना, मानुष तनु गुण ज्ञान निधाना।**

मेरे जी में बड़ा असमंजस है। क्या करूं। राजा ने सत्य हेतु तन तजदिया। उनका वचन त्यागने से ज्यादा तुम्हारा संकोच है। उसपर गुरु आज्ञा। अब जो कहो सो करूं। मन प्रसन्न कर कहो। जो कहोगे करूंगा।

सब प्रसन्न हो गए। देवों के संग इंद्र डरा। अब अकाज हुआ। क्या करें। पहले प्रहलाद ने नरसिंह प्रकट किए थे। सब कान में कहते हैं अब भरत के हाथ बात है। यह जानकर कि प्रभु भक्त के सेवक का मान रखते हैं, सब भरतजी का स्मरण करो। गुरु ने प्रशंसा की कि भरत चरण अनुराग सुमंगल मूल है-

**सीतापति सेवक सेवकाई, कामधेनु शत सरिस सुहाई।**
**भरत भक्ति तुम्हरे मन आई, तजहुं शोच विधि बात बनाई।**

इंद्र, रामजी भरत के स्नेहवश हैं। डरो मत। भरत रामकी परछाई है।
अपने सिर भार देख, भरत सोच में पड़े। सोचा, रामजी ने अपना प्रण छोड़ मेरा प्रण रखा। अब उनकी आज्ञा मानने में ही भलाई है। प्रणाम कर बोले-

**कहहुं कहावहुं का अब स्वामी, कृपा अंबुनिधि अंतर्यामी।**

जब गुरु प्रसन्न, साहब अनुकूल हैं तो विपत्ति के शूल मिट गए। मेरा अभाग्य, मां की कुटिलता, विधि की चाल, काल की गति ने पांव रोप, मुझे घालने की इच्छा की। आपने प्रण रखकर मेरी रक्षा की। उबार लिया। आपसे ही जगत भलाई है। आप कल्पवृक्ष हैं-

जाय निकट पहिचान तरु,छांह शमन सब शोक।मंगत अभिमत पाव फल,राउ रंक भल पोच।(पोच- बुरा)

क्षोभ मिटा। संदेह गया-

**अब करुणाकर कीजिय सोई, जनहित प्रभु चित क्षोभ न होई।**
**आपके अयोध्या फिरने से सब का स्वार्थ है।**

आज्ञा मानने से सब की भलाई, पुण्यों का सार, परमार्थ है। हां एक विनती है। -

**गतिं खर इवाश्वस्य तार्क्ष्यस्येव पतत्त्रिणः।**
**अनुगंतुं न शक्तिर्मे गतिं तव महिपते।।**
**ज्यों अश्व मार्ग पर गधा और, नहिं गरुड़ पक्षि बन सकता है।**
**त्यों ही यह राज अवधपुर का, मुझसे न तनिक निभ सकता है।।**
**- 'कमल'- वा.रा.अ.105.06**

हम तिलक का सभी सामान लाए हैं। जैसा आदेश हो सो करें-

सानुज पठइय मोहि वन,कीजिए सबहिं सनाथ। नतरू फेरिये बंधु दोउ,नाथ चलौं मैं साथ।।

नतरु जाहिं वन तिनिउं भाई,बहुरिय सीय सहित रघुराई।

जैसे आपका मन प्रसन्न हो सो करें। आपने सब भार मुझपर डालदिया। मैं नीति, धर्म कुछ नहीं जानता-

**कहौं वचन सब स्वारथ हेतु, रहत न आरत के चित चेतू।**

अब संकोच त्याग, जिसको जो आज्ञा देंगे वह करेंगे। यह सुन देवों ने फूल बरसाए। अवधवासी असमंजस और वनवासी प्रसन्न हुए। रामजी सकुचाये।

तभी जनकजी के दूत आए। रामजी का वेश देख वे दुखी हुए। मुनि ने पूछा विदेह कुशल तो है। दूतों ने कहा विदेह हैं, इसीलिए कुशल है-

नाहित कौशल नाथ के,साथ कुशल गइ नाथ।मिथिला अवध विशेषते,जग सब भयउ अनाथ।। महाराज ने दूत भेज भरत के भाव जाने। भरत के चित्रकूट जाने की खबर पाकर, नगर को रक्षित कर, बिना विश्राम, चलकर पधारे हैं।

मुनि ने किरातों को साथ किया। जनकजी का आगमन सुन सब प्रसन्न। राम को संकोच और इंद्र को शोच हुआ। कैकई को ग्लानि हुई। गल गई। लोगों को लगा, अब कुछ दिन और रुकेंगे।

प्रातः स्नान कर सब ने देव पूजन की ओर यही मांगा कि राजाराम के काल में हमारा मरण हो -

हम सम पुण्य पुंज जग थोरे,जिनहिं राम जानत करि मोरे।

उसी समय मिथिलेश की अगवानी के लिए रामजी उठे। चित्रकूट देख, जनकजी ने प्रणाम कर, रथ त्यागा। राम के दर्शन लालसा में किसी को पथश्रम नहीं हुआ। मन तो राम दरश में था। बिना मन क्लेश कैसा। परस्पर प्रणाम कर, सब आश्रम आए। दोनो समाज शोक मग्न हुए। धीरज, लाज कुछ न रहा। मुनियों ने उपदेश से धीरज धरवाया।

जनक की व्याकुलता, सीता-रामजी के स्नेह का परिणाम है-

**राम सनेह सरस मन जासू, साधु सभा बड़ आदर तासू।**
**सोह न राम प्रेम बिनु ज्ञानू, कर्णधार बिनु जिमि जलयानू।**

मुनि ने समझाया। सब रामघाट पर नहाए। सब शोक में थे। वह दिन निर्जल बीता।-

पशु खग मृगन्ह न कीन्ह अहारा,प्रिय परिजन कर कवन विचारा।

दोनो समाज, वट के नीचे, मलिनमन, कृष गात बैठे। विप्रो, वशिष्ठजी, शतानंदजी ने धर्म, वैराग्य, ज्ञानोपदेश दिया। विश्वामित्रजी ने प्राचीन कथा कही।

रामजी ने कहा गुरुजी, कल से किसी ने जल भी नहीं लिया है। भोजन करने को कहिए।

जनकजी बोले, यहां अन्न का भोजन उचित नहीं। सब स्नान करने गए। तभी वनवासी कावड़ों में भरकर कंद, मूल, फल ले आए। कामदगिरि कामना दाई होगया। सब वृक्ष फलित, पुष्पित हैं। त्रिविध समीर प्रवाहित है। मनोहरता का वर्णन नहीं किया जा सकता। लगता है पृथ्वी जनकजी की पहुनाई कर रही हो। स्नान कर, वृक्षों के नीचे बैठ सब ने फलाहार किया। चार दिन इस प्रकार बीते। राम दरश से सब सुखी हैं।

दोनो समाजों के मन में यही भाव कि सीता रामजी को लिए बिना लौटेंगे नहीं। इनके बिना जिसे घर भावे उसे मानो विधाता वाम हैं। वन में वास मिला तो जानो प्रभु अनुकूल हैं। यहां - मंदाकिनि मज्जन तिहु काला,राम दरश मुद मंगल माला।

वन दर्शन, फलाहार। इस तरह चौदह वर्ष, पल जैसे बीत जाएंगे।

ज्येष्ठ सुदी एकादशी के दिन, जनक रनिवास, जानकीजी की सासुओं को खाली देख, मिलने आया। कौशल्याजी ने स्वागत कर समयानुकूल आसन दिया।

दोनो ओर का शील, स्नेह ऐसा कि वज्र भी पिघल जाए। सब पुलकित, शिथिल, नैनो में जल भर नखों से धरती कुरेदने लगी। ऐसे बैठी जैसे करुणा बहुरूप धारे बैठी है-

सीय मातु कह विधि बुधि बांकी,जेहि पय फेन फोर पबि टांकी।

(पबि- वज्र)

बड़ा विचित्र है। अमृत जो श्रेष्ठ है दिखाई नहीं देता। विष जो निकृष्ट है वह नजर आता है। काक उलूक बहुत किंतु हंस दुर्लभ है।

सुमित्राजी बोली -

**जो सृजि पालै हरैई बहोरी, बालकेलि सम विधि मति भोरी।**

कौशल्याजी ने कहा सुख-दुख, हानि-लाभ सब कर्म अधीन है। विधाता ही जानता है। मुझे बस भरत का सोच है। सुनैनाजी ने अनुमोदन किया।

उसके शील का बखान शारदा भी नहीं कर सकती। जैसे सीप समुद्र का जल नहीं उलीच सकती। महाराज कहते थे, भरत कुल दीपक है-

**कसे कनम मणि पारखि पाये, पुरुष परखिये समय सुभाये।**
**(कसे- कसोटी पर)**

मिथिला की महारानी, आप धीरज धरो। एक काम करना। राजा से कहना कि भरत राम के साथ जाए। लक्ष्मण अयोध्या में रुके, यह करे। राम के बिना भरत कहीं शरीर न त्याग दें।

यह सुनकर सब करुणारस में डूब गई। देवों ने पुष्प वृष्टि की। सुमित्राजी के कहने पर कि दो घड़ी रात बीत गई है। स्यापा (चहकारी) के नियमानुसार पहले कौशल्याजी उठी। आप पधारो। हमें तो अब शंकरजी और मिथिला पति का ही सहारा है। सुनैना ने उनकी विनय की प्रशंसा की कि बड़े छोटों को जैसे अग्नि धुंए, पर्वत तृण की भांति, सिरपर रख आदर देते है। महाराज तो सेवामें हैं ही । भला दीपक की सहायता से कभी सूर्य शोभा देता है।

शिव पार्वती सहाय करे। रामजी देवों का काम कर फिर राज्य करेंगे। यह याज्ञवल्क्यजी ने कहा है। ऋषि वाणी असत्य नहीं होती। ऐसा कह, पांव पड़, जानकी को लेजाने की अनुमति लेकर, विदा हुई।

जानकीजी सब से मिली। तपस्विनी वेश में देख सब दुखीहुए। रघुनाथ और गुरु की आज्ञा पाकर, जनक लोटे तो जानकी को देख, हृदय से लगाया। प्रेम का सागर उमड़ा। जानकी (धरणी सुता) ने धीरज बंधवाया। तापस वेष में देख जनक बोले -

पुत्रि पवित्र किए कुल दोऊ,सुयश धवल जग कह सब कोऊ।

जानकी का यहां रात्रि रुकने में संकोच जानकर, विदा किया और कौशल्याजी का संदेश महाराज से कहा।

जनकजी बोले महारानी, भरत कथा भवबंधन छुड़ाने वाली है। भरतजी भरतजी के ही समान है। उनके गुणों का गान करना जल बिना मछली जिलाना है। अगम, अवर्णनीय है-

भरत अमित महिमा सुनु रानी,जानहिं राम न सकहिं बखानी।

भरतजी की प्रीति, परमार्थ, स्वार्थ से अधिक रामजी के चरणों में है। वे रामाज्ञा नहीं टालेंगे।

दोनो को बात करते रात बीती। प्रातः दोनो समाजों ने स्नानकर पूजन किया। रामजी गुरु के समीप गए और रुचि देख बोले। है नाथ, सभी बहुत दिन से वनवास के क्लेश भोग रहेहैं। सबका हित आपके हाथ है। जो उचित हो सो करो। गुरुजी बोले -

प्राण प्राण के जीव के,जिव सुख के सुख राम।तुम तजि तात सुहात गृह,जिनहिं तिनहिं विधि वाम।

तुम बिन दुखी सुखी तुम ते ही,तुम जानहुं जिय जो जेहि केही।

रामजी को आश्रम भेज, गुरुजी ने जनकजी के पास जाकर कहा कि कुछ कीजिए। जनक सोच में पड़े -

**शिथिल सनेह गुनत मन मांहीं, आए इहां कीन भल नाहीं।**

दशरथजी ने वनवास दिया और प्राण त्याग दिए। -

**अब हम वन ते वनहिं पठाई, प्रमुदित फिरब विवेक बढ़ाई।**

फिर धीरज धर, भरतजी के पास गए। भरतजी ने स्वागतकर समयानुसार आसान दिया। जनकजी बोले आप रामजी का स्वभाव जानते हो। जो आज्ञा हो सो कहो। भरतजी बोले, मैं बालक। आप लोग माता पिता समान हो। छोटे मुंह बड़ी बात। सेवा धर्म कठिन है। रामजी धर्म पालक हैं।

भरतजी की प्रशंसा कर, जनकजी सब के साथ रामजी के पास यह सोचते गए कि अब वे देवों का हित ही करेंगे। लोग यह जानकर दुखी हुए कि आज निर्णय होजाएगा। भरतजी का स्नेह, रामजी का संकोच देख, देवता सोच में पड़े। पंचों कुछ करो, प्रपंच रचो, नहीं तो अकाज होगा।

देवों ने शारदा का आवाहन कर भरतजी की मति फेरने, छल कर देवों का भला करने का आग्रह किया। यह सुन शारदा बोली स्वार्थियों -

**मोसन कहहुं भरत मति फेरू, लोचन सहस न सूझ सुमेरू।**

त्रिदेव की माया भी उनकी मति को नहीं देख सकती। भला चांदनी चंद्र की चोरी कर सकती है -

**भरत हृदय सिय राम निवासू, तहं कि तिमिर जहं तरणि प्रकासू।**

**(तरणि प्रकासू- सूर्य का प्रकाश)।**

ऐसा कह शारदा विधिधाम गई। देवों ने उच्चाटन मंत्र सिद्ध किया जिससे भय, भ्रम, अप्रीति, उच्चाटन फैला। जनकजी रामजी के पास पधारे। स्वागत कर समयानुकुल आसन दिया।

वशिष्ठजी धर्ममय वचन बोले। है रामजी अब जैसी आप आज्ञा दो वैसा सब करें। रामजी बोले जहां आप और जनक महाराज बिराजे हैं वहां मैं क्या कहूं। आप जो कहेंगे आपकी सौगंध मैं वही करूंगा। दोनो सकुचे। सब भरत का मुख देखने लगे। सभा को संकोच में देख भरत ने स्नेह सम्भारा जैसे विंध्याचल को कुंभजजी (अगस्त्य) ने निवारण किया था।

(एक बार विंध्याचल ने सोचा कि मैं सूर्य का तेज रोक लूंगा। बढ़ने लगा। तब देवताओं के कहने पर विंध्याचल के गुरु, अगस्त्यजी उसके पास गए। उसने प्रणाम कर कहा, आज्ञा दें गुरुदेव। गुरु बोले, जब तक हम लोटकर न आवे, इसी प्रकार रहो। वह आजतक झुका है। मुनि दक्षिण दिशा में ही हैं।)

जैसे प्रभु ने वराह बन शोक रूपी हिरण्याक्ष से बुद्धि रूपी पृथ्वी मुक्त करवाई।

*भरत ने रामजी को अयोध्या लेजाने के लिए कुश बिछाकर उनके सामने धरना दिया।

**- वा.रा.अ.111.14,15**

रामजी ने कहा -

**लक्ष्मीश्चन्द्रादपेयाद् वा हिमवान् वा हिमं त्यजेत् ।**
**अतीयात् सागरो वेलां न प्रतिज्ञामहं पितुः ॥**

'चन्द्रमा से उसकी प्रभा अलग हो जाय, हिमालय हिम का परित्याग कर दे, अथवा समुद्र अपनी सीमा को लाँघकर आगे बढ़ जाय, किंतु मैं पिता की प्रतिज्ञा नहीं तोड़ सकता।

**- वा.रा.अ.111.18**

सब को प्रणाम कर, ज्ञान रूपी नेत्रों से समाज को स्नेह से शिथिल देख, भरत विनय, वैराग्य और नीतियुक्त वाणी बोले। है प्रभु, आप अंतर्यामी हो।जो कहूंगा आप सब जानते हो। आप स्वामी शिरोमणि और मैं स्वामी द्रोही हूं। मैं पिता और आपका वचन, मोहवश उल्लंघन कर, समाज सहित यहां आया। फिर भी आपने बुरा नहीं माना। आप किसी के दोष नहीं देखते।

साधु सभा में मात्र उसके गुणों का ही बखान करते हैं। कोन स्वामी है जो सेवक को इस तरह निभाता है। आप जैसे आप ही हैं। जैसे तोते और पशु पढ़ाने, नचाने वाले की गति, उनके हाथ होती है। वैसे ही मेरी गति आपके हाथ है। मेरी भलाई, बुराई

आपके आश्रित है। मेने आज्ञा भंग की ओर आपने मेरा भला किया। भक्तों का सिरमोर बनाया। यहां आकर आपके चरण देखे। आपको अनुकूल देखा। आपकी कृपा अनुग्रह से अंग अघा गया। क्षमा करना। अब आज्ञा देकर मेरा सब सुधारिए। स्वामी की आज्ञा पालन से अधिक सेवक को और कुछ नहीं।

इतना कहकर व्याकुल हुए। नेत्रों में जल भर आया। प्रभु के चरण पकड़े। रघुनाथजी ने सुवचन कह, हाथ पकड़, अपने पास बैठाया। सभा भी स्नेह से शिथिल हो गई।

देवों को अपना काम दूसरों का अकाज प्रिय है।

पहले लोगों के मन में उच्चाटन करदिया। उन्हें कभी वन कभी अवध जाने की रुचि होने लगी। कोई किसी से प्रकट नहीं करता। भरत, जनक, मंत्री, मुनि, साधुओं को माया नहीं व्यापी।

इंद्र की करतूत देख, बड़ों की बुद्धि को अबोली देख, लोगों को दुखी देख, रामजी सबके हितकर और शीतल वचन बोले -

**तात भरत तुम धरम धुरीणा, लोक वेद विधि परम प्रवीणा।**

तुम समान तुम ही हो। गुरुओं, जनक महाराज और समाज के सामने छोटे भाई के गुण कैसे कहूं।-

**सर्वे क्षयांता निचयाः पतनांताः समुच्छ्रयाः ।**
**संयोगा विप्रयोगांता मरणांतं च जीवितम्।।**
**- वा.रा.अ.105.16**

**है भरत अंत हर संग्रह का, उन्नति का पतन सदा होना।**
**संयोग वियोग जन्म मृत्यू, जीवन में यह निश्चित होना।।**
**नित सूर्य उदय और अस्त देख, आनंद मनुष्य मनाते हैं।**
**पर बीत रही इन संग आयू, इसका न भान कर पाते हैं।।**
**जब जब ऋतु करवट लेती है, हम सबका हर्ष बढ़ाती है।**
**विद्वान जानते वही सदा, मृत्यू के द्वार चढ़ाती है।।**
**जो स्वजन स्वजन की मृत्यू पर,मूर्छित हो शौक मनाते हैं।**
**अपनी मृत्यू को टाल सके, सामर्थ्य न यह रख पाते हैं।।**
**-'कमल'- वा.रा.अ.105**

तुम सूर्यकूल की रीती जानते हो। सबके मन की जानते हो। सबका कर्म, हित, धर्म जानते हो। मुझे तुमपर भरोसा है। तात, जब सूर्य बिना समय अस्त होजाय तो किसे क्लेश न हो पर गुरुदेव और जनक महाराज ने रक्षा की। गुरु का प्रभाव राजकाज, धर्म, धन, धाम, पृथ्वी इन सबका पालन करेगा। माता पिता की आज्ञा धर्म को धारण करती है। अतः तुम भी वही करो और मुझसे भी वही करवाओ।-

*जाबाली ऋषि ने रामजी को चित्रकूट में पिता और धर्म की चिंता छोड़ राज्य करने का सुझाव दिया था। रामजी ने कहा -

सत्यमेवेश्वरो लोके सत्ये धर्मः सदाश्रितः । सत्यमूलानि सर्वाणि सत्यान्नास्ति परं पदम् ॥

**- वा.रा.अ.108.13-**

एकः पालयते लोकमेकः पालयते कुलम् । मज्जत्येको हि निरय एकः स्वर्गे महीयते ॥

(मज्जत्येको हि निरय- एक नर्क में डूबता है)

**- वा.रा.अ.108.15-**

**कायेन कुरुते पापं मनसा सम्प्रधार्य तत्।**
**अनृतं जिह्वया चाह त्रिविधं कर्म पातकम् ॥**
**(मनसा सम्प्रधार्य तत्- मन से संकल्प करके)**

**- वा.रा.अ.108.21**

*जैसे चोर दण्डनीय होता है, उसी प्रकार (वेदविरोधी) बुद्ध (बौद्धमतावलम्बी) भी दण्डनीय है। तथागत (नास्तिक विशेष) और नास्तिक (चार्वाक्) को भी यहाँ इसी कोटि में समझना चाहिये।

**- वा.रा.अ.108.34**

विपत्ति सह प्रजा और अवध को सुखी करो-

**बांटि विपति सब ही मिलि भाई, तुमहिं अवधि भरि अति कठिनाई।**

तुम कोमल हो। मैं कठिन भार देरहा हूं।-

**होहिं कुठांव सुबन्धु सुहाए, ओडि हाथ असनिहुं के घाये ।**

(होहिं कुठांव- बुरे समय में, सुबन्धु सुहाए- भाई ही साथ देता है, ओडि हाथ- हाथ ही रोकता है, असनिहुं के घाये- वज्र के घाव को)

सेवक की रीती फल देखने, चलने, तोड़ने वाले आंख, पैर, हाथ सी और स्वामी की रीती मुख सी हो जो खाकर सभी अंगों को पुष्टकरे।

रघुनाथजी की वाणी सुन सभा जैसे अमृत में भीज गई। सरस्वती ने भी मौन साधा।

भरत को संतोष हुआ। विषाद मिटा। गूंगे को सरस्वती मिल गई।-

**है नाथ न कोई दुख ऐसा,जो तुम्हें दुःख पहुंचाता हो।**
**है नहीं हर्ष भी प्रबल कोई,जो तुमको हर्ष दिलाता हो।।**
**- 'कमल'- वा.रा.अ.106.03**

प्रणाम कर बोले, नाथ, आपके साथ जीने का लाभ मिला। जन्म सफल हुआ। अब जो आज्ञा हो वह करूं। अब ऐसा अवलंब दो जिससे चौदह वर्ष की अवधि बिता सकूं। आपके अभिषेक हित तीर्थजल सामग्री लाया था। उसका क्या करूं। आपकी आज्ञा हो तो चित्रकूट दर्शन की अभिलाषा है। रामजी ने आज्ञा दी और कहा जहां मुनि कहे वहां अभिषेक की सामग्री धरो।

भरत और राम की वार्ता सुन देव प्रसन्न हो, पुष्प बरसाने लगे। सभा भरत और रामजी के स्वभाव की सराहना करने लगी।

अत्रिमुनि ने तीर्थ जल, चित्रकूट के निकट के कूप में रखने को कहा। सब कूप निकट गए। जल उसमें रखा। अत्रि ने कहा यह सिद्ध स्थल है। लोप होगया था। सेवकों ने मिट्टी निकाली। अब तीर्थो का जल पाकर धन्य हुआ। इसे आज से लोग भरत कूप कहेंगे। पवित्र तीर्थ होगा। स्नान करने वाले निष्पाप होंगे। सब रामजी के पास आए। अत्रि ने तीर्थ का पुण्य प्रभाव कहा।सत्संग करते सवेरा हुआ। नित्य कर्म कर सब की आज्ञा ले, जूते त्याग, वन विचरण करने लगे।पृथ्वी ने सकुचाकर -

**कुश कंटक कांकरी कुराई, कटुक कठोर कुवस्तु दुराई।**
**(कुराई- कोरदार)**

उज्जवल मार्ग किया। त्रिविध पवन बही।

देवता फूल बरसाते, मेघ छाया करते, वृक्ष फल, फूल देते। जम्हाई लेते में, राम बोलने वाले को, जब सब सिद्धियां सुलभ होजाती हैं तो उनके प्राण प्यारे भरत को, यह बड़ी बात नहीं। भरत पूछते जाते, अत्रि सबका महत्व बताते। कहीं स्नान, दर्शन, प्रणाम करते। पांच दिन में भरत ने सब देखा। प्रातः स्नान कर फिर समाज जुड़ा।

*रामजी ने कहा भरत माता केकई से विवाह के समय तुम्हारे नाना से महाराज दशरथ ने उसके पुत्र को राज्य देने की उत्तम शर्त कर ली थी।

**- वा.रा.अ.107.03**

रामजी ने सकुचाकर सिर नीचे किया। यह देख भरत उठे। प्रणाम किया। बोले। मेरे लिए सब ने बहुत संताप और आपने दुख पाया। अब -

**अब गुसाइं मोहि देहू रजाई, सेवौ अवध अवधि लगि जाई।**
**(रजाई- आज्ञा)**

आपके निमित्त संसार का दुख स्वीकार है और आपके बिना परमपद का लाभ भी वृथा है।

आप सब जानने वाले पालक हो। शिक्षा दो।

भरत विनय की सब सराहना करने लगे। रघुनाथ बोले, है तात, गुरु और जनक महाराज के होते, हमें किस बात की चिंता। पिता की आज्ञा दोनो पालें। अयोध्या की चौदह वर्ष गुरु, मंत्री के निर्देशन में रक्षा करो-

**मुखिया मुखसो चाहिए, खान पान को एक।**
**पाले पोषै सकल अंग, तुलसी सहित विवेक।।**
**अधिरोहार्य पादाभ्यां पादुके हेमभूषिते ।**
**एते हि सर्वलोकस्य योगक्षेमं विधास्यतः ॥**

भरतजी ने कहा नाथ ये दो स्वर्ण भूषित पादुकाएं आपके चरणों में अर्पित है। इनपर चरण रखें। ये ही सम्पूर्ण जगत के योग क्षेम का निर्वाह करेगी।

**- वा.रा.अ.112.21-**
**चतुर्दशे हि सम्पूर्णे वर्षे हनि रघूत्तम ॥**
**न द्रक्ष्यामि यदि त्वां तु प्रवेक्ष्यामि हुताशनम्।।**
**- वा.रा.अ.112.25,26**

प्रभु ने समझाया पर अवलंब बिना संतोष नहीं हुआ तब -

**प्रभु करि कृपा पांवरी दीनी, सादर भरत शीश धरि लीनी।**

*वे दो खड़ाऊ, मानो प्रजा के प्राणों के पहरेदार हैं। भरत स्नेह की संपदा, जीवों के उद्धार रघुकुल के रक्षक किवाड़ हैं। कुशल कर्म के दो हाथ हैं। सेवा और सुधर्म के दो नेत्र हैं।

धर्मज्ञ भरतने भलीभाँति अलंकृत की हुई उन परम उज्ज्वल चरणपादुकाओं को लेकर श्रीरामचन्द्रजी की परिक्रमा की तथा उन पादुकाओं को राजाकी सवारीमें आनेवाले सर्वश्रेष्ठ गजराज के मस्तकपर स्थापित किया ॥

**- वा.रा.अ.112.29**

*तदनन्तर श्रीरामचन्द्रजी की दोनों चरणपादुकाओं को अपने मस्तकपर रखकर भरत शत्रुघ्नके साथ प्रसन्नता पूर्वक रथ में बैठे।

**- वा.रा.अ.113.01**

भरत को सीता-रामजी के मिलन सा सुख हुआ। प्रणामकर विदा मांगी। कुटिल इंद्र ने असमय में लोगों को उचाट किया। वह कुचाल भी लोगों को अच्छी हुई। नहीं तो रामजी के वियोग में हाय राम, हाय राम कर, मर जाते। रामजी भरतजी से भुजभर मिले। यह देख -

**तन मन वचन उमंगि अनुरागा, धर्मधुरंधर धीरज त्यागा।**
**(धर्मधुरंधर- रामजी)**

नेत्रों से जल बहता देख, देव सभा दुखी हुई। गुरु, जनक जो जग में कमल के पत्र की तरह (जल से विलग) हैं, वे भी विरागी विचार में मग्न हो गए। कवि, वक्ता निष्ठुर समझे जाने के कारण इस बिछोह का वर्णन नहीं करता। वाणी को संकोच हुआ।

सेवक, मंत्री अपने अपने कामपर लगे। प्रभु और जानकीजी को प्रणामकर, लक्ष्मण से मिल दोनो भाई, समाज सहित चले। अनुज सहित रघुनाथ ने जनकजी को प्रणाम किया। बोले-

**देव दया वश बड़ दुख पायउ, सहित समाज काननहिं आयउ।**

आशीर्वाद दे राजा विदा हुए। सासुओं को प्रणाम किया। विश्वामित्र, वामदेव, जाबालि, पुरजन परिजन,सचिव -
**नारि पुरुष लघु मध्य बड़ेरे, सब सनमानि कृपानिधि फेरे।**

भरतजी की मां से संकोच त्यागकर मिले। जानकीजी ने मां और सभी सासुओं को प्रणाम किया। सबसे मिलकर भरतजी के दल ने पयान किया। मन में सीता-रामजी का सुमिरण करते, अचेत से लोग और बैल, अश्व, गज परवश हो चले जाते हैं। गुरु, गुरुपत्नि को प्रणामकर विदा दे, पर्णकुटि में आए। निषाद, कोल किरातों को विदा किया। वट छाया में बैठ सब के वियोग में दुखीहुए। भरत महिमा बखानी। देवों ने आकर अपने दुख कहे। उनको धीरज धरवाया।

बिना कुछ खाए भरत का दल यमुना पार हुआ। चौथे दिन अयोध्या आए। जनकजी चार दिन रुक, राजकाज समझा, अपनी राजधानी तिरहुत गए। गुरु के समझाने पर-

**राम दरस हित लोग सब, करत नेम उपवास।**
**तजि तजि भूषण भोग सुख, जियत अवधि की आस।।**

भरतजी ने सचिवों को काम पर लगाया। शत्रुघ्न को माताओं की सेवा में लगाया। ब्राह्मणों को ऊंच नीच होने पर बिना संकोच सीख देने को कहा।

मूल रामायण 12-

**भरत रहनि सुरपति सुत करनी, प्रभु अरु अत्रि भेंट पुनि बरनी।**

गुरुजी के घर जाकर बोले कि आज्ञा हो तो नियम से रहूं। गुरु का आशीर्वाद पा, सुदिन देख, ज्योतिषियों का मत लेकर, सिंहासन पर प्रभु की पादुकाएं, उपाधि रहित पधराई। कौशल्याजी, गुरु, पादुकाओं का आशीर्वाद लेकर, नंदिग्राम में, कुटिया बनाकर रहने लगे। कौशल्याजी बोली-

**हाथ मींजिबो हाथ रह्यौ।**
**लगी न संग चित्रकूटहुते, ह्या कहा जात बह्यौ।।**
**पति सुरपुर सिय राम लषण वन, मुनिव्रत भरते गह्यो।**
**हौं रहि घर मशान पावक ज्यों, भरि वह मृतक दह्यो।।**
**मोरोइ हिय कठोर करिबेको, विधि कहं कुलिश लह्यो।**
**तुलसी वन पहुंचाई फिरी सुत, क्यों कछु परत कह्यो।।**
**भरतजी ने -**
**जटाजूट शिर मुनिपट धारी, महि खनि कुश साथरी संवारी।**
**(खनि- खोद)**

भोजन, वस्त्र, बड़े बड़े सुख, मन वचन से तृण समान तज, कमण्डलु रख, ऋषियों के नियम करने लगे-

**अवधराज सुरराज सिहाई, दशरथ धन लखि धनद लजाई।**
**(सिहाई- सराहना, धनद- कुबेर)-**
**तेहि पुर बसत भरत बिनु रागा, चंचरीक जिमि चंपक बागा।**
**(चंचरीक- भौरा)**

शिवजी बोले-

**रमा विलास राम अनुरागी, तजत वमन इव जन बड़भागी।**
**(रमा- लक्ष्मी, विलास- बड़े ऐश्वर्यको)**

चातक और हंस की तरह,भरत को यह ही उचित है। देह दिनोदिन दुबली होती पर तेज बढ़ता जाता। राम प्रेम बढ़ने से मन में मलिनता नहीं आती। रामजी के आने का विश्वास ध्रुव तारा है। अवधि पूर्णमासी है। उनकी रहन, समझन, कर्तव्पता, भक्ति, वैराग्य, गुण, ऐश्वर्य का वर्णन शेष, शारदा, गणेश भी कहने में सकुचाते हैं। भरतजी-

नित पूजत प्रभु पांवरी,प्रीति न हृदय समाति।मांगि मांगि आयसु करत,राज काज बहु भांति।। शरीर पुलकित, हृदय में सीता राम, जिव्हा में रामराम जाप, नेत्रों में जल है। राम लक्ष्मण सीता तो वन में बसते हैं पर भरत घर में रहकर तन को कसते हैं। तुलना करके लोग कहते, भरत सब विधि सराहने योग्य हैं। व्रत-नियम देख साधु, मुनि सकुचाते हैं। भरतजी का यह आचरण मंगलदायक है। कलि क्लेश हारी, मोह नाशक है। संताप हरने वाला, पाप नाशक, भक्त को आनंद दाता, रामजी के स्नेह रूपी चंद्रमा का सार है। सीता-राम के प्रेमामृत को पूर्ण करने के लिए यदि भरतजी का जन्म न होता तो मुनियों के मन में अगम यम, नियम, शम, दम का आचरण कोन करता। दुख, ताप, दारिद, दोषों को सुयश के बहाने कौन हरता।

भरत चरित्र को नियम पूर्वक सादर सुनने से सीता-राम चरण में प्रेम होगा। संसार से विरक्ति होगी।

**।।इति अयोध्याकाण्ड।।**

# || अरण्य काण्ड ||

भगवान शंकर और वनवासी वेशधारी रामजी की वंदना कर तुलसीदासजी की भांति अरण्यकाण्ड आरंभ करते हैं।-

**ऋषिगण मिलन विराध वध, खर दूषण संहार।**
**सीय हरण शबरी तरण, सो वनकांड विचार।।**

शिवजी बोले, पार्वती, रामजी के गुण बड़े गंभीर हैं। इनसे पंडित वैराग्य, मूर्ख मोह को प्राप्त होते हैं। अथवा राम के गूढ़ गुण वे पाते हैं जो जगत से विमुख हैं। अब प्रभु का वन चरित्र कहता हूं, ध्यान पूर्वक सुनो।

एक बार रामजी ने अपने हाथों से पुष्प के गहने बनाकर सीताजी को पहनाए। दोनो स्फटिक शिला पर बैठे हैं। रावण को अनादि शक्ति और शंकर का इष्ट है। आगे रामेश्वर स्थापना से शिवजी को रामजी ने मनाया है। यहां पुष्प के गहने अर्पित कर जानकीजी को मनाया कि अपने भक्त का पक्ष मत करना।

पूर्णिमा की चांदनी है। जयंत की स्त्री रामजी का दर्शन करने आई। स्तुति कर लोटी। यह खबर जयंत को मिली। मूर्ख जयंत (इंद्र का पुत्र) काग का रूपधर जैसे चींटी सागर की थाह ले वैसे रामजी का बल देखने आया। जानकीजी के शरीर में चोंच मारकर भागा। रामजी सीताजी की गोदी में सिर रखकर सोए थे। सीताजी उठी नहीं। जब रुधिर पीठ में लगा तो प्रभु ने सीक का बाण चढ़ाया। क्रोधाग्नि से यह बाण अग्निदायक होगया।

जयंत ने ब्रह्मास्त्र से अभिमंत्रित बाण देखा तो भागकर पिता के पास गया। राम विमुख जानकर इंद्र ने भी रक्षा नहीं की। निराश हो दुर्वासाजी की भांति ब्रह्मधाम, शिव लोक गया पर-

**काहु न बैठन कहा न ओही, राखि को सकै राम कर द्रोही।**

अब तो माता मृत्यु, पिता यम, अमृत विष, मित्र शत्रु, गंगा वैतरणी सी हुई। याज्ञवल्क्यजी कहते हैं-

**सब जग तेहि अनलहुते ताता, जो रघुवीर विमुख सुनु भ्राता।**
**(अनलहुते- अग्नि से भी)**

अब तो आगे जयंत पीछे बाण। भागा। भागता रहा। सर्प गरुड़ से बच जावे पर रामजी के बाण से बचना संभव नहीं। तब-

नारद देखा विकल जयंता,लागि दया कोमल चित संता।

साथ भागते हुए नारदजी ने प्रभु की प्रभुताई कही। (वह रुक नहीं सकता था क्योंकि पीछे बाण आ रहा था।) बोले, रामजी के पास जाकर 'रक्षाकरो नाथ' कहना।

जयंत रामजी के पैरों में गिरा। क्षमा मांगी। रक्षा करो रक्षा करो। दयालु रघुनाथजी ने उसे एक नेत्र का करके छोड़ दिया।

रामजी ने चित्रकूट में विविध चरित्र किए। फिर यह जानकर कि यहां मुझे पहचानने के कारण, रोज कोई न कोई मिलने आता है। अतः कुंवार सुदी दशमी के दिन दक्षिण दिशा को चले और अत्रि ऋषि के आश्रम पधारे।

दंडवत करते रामजी को अत्रिऋषि ने उठाकर हृदय से लगाया। आश्रम लाकर फल, मूल अर्पित किया। आसन पर बैठे प्रभु की अत्रि स्तुति करने लगे-

**नमामि भक्त वत्सलम, कृपालु शील कोमलम।**
**भजामि ते पदांबुजम, अकामिनाम स्वधामदम।।**

जैसे समुद्र से निकला कौस्तुभ रत्न, आप हृदय से लगाकर रखते हो वैसे ही अपने भक्तों को जग से विलग रखते हो। हे आजानुबाहु आप शिव, ब्रह्मादि से वंदित, लक्ष्मीपति, सज्जनों के धाम हो। आपके भक्त विषय वासना त्याग मुक्ति पाते हैं। हे प्रभु प्रसन्न होकर मुझे अपनी भक्ति प्रदान करो। आपके चरणों को मेरी मति कभी न त्यागे।

सीताजी ने अनुसुइयाजी को प्रणाम किया।

उन्होंने आशीष दे पास बैठाया। जो कभी मैले न हों, सदा प्रकाशित रहे, नित्य शोभायमान रहे ऐसे दिव्य वस्त्र आभूषण पहनाए।

*अनुसुइयाजी ने सीताजी को दो दिव्य कुंडल और स्वच्छ सूक्ष्म वस्त्र दिए।

**- आनन्द रामायण**

नारिधर्म की सीख दी। माता-पिता, भाई, हितू योग्यतानुसार सुख देते हैं किंतु पति अमित सुख दाता है-

**धीरज धरम मित्र अरु नारी, आपदकाल परखिये चारी।**

मन, वचन, कर्म से पति में अनुराग होना चाहिए। उत्तम पतिव्रता के मन में स्वप्न में भी दूसरा पुरुष नही। मध्यम पराए पुरुष में भाई, पिता, पुत्र देखे। निकृष्ट बस धर्म विचार, कुल का मान मानकर रहती है। ओर जो अवसर न मिलने, कुल और गुरु भय से निज धर्म में रहती हैं वे अधम हैं। क्षणिक सुख के लिए, करोड़ों जन्मतक दुख सहने वाली खोटी होती हैं। पति परायण की शुभगति पति है। पति प्रतिकूला जहां जन्म लेगी तरुणाई में वैधव्य पाएगी। हे सीता तुम्हें तो रामजी प्राणप्रिय हैं। यह मैंने जगत कल्याण के लिए कहा है। रामजी ने मुनि को प्रणामकर अन्य वन में जाने की आज्ञा ली।

मुनि ने रामजी के शील की सराहना की। मुनि के नेत्रों से अश्रु बहे। तन पुलकित हुआ। बाबा कहते हैं, राम का चरित्र सुनने वालों पर भी ऐसी ही कृपा होगी। कलियुग मल का भंडार है। यहां योग, जप, यज्ञ, धर्म, ज्ञान कुछ नहीं। बस चतुरजनों को रामजी का ही भरोसा है।

रामजी ने मुनि की स्तुति की। आकाश से पुष्पवृष्टि करते देवता बोले, हे कृपा निधान, आपकी जय हो, जय हो, जय हो।

मुनि को प्रणाम कर तीनो चले। दोनो के मध्य सीता ब्रह्म और जीव के मध्य माया सी चली।नदी, वन, पर्वत रास्ता देते। मेघ छाया करते।आश्रमों में विश्राम करते। कंद, मूल, फल खाते और सत्संग करते।

मूल रामायण 13-

**कहि विराध वध जाहि विधि, देह तजी शरभंग।**
**वरणि सुतीक्षण प्रेम पुनि, प्रभु अगस्त्य सतसंग।**

एक दिन मार्ग में जाते थे कि विराध (असुर) दौड़कर आया और सीताजी को उठाकर लेगया।

*विराध जव नामक राक्षस और शतहदा मां का बेटा था। वह तुंबरू नामक गंधर्व था जिसे कुबेर ने राक्षस होने का श्राप दिया था।

**- वा.रा.अ.03,04**

रामजी को विस्मय हुआ। लक्ष्मण से कहा, देखो कैकई के मन की हो गई। लक्ष्मण ने प्रभु को समझाकर, पांच बाण चलाए। वह जानकी को छोड़, विकराल रूप धरकर दौड़ा। रामजी ने बाणों से जर्जर करदिया। फिर दौड़ा तो सात बाण मारकर, अपने धाम भेजा।

(विराध गंधर्व था। कुबेर के पास, समयपर उपस्थित नहीं होने से, राक्षस होने का श्राप पाया। प्रार्थना करने पर रामजी के हाथों मुक्ति बताई।)

रघुनाथजी ने उसकी अस्थियां पृथ्वी में गाड़ी। जिसे देख देवता प्रसन्न हुए। इंद्र सब देवों को साथ ले, शरभंग मुनि के पास, रावण किस दिशा में रहता है, यह भेद बताने लाए। पृथ्वी ने इंद्र को देखा जो बहुत सुंदर, तेजवान है। रथ में चार घोड़े हैं जो पृथ्वी को स्पर्श नहीं करते। अदृश्य रहता है। वह शरभंग से रावण की कथा, व्यथा कहने गया था। रामजी को आता देख दूर से ही प्रणाम कर लोटा।

प्रभु शरभंगजी के आश्रम पधारे। मुनि ने स्वागत किया। बोले मैं विधाता के धाम जाने वाला था। तब सुना कि रामजी यहां आने वाले हैं। तब से प्रतीक्षा कर रहा था। आपने दीन पर बड़ी कृपा की। आपने अपना प्रण रखा।

मुनि ने अपन योग, यज्ञ, तप, व्रत दे भक्ति पाई। चिता रच विशयासक्ति त्यागकर बैठे। मांगा। मुनि के साथ हम भी मांगें-

**सीता अनुज समेत प्रभु, नील जलद तनु श्याम।**
**मम हिय बसहु निरंतर, सगुण रूप श्री राम।।**

इतना कह, योगअग्नि में अपना तन जला, वैकुंठ गये। भेद भक्ति वर मांगने के कारण प्रभु में लीन नहीं हुए। मुनि की गति देख सब ऋषि प्रसन्न हो, रामजी की जय बोलने लगे।

रामजी वन को चले। बहुत से मुनि साथ चले।अस्थियों का समूह देख दयालु रघुनाथ ने मुनियों से पूछा। मुनि बोले है नाथ, जानते हुए भी पूछते हैं। निशाचरों ने सभी मुनियों को खा लिया।रामजी के नेत्रों में जल भरआया। बोले-

**निशिचर हीन करौं महि, भुज उठाय प्रण कीन।**
**सकल मुनिन के आश्रमन, जाय जाय सुख दिन।।**

अगस्त्यजी के शिष्य सुतीक्ष्णजी मन, वचन, कर्म से श्रीराम के सेवक थे। अन्य देवों का भजन भी नहीं करते। रामजी का आगमन सुन दौड़े। हे विधाता, मुझपर रामजी कृपा करे। मुझमें भक्ति, ज्ञान, वैराग्य तो है नहीं। सत्संग, योग, जप, यज्ञ कुछ किया नहीं न चरण कमल में दृढ़ नेह है। लेकिन रघुनाथजी अनन्य गति वालों से प्यार करते हैं। प्रेम के समान मुझे दूसरा भजन नहीं आता। राम गुण गाने लगे। आज अवश्य दर्शन होंगे। मार्ग नहीं सूझता। कभी पीछे कभी आगे चलते। कभी नृत्य करते। अविचल भक्ति पा ली। रामजी वृक्ष की ओट से देखते देखते उनके हृदय में प्रकटे। चित्तवृत्ति रुकी। अविचल हो मार्ग में बैठ गए। कटहल के फल जैसे रोमांचित हुए। तब रघुनाथजी निकट आए। बोले, मुनि उठो। तुम मुझे प्राणों से भी प्यारे हो।-

मुनिहिं राम बहु भांति जगावा,जाग न ध्यान जनित सुख पावा।

जब राजा का रूप छुपाकर चतुर्भुज रूप दिखाया तब मुनि अकुलाकर उठे और सामने राम, लक्ष्मण, जानकीजी को देखा। लकुटी की तरह चरण में गिरे। रामजी ने उठाकर हृदय से लगाया। मुनि चित्रलिखे से दर्शन करने लगे। तब धीरज धरकर आश्रम लाए, पूजा की। बोले, स्तुति कैसे करूं। आपकी महिमा अमित है। मेरी बुद्धि अल्प। सूर्य के सम्मुख खद्योत की क्या बनी। प्रभु कृपा से विनती करने लगे-

**मोह विपिन घन दहन कृषानुम, संत सरोरूह कानन भानुम।**

(घन- घने, कृषानुम- अग्नि, सरोरूह- कमल)-

**निशिचर करि वरुथ मृगराजम, त्रातु सदा नो भवखग बाजम।**

(करि- हाथी, वरुथ- झुंड, मृगराजम- सिंह, भवखग बाजम- जगत रूपी बाज)

अंतःकरण के दुखों को शांत करने वाले, भुवि भारहर्ता को प्रणाम। आपके नाम से प्राणी संसार सागर से पार होजाता है। जानकीजी ओर लक्ष्मणजी सहित मेरे हृदय में विराजो। जैसे जीव मायावश होता है त्योंहीं आप मुझे प्रिय होवो-

अस अभिमान जाय जनि भोरे,मैं सेवक रघुपति पति मोरे।207

रामभक्ति तजकर कल्याण चाहने वाला मूर्ख है। रामजी ने प्रसन्न होकर हृदय से लगाया। बोले वर मांगो। मुनि बोले, मैंने कभी वर नहीं मांगा आपको जो भावे सो दो। रामजी ने दिया-

अविरल भगति विरति विज्ञाना,होहु सकल गुण ज्ञान निधाना।

मुनि बोले अब याद आया। मुझे चाहिए। मांगा। हम भी उनके साथ मांगें -

**अनुज जानकी सहित प्रभु, चाप बाण धर राम।**
**मम हिय गगन इंदु इव, बसहुं सदा निष्काम।।**

ऐवमस्तु कह रामजी अगस्त्यजी के आश्रम को चले। शरभंग बोले, मैं भी आपके साथ चलकर गुरुजी के दर्शन करना चाहता हूं। रामजी ने साथ लिया।

(अगस्त्यजी ने कहा था तुम रघुनाथजी को हमारे आश्रम लाना। यही गुरु दक्षिणा होगी।)

*अगस्त्यजी के आश्रम तक वनवास के नो वर्ष पूर्ण हो गए थे।

**-आनन्द रामायण**

आश्रम में सब वैर बिसरकर रहते। अत्यंत रमणीक। सुतीक्ष्णजी गुरुजी के पास जाकर बोले-

**नाथ कौशलाधीश कुमारा, आए मिलन जगत आधारा।**

सुनते ही अगस्त्य दौड़कर आए। प्रभु को देख नेत्रों में जल भरआया। दोनो भाइयों ने प्रणाम किया। ऋषि ने उठाकर हृदय से लगाया। कुशल पूछ आसन पर बैठाया। अन्य मुनि भी दर्शनकर सुखी हुए, जैसे प्यासे को स्वाति जल मिला।

*अगस्त्यजी ने इंद्र द्वारा रखा धनुष, दो अक्षयबाण वाले तरकस और रत्नजड़ित तलवार रामजी को भेंट की।

**-आनन्द रामायण**

*अगस्त्यजी ने विश्वकर्मा द्वारा निर्मित विष्णुजी का धनुष, ब्रह्माजी द्वारा दिया उत्तम बाण और इंद्र द्वारा दिए दो तरकश जो कभी बाणों से खाली नही होते, एक स्वर्ण मूठ की तलवार श्रीराम को भेंट की।

**- वा.रा.अ.12**

रामजी बोले आप जानते हो मैं यहां क्यों आया।

अब वह सम्मति दो जिससे मुनिद्रोहियों का नाश कर सकूं। मुनि मुस्काए। मैं आपकी कृपा से ही आपकी महिमा जानता हूं। कराल काल भी आपसे भय खाता है। मुझे एक वर दो। हम भी मांगें -

**यह वर मांगउं कृपा निकेता, बसहुं हृदय सिय अनुज समेता।**
**अविरल भक्ति अखंड अनंता, चरण सरोरूह प्रीति अभंगा।।**

मूल रामायण 14-

**कहि दंडकवन पावन ताई, गीध मइत्री पुनि तेहि गाई।**

है प्रभु निकट ही पवित्र पंचवटी है। वहां गोदावरी नदी है -

**दंडक वन पुनीत प्रभु करहू, उग्र श्राप मुनिवर कर हरहू।**

*1- एकबार पंचवटी में दुर्भिक्ष पड़ा। सब मुनि गौतमजी के पास आहारार्थ गए। उन्होंने बहुत काल तक पालन किया। फिर ऋषियों ने जन स्थान जाना चाहा पर गौतमजी के भय से कह न सके। सब ने छलकर माया की गाय बनाकर गौतम के धान्यागार में छोड़ दी। गौतम हटाने लगे। हाथ लगते ही मरगई। सब उनपर गौ हत्या दोष लगाकर जनस्थान आए। गौतम ने सच जानकर श्राप दिया कि जिस वन के लोभ से तुमने मुझसे छल किया वह भ्रष्ट हो जाय। वहां राक्षस वास करे।

*2- राजा दंडक ने गुरुपुत्री से उसकी इच्छा के विपरीत भोग करना चाहा। उसने भृगुजी से कहा। मुनि ने श्राप दिया कि सारा राज्य नष्ट होजाय। धूल बरसे। वहां से भागकर ऋषि जहां बसे वह जनस्थान कहलाया। रामजी के आने तक उसकी दुर्दशा की अवधि थी। उनके आने पर फूल पत्ते लगे।)

मूल रामायण 15-

**पुनि प्रभु पंचवटी कृत वासा, भंजेउ सकल मुनिन की त्रासा।**
**रामजी के दर्शन से, वन का पाप जाता रहा।**

प्रभु गोदावरी किनारे पर्णकुटी बनाकर रहने लगे-

**जबते राम कीन तहं वासा, सुखी भये मुनि बीती त्रासा।**
**अरुण पुत्र गिद्धराज जटायु से भेंट हुई। प्रीति बढ़ी।**
**(जटायु और दशरथजी की मित्रता थी। अब वह और गाढ़ी हुई।)**

*जटायु ने रामजी से कहा। प्रजापतियोंमें सबसे प्रथम कर्दम हुए। तदनन्तर दूसरे विकृत, शेष, संश्रय, बहुपुत्र, स्थाणु, मरीचि, अत्रि, क्रतु, पुलस्त्य, अङ्गिरा, प्रचेता (वरुण) और तेरहवें प्रजापति पुलह, दक्ष, विवस्वान्, अरिष्टनेमि और सत्रहवें प्रजापति महातेजस्वी कश्यप हुए। रघुनन्दन ! यह कश्यपजी अन्तिम प्रजापति कहे गये हैं॥

**- वा.रा.अ.14**

- अदित्यां जज्ञिरे देवास्त्रयस्त्रिंशदरिंदम ॥

आदित्या वसवो रुद्रा अश्विनौ च परंतप ।

'शत्रुओंका दमन करनेवाले रघुवीर ! अदिति के गर्भ से तैंतीस देवता उत्पन्न हुए- बारह आदित्य, आठ वसु, ग्यारह रुद्र और दो अश्विनीकुमार। हे परमतप श्रीराम ! ये ही तैंतीस देवता हैं ॥

**- जटायु - वा.रा.अ.14.14,15**

*विनता के दो पुत्र हुए गरुड़ और अरुण। अरुण के हम दो भाइयों संपाती और जटायु का जन्म हुआ।

**- वा.रा.अ.14.33**

*जटायु पंचवटी में सीताजी की रक्षा करते थे।

- आनन्द रामायण

पशु, पक्षी, वनस्पती सब लगता है आनंदित हैं।जहां रामजी विराजे हैं उस वन का वर्णन शेषजी भी नहीं कर सकते।

मूल रामायण 16-

पुनि लक्ष्मण उपदेश अनूपा,शूर्पणखा जिमि कीन्ह कुरुपा।

एक बार लक्ष्मणजी ने छलहीन प्रश्न किया।

***प्रश्न चार प्रकार के होते हैं -**
**1- विवादार्थ जो तुच्छ होते हैं।**
**2- परिक्षार्थ जो कनिष्ठ।**
**3- बुद्धि की चतुराई हेतु सो मध्यम।**
**4- संदेह निवृत्ति हेतु जो उत्तम।)**
**पूछा -**
**1- ज्ञान वैराग्य का तत्व क्या है।**
**2-माया का स्वरूप क्या है।**
**3-भक्ति का स्वरूप क्या है।**
**4-ईश्वर और जीव में क्या भेद है।**

**लक्ष्मणजी के प्रश्न व्यतिक्रम से हैं। रामजी अनुक्रम से उत्तर देते हैं**
**1- माया का स्वरूप क्या है।**

प्रभु बोले -

मैं अरु मोर तोर तैं माया,जेहि वश कीने जीव निकाया।

(देह में अहमभाव, अपने पदार्थों में ममता, तू, तेरा ये माया के स्वरूप हैं।)

गो गोचर जहं लगि मन जाई,सो सब माया जानेहु भाई।

(इंद्रियों के विषय, इनके देवता - श्रवण के दिशा, त्वचा के वायु, नेत्र के सूर्य, जिव्हा के वरुण, नासिका के अश्विनीकुमार, चरण के विष्णु, गुदा के यम, लिंग के दक्ष, हाथ के इंद्र, मुख के अग्नि ये सब अपने अपने विषयों को भोगते हैं।)

प्रकृति के दो भेद हैं विद्या और अविध्या। अविध्या दुख रूप है जिसके वश जीव संसार कूप में गिरता है। विद्या रूपी माया प्रभु प्रेरणा से जगत रचती है।

2- ज्ञान वैराग्य का तत्व क्या है।

प्रभु बोले -

**ज्ञान उसको कहते हैं जहां वर्ण, आश्रम का मान न हो।**
**"सर्वम खल्विदं ब्रह्म नेह नानास्ति किंचन।"**
**(नानास्ति किंचन- नाना वस्तु कुछ नहीं)**

समस्त सिद्धियों (ब्रह्मा की रज, विष्णु की सत, रुद्र की तमोगुण) को त्यागने वाला वैरागी होता है।

3- भक्ति का स्वरूप क्या है।

प्रभु ने समझाया - स्वधर्म से त्याग, योग से ज्ञान, ज्ञान से मोक्ष।

और -

जाते वेगि द्रवौं मैं भाई,सो मम भक्ति भक्त सुखदाई।

(ईश्वर में अनन्य प्रेम ही भक्ति है।)

भक्ति स्वतंत्र है। ज्ञान विज्ञान इसके अधीन हैं। भक्ति सुखमूल है, पर संत की अनुकूलता से मिलती है। इसके साधन सुनो।-

प्रथमहिं विप्र चरण अति प्रीती,निज निज धर्म निरत श्रुति रीती।

(श्रुति रीती- वेद रीती अनुसार)

इससे विषयों से वैराग्य और मेरे चरणों में प्रीति बढ़ेगी। नवधा भक्ति दृढ़कर मेरी लीला में मन लगावें। संतों से प्रेम। नियम से मन, वचन, कर्म से भजन-

गुरु पितु मातु बंधु पति देवा,सब मोहिं कहं जानै दृढ़ सेवा।

(दृढ़ सेवा- सेवा करे) -

मम गुण गावत पुलक शरीरा,गदगद गिरा नयन बह नीरा।

(वाग गदगदा द्रवते यस्य चित्तम......भागवत।)

मैं काम और अहंकारहीन के सदा वश में रहता हूं। मन वचन कर्म से जिसको मेरी गति है। कामना तजकर भजन करता है। मैं सदा उसके ह्रदय में विराजमान रहता हूं।

4- ईश्वर जीव में भेद क्या।

रामजी ने कहा -

जब तक स्वयं को माया का पति नहीं जानता तबतक जीव। जान लिया तो मायादि से परे हुआ। आज्ञा देने वाला। माया का प्रेरक ईश्वर है।

यह भक्तियोग सुन लक्ष्मण को सुख मिला, संदेह नष्ट हुआ और प्रभु में नया स्नेह जागा। रामजी ने हृदय से लगाया। इसी प्रकार सत्संग में कुछ दिन बीते।

एक दिन -

शुर्पनखा रावण की बहिनी,दुष्ट हृदय दारुण जिमि अहिनी।

(अहिनी- नागिन)

*पंचवटी में जब साढ़े तीन वर्ष पूर्ण हुए तब लक्ष्मण के हाथों अपने पुत्र सांब के वध का प्रतिशोध लेने शूपनखा आई पर राम के रूपपर मोहित हो गई।

**-आनन्द रामायण**

वह पंचवटी गई और दोनो कुमारों को देख, महा वृद्धा होकर भी, काम से व्याकुल हुई। नीच मति राक्षसी, कुटिला, ईश्वर से हंसी करने चली। कुलनाशक मति उपजी। प्रभु ने दंड दिया।

सुंदर रूपधर प्रभु के पास आ मुस्काकर बोली -

तुम सम पुरुष न मोसम नारी,यह संयोग विधि रचा विचारी।

सच ही तो कहा। राम समान राम और इसके समान कुलटा नहीं। बोली, अनुरूप पुरुष न मिलने से अभी तक कुमारी रही। तुमसे कुछ मन

माना।

प्रभु जानकी की ओर निहारते रहे। आशय यह कि तेरा मन माना पर हमारा नहीं या जानकी को देख मानो कहा कि इतनी सुंदर तो तू है नहीं। रामजी बोले –

**हम क्वांरे नहीं विवाहित हैं, फिर एक नारी व्रत रखते हैं।**
**अपनी को छोड़ अन्य सब को, माता या बहन समझते हैं।।**
**अत एव तुम्हारी यह आज्ञा, पालन कर सकते कभी नहीं।**
**हम आर्य पुरुष हैं आर्य धर्म, खंडन कर सकते कभी नहीं।।**

**- राधेश्याम रामायण**

कहा मेरा छोटा भाई कु मार है ( कु-खोटे पुरुष को, मार-मारने वाला) । कुमार है। जानकी की ओर इसलिए भी देखते हैं कि जानकी रावण की इष्ट है। उनका रुख देखते हैं कि रावण से विरोध करें या न करें। यह भी सोचा कि देखो स्त्री की ऐसी भी प्रकृति होती है।

वह लक्ष्मण के पास गई। अब इतनी ही देर में मन बदल गया। तुम सम पुरुष भूल गई। कामाचारी की मति थिर नहीं रहती। लक्ष्मण बोले -

सुनु सुंदरि मैं उन कर दासा,पराधीन नहिं तोर सुपासा।

(तोर सुपासा- तेरे योग्य नहीं हूं।) –

**प्रभु समर्थ कौशलपुर राजा, जो कछु करहिं उन्हहि सब छाजा।**
**केहरि सम नहिं करि वर, लवा कि बाज समान।**
**प्रभु सेवक इमि जानहु, मानहु वचन प्रमाण।।**
**(केहरि- सिंह, करि वर- श्रेष्ठ हाथी)-**
**सेवक सुख चह मान भिखारी, व्यसनी धन शुभ गति व्यभिचारी।**
**लोभी यश चह चारु गुमानी, नभ दुहि दूध चहत ये प्राणी।**
**(चारु- शोभा)**

वह फिर रामजी के पास आई। उन्होंने लक्ष्मण के पास भेजा। लक्ष्मण ने कहा तुझे वही वरेगा जो निर्लज्ज होगा। तब क्रोधित हो रामजी की ओर भयंकर रूप धरकर दौड़ी। सीताजी को सभय जान रामजी ने लक्ष्मण की ओर इशारा किया।

*प्रभु ने चार उंगली आकाश की ओर उठाकर झटका देकर संकेत किया। चार वेद। वेद मतलब श्रुति, कान। आकाश की ओर का मतलब नाक

"स्वरव्ययम स्वर्ग नाक" इत्यमरः।

झटका मतलब खण्ड।

**- बरवा रामायण**

वैसे भी किसी के घर की महिला उसकी नाक होती है। उसकी नाक काटना उस राजा की ही नाक का सवाल है।

लक्ष्मणजी ने तत्काल नाक कान काट मानो रावण को चुनौती दी।-

नाक कान बिनु भइ विकरारा,जनु स्रव शैल गेरू कै धारा।

मूल रामायण 17-

खर दूषण वध बहुरि बखाना,जिमि सब मर्म दशानन जाना।

वह व्याकुल होकर खर, दूषण के पास गई और बोली भाई, तेरे बल और पौरुष को धिक्कार है।उसके बताने पर यातुधान (राक्षस) ने सेना तैयार की। सेना में चौदह हजार ऐसे राक्षस थे जिन्होंने युद्ध में कभी पीठ नहीं दिखाई थी। पंख वाले पर्वतों की भांति राक्षस दौड़े। आकाश में श्याम घटा घिर आई। अनेक शस्त्र, आयुधों से मानो इंद्रधनुष उदय हुवा। अमंगल रूपी शूपनखा को आगे किया। युद्ध के बाजे बजे। बल बखाना।

अपशकुन हुए। गरजते, उड़ते चले। कोई कहता दोनो को जिंदा पकड़ेंगे। कोई बोला इन्हें मारकर इनकी स्त्री हर लो। कोई कहता वन में घूम रहे हैं मतलब वीर हैं।

आकाश तक उड़ती धूल देख, रामजी ने लक्ष्मण से कहा, सीता को लेकर पर्वत की कंदरा में जाओ। राक्षस कटक आया है।

शत्रुदल देख रामजी ने हंसकर धनुष चढ़ाया। जटा कसकर बांधी। भुजाओं पर मानो सर्प लड़ते हैं। कमर में तर्कस बंधा।

राक्षस आए। बोले पकड़ो, पकड़ो। राम को प्रातःकाल के सूर्य की भांति घेर लिया।

(प्रातः के सूर्य को घेरने वाले मंदेहा नामक दैत्य ब्राह्मणों द्वारा संध्या करके दिए जाने वाले जल से ताड़ित होकर मुक्त करते हैं।)

दंडक के खगमृग भागे। सब निशाचर राम रूप देख मोहित हो गए। बोले ये कोई राजकुमार हैं। हमने कई नर, नाग मारे किंतु ऐसी सुंदरताई नहीं देखी। अपराधी हैं फिर भी वधयोग्य नहीं। उनसे कहो अपनी नारी हमें दे और दोनो भाई भागजाए।

दूतों की बात सुन रामजी बोले कि आज हमारा बड़ा भाग्य है जो आपके स्वामी ने ऐसा कहा।अरे -

हम क्षत्री मृगया वन करहीं,तुमसे खल मृग खोजत फिरहीं।

बलवान शत्रु देखकर डरते नहीं हैं। एक बार काल से भी भिड़ जाते हैं। हम मनुष्य हैं। मुनि पालक। दुष्ट राक्षसों के वधकर्ता हैं। बल न हो तो घर जाओ। हम समर विमुख को नहीं मारते।

दूतों से यह सुन शर, चाप, तोमर, शक्ति, शूल, परिध, कृपाण से आक्रमण किया। रामजी के धनुष की टंकार से सब बहरे हो गए। फिर सावधान हो आक्रमण किया। प्रभु ने उनके आयुध काटकर तीर चलाए।

*त्रिशिरा के तीन सिर थे जिन्हें रामजी ने अपने तीखे बाणों से काट दिया।

**- वा.रा.अ.27.18**

राक्षस तात मात पुकारने लगे। खर के आवाहन पर लड़े। राम के बाण से कटे। पक्षी,पशु,गिद्ध, पिशाच उनके टुकड़े खाने लगे। राम राम कहते हुए सबने तन तजा। देवता फूल बरसाने लगे। आकाश में नगाड़े बजे। सुर, नर, मुनि सबका भय दूर हुआ।

लक्ष्मण सीताजी को लाए। प्रणाम किया। इस प्रकार पंचवटी में प्रभु मुनि हितकारी लीला करते हैं।

*खर, दूषण और त्रिशिरा के वध के समाचार लंका में रावण को दंडकारण्य निवासी अकम्पन ने दिए। उसने राम से प्रत्यक्ष युद्ध के स्थान पर उसकी पत्नी के हरण का सुझाव दिया।

**- वा.रा.अ.31**

खर दूषण की मृत्यु देख, शूपनखा रावण के पास जाकर बोली। तुमने राज, कोष और पंचवटी की सुरति बिसार दी है। मद पानकर दिन रात सोता है। तेरे सिरपर शत्रु आगया है। ज्ञान देने लगी -

राजनीति बिनु धन बिनु धर्मा,हरिहिं समर्पे बिनु सतकरमा।

**रिपु रूज पावक पाप, प्रभु अहि गनिय न छोट करि।**
**अस कहि विविध विलाप, करि लागी रोदन करन।।**
**(रूज- रोग)**

नीचे गिरी और बोली, दशकंधर तेरे होते मेरी यह दशा। सभासदों ने उठाया। रावण ने पूछा, बता तेरा यह हाल किसने किया। बोली, अयोध्या के राजकुमार वन में खेलने आए हैं। वे पृथ्वी राक्षसों से हीन करदेंगे। उनके बल मुनि निर्भय हो गए। देखने में बालक पर काल हैं। उनके साथ एक सुंदर स्त्री है। मुझे तुम्हारी बहिन जानकर उसके छोटे भाई ने मेरे नाक कान काट दिए। मैने खर दूषण को पुकारा तो उसने उनको भी मार दिया है।

खर दूषण का वध सुन रावण क्रोध से जला। शूपनखा को समझाकर घर गया। नींद नहीं आई। सोचा -

**खर दूषण मो सम बलवंता, तिनहिं को मारे बिनु भगवन्ता।**
**सुर रंजन भंजन महि भारा, जो जगदीश लीन अवतारा।**
**(रंजन- आनन्द देने वाले, सुख दाता)-**
**तौ मैं जाय वैर हठि करऊं, प्रभु शर मरि भव सागर तरऊं।**
**होइहि भजन न तामस देहा, मन क्रम वचन मंत्र दृढ़ एहा।**

(रावण ने विचार किया कि शूपनखा के नाककान काटकर जैसे नारायण ने मुझे अपने आने का संकेत किया है।)

अब तो -

**निश्चय ही वे अवतारी हैं, तो वैर भाव ही रक्खूंगा।**
**दूसरे जन्म का बंधन भी, उनके ही द्वारा तोड़ूंगा।।**
**यह मौत नहीं है मोक्ष है यह, लड़ना है नहीं मिलन है यह।**
**वह भी हों शर भी उनका हो, तो भवसागर तरना है यह।।**
**-राधेश्याम रामायण**

ओर यदि किसी राजा के पुत्र हैं तो उन्हें जीतकर, उनकी स्त्री हरलूंगा। यह सोच सुंदर रथ में चार खच्चर जोत, अकेला मारीच के पास गया।

यहां जब लक्ष्मण पुष्प, मूल, फल लेने गए तब रामजी सीताजी से बोले कि अब मैं नरलीला करूंगा। अतः -

तुम पावक मंह करहुं निवासा,जब लगि करौं निशाचर नासा।

जानकीजी का जन्म पृथ्वी से और अपना अग्नि से होने के कारण पिता मानते थे। स्त्री अपने पिता या पति के घर शुद्ध, सुरक्षित रहती है। या क्रोध अग्नि स्वरूप है। ऋषियों के क्रोध से जानकीजी का जन्म है। इससे अग्नि उनके पिता हैं। या सोचा महावीर से लंका जलवाना है। सब देव रावण से भयभीत हैं। हो सकता है अग्नि न जलावे। इस कारण अग्नि में अपनी शक्ति रखी।

जानकीजी अपना प्रतिबिंब बाहर रख, अग्नि में प्रवेश करगई। लक्ष्मण ने भी यह भेद नहीं जाना।

(एक बार कभी रावण, पुष्पक में बैठ जग जीतने निकला। वन में एक अबला देख कहा, अकेली क्यों फिरती हो। वह बोली मेरे पिता कुशध्वज वेदवादी ब्रह्मऋषि हैं। वेद पाठ करते समय उनके मुख से मेरा जन्म हुआ। मेरा नाम वेदवती रखा। प्रण किया कि विष्णु भगवान से ब्याह केरेंगे। शुंभ दैत्य ने पिता को मार दिया। मां सती होगई। मैं पिता का प्रण पूरा करने के लिए तप करती हूं। रावण बोला, क्यों श्रम करती हो। मेरी पत्नी बन जाओ। ऐसा कह हाथ पकड़ लिया। उसी समय वेदवती का हाथ तलवार सा होगया। बोली, अभी श्राप दूं तो मेरा तप नष्ट होगा। इससे मैं दूसरा जन्म ले तेरा नाश करूंगी। ऐसा कह अग्नि में जल गई। उसी का अंश जानकीजी में मिला है।)

*एक दिन लीला करने के लिए रामजी ने सीता को तीन रूपों में- रजो रूप से अग्नि, सत्व रूप से छाया की तरह उनके बाएं अंग में तथा तमोमई बनकर रावण को मोहित करने के लिए पंचवटी में निवास करने का कहा।

**- आनन्द रामायण**

मूल रामायण 18-

**दशकंधर मारीच बतकही, जेहि विधि भई सकल तेई कही।**

रावण ने मारीच के पास जाकर माथा नवाया। स्वार्थी कहींका-

**नवनि नीच की अति दुख दाई, जिमि अंकुश धनु उरग बिलाई।**
**(उरग- सर्प)**

रावण इससे पहले कभी मारीच के घर नहीं आया। आज जब काम पड़ा तो आया इसलिए नीच कहा।-

**भय दायक खल की प्रिय बानी, जिमि अकाल के कुसुम भवानी।**
**(अकाल- बिना ऋतु)**

मारीच ने पूजा करके पूछा, तात, अकेले आने का कारण क्या है। रावण ने सब कथा कही और उसे मृग बनने का कहा जिससे राम की स्त्री का हरण कर सकूं।

मारीच बोला रावण, वे नर रूप में ईश्वर हैं -

**तासौं तात वैर नहिं कीजै, मारे मरिय जियाये जीजे।**

मुनि के यज्ञ की रखवाली के समय, बिना फर का बाण मारकर मुझे वहां से सो योजन दूर फेंक दिया था। उनसे वैर भला नहीं। तब से मुझे हर तरफ वे दोनो भाई ही दिखाई देते हैं।

अरे -

**जेहि ताड़का सुबाहु हति, खंडेउ हर को दण्ड।**
**खर दूषण त्रिशिरा वधे, मनुज कि अस बरिबंड।।**
**(बरिबंड- बली)-**

रा अस नाम सुनत दशकंधर,रहत प्राण नहिं मम उर अंतर।
*मारीच बोला जब से राम ने मुझे यहां फेंका तब से रथ, रत्न, रजत, रुक्म (सोना), रमणी आदि के रकार से भी भय खाता हूं।

**-आनन्द रामायण-**
**रकारादीनि नामानि रामत्रस्तस्य रावण।**
**रत्नानि च रथाश्चैव वित्रासं जनयन्ति मे।।**

'रावण ! मैं रामसे इतना भयभीत हो गया हूँ कि रत्न और रथ आदि जितने भी रकारादि नाम हैं, वे मेरे कानोंमें पड़ते ही मनमें भारी भय उत्पन्न कर देते हैं।

**- वा.रा.अ.39.18**

तुम घर जाओ। कुल बचाओ।

यह सुनकर रावण जला। स्वर और भाव बदले। गाली दी। बोला मूर्ख, मुझे गुरु की भांति शिक्षा देरहा है। मेरे समान कोई योद्धा है क्या?

मारीच ने मन में विचार किया कि नो लोगों से विरोध में कल्याण नहीं। कौन कौन -

**शस्त्री मरमी प्रभु शठ धनी, वैद्य वंदि कवि मानस गनी।**
**(मानस गनी- गुणवान पंडित)-**
**अब रहीम मुश्किल पड़ी, गाढ़े दोऊ काम।**
**सांचे से तो जग नहीं, झूलें मिले न राम॥**
**- रहीम**

जब मारीच ने दोनो तरफ मरण देखा तो रघुनाथ की शरण तकी। सोचा इस दुष्ट के हाथों मरने से तो उनके शर से मरना उत्तम है।–

**हित हू की कहिये न तिहि, जो नर होय अबोध।**
**ज्यों नकटे को आरसी, होत दिखाये क्रोध।।**
**- वृंद कवि**

रावण के साथ चला। सोचा आज प्रियतम के दर्शन करूंगा-

**मम पाछे धर धावत, धरे शरासन बान।**
**फिरि फिरि प्रभुहिं विलोकि हौं, धन्य न मो सम आन।।**

जहां सीताजी लक्ष्मणजी सहित रामजी रहते थे रावण वहां गया। मारीच कपट मृग हुआ। मणि रचित स्वर्णदेह बनाई। सीताजी ने जब मनोहर मृग देखा तो बोली नाथ, देखो तो इस मृग की कितनी सुंदर छाल है। इसकी छाल लाओ।

तब सर्वज्ञ राम, देवों का कार्य करने के लिए, उसे मारने चले। लक्ष्मण से कहा, सीता की रखवाली करना। वन में राक्षस विचरते रहते हैं।

प्रभु को देख मृग भागा। वेद, शिव जिसका पार न पाते वो प्रभु मृग के पीछे जाते। कभी पास कभी दूर होता हुआ मारीच, प्रभु को दूर ले गया।

तब रामजी ने कठिन बाण मारा। लगते ही गिरा। पुकार कर 'हा लक्ष्मण' कहा और स्नेह सहित राम का स्मरण करने से, मुनि दुर्लभ गति पाई।-

विपुल सुमन सुर वर्षहिं,गावहिँ प्रभु गुण गाथ।निज पद दीन असुर कहं,दीनबंधु रघुनाथ।।

इधर रामजी लोटे। उधर प्रभु की आर्त वाणी सुनकर, जानकीजी लक्ष्मण से बोली, जल्दी जाओ। तुम्हारे भाई पर संकट है। यह सुन लक्ष्मण हंसे। बोले मां-

भ्रकुटि विलास सृष्टि लय होई,सपनेहुँ संकट परै कि सोई।

*सीताजी बोली - 'सुमित्राकुमार ! तुम मित्ररूप में अपने भाईके शत्रु ही जान पड़ते हो, इसीलिये तुम इस संकटकी अवस्थामें भी भाई के पास नहीं पहुँच रहे हो। लक्ष्मण ! मैं जानती हूँ, तुम मुझपर अधिकार करनेके लिये इस समय श्रीरामका विनाश ही चाहते हो ॥ 'अनार्य ! निर्दयी ! क्रूरकर्मा ! कुलाङ्गार! मैं तुझे खूब समझती हूँ। श्रीराम किसी भारी विपत्तिमें पड़ जाएं, यही तुझे प्रिय है। इसीलिये तू रामपर संकट आया देखकर भी ऐसी बातें बना रहा है। ऐसा कहकर अपने पेटपर हाथ मार कर छाती पीटकर विलाप करने लगी।

**- वा.रा.अ.45**

एक तो सीता के मर्म वचन कि तुम रघुनाथजी का कल्याण नहीं चाहते और प्रभु प्रेरणा से लक्ष्मण की मति डोली। चारों ओर अभिमंत्रित रेखा खींच कर, प्रणाम कर, जानकीजी को वनदेवों को सौंपकर चले। एक तरफ रामजी का डर, एक तरफ सीताजी अकेली। बड़ा सोच हुआ।

इधर सूना स्थान देख, माया से यती का वेश बनाकर, रावण आया। कपट वेश धरते ही वह जगजई तेज समाप्त हो गया।-

**रहिमन याचकता गहै, बड़े छोट है जात।**
**नारायण हूँ को भी भयो, बावन आँगुर गात ॥**
**- रहीम**

जिसके डर से सुर, असुर डरते हैं, रात में नींद,

दिन में भोजन नहीं करते वो दशानन -

**सो दशशीश श्वान की नाई,इत उत चितै चला भड़िहाई।**
**(भड़िहाई- चोरी करने)**

बाबा कहते हैं -

इमि कुपंथ पग देत खगेसा,रह न तेज बल बुधि लवलेशा।

मूल रामायण 19-

पुनि माया सीता कर हरना,श्री रघुवीर विरह कछु वरना।

चतुराई से भीख मांगी।

*रावण जब सीता जी के सामने आया तब शरीरपर साफ-सुथरा गेरुए रंगका वस्त्र लपेटे हुए था। उसके मस्तक पर शिखा, हाथमें छाता और पैरों में जूते थे। उसने बायें कंधेपर डंडा रखकर उसमें कमण्डलु लटका रखा था ॥

**- वा.रा.अ.46.03**

*ब्राह्मण वेष में वहाँ पधारे हुए रावणको देखकर मैथिली ने अतिथि-सत्कार के लिये उपयोगी सभी सामग्रियों द्वारा उसका पूजन किया। पहले बैठनेके लिये आसन दे, पाद्य (पैर धोनेके लिये जल) निवेदन किया। तदनन्तर ऊपर से सौम्य दिखायी देनेवाले उस अतिथिको भोजनके लिये निमन्त्रण देते हुए कहा- 'ब्रह्मन् ! भोजन तैयार है, ग्रहण कीजिये'॥

**- वा.रा.अ.46**

अतिथि जान जानकीजी कंद,मूल,फल लाई। लक्ष्मण रेखा देख रावण बोला, मैं बंधी भिक्षा नहीं लेता।

विधाता की वाम गति या काल की गतिवश सीताजी रेखा लांघकर बाहर आई। इससे यह संदेश भी दिया कि सद्गृहस्थ आसन्न संकट देखकर भी अपने सनातन धर्म का पालन करते हैं।

रावण ने भय, लालच दिया। जानकीजी ने कहा यति, कैसे बोलते हो। तब रावण ने अपना रूप दिखाकर अपना नाम बताया तो जानकीजी डरी। धीरज धरकर बोली दुष्ट, खड़ा रह रघुनाथ आते ही हैं। अरे सिंहनी को खरगोश चाहे, कौआ गरुड़ की समता करे, नदी सागर बनना चाहे और गधी कामधेनु हो सकती है क्या ? अपनी कुशल चाहता हो तो घर जा।

*सीताजी ने कहा मूर्ख राक्षस तू जहर पीकर जीना, पत्थर बांध कर सागर पार करना और आग को कपड़े में बांधने की भांति मेरा हरण करना चाहता है।

**- वा.रा.अ.47**

रावण ने मन में विचार किया कि यह सब घर जाने (मुक्ति पाने) के लिए ही तो कर रहा हूं।-

**सुनत वचन दशशीश लजाना, मन मंह चरण वन्दि सुख माना।**
**(चरण वन्दि- देवी जान कर)**

क्रोधकर रथ में जानकीजी को बिठाया। रथ हांका न गया। जानकीजी विलाप करने लगी। हे वीर रघुनाथजी, कहां हो। हे लक्ष्मण। आपपर क्रोध का फल पा रहीहूं। कैकई

के मन का आज हुआ। रामजी जाने कितनी दूर चले गए हैं। अरे देवों के भाग का पुरोडाश, गधा खाना चाहता है।

रावण यह न जाने कि मेरे वध हित चली है। उसे अज्ञानी बनाने को विलाप किया। पंचवटी के खग, मृग और वनचर दुखी हुए।

ब्रह्मा के वर से निर्भीक दशानन आकाश मार्ग से लिए जाता है।

भजन -

**आरत वचन कहति वैदेही।**
**विलपति भूरि बिसूरि दूरि गए, मृग संग परम सनेही।।**

कहे कटु वचन रेख नांघी मैं,तात क्षमा सो कीजै। देखि वधिक वश राज मरालिनि,लशणलाल छिन लीजै।।

**वन देविन सिय कहन कहति यों, छल कर नीच हरी हौं।**
**डोम के कर सुरधेनु नाथ ज्यों, त्यों पर हाथ परी हौं।।**
**तुलसिदास रघुनाथ नाम सुनि,अकनि गीध धुकि आयो।**
**पुत्रि पुत्रि जनि डरे न जइ हैं, मीच सीच हौं आयो।।**

गिद्धराज जटायु ने यह आरत वाणी सुन, रघुनाथजी की स्त्री जान, सोचा अरे मेरे शरीर में पहले सा बल तो नहीं फिर भी जाकर देखता हूं। पास जाकर बोला पुत्री सीता, डरो मत। मैं राक्षस का नाश कर दूंगा। यह कहकर पर्वत की भांति चला। रावण को ललकारा। बोले-

**यत् कृत्वा न भवेद् धर्मो न कीर्तिर्नयशो ध्रुवम् ।**
**शरीरस्य भवेत् खेदः कस्तत् कर्म समाचरेत् ॥**

'जो कार्य करनेसे न तो धर्म होता हो, न कीर्ति बढ़ती हो और न अक्षय यश ही प्राप्त होता हो, उल्टे शरीरको खेद हो रहा हो, उस कर्मका अनुष्ठान कौन करेगा ?

**- वा.रा.अ.50.19**

रावण समझा कि या तो काल समान यह मैनाक पर्वत या गरुड़ है। पास आनेपर जाना बूढ़ा जटायु है। मेरे हाथों रूपी तीर्थपर मरना चाहता है। गृद्ध बोला रावण, जानकी को छोड़ कर चले जाओ अन्यथा रामजी की क्रोधाग्नि में तेरा कुल, पतंग समान नष्ट होजाएगा।

अभिमानी रावण नहीं रुका। गृद्ध ने मुकुट गिरा, बाल खींच, धरती पर गिरा दिया। सीता को उतारकर वृक्ष के नीचे बिठाकर, फिर धावा बोला। रावण बाण चलाने ही वाला था कि धनुश तोड़, चोंच मार, देह फाड़ डाली। जिसने सुर, सिद्ध, देवों को वश किया उससे वीर वृद्ध गृद्ध लड़ रहा है।

*रावण के वार को बचाकर शत्रुदमन गृध्रराज जटायुने अपनी चोंच से मार-मारकर रावण की दसों बायीं भुजाओंको उखाड़ लिया। उन बाँहों के कट जाने पर बाँबी से प्रकट होनेवाले विषकी ज्वाला-मालाओं से युक्त सर्पों की भाँति तुरंत दूसरी नयी भुजाएँ सहसा उत्पन्न हो गयीं ॥

**- वा.रा.अ.51**

लड़ते लड़ते गृद्ध थक गया। तब रावण ने क्रोध कर तलवार से उसके पंख काट दिए।

*रावण ने श्रीरामचन्द्रजी के लिये पराक्रम करनेवाले जटायुके दोनों पंख, पैर तथा पार्श्वभाग काट डाले ॥

**- वा.रा.अ.51**

गृद्ध अद्‌भुत करनी करके गिरा। मन में सुख माना कि रघुनाथजी के काम में प्राण जारहे हैं। रावण डरता हुआ कि कोई और न आजावे जानकीजी को लेकर चला-

करति विलाप जाति नभ सीता,व्याध विवश जनु मृगी सभीता।

पहाड़ पर बैठे वानरों को देख, हरि नाम लेकर संदेश दिया- हरी जारही हूं, हरि याने वानरों, हरि आगए हैं यह कहकर वस्त्र गिराए।

*रावणने जानकीजी को अन्तःपुरमें रख दिया, मानो मयासुरने मूर्तिमती आसुरी मायाको वहाँ स्थापित कर दिया हो ।

**- वा.रा.अ.54.14**

*सीता को बहुत समझाया परंतु उसकी बात न मानने पर रावण बोला, 'निशाचरियो ! तुमलोग मिथिलेशकुमारी सीता को अशोकवाटिका में ले जाओ और चारों ओर से घेरकर वहाँ गूढ़ भावसे इसकी रक्षा करती रहो ॥

**- वा.रा.अ.56.30**

रावण सीताजी को अशोक वाटिका में रखकर घर गया। घर इसलिए नहीं ले गया कि-

1- आराम, वाटिका की सुंदरता कामोत्पादक होती है। यहां रह मुझसे प्रीति करने लगेगी।
2- कुबेर पुत्रों का श्राप स्मरण किया कि जब किसी स्त्री से बलात रतिरत होवोगे तो मस्तक विदिर्ण हो जाएगा।
3- अशोक के नीचे भूखी प्यासी रहकर भी प्राण नहीं त्यागेगी।

*ब्रह्माजी के कहने पर वहाँ आकर इन्द्र ने निद्रा से कहा- 'तुम राक्षसों को मोहित करो।' इन्द्र से ऐसी आज्ञा पाकर देवी निद्रा बहुत प्रसन्न हुईं। देवताओं का कार्य सिद्ध करने के लिये उन्होंने राक्षसों को मोह (निद्रा) में डाल दिया। इंद्र ने जानकीजी से कहा 'शुभे ! रम्भोरु ! यदि मेरे हाथ से इस हविष्य को लेकर खा लोगी तो तुम्हें हजारों वर्षोंतक भूख और प्यास नहीं सतायेगी'।

इंद्र की परीक्षा लेकर संतुष्ट होनेपर इन्द्र के हाथ से उस खीर को लेकर उन पवित्र मुसकानवाली मैथिली ने मन-ही-मन पहले उसे अपने स्वामी श्रीराम और देवर लक्ष्मण को निवेदन किया और फिर स्वयं ग्रहण किया।

**- वा.रा.अ.56/1**

*इंद्र ने सीताजी को जाकर खीर दी जिससे एक वर्ष तक भूख नहीं लगती। सीताजी ने रामजी और लक्ष्मण का भाग निकाला। कुछ देवों को अर्पित किया। गौ, पक्षी और त्रिजटा को देकर स्वयं पाया।

**- आनन्द रामायण**

लक्ष्मणजी को आता देख, रघुनाथजी ने ऊपर से चिंता कर कहा कि भाई, मेरा वचन भंग कर सीता को अकेली क्यों छोड़ आए। वन में निशाचर घूमते रहते हैं। मुझे ऐसा लगता है सीता आश्रम में नहीं है। लक्ष्मणजी ने चरण पकड़ माता के द्वारा कहे दुर्वचन कहे। रामजी भाई के साथ गए और सीता विहीन आश्रम देख साधारण मानव की भांति दीन हुए। विलाप करने लगे -

हा गुण खानि जानकी सीता,रूप शील व्रत नेम पुनीता।

विक्षिप्त की भांति विलाप करते हैं

*रे वृक्षा पर्वतस्था गिरिगहनलता वायुना वीज्यमानाह।

रामोअहम व्याकुलात्मा दशरथतनयः शोक शुक्रेण दग्धः।।

(पर्वतस्था- पर्वत पर हो सब देखते होगे, वायुना- सर्व गामी वायु को सब ज्ञात होता है, वीज्यमानाह- चलायमान, शोक शुक्रेण- शोकाग्नि)-

बिंबोष्ठी नागेंद्रकांची हा! सीता केन नीता मम हृदयगता को भवान केन दृष्टा।।

(बिंबोष्ठी- बिंब (कुंदरी, कुंदरू) के पके फल के समान गुलाबी होठों वाली, नागेंद्रकांची- नागेंद्र कंचुकी धारण किए हुए, केन नीता- कोन लेगया, को भवान- आप में से)

राम - के यूयं वद। (तुम कौन हो कहो)

लक्ष्मण- नाथ नाथ किमिदं ( हे नाथों के नाथ यह क्या कहते हो) दासोअस्मि ते लक्ष्मणह।

राम- को अहम वत्स (तो मैं कौन हूं तात)

लक्ष्मण- स आर्य एव भगवानायेह (आप रघुवंश में उत्पन्न आर्य हैं)

राम- स को (कौन)

लक्ष्मण- राघव (रघुवंशी राम)।

राम- किं कुर्मो विजने वनेतत (तो हम इस विजन वन में क्या कर रहे हैं)

लक्ष्मण- इतो देवीं समुद्वीक्ष्यते (यहां हम देवी को खोज रहे हैं) ।

राम- का देवी (कौन देवी)

लक्ष्मण- जनकाधिराजतनया, जानकीजी

राम- हा! हा! जानकी।

**- महानाटक**

लक्ष्मणजी ने प्रभु को बहुत समझाया किंतु वे लता वृक्षों से पूछते चले -

**हे खग मृग हे मधुकर श्रेणी, तुम देखी सीता मृगनैनी।**
**(मधुकर- भ्रमरों)**

उसके खंजन मृग से नेत्र, जल भरी बड़ी बड़ी आंखे, शुक जैसी नासिका, कपोत सी ग्रीवा, भ्रमर समूहों से केश, कोकिल कंठी, अनार के दाने जैसे दांत, कमल से मुख, नागिन सी चोटी, कामदेव के धनुष सी भोहें, हंस गमनी, गजगामिनी, केहरि कटि, कनक वर्णी, जानकी को देखा है। हे जानकी तुम कहां हो, प्रकट क्यों नहीं होती।

ऐसे महाविरही की भांति खोजते हैं। लक्ष्मणजी समझाते पर रामजी और व्याकुल होते। नरलीला जो कर रहे हैं।

मूल रामायण 20-

पुनि प्रभु गीध क्रिया जिमि कीन्ही,बधि कबंध शबरिहिं गति दीन्ही।

अनेक कंदरा, पर्वत, नदी, ताल देखे। आगे टूटा धनुष देख सोचा यहां किसी ने युद्ध किया है। आगे घायल गृद्धराज को देखा।

भजन -

**मेरे एकौ हाथ न लगी।**
**गयो वपु बीच बाद कानन ज्यों, कल्प लता दवपागी।।**
**दशरथ सों न प्रेम प्रतिपाल्यो, हु तो सकल जग राखी।**
**परवश हरत निशाचर पति सों, हठ न जानकी राखी।।**

**मरत न मैं रघुवीर बिलोके, तापस वेष बनाये।**
**चाहत चलन प्राण पामर बिनु, सिय सुधि प्रभुहिं सुनाये।।**
**बार बार कर मींजि शीश धुनि, गीधराज पछिताई।**
**तुलसी प्रभु कृपालु तेहि अवसर, आय गए दोउ भाई।।**

रघुनाथ ने कमल सा हाथ उसके सिरपर रखा।पीड़ा जैसे मिट गई।

सवैया -

**दीन मलीन अधीन है अंग, बिहंग पर्यो क्षिति खिन्न दुखारी।**
**राघव दीन दयालु कृपालु को, देखि दुखी करुणा भई भारी।।**

(क्षिति- क्षत, खिन्न- महा)-

**गीध को गोद में राखि कृपानिधि,नैन सरोजन में भरि वारी।**
**बारहिं बार सुधारत पंख, जटायु की धुरि जटान सों झारी।।**
**गीध को गोद में राखि कृपालु, निहारैं औ नैनन ते जल डारैं।**
**टूक ह्वै जात हैं सीता विथा कै,जो याकी सनेह कथा को विचारैं।।**

(टूक ह्वै जात- छोटा लगता है, सीता विथा- सीता का विरह)-

**छोड़ि चले तुम हाय हमें, हम भी अब आजही संग सीधारैं।**
**यों कहि राम भरे जल नैन, जटायु की धुरि जटान सों झारी।।**

गृद्ध बोला, नाथ दशानन ने यह दशा की है।उसने जानकीजी का हरण किया है। वे पक्षी की भांति विलाप करती थी। अब मेरे प्राण चलना चाहते हैं। रामजी ने कहा तात इस तन को रखो।

**पद -**

**मेरे जान तात कछुक दिन जीजै।**
**देखिये आप सुवन सेवा सुख, मोहिं पितु को सुख दीजै।।**
**दिव्य देह इच्छा जीवन जग, विधि मनाय मांगि लीजै।**
**हरि हर सुयश सुनाय दरश दै, लोग कृतारथ कीजै।।**
**देखि वदन सुनि वचन अमिय सम,राम नयन जल भीजै।**
**बोल्यो वचन गृद्ध रघुवर बलि, कहीं सुभाय पतीजै।।**
**मेरे मरिबे सम न चारि फल, होहि तौ क्यों न कहीजै।**
**तुलसी प्रभु दिए उत्तर मौनहि, परि मानो प्रेम सहीजै।।**

**गृद्ध मुसकाकर बोला -**

**जाकर नाम मरत मुख आवा,अधमहुं मुक्त होइ श्रुति गावा।**
**सो मम लोचन गोचर आगे, रखौं नाथ देह केहि लागे।**

रामजी रोने लगे। बोले इसमें मेरी बड़ाई नहीं।आपने अपने कर्मों से ऐसी गति पाई है -

पर हित बस जिनके मन माहीं,तिन कहं जग दुर्लभ कछु नाहीं।

# ।। परोपकाराय सतां विभूतयः।।

तन तज मेरे धाम को जाओ। आप पूर्णकाम हो। मैं क्या दूं। सीता का हरण पिताजी से मत कहना। उन्हें दुख होगा। रावण कुल सहित मरकर, जाकर कहेगा। गृद्ध देह तज, अनुपम पीत वस्त्र धारण कर, हरि रूप धर, चार भुजा वाला हो स्तुति कर-

**अविरल भक्ति मांगि वर, गृद्ध गयेउ हरि धाम।**
**देहिकी क्रिया यथोचित, निज कर कीनी राम।।**

बिना कारण कृपा करने वाले रामजी ने -

**गीध अधम खग आमिश भोगी, गति दीन्ही जो याचत योगी।**

शिवजी बोले -

**सुनहु उमा ते लोग अभागी, हरि तजि होहि विषय अनुरागी।**
**फिर दोनो भाई सीताजी को खोजने लगे। मार्ग में कबंध का उद्धार किया।**

(यह गंधर्व था। इसके गाने से दुर्वासा नहीं रीझे। उनपर हंसा। मुनि ने राक्षस होने का श्राप दिया।यह उत्पात करने लगा। इंद्र के वज्र प्रहार से इसका सर पेट में घुसगया। नाम हुआ कबंध। भोजन की प्रार्थना पर इंद्र ने योजन भर की भुजा कर दी। जो भुजा में आता खा जाता।प्रार्थना करनेपर मुनि ने रामजी के हाथों उद्धार बताया। इसने रामजी को खींचा)

रामजी ने कहा कबंध सुन। जो ब्राह्मणों का सेवक है उसके वश में मैं, ब्रह्मा और शंकर होते हैं। मुझे ब्राह्मण कुलद्रोही प्रिय नहीं है।

शाप देता (नारद), ताड़त (भृगु), कठोर कहने वाला (परशुराम) भी पूज्य है। कबंध गंधर्व देहधर आकाश मार्ग से विदा हुआ।

*कबंध जब स्वर्ग जाने लगा तब उसी ने रामजी को श्रमणा नामक शबरी के पास भेजा था।

**-आनन्द रामायण**

रामजी शबरी को गति देने उसके आश्रम पधारे। मुनि के वचन स्मरण कर शबरी प्रसन्न हुई।

(शबरी मतंग ऋषि की सेवा किया करती थी। ऋषि के साथ यह भी परम धाम जाने लगी। तब ऋषी ने रामजी के आने का कहकर इसे यहीं रोका। दस हजार वर्ष पश्चात रामजी आए।)

शबरी ने बारबार प्रणाम किया। मगन हो गई।बोल न पाई। पैर धोए। आसन पर बैठाया।

रामजी ने शबरी से पूछा -

**कच्चित्ते निर्जिता विघ्नाः कच्चित्ते वर्धते तपः ।**
**कच्चित्ते नियतः कोप आहारश्च तपोधने ॥**

'तपोधने ! क्या तुमने सारे विघ्नोंपर विजय पा ली? क्या तुम्हारी तपस्या बढ़ रही है? क्या तुमने क्रोध और आहार को काबू में कर लिया है?

**- वा.रा.अ.74.08**

*शबरी ने कहा 'पुरुषप्रवर, मैंने आपके लिये पम्पा तटपर उत्पन्न होने वाले नाना प्रकार के जंगली फल-मूलों का संचय किया है'।

**- वा.रा.अ.74.18**

**कंद, मूल, फल प्रेम से अर्पित किए। रामजी ने गुण गाकर खाए।**

**कवित -**

**बेर बेर ले सराहे बेर बेर बहु, रसिक बिहारी देन बंधु कहं फेर फेर।**
**चाखि चाखि भाषै यह ताहूते महान मीठो, लेहु तो लषण यों बखानते हैं हेर हेर।।**

**बेर बेर देवै बेर शबरी सुबेर वेर, तऊ रघुवीर बेर बेर तेहि टेर टेर।**
**बेर जनि लावो बेर बेर जनि लाओ बेर,बेर जनि लाओ बेर लाओ कहै बेर बेर।।**

हाथ जोड़ आगे खड़ी हुई। बोली, मैं आपकी स्तुति कैसे करूं। मैं जड़ मति, गंवार, अधम।
रघुनाथजी बोले,अरी भामिनि। मैं केवल भक्ति का नाता मानता हूं।-

**जाति पांति कुल धर्म बड़ाई, धन बल परिजन गुण चतुराई।**

यह सब हो पर भक्ति न हो तो वह व्यक्ति बिना जल के मेघ समान होता है। नौ प्रकार की भक्ति कहता हूं। सावधान होकर सुन-

**प्रथम भक्ति संतन कर संगा, दूसरि रति मम कथा प्रसंगा।**
**गुरु पद पंकज सेवा, तीसरि भक्ति अमान।**
**चौथि भक्ति मम गुण गण, करै कपट तजि गान।।**
**मंत्र जाप मम दृढ़ विश्वासा, पंचम भजन सो वेद प्रकासा।**
**षट दम शील विरति बहु कर्मा, निरत निरंतर सज्जन धर्मा।**

(दम- इंद्रिय निग्रह, शील- शीलवान, विरति बहु कर्मा- कर्मों से वैराग्य, सत्कर्म से प्रीति, निरत- संलग्नता, आचरण करना)

**सप्तम सब मोहिमय जग देखै, मोते संत अधिक करि लेखै।**
**अष्टम यथा लाभ संतोषा, सपनेहु नहिं देखै पर दोषा।**
**नवम सरल सब सन छल हीना,मम भरोस हिय हर्ष न दीना।**

इनमें से एक भी जिसे होगी वह मुझे अतिशय प्रिय है। फिर तुझमें तो सब भक्तियां दृढ़ है। जो गति योगियों को भी दुर्लभ है वह आज तुझे सुलभ हुई है। मेरे दर्शन से जीव अपने सहज स्वरूप को प्राप्त करता है।

फिर जनक सुता के समाचार पूछे। शबरी बोली, एक बार कभी रावण, पुष्पक में बैठ जग जितने निकला। वन में एक अबला देख कहा, अकेली क्यों फिरती हो। वह बोली मेरे पिता कुशध्वज वेदवादी ब्रह्मऋषि हैं। वेद पाठ करते समय उनके मुख से मेरा जन्म हुआ। मेरा नाम वेदवती रखा। प्रण किया कि विष्णु भगवान से ब्याह करेंगे। शुंभ दैत्य ने पिता को मार दिया। मां सती होगई। मैं पिता का प्रण पूरा करने के लिए तप करती हूं। रावण बोला, क्यों श्रम करती हो। मेरी पत्नी बन जाओ। ऐसा कह हाथ पकड़ लिया। उसी समय वेदवती का हाथ तलवार सा होगया। बोली, अभी श्राप दूं तो मेरा तप नष्ट होगा। इससे मैं दूसरा जन्म ले तेरा नाश करूंगी। ऐसा कह अग्नि में जल गई। उसी का अंश जानकीजी में मिला है। रावण अपने नाश के लिए चुरा ले गया है। यह मैने मतंगजी से सुना था।

*शबरी ने कहा कि मेरे तपस्वी गुरु उपवास करने से दुर्बल होने के कारण जब वे चलने-फिरने में असमर्थ हो गये तब उनके चिन्तन मात्र से वहाँ सात समुद्रों का जल प्रकट हो गया। वह सप्तसागर तीर्थ आज भी मौजूद है। उसमें सातों समुद्रोंके जल मिले हुए हैं, उसे आप चलकर देखिये ॥

**- वा.रा.अ.74.25**

फिर कहा आप पंपा सरोवर को जाओ जहां कोई किसी से वैर नहीं करता। वहां सुग्रीव से मित्रता होगी। वह आपको सब बता देगा। इतना कह, हृदय में प्रभु पद पंकज धार, योग अग्नि से तन तज, हरि पद में लीन हुई। बाबा कहते है -

**जाति हीन अघ जन्म महि, मुक्त कीनि असि नारि।**
**महामंद मन सुख चहसि, ऐसे प्रभुहिं बिसारि।। (अघ- पाप रूप)**

मूल रामायण 21-

**बहुरि विरह वर्णत रघुवीरा, जेहि विधि गए सरोवर तीरा।**

वन देखते आगे बढ़े। लक्ष्मण देखो सब खगमृग नारी सहित हैं, मानो मेरी निंदा करते हैं। मृग भागते हैं तो मृगी कहती है मत डरो। यह तो स्वर्ण मृग पकड़ने आए हैं। हाथी हथिनियों के साथ हैं। स्त्री, शास्त्र और राजा कितना भी यत्न करो पर वश में नहीं होते। वसंत है पर इसमें प्रिया हीन मुझे भय लगता है।

काम का कटक देख जो धैर्य धरे उसी की जगत में मर्यादा है। काम को नारी का बल है। काम, क्रोध, लोभ ये तीनो बड़े बड़े ज्ञानी विज्ञानियों को भी क्षोभित कर देते हैं। लोभ को इच्छा, पाखंड का, काम को नारी, क्रोध को कटु वचन का बल है।

शिवजी कहते हैं प्रभु ने सामान्य जनों के उद्धार हेतु यह कहा। इनसे बचाने वाले केवल रघुनाथजी ही हैं। अतः -

उमा कहऊं मैं अनुभव अपना,सत हरि भजन जगत सब सपना।

पंपा सर पर सीता के वियोग में दुखी रामजी को समझाते हुए लक्ष्मण ने कहा -

**उत्साहो बलवानार्य नास्त्युत्साहात् परं बलम् ।**
**सोत्साहस्य हि लोकेषु न किंचिदपि दुर्लभम्॥**

'भैया ! उत्साह ही बलवान् होता है। उत्साह से बढ़कर दूसरा कोई बल नहीं है। उत्साही पुरुषके लिये संसार में कोई भी वस्तु दुर्लभ नहीं है॥

**- वा.रा.कि.01.121-**

उत्साहवन्तः पुरुषा नावसीदन्ति कर्मसु। उत्साहमात्रमाश्रित्य प्रतिलप्स्याम जानकीम्॥ 'जिनके हृदयमें उत्साह होता है वे पुरुष कठिन-से-कठिन कार्य आ पड़ने पर हिम्मत नहीं हारते। हमलोग केवल उत्साह का आश्रय लेकर ही जनकनंदिनी को प्राप्त कर सकते हैं।

**- वा.रा.कि.01.122**

पंपा सरोवर के निकट जाकर रामजी ने देखा, अनेक पशु पक्षी जल पी रहे हैं। यहां की भीड़ मानो दाता पुरुषों के द्वारे, याचकों के जैसी लगी। मछलियां सुखी हैं। नाना भांति के कमल, भौंरे, जल कुक्कुट, हंस हैं। पक्षियों की मधुर आवाज जाते पथिक को मानो आवाज दे रही हो। ताल समीप मुनियों के आश्रम और चंपा, बकुल, तमाल, कटहल, ढाक, आम आदि सुंदर तरु हैं। त्रिविध बयार। फल भरे वृक्ष उपकारी पुरुष की भांति नम्रता से झुके हैं।

दोनो मज्जनकर तटपर बैठे। सभी देवों ने आकर विनती की। अनुज से ज्ञान विज्ञान वार्ता हुई।

मूल रामायण 22-

**प्रभु नारद संवाद कहि, मारुति मिलन प्रसंग।**
**पुनि सुग्रीव मिताई, वालि प्राण कर भंग।।**

नारदजी को दुख हुआ कि मेरे श्राप के कारण प्रभु नाना दुख सहते हैं। आकर प्रणाम किया। बड़ी देर तक प्रभु ने हृदय से लगाया। निकट बिठाया। प्रभु से आज्ञा लेकर नारद ने मांगा कि आपका यह पावन राम नाम सदैव मेरे हृदय में विराजमान रहे-

राम सकल नामन ते अधिका,होउ नाथ अघ खग गण वधिका।

नारद ने पूछा नाथ, जब मैं विवाह करना चाहता था तो मुझे क्यों रोका था। प्रभु बोले जो मेरे भक्त, मेरे आश्रित होते हैं मैं -

**करऊं सदा तिनकी रखवारी, जिमि बालकहि राख महतारी।**

बालक और बछड़ा, अग्नि, सर्प को पकड़ना चाहे तो मां रक्षा करती है। प्रौढ़ होने पर उतनी प्रीति नहीं करती।-

**मोरे प्रौढ़ तनय सम ज्ञानी, बालक सुत सम दास अमानी।**

बालकों को हमारा और ज्ञानियों को अपना बल है। संतों को काम, क्रोध, लोभ दुखदाई हैं पर दारुण दुखदाता माया रूपी नारी है। मोह रूपी वन को नारी वसंत है और यह जप, तप, नियम सभी को सोख लेती है। यह अवगुण और दुखों की खान है। इसीलिए मैने आपको रोक लिया था। यह सुन मुनि पुलकित हुए। नेत्रों में जल भरआया। ऐसा कौन है जिसको सेवक पर इतनी प्रीति है।-

**जे न भजहिं अस प्रभु भ्रम त्यागी, ज्ञान रंक नर मंद अभागी।**

नारदजी ने कहा, हे रघुनाथजी, संतों के लक्षण कहिए जिनसे आप उनके वश में रहते हैं। प्रभु बोले -

**षटविकार जित अनघ अकामा, अचल अकिंचन शुचि सुख धामा।**

(षटविकार- काम, क्रोध, लोभ, मोह, मत्सर, अहंकार, अनघ- पाप रहित, अकामा- कामना रहित, अकिंचन- धन के लोभ से रहित, शुचि- पवित्र)

चाहना रहित, मित भोगी, सत्य वक्ता, कोविद (सत- असत के जानने वाले), इंद्रियजित, धर्म में सावधान, मानदाता, मद रहित, धैर्यवान, भक्तिमार्ग में प्रवीण, गुण के घर, संसार के दुख से भिन्न, संदेह रहित और हमारे चरण कमल की प्रीति से जिन्हें न देह न घर प्यारा है। जो -

**निज गुण श्रवण सुनत सकुचाहीं, पर गुण सुनत अधिक हर्षाहीं।**

जप, तप, व्रत, दम, संयम, नियम रखते हैं। गुरु, गोविंद और ब्राह्मण के चरणों में जिनकी प्रीति है। दम (इंद्रिय निग्रह), संयम (विषय त्याग) मेरे चरणों में माया रहित प्रीति है। विरति (त्याग) विवेक, (सत असत का जानना), विज्ञान (अंतर्विचार), पाखंड, अभिमान और कुमार्ग से दूर रहते हैं। मेरी लीला का सदा गान, श्रवण करते हैं। बिना प्रयोजन परहित निरत हैं। मेरे भक्तों के लक्षण शेष शारदा भी नहीं कह सकते।

नारदजी प्रभु को प्रणाम कर ब्रह्मलोक गए।

बाबा कहते हैं रावण के शत्रु रामजी के यश गाने वाले बिना वैराग्य, जप, योग रघुनाथजी की दृढ़ भक्ति पा लेंगे। हे मन, दिए की बत्ती समान स्त्रियों में पतंग बन मत जल। काम मद त्याग, राम मद अपना।सत्संग कर।

**।।इति अरण्यकाण्ड।।**

# ।। किष्किंधाकांड ।।

**कुंदेंदीवर सुंदरावतिबलौ विज्ञानधामावुभौ।**
**शौभाढ्यो वरधन्विनौ श्रुतिनुतौ गौ विप्रवृंद प्रियो।।**
**माया मानुष रूपिणौ रघुवरौ सद्धर्मवर्मो हि तौ।**
**सीतान्वेषणतत्परौपथिगतौ भक्ति प्रदौ तौहि नः।।**

(कुंदेंदीवर- कुंद पुष्प से गोरे लक्ष्मण और इंदीवर अर्थात श्याम कमल से रघुनाथ, श्रुतिनुतौ- स्तुत्यमान, भक्ति प्रदौ तौ हि नः- मुझे भक्ति देने वाले हैं)

ऐसे श्रीरामचंद्र का नाम सदैव शिवजी के मुख में है। यह भव रोग औषधि, जानकीजी का जीवन दाता है-

**जरत सकल सुर वृंद, विषम गरल जेहि पान किय।**
**तेहि न भजसि मतिमंद, को कृपालु शंकर सरिस।।**

कथा आरंभ करते हैं।-

**आगे चले बहुरि रघुराया, ऋष्यमूक पर्वत नियराया।**

(आगे चले- इतनी विपदाओं के बाद भी आगे चले)

यहां निवासरत सुग्रीव ने दोनो वीरों को आता देख, हनुमानजी से कहा। देखो दो वीर पुरुष इधर आरहे है। बटुक रूप धरकर जाकर देखो और संकट देखो तो मुझे वानरी संकेत कर देना।

*पवनकुमार वानरवीर हनुमान ने यह सोचकर कि मेरे इस कपिरूप पर किसीका विश्वास नहीं जम सकता, अपने उस रूपका परित्याग करके भिक्षु (सामान्य तपस्वी) का रूप धारण कर लिया।

**- वा.रा.कि.03.02**

हनुमानजी ने पास जाकर (देवपुरुष, संन्यासी, अवतारी जान) प्रणाम किया। पूछा - को तुम श्यामल गौर शरीरा,क्षत्रिय रूप फिरहु वन वीरा।

कठिन भूमि कोमल पद गामी,कवन हेतु वन विचरहु स्वामी।

क्या आप ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों देवताओं में से कोई है अथवा आप नरनारायण, दो मूर्ति धारण करके, जगत की रक्षा के हित, विचरते हो। हंसकर रघुवंशभूषण रघुनाथजी बोले -

**कौशलेश दशरथ के जाए, हम पितु वचन मानि वन आये।**

राम और लक्ष्मण हम दोनों भाई हैं। संग में सुकुमारी जानकी थी -

यहां हरी निशिचर वैदेही,विप्र फिरहिं हम खोजत तेही। हमने अपना परिचय दे दिया। अब आप भी अपना परिचय दीजिए। सुनते ही महावीरजी चरणों में गिरे। अपने स्वामी को पहचान स्तुति की। बोले, मैं आपकी मायावश भूला था सो नहीं पहचान पाया किंतु आप समर्थ होकर कैसे पूछते हो-

**एक मंद मैं मोह वश, कीश हृदय अज्ञान।**
**पुनि प्रभु मोहि बिसारेहु, दीनबंधु भगवान।।**

ऐसा कह महावीरजी अपने रूप में प्रकटे। रामजी ने हृदय से लगाया। कहा आप हमारे अनन्यगति सेवक हैं। अनन्य कौन-

**सो अनन्य जाकी असि, मति न टरै हनुमंत।**
**मैं सेवक सचराचर, रूप स्वामि भगवंत।।**

महावीरजी बोले नाथ, पर्वत पर कपिपति सुग्रीव रहते हैं जो आपके दास हैं। उनसे मित्रता कर अभयदान दीजिए। वह सीता की खोज में वानरों को भेजेंगे। ऐसा कह, दोनो को कंधेपर बिठा, कूदकर पर्वतपर गए। सुग्रीव रामजी के दर्शनकर प्रसन्न हुआ।

हनुमानजी ने दोनो ओर की कथा कह, अग्नि की साक्षी में मित्रता करवाई। सुग्रीव बोला नाथ, चिंता न करें। मिथिलेश कुमारी अवश्य मिलेगी।एक बार मैं मंत्रियों सहित यहां बैठा था कि अकाश मार्ग से, बहुत व्याकुल होकर जाती हुई, परवश देखी थी। राम राम कहकर हमें देख वस्त्र गिराए। रामजी के कहने पर वस्त्र दिखाया।

रामजी ने हृदय से लगा लक्ष्मण से पूछा तो लक्ष्मण बोले -

*श्री राम द्वारा सुग्रीव के दिखाए जेवर दिखाए तो लक्ष्मण बोले -

**नाहं जानामि केयूरे नाहं जानामि कुण्डले ॥**
**नूपुरे त्वभिजानामि नित्यं पादाभिवन्दनात् ।**

'भैया ! मैं इन बाजूबंदों को तो नहीं जानता और न इन कुण्डलों को ही समझ पाता हूँ कि किसके हैं; परंतु प्रतिदिन भाभी के चरणों में प्रणाम करने के कारण मैं इन दोनों नूपुरों को अवश्य पहचानता हूँ' ॥

**- वा.रा.कि.06.22,23-**

पग भूषण मैं सकत चिन्हारी,ऊपर कबहुं न सीय निहारी।

कवित्त -

**अमल अमोल गोल कुंडल प्रकाशमान, एसी दर्शात काऊ गज गामिनी को है।**
**तैसेही अमंग भुजवंद चंद ते दुचंद, दीपति सुदिव्य दुतिहारी दामिनी को है।।**
**परम पुनीत पद भूषण अनूप चारु, पूजनीय संतत विलोकि नामिनी को है।**
**रसीकबिहार और नहिं पहचाने एक, जाने यह नूपुर हमारी स्वामिनी को है।।**
**(रामरसायने)**

**मैने तो चरण निहारे हैं, देखे माता के कान नहीं।**
**मैं तो बिछियों का सेवक हूं, कुंडल की कुछ पहचान नहीं।।**
**पर नाथ शकुन यह अच्छा है, चढ़ते हैं तीर कमानों पर।**
**जल्दी ही वह दिन आएगा, कुंडल होंगे उन कानों पर।।**
**- राधेश्याम रामायण**

रघुनाथजी ने सुग्रीव से पूछा कि आप किस कारण वन में रहते हो बताओ। पहले कहां रहते थे। माता पिता का नाम क्या है।

सुग्रीव बोला प्रभु, एक बार ब्रह्माजी ने नेत्रों से कीचड़ (मेल) निकालकर पृथ्वी पर डाली। उससे एक महाबली और ज्ञानी वानर प्रकटा। जिसका नाम ऋच्छराज रखा। वह बोला क्या आज्ञा है। ब्रह्माजी ने कहा वन में विचरो, फल खाओ और राक्षसों को मारो। वह राक्षस को देख पत्थर मारता। एक बार कुंड में अपनी परछाई देख सोचा, यह यहां कैसे छुपकर रहता है। गरजा, घूरा और चारों तरफ घूमकर कुंड में कूद गया। कुंड में जाते ही सुंदर स्त्री होगया।
बाहर निकला तो इंद्र की दृष्टि पड़ी। बालों पर बिंदु गिरा। सूर्य के मोहने से ग्रीवा पर बिंदु गिरा-

**इंद्र अंश ते बालि भा, महावीर बलधाम।**
**दिनकर सुत दूसर भयो, तेहि सुग्रीव सुनाम।।**

तभी वह फिर ऋच्छराज होगया और हमें ब्रह्माजी के पास लेगया। ब्रह्माजी ने हरि इच्छा कह, हमें किष्किंधा का राज्य करने भेजा। बोले, कभी प्रभु का वहां आगमन होगा। हम दोनो वहां निवास करने, दैत्य वधने लगे। -

नाथ वालि अरु मैं दोउ भाई,प्रीति रही कछु बरणि न जाई।

*सुग्रीव ने कहा है रघुनंदन,'उन दिनों मायावी नामक एक तेजस्वी दानव रहता था, जो मय दानवका पुत्र और दुन्दुभि का बड़ा भाई था। उसके साथ वाली का स्त्रीके कारण बहुत बड़ा वैर हो गया था ॥

**- वा.रा.कि.09.04**

एक बार मयदानव का बेटा मायावी हमसे युद्ध करने आया। वाली को देख भागा। हम दोनो उसके पीछे गए। वह पर्वत की गुफा में घुसगया। वाली ने मुझसे कहा पंद्रह दिन मेरी बाट देखना। नहीं आऊं तो समझ लेना मैं मारा गया। मैं एक माह वहां रुका।

*बिल के भीतर गये हुए उन्हें एक साल से अधिक समय बीत गया और बिल के दरवाजे पर खड़े-खड़े मेरा भी उतना ही समय निकल गया

**- वा.रा.कि.09.15**

फिर रुधिर की धार देख वाली को मरा जानकर, यह सोचकर कि अब मायावी मुझे मारेगा, गुफा के द्वारपर शिला लगाकर मैं भाग आया। पंपापुर के लोग वाली की मृत्यु से दुखी हुए और मंत्रियों ने जबरदस्ती मुझे राजा बनादिया।

वाली कुछ समय बाद लोटा और मुझे सिंहासन पर बैठे देखकर बहुत मारा। राज्य के साथ मेरी स्त्री भी ले ली।

*वाली सूर्योदयके पहले ही पश्चिम समुद्र से पूर्व समुद्र तक और दक्षिण सागर से उत्तर तक घूम आता है, फिर भी वह थकता नहीं है।

**- वा.रा.कि.11.04**

*वाली ने सुग्रीव की पत्नी रूमा को अपने साथ पत्नी बनाकर रखा था।

**-आनन्द रामायण**

उसके डर से मैं यहां रहता हूं। वह श्रापवश यहां नहीं आता।

प्रभु बोले, श्राप की कथा कहो। बाली ने दुंदुभी को कैसे मारा।

सुग्रीव बोला, दुंदुभी दैत्य अति बलशाली था। वह अपने समान बलवान खोजता सिंधु में उतरा। सिंधु कमर तक रहा। मथने लगा तो समुद्र ने कहा हिमालय के पास जाओ। वह हिमालय को देखकर प्रसन्न हुआ। हिमालय उठा लिया। हिमालय बोला,

किष्किंधा में बली वाली है। उसके पास जाओ। तब उसे छोड़ भैंसे का रूप धर, पृथ्वी खोदता, वृक्ष गिराता वाली के पास आकर ललकारा। वाली बाहर आया। दो हाथियों की तरह दोनो लड़े। चार प्रहर युद्ध के बाद वाली ने घूसा मारा। फिर दो भाग में चीरकर फेंक दिया।

मतंगऋषि की कुटिया पर रक्त गिरा। तभी एक यक्ष ने आकर रुधिर की कथा कही। मुनि ने बिना विचारे श्राप दिया कि इस पर्वत को देखते ही और यहां आते ही वाली जलकर राख होजाएगा। इसी कारण वह यहां नहीं आता।

*वेगपूर्वक फेंके गये उस असुर भैंसे के रूप में दुंदुभी के मुखसे निकली हुई रक्त की बहुत-सी बूँदें हवाके साथ उड़कर मतंग मुनि के आश्रम में पड़ गयीं। मुनि ने क्रोधकर श्रापदिया "इस असुरके शरीर को इधर फेंककर जिसने इन वृक्षों को तोड़ डाला है, वह दुर्बुद्धि और उसके सचिव भी यदि मेरे आश्रम के चारों ओर पूरे एक योजन तक की भूमि में पैर रखेगा तो अवश्य ही अपने प्राणों से हाथ धो बैठेगा ॥

**- वा.रा.कि.11.55**

मैं डरकर हनुमान के साथ यहां रहता हूं। यह सुनकर रघुनाथजी हंसे और बोले-

**सुनु सुग्रीव मैं मारिहौं, वालिहि एकहि बाण।**
**ब्रह्म रुद्र शरणागतहुं, गये न उबरहिं प्राण।।**

भाई मित्रता की है तो निभानी तो पड़ेगी -

जे न मित्र दुख होहिं दुखारी,तिनहिं बिलोकत पातक भारी।

अपना पहाड़ सा दुख रज और मित्र का रज सा दुख सुमेरू सा न जाने तो मित्रता करके क्यों मूर्खता करते हैं।-

**रहिमन विपदा हू भली, जो थोरे दिन होय।**
**हित अनहित या जगत में, जानि परत सब कोय।।**
**- रहीम**

राज्यमित्र के अवगुण छिपाकर गुण प्रकट करना चाहिए। जो आगे मीठा, पीछे कटु हो उसे सर्प के समान त्याग देना चाहिए-

**सेवक शठ नृप कृपण कुनारी, कपटी मित्र शूल सम चारी।**

मित्र अब सब सोच त्यागो। मैं तुम्हारे सब काम करूंगा। सुग्रीव बोला नाथ, वाली महाबली है। ये सात ताल के चंद्राकार वृक्ष देखते हो। जो इन्हें एक ही बाण से गिराएगा वही उसे मार सकता है अन्यथा श्रम ही होगा।

(एक दिन वाली वन में गया। सात फल तोड़े। धोए और रख दिए। घर आकर, देव पूजन किया। जाकर फल देखे तो उनपर एक सर्प चंद्राकार बैठे देखा। क्रोधित हुआ। श्राप दिया कि ये तेरा शरीर फोड़कर वेदी के आकार में सात वृक्ष बनेंगे। घर आगया। उधर तक्षक को पुत्र के श्राप का पता चला तो उसने भी श्राप दिया कि जो इन सातों वृक्षों को एक ही बाण से गिराएगा वही वाली का वध करेगा। मतंगजी ने भी कहा था कि जो दुंदुभी दैत्य की अस्थियों को एक बाण से उड़ा देगा उसके हाथों वाली की मृत्यु निश्चित है।

यह सुन रामजी ने दुंदुभी राक्षस की ठठरी (कंकाल) को पैर के अंगूठे से उठाकर दस योजन दूर फेंकदिया था।

*भगवान ने दुंदुभी की अस्थियों को पैर के अंगूठे से कई योजन दूर फेंक दिया।

**- आनन्द रामायण-**

तोलयित्वा महाबाहुश्चिक्षेप दशयोजनम् । असुरस्य तनुं शुष्कां पादाङ्गुष्ठेन वीर्यवान् ॥
ऐसा कहकर सुग्रीव को सान्त्वना देतेहुए लक्ष्मण के बड़ेभाई महाबाहु बलवान् श्रीरघुनाथजी ने खिलवाड़ में ही दुन्दुभि के शरीर को अपने पैर के अँगूठे से टाँग लिया और उस सूखे हुए कंकाल को दस योजन दूर फेंक दिया ॥

**- वा.रा.कि.11.85**

*सुग्रीव ने कहा कि जब वाली ने उसके शरीर को फेंका था तब वह गीला था आपने सूखा ढांचा फेंका है अतः अब भी वाली से आपके बल की तुलना नहीं हो सकती।

**- वा.रा.कि.11**

राम जी ने एक ही बाण से ताल के वृक्षों के सो टुकड़े कर दिए।

*शेष अंश लक्ष्मण के पैर का अंगूठा अपने पैर से दबाकर राम ने इस सर्प को सीधा किया और सातों ताड़ के वृक्षों को एक ही बाण से काटकर गिरा दिया।

**- आनन्द रामायण**

*उन बलवान् वीरशिरोमणि के द्वारा छोड़ा गया वह सुवर्णभूषित बाण उन सातों सालवृक्षों को एक ही साथ बींधकर पर्वत तथा पृथ्वीके सातों तलों को छेदता हुआ पाताल में चला गया ॥

**- वा.रा.कि.12.03**

उसके नीचे से सर्प निकला। रामजी की स्तुति की ओर सोते हुए वाली के पास से, इंद्र की दी हुई माला लेकर चला गया जिसे पहनकर युद्ध करने से वाली पराजित नहीं होता था। सुग्रीव को ज्ञान हुआ। रामजी को परमब्रह्म माना। कहा नाथ, मैं सुख, संपत्ति, कुटुंब, बढ़ाई सबकुछ तजकर जीवनभर आपकी सेवा करूंगा। ये राम भक्ति के बाधक हैं। वाली से वैर हुआ और उसी कारण आप मिले। वाली तो हितू हो गया -

अब प्रभु करहुं कृपा एहि भांती,सब तजि भजन करौं दिन राती।

रघुनाथजी सुग्रीव को लेकर गए और उसे वाली के पास भेजा। वाली लड़ने चला तो तारा ने समझाया (जो अंगद के मुंह से सुना था) कि जिनकी सहायता से सुग्रीव पर्वत से नीचे उतरा है वे दोनो बड़े बलवान हैं। दशरथ के पुत्र हैं जो रण में काल को भी जीत सकते हैं। वाली बोला -

**कह वाली सुनु भीरू प्रिय, समदर्शी रघुनाथ।**
**जो कदापि मोहि मारिहैं, तौ पुनि होब सनाथ।।**

स्त्री का निषेध अपशकुन होता है। उसे न मान, क्रोध करके चला। दोनो में मल्ल युद्ध हुआ। सुग्रीव मुष्टिक प्रहार से घबराया और भागकर रामजी के पास लोटा। बोला, वह भाई नहीं, मेरा काल है। प्रभु बोले-

*तुम दोनो एक रूप हो इसलिए मैने नहीं मारा। * तुम्हारा कुटुंबी है इसलिए नहीं मारा।

*तुमने नहीं कहा था, सो नहीं मारा।

*वाली के मरण का समय नहीं आया था, इसलिए नहीं मारा।

सुग्रीव के शरीर का स्पर्श किया जिससे सब पीड़ा जाति रही और तन वज्र सा हो गया। उसके गले में माला डालकर वाली को संदेश दिया कि इसपर रामजी की कृपा है।

*लक्ष्मण ने पर्वतके किनारे उत्पन्न हुई फूलोंसे भरी गजपुष्पी लता को उखाड़कर सुग्रीवके गले में पहचान के लिए डाल दिया।

**- वा.रा.कि.12.40**

फिर लड़ाई हुई। वाली ने समदर्शी कहा और यहां पक्ष लेते हैं। इसलिए लाज के वश विटप ओट में खड़े हैं। सामने जाने से यदि वाली भी शरण में आगया तो प्रण भंग होगा। इसलिए ओट में खड़े हैं। वाली से लड़ने वाले का आधा बल वाली में चला जाता है यह बात ईश्वर पर चरितार्थ नहीं होती। यह युद्ध जेठ सुदी चौदस को हुआ था-

बहु छल बल सुग्रीव करि,हिय हारा भय मानि।

मारा वालिहिं राम तब,हृदय मांझ सर तानि।।जब अपना भरोसा छोड़ रघुनाथ की शरण आया तब।

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।

अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।।

**- श्रीमद्भगवदगीता 18.66।।**

**कर्तव्य कर्म सब मुझमें तज, तुम मेरी शरण चले आओ।**
**कर दूंगा तुमको पाप मुक्त, मत शोक करो और घबराओ।।**
**- 'कमल' (श्रीमद्भगवद्गीता के मोती)18.66**

वाली पृथ्वी पर गिरा। फिर उठा तो रघुनाथजी को सामने खड़े देखा। ईश्वरजान सर्वांग दर्शनकर निज जन्म सफल माना। फिर भी -

हृदय प्रीति मुख वचन कठोरा,बोला चितै राम की ओरा।

धर्म हेतु अवतरेउ गुसाईं,मारेउ मोहिं व्याध की नाईं।

मैं वेरी सुग्रीव पियारा,कारण कवन नाथ मोहिं मारा।

बोला-

राजहा ब्रह्महा गोघ्नश्चोरः प्राणिवधे रतः। नास्तिकः परिवेत्ता च सर्वे निरयगामिनः ॥

राजाका वध करनेवाला, ब्रह्म-हत्यारा, गोघाती, चोर, प्राणियोंकी हिंसा में तत्पर रहनेवाला, नास्तिक और परिवेत्ता (बड़े भाईके अविवाहित रहते अपना विवाह करनेवाला छोटा भाई) ये सब के सब नरकगामी होते हैं॥

**- वा.रा.कि.17.36**

रघुनाथजी बोले-

**अनुज वधू भगिनी सुत नारी, सुनु शठ ये कन्या सम चारी।**
**इन्हें कुदृष्टि विलोकै जोई, ताहि वधे कछु पाप न होई।**

अभिमानी, तूने अपनी स्त्री का कहा भी नहीं माना। मेरे आश्रित जानकर भी तू सुग्रीव को मारना चाहता था।

वाली बोला नाथ, आपसे मेरी चतुराई नहीं चलेगी पर अब जब आप मेरे सामने हो तो भी क्या मैं पातकी हूं। रघुनाथजी ने प्रसन्न होकर उसके सिरपर हाथ रखा। बोले, मैं तुम्हारे शरीर को अचल कर प्राणों की रक्षा कर देता हूं जिससे जरा मरण नहीं होगा। वाली बोला-

**जनम जनम मुनि जतन कराहीं, अंत राम कहि आवत नहीं।**

जिनके नाम के बल शिवजी काशी में मुक्ति देते है-

**मम लोचन गोचर सोई आवा, बहुरि कि प्रभु अस बनहिं बनावा।**

अब ऐसा कौन होगा जो कल्पवृक्ष काट बबूल रोपेगा। अब कर्मानुसार जिस योनी में जाऊं वहां आपकी भक्ति पाऊं।

(ऐसा मांगने से और प्रभु को व्याध कहने से वाली द्वापर में व्याध बना। श्रीकृष्णजी को तीर मारकर कर्म बंधन से मुक्त हुआ।)

बोला -

**यह तनय मम सम विनय बल कल्याणप्रद प्रभु लीजिए।**
**गहि बांह सुर नर नाह अंगद दास अपनो कीजिये।।**
**(कल्याणप्रद- अभय)**

रघुनाथजी में प्रीतिकर वाली ने बिना दुख के, हाथी के गले से माला के समान तन त्याग दिया।रामजी ने वाली को अपना धाम दिया। नगर के लोग व्याकुल होकर दौड़े। तारा अनेक भांति व्याकुल हो विलाप करने लगी। बोली, मैने आपको बहुत समझाया किंतु कालवश आपको कुछ समझ में नहीं आया। आप अंगद से भी कुछ नहीं कह पाए।

हनुमानजी ने तारा को समझाया-

**शोच्या शोचसि कं शोच्यं दीनं दीनानुकम्पसे।**
**कश्च कस्यानुशोच्योऽस्ति देहेऽस्मिन् बुद्बुदोपमे।।**

तुम स्वयं शोचनीया हो फिर दूसरे किसको शोचनीय समझकर शोक कर रही हो? स्वयं दीन होकर दूसरे किस दीनपर दया करती हो ? पानीके बुलबुलेके समान इस शरीरमें रहकर कौन जीव किस जीव के लिये शोचनीय है ?

**-वा.रा.कि.21.03**

रघुनाथजी ने तारा को विविध भांति ज्ञान दिया।माया दूर की। बोले -

**क्षिति जल पावक गगन समीरा, पंच रचित यह अधम शरीरा।**

जल विषय का जिव्हा,अग्नि का नेत्र, आकाश का कान, पवन का त्वचा, गंध का नासिका इंद्रिय है -

**प्रगट सो तनु तव आगे सोवा, जीव नित्य तुम केहि लगि रोवा।**
**तारा को ज्ञान हुआ। प्रणाम किया। परम भक्ति का वर पाया।**

सुग्रीव वाली के वध से दुखी हुआ। बोला-

*इन्द्र के पाप को तो पृथ्वी, जल, वृक्ष और स्त्रियों ने स्वेच्छा से ग्रहण करलिया था परंतु मुझ जैसे वानर के इस पापको कौन लेना चाहेगा ? अथवा कौन ले सकेगा ? ।

**- वा.रा.कि.24.14**

शंकरजी कहते हैं -

**उमा दारू योशित की नाईं, सबहि नचावत राम गुसाईं।**
**रघुनाथजी ने सुग्रीव को आदेशित कर,वाली का विधि से दाहकर्म करवाया।**

**मूल रामायण 23-**

**कपिहिं तिलक करि प्रभु कृत, शैल प्रवर्षण वास।**
**वरणत वर्षा शरद ऋतु, राम रोष कपि त्रास।।**

रघुनाथजी के निर्देशानुसार लक्ष्मणजी ने पुरवासियों, ब्राह्मणों को बुलाकर सुग्रीव को राज्य,अंगद को युवराज का पद दिया। शिवजी कहते हैं -

**उमा राम सम हित जग माहीं, गुरु पितु मातु बंधु कोउ नाहीं।**
**सुर नर मुनि सब के यह रीती, स्वारथ लाग करै सब प्रीती।**

लेकिन रामजी का स्नेह, प्रीति स्वार्थवश नहीं होती। वाली से भय खाए सुग्रीव को राजा बना दिया ऐसे रघुनाथजी से दयालु कौन होगा। फिर सुग्रीव को बुलाकर नृप नीति सिखाई। सुग्रीव ने पुर में पधारने का कहा। रामजी बोले चौदह वर्ष में पुर प्रवेश नहीं करूंगा। वर्षा ऋतु आने वाली है। पर्वत पर रहूंगा। तुम अंगद सहित राज्य करो।मेरा कार्य भी याद रखो।

सुग्रीव घर लोटे और रामजी प्रवर्षण गिरि पर आए (जहां सदैव वर्षा होती रहती है।)। यहां देवताओं ने पहले ही गुफा बनाकर रखी थी कि रामजी आकर वास करेंगे। कंद, मूल, फल, वनस्पति, पशु, पक्षी सब पर्याप्त प्रकट हुए- मधुकर खग मृग तनु धरि देवा,करहिं सिद्ध मुनि प्रभु की सेवा।

मंगल स्वरूप वन में फटिक शिलापर बैठ रघुनाथजी, लक्ष्मणजी को भक्ति, ज्ञान, वैराग्य और राजनीति की कथा कहते हैं।

वर्षा काल आया -

**वर्षा काल मेघ नभ छाए, गरजत लागत परम सुहाये।**

रामजी बोले आकाश में बादल घिरे हैं, बिजली चमक रही है किंतु इस सुहाने मौसम में भी प्रिया के बिना मेरा मन डर रहा है-

**दामिनि दमक रही घन माहीं, खल की प्रीति यथा थिर नाहीं।**

मेघ भूमि के निकट आकर ऐसे बरस रहे हैं जैसे पंडित विद्या पाकर नम्र होजाते हैं-

**बूंद अघात सहहिं गिरि कैसे, खल के वचन संत सह जैसे।**

थोड़े से जल को पाकर नदी ऐसे चली जैसे थोड़ा धन पाकर दुष्ट इतरा जाते हैं। भूमि पर पड़ते ही जल मैला हो जाता है जैसे जीव में माया लिपट गई हो। वह मलिन होगया हो-

सिमिटि सिमिटि जल भरहिं तलावा,जिमि सद्गुण सज्जन पहं आवा।

नदियों का जल सागर में जाकर ऐसा अचल हो रहा है जैसे ईश्वर को पाकर जीव अचल हो जाता है। हरित तृणों से भूमि इस भांति आच्छादित है कि मार्ग दिखाई नहीं देता जैसे पाखंड विवाद से सद्ग्रंथ लुप्त हो जाते है-

**दादुर धुनि चहुं दिशा सुहाई, वेद पढ़ै जनु बटु समुदाई।**

वृक्ष नए पत्तों से इस भांति संपन्न होगये हैं जैसे साधकों के मन ज्ञान पाकर सुंदर हो जाते हैं। धूल तो खोजने से भी नहीं मिलती जैसे क्रोध करने से धर्म नहीं रहता।

खेती से भरी धरती उपकारी की संपत्ति जैसी शोभित हो रही है। रात्रि के घने अंधेरे में खद्योत (पट बीजने) मूर्खों में पाखंडियों जैसे चमक रहे हैं। अतिवृष्टि से क्यारियां फूटकर बहने लगी है जैसे अतिस्वतंत्र होने से कुछ नारियां स्वेच्छाचारी हो जाती है। चतुर किसान खेती की निराई इसभांति कर रहेहैं जैसे महात्मा मोह, मद, मान का त्यागकर शुद्ध होते हैं। देखो, ऊसर भूमि में कोई तिनका भी नहीं उगा जैसे संत के हृदय में काम नहीं होता। जहां तहां पथिक रुके हैं जैसे ज्ञान पाकर इंद्रियां शिथिल हो जाती है-

**कबहुं प्रबल चल मारूत, जहं तहं मेघ बिलाहिं।**
**जिमि कुपूत के उपजे, कुल सद्धर्म नशाहिं।।**

कभी दिन में अंधेरा होजाता है और कभी सूर्य निकल आता है।

वर्षा के बाद शरदऋतु आई। सब पृथ्वी में कास ऐसे फूल रहे हैं मानो वर्षाऋतु ने बुढ़ापा प्रकट किया है। अगस्त्य तारे ने उदय होकर मार्ग का जल सोखना आरंभ करदिया है जैसे संतोष बढ़ने से लोभ सूख जाता है। सरिता, सरोवर का जल संतों के हृदय सा निर्मल होगया है। शरद पाकर खंजन प्रकट हुए जैसे समय पाकर पुण्य फलते हैं।

(वर्षाऋतु में खंजन पक्षी wagtail bird के सिर में एक पंख निकल आता है जिससे वे अदृश्य हो जाते हैं। शरदऋतु में उस पंख के गिर जाने से वे दृष्टि में आते हैं। ऐसा माना जाता है उस पंख को कोई मुंह में रखे तो वह भी अदृश्य हो सकता है।)

कीच कहीं नहीं। धूल भरी धरती नीतिमान राजा की करनी जैसी शोभित होती है। जल घटने से मछलियां ऐसी व्याकुल होती है जैसे निर्बुद्धि कुटुंबी धन बिना व्याकुल होता है-

**बिनु घन निर्मल सोह अकासा, जिमि हरिजन परिहरि सब आसा।**

कहीं कहीं वृष्टि हो जाती है जैसे कोई कोई मेरी भक्ति पाता है। राजा (देश संभालने), तपस्वी (वन में तप करने), वणिक और भिखारी घर तजकर अपने अपने काम को चल देते हैं जैसे ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यासी हरिभक्ति को पाकर अपने अपने आश्रम को छोड़ चल देते हैं।

गहरे जल में मछली ऐसी सुखी है जैसे नारायण की शरण में कोई बाधा नहीं होती। चातक स्वाति बूंद की चाह में चिल्लाता रहता है जैसे शिवजी के द्रोही कभी सुख नहीं पाते। चंद्रमा की शीतलता धूप के ताप को वैसे ही हर लेती है जैसे संत दरश से पाप दूर होजाते हैं -

**मशक दंश बीते हिम त्रासा, जिमि द्विज द्रोह किये कुल नासा।**
**(मशक दंश- मच्छर और डांस)**

रामजी कहते हैं लक्ष्मण शरद ऋतु आगई किंतु अभी तक मैंने सीता की सुधि भी नहीं पाई है।एक बार सुधि मिले और जीवित हो तो काल को भी जीतकर ले आऊं। देखो तो -

सुग्रीवहु सुधि मोरि बिसारी,पावा राज कोश पुर नारी।

अब उसने वचन नहीं निभाया तो -

**जेहि सायक मारा मैं वाली, तेहि शर हतौं मूढ़ कहं काली।**

कल उसी बाण से जिससे वाली को मारा था, मैं सुग्रीव को मार दूं तो लोग मुझे मूढ़ कहेंगे। शिवजी कहते हैं प्रभु को स्वप्न में भी राग-द्वेष, काम-क्रोध नहीं होता। यह तो दास असावधान न हो इस हेतु भय दिखाया है। यह चरित्र ज्ञानी मुनि ही जानते हैं जिनकी राम चरण में प्रीति है। यही तो नर लीला है।

यह सुन लक्ष्मणजी ने धनुषपर बाण चढ़ालिया।

रामजी समझे कहीं यही सुग्रीव को मार न दे। तब समझाया कि भय दिखाकर ले आना।

मूल रामायण 24-

जेहि विधि कपिपति कीश पठाये,सीता खोज सकल दिशि धाये।

वहां हनुमानजी ने विचार किया कि सुग्रीवजी ने रघुनाथजी का कार्य भुला दिया हैं तो पास जाकर समझाया। सुग्रीव डरा। बोला, विषयों ने मेरा ज्ञान हरलिया था। अब जहां तहां दूतों के समूह भेजो जो वानरों को बुलाकर लावे। कहना एक पखवाड़े में नहीं आए तो मेरे हाथों मृत्यु निश्चित है। महावीरजी ने दूत बुलाए। सम्मान किया। भय, प्रीति दिखाई। वे चरणों में प्रणाम कर चले।

अंगद बोले हनुमानजी के बिना काम नहीं होगा।ये गिरी, कंदरा, सागर सब जानते हैं। चतुर, विवेकी, बुद्धिमान और बलवान हैं। सुग्रीव ने हनुमानजी को रामकाज हेतु तत्पर किया।

वे एक ही फलांग में पूर्व दिशा में चले गए। वहां सबने स्वागत किया। वे गय-गवाक्ष नाम वानर अस्सी लाख सात सो नो वानरों के साथ सुग्रीव का आदेश सुन, अकाश मार्ग से चले। तब महावीरजी रोहित पर्वतपर गए। दीर्धर्शण से बात कर, कदलीवन आए। गज को संदेश दिया। वे गज और द्विरद नाम वानर सात पद्म अस्सी करोड़ वानर सेना लेकर चले। हनुमानजी व्याहर पर्वतपर आए। बलवीर के बड़े पुत्र से बात की। वह भी तीस लाख साठ हजार का दल लेकर चला। फिर धुंधुमार पर्वतपर गए। श्रीखंड नामक वानर, सुनते ही छप्पन करोड़ वानरों को लेकर चला। तब अंजनि पर्वतपर जाकर कुमुद को बुलाया जो सातपद्म सत्तासी लाख बलवान वानर लेकर भागा। हनुमानजी नीलगिरि पर्वत आए। अग्निपुत्र नील को समाचार कहे। वह चार अरब चार सो बारह वीर वानर ले चला। तब बद्रिकाश्रम गए। गंध मादन पर गज, गवाक्ष से मिले। अर्जुन पर्वतपर तारा के वीर पिता सुषेण से मिलकर, सुमेरू पर्वतपर गए। वहां से अति बलवान केशरी नाम वानर, दस करोड़ नो लाख बीस हजार एक सो वानरों को लेकर चला। फिर रुद्रगिरि (कैलाश) पर आए। बल और पुरद नाम वानर अलकापुरी में रखवाली करता था। वह सेना लेकर चला।

हनुमानजी मैनागिरि और हिमालय पर आए और अंडक को सेना सहित भेजा। फिर विंध्याचल जाकर राजा बसंत के इंद्रकेलि वन के आठ पद्म अट्ठासी हजार वानर भेजे। कश्यप पर्वत गए और बलवीर मयंद के साथ एक नील तीस करोड़ वानर रवाना किए-

राम स्वरूप हिये महं आना,करि दल विदा चला हनुमाना।

धौलागीरि पहुंच दुर्गंध को आठ करोड़ सेना ले पंपापुर भेजा। उदयाचल जा कुंद-कुमुद के साथी वानरों को रवाना कर –

**राम काज करि पवन सुत, आये जहं सुग्रीव।**
**मिले हर्षि अस्तुति करी, धन्य धन्य बल सीव।।**

तभी क्रोधित लक्ष्मणजी को आया जान अंगद सामने आए। सुग्रीव के कहने पर हनुमान तारा को लाए। प्रणामकर घर लाये, आसन देकर चरण धोए। सुग्रीव के प्रणाम करने पर हृदय से लगाया। लक्ष्मण सुग्रीव से बोले -

गोघ्ने चैव सुरापे च चौरे भग्नव्रते तथा । निष्कृतिर्विहिता सद्भिः कृतघ्ने नास्ति निष्कृतिः॥

गोहत्यारे, शराबी, चोर और व्रत-भंग करनेवाले पुरुष के लिये सत्पुरुषों ने प्रायश्चित्त का विधान किया है किंतु कृतघ्न के उद्धार का कोई उपाय नहीं है।

**- वा.रा.कि.34.12**

सुग्रीव बोला नाथ, विषय से बड़ा मोह नहीं और फिर राजमद की तो बात ही अलग है। लक्ष्मणजी को आगेकर सब रामजी के पास आए। प्रणामकर सुग्रीव बोले -

**अतिशय प्रबल देव तव माया, छुटै राम करहु जब दाया।**

विषय, नारि नयन, क्रोध, अज्ञान, लोभ की प्रबलता बताई। रामजी ने हृदय से लगाकर कहा। तुम भरत के समान प्रिय हो। अब वह करो जिससे जानकी की खबर मिले।

यह वार्ता हो ही रही थी कि वानरों के यूथ के यूथ आये। शंकरजी कहते हैं -

वानर कटक उमा मैं देखा,सो मूरख जो किय चह लेखा।

*यहाँ अर्बुद, शंकु, अन्त्य और मध्य आदि संख्या वाचक शब्दोंका आधुनिक गणितके अनुसार मान समझने के लिये प्राचीन संज्ञाओं का पूर्ण रूपसे उल्लेख किया जाता है और कोष्ठ में उसका आधुनिक मान दिया जा रहा है-एक (इकाई), दश (दहाई), शत (सैकड़ा), सहस्र (हजार), अयुत (दस हजार), लक्ष (लाख), प्रयुत (दस लाख), कोटि (करोड़), अर्बुद (दस करोड़), अब्ज (अरब), खर्व (दस अरब), निखर्व (खर्व), महापद्म (दस खर्व), शंकु (नील), जलधि (दस नील), अन्त्य (पद्म), मध्य (दस पद्म), परार्ध (शंख)- ये संख्याबोधक संज्ञाएँ उत्तरोत्तर दसगुनी मानी गयी हैं। (नारदपुराण)

**- वा.रा.कि.38**

आकर सब रामजी को प्रणाम करते। ध्यान से सुनो -

**अस कपि एक न सेना माहीं, राम कुशल पूछी जेहि नाहीं।**

क्यों ? अरे एक तो वे सब देव थे और फिर रामजी का विश्वरूप जो है। तब सुग्रीव ने सबका सम्मान कर कहा कि राम काज हित सेना लेजाओ और जानकीजी को तलाश करो। एक माह में आना है। चार भागों में विभक्त किया –

1- गज-गवाक्ष आदि सात करोड़ वानरों को पूर्व की ओर ब्रह्मपुरी, कामावती की ओर भेजा।

2- सुषेण और मयंद को उत्तर में गंधमादन, सुमेरू, अर्जुन, नीलगिरी, कैलाश, अलकापुरी, मानसरोवर, म्लेच्छदेश होते उत्तर सागर जहां सूर्य का प्रकाश नहीं और बर्फ जमी है, पृथ्वी का अंत है वहां भेजा। काकभुशुंडी के आश्रम जाने जहां मोतीचूर नामक कुंड है जिसके अमृत से जल में कपूर की कीच है। जामुन के वृक्ष के कारण उसका नाम जम्बूद्वीप है। उसके रस भरे कुंड में देवता स्नान करते है। वही बहकर अयोध्या के निकट सरयू नाम से आता है। फिर शुरसेन मंडप, लोमश आश्रम, (जिनका एक प्रलय में एक रोम गिरता है) शांडिल्य आश्रम जा जानकी की खोजकर एक माह में आना। फिर आवर्तन (ब्रिटेन), अश्वक्रांत (यूरोप), रूम पटच्चर (इटली), इंदुद्वीप या इंद्रद्वीप (इंग्लैंड), पशुशील (पुर्तगाल), क्रोंच क्रमथ कामल (जर्मनी), सैनिक कुक्कुट हॉलैंड (बेल्जियम), अश्वक या अश्वीया (आस्ट्रिया), तामस (स्पेन), मारक वा माटक (डेनमार्क, स्वीडन, स्कैंडेनेविया),

रथक्रांत वा सूर्यारिका (अफ्रीका), विष्णु क्रांत वा आसेचेनक (एशिया), रूष (रुस), महाचीन (चीन), ताल तोषक (तिब्बत), अरु (अरब), आवर्त, पारस्य (ईरान), शूद्र यवन (मक्का), पहनव (काबुल), गांधार (कंधार), ब्रह्मदेश (ब्रह्मा), सिंहलद्वीप (सिलोन), स्वर्ण भूमि या कुमारद्वीप (अमेरिक- उत्तर कुमार, दक्षिण कुमार), रमणक (आस्ट्रेलिया), हिरण्यपुर (पेरू), दरद (भोटान), पंचनद (पंजाब), दरदलिंग (दार्जिलिंग), गैरिक (कश्मीर), उत्तर कौशल (अयोध्या के देश), कुरुजांगल (कुरुक्षेत्र),

इंद्रप्रस्थ (दिल्ली), अवंतिकापुरी, गुर्जराष्ट्र, कांची (कर्नाटक), काशी (शिवपुरी), वाराणसी (बनारस), माहीषक (महिशूर), पांड्य (मलावार), श्रेष्ठ उत्कल (उड़ीसा देश), मिथिला (विदेह, तिरहुत), सुराष्ट्र (महाराष्ट्र), महोदय (कान्यकुंज, कन्नौज आदि), मगध (कीटक, गया), अंग (वैद्यनाथ, कालगांव, राजमहल, आरा), पाटलीपुत्र (पटना), पुण्ड (मेदिनीपुर), चंपा (भागलपुर), मत्स्यदेश (रंगपुर, दिनाजपुर, राजशाई), वंगगौड़ (बाकरगंज, ढाका, कृष्णनगर), किलकिला (कलकत्ता), प्रागज्योतिष (कामरूप), शूरसेन (मथुरा) और किष्किंधा देखना। (यह सूची भारत वर्ष विचार ग्रंथ से साभार।

इतना सुना तो रामजी बोले -

**सर्व भूमि के देश तुम, केहि विधि जानहु मित्र।**
**सो कहिए सुनि प्रभु वचन, बोले वचन पवित्र।।**
**वाली भय भाजत फिरो, सकल देश रघुराज।**
**तब यह देखे देश सब, अब आये सब काज।।**

रघुनाथजी और सुग्रीव को प्रणाम करके ग्यारह पद्म वानर चले। तब

3- शतवीर और वसंत से कहा तुम पश्चिम दिशा में जहां पृथ्वी का अंत है जाओ। उनके साथ सोलह लाख बंदर हरि हर कहते चले। सुग्रीव ने चेताया कि अवधि बीतने पर बिना सुधि आने वाला मेरे हाथों मारा जावेगा। फिर

4- अंगद, नील, जामवंत और हनुमान को बुलाया। दक्षिण दिशा जाकर कपट त्यागकर जानकीजी की खोज करो।

(बाहर का कपट रघुनाथजी और अंतःकरण का अग्नि देखते हैं)

**बाहिर को सगरो कपट, तुरत लखे रघुनाथ।**
**अंतस को अगनी लखे, करदे तुरत अनाथ।।**
**- 'कमल'**

क्योंकि -

**देह धरे कर यह फल भाई, भजिय राम सब काज बिसारी।**
**वही गुणवान और भाग्यवान है जो रामचरण का सेवक है।**

सब प्रणाम करके चले। जब हनुमानजी ने प्रणाम किया तो उनसे कार्य सिद्धि जानकर रामजी ने निकट बुलाया। सरपर हाथ रख अंगूठी उतार कर दी और अपना विरह और बल जानकी को बताने का कहा।

*रामजी ने हनुमानजी को अंगूठी दी। अपना नाम मंत्र दिया और कहा कि एक बार एकांत में मैने सीता के मस्तक में मेनसिल का तिलक और कपोलों पर पत्रावली की रचना की थी। यह हम दोनो के सिवा कोई नहीं जानता। उसे कहना जिससे विश्वास करेगी।

**-आनन्द रामायण**

प्रभु सर्वज्ञ हैं फिर भी हनुमानजी को भेजने के पीछे तर्क यह कि रावण को संदेश, बल प्रदर्शन, शत्रु की शक्ति का आभास और चारों ओर वानर भेजने का मतलब नरलीला दिखाना है।

सब खोज करते चले। मार्ग में मिलने वाले निशाचरों का वध करते। एक वज्रदंष्ट्र राक्षस को देखकर सब डरे। अंगद से मल्ल युद्ध हुआ। काल समान था। अंगदजी ने सिर में एक मुष्टिका मार पैर पकड़ चीर दिया। साथ के बीस करोड़ बानर प्रसन्न हुए। खोज करते आगे बढ़े।

मूल रामायण 25-

## विवर प्रवेश कीन्ह जेहि भांती, कपिन बहोरि मिला संपाती।

एक दिन मार्ग में सब प्यास से व्याकुल थे और पथ भी भूल गए। हनुमानजी ने सब की मृत्यु अनुमान, पर्वत की चोंटीपर चढ़कर देखा तो बगुले, हंस उड़ते देख, अनुमान लगाया कि यहां अवश्य जल होगा। सब हाथ पकड़, विवर में प्रविष्ट हुए। यह चार योजन का दानव निर्मित गढ़ था।

वहां एक मंदिर में एक तपस्विनी को बैठे देखा।सब ने प्रणामकर अपना काम बताया। उनके कहने पर फल खाकर जलपान किया। फिर निकट जाने पर उसने कहा मैं स्वयंप्रभा (देवांगना) गंधर्व कन्या और अप्सरा हेमा की सखी हूं। ब्रह्माजी ने कहा था कि यहां बलवान वानर आयेंगे और तब रघुनाथजी के दर्शन होंगे। अब मैं दर्शन को जाती हूं। तुम आंखे बंद करलो। विवर से बाहर हो जाओगे। जानकी भी पाओगे। वैसा ही कर वे समुद्र तट पहुंचे और वह रघुनाथजी के निकट गई। प्रणामकर जो किसीको न मिले वैसी भक्ति पाकर, बदरीवन गई।

यहां सागर तटपर सब विचार करते हैं कि एक माह की अवधि बीत गई। आज अंतिम दिवस है। क्या करें। नेत्रों में जल भरकर अंगद बोले, यहां जानकीजी की सुधि नहीं मिली और वहां सुग्रीवजी हमें मार देंगे। दोनो ओर मृत्यु आई ।क्या करें। वे तो तभी मारने वाले थे जब मेरे पिता की मृत्यु हुई पर रामजी ने हाथ पकड़कर बचा लिया।

**चाचा तो पहले ही मेरा, वध करने को अकुलाया था।**
**लेकिन आयुष्य बढ़ी जब से, श्री रघुवर ने अपनाया था।।**

**- 'कमल'**

*समुद्र तटपर वानरों में सुग्रीव और अंगद के पक्ष में तर्क देनेपर हनुमानजी ने विचार किया।- बुद्ध्या ह्यष्टाङ्गया युक्तं चतुर्बलसमन्वितम् । चतुर्दशगुणं मेने हनूमान् वालिनः सुतम् ॥

हनुमानजी यह अच्छी तरह जानते थे कि बालीकुमार अंगद आठ गुणवाली बुद्धिसे, चार प्रकारके बलसे और चौदह गुणोंसे सम्पन्न हैं ॥

1. बुद्धिके आठ गुण ये हैं- सुनेकी इच्छा, सुनना, सुनकर ग्रहण करना, ग्रहण करके धारण करना, ऊहापोह करना, अर्थ या तात्पर्य को भलीभांति समझना तथा तत्त्वज्ञान से सम्पन्न होना।

2. साम, दाम, भेद और दण्ड ये जो शत्रुको वश में करने के चार उपाय नीति शास्त्र में बताये गये हैं, उन्हींको यहाँ चार प्रकारका बल कहा गया है। किन्हीं किन्हीं के मत में बाहुबल , मनोबल, उपायबल और बन्धुबल-ये चार बल हैं।

3. चौदह गुण भी बताये गये हैं- देश कालका ज्ञान, दृढ़ता, सब प्रकारके क्लेशोंको सहन करने की क्षमता, सभी विषयों का ज्ञान प्राप्त करना, चतुरता, उत्साह या बल, मन्त्रणा को गुप्त रखना, परस्पर विरोधी बात न कहना, शूरता, अपनी और शत्रु की शक्ति का ज्ञान, कृतज्ञता, शरणागतवत्सलता, अमर्षशीलता तथा अचलता (स्थिरता या गम्भीरता)।)

**- वा.रा.कि.54**

सब मरण निश्चित जान, सागर तटपर कुश बिछाकर बैठे। सबको विकल देखकर जामवंतजी बोले, रामजी को साधारण मानव मत जानो। वे जगत पिता गौ, ब्राह्मण और पृथ्वी के लिए ही अवतरित हुए हैं। उनकी कृपा से सबकाम बन जाएगा।

यह वार्ता वहां कंदरा में बैठे संपाती ने सुनी। बाहर आकर अनेक बंदरों को देख प्रसन्न हुआ ।आज विधाता ने पेटभर आहार दिया है। उसे देख बंदर डरे। खड़े होगए। सोचा अब मरे। जामवंत ने सोचा होगया काम। ये संपाती से ही इतने डरगए तो रावण के सामने क्या करेंगे। तभी अंगद बोले मित्रों, जटायुजी के समान कोई धन्य नहीं है। अरे उन्होंने -

राम काज कारण तनु त्यागी,हरिपुर गयउ परम बड़भागी।

इस हर्ष (बडभागी होने का), शोक (मृत्यु का) से भरा संपाती पास आया। अवधि बीतने और काम नहीं होने से वानर कातर मन थे इसलिए और डरे। भागे। उसने कहा मैं रामजी का सेवक हूं। शपथ देकर रोका। अभय किया। जटायु की करनी से प्रसन्न हुआ। बोला मुझे सागर तट ले चलो। उसे तिलांजलि दे दूं।

अपने अनुज को तिलांजलि देकर बोला वानरों, युवावस्था में हम दोनो भाई उड़ते हुए, सूर्य के पास गए। सूर्य का तेज नहीं सह पाने से वह लोट आया पर अभिमान से भरा मैं और निकट चलागया। और निकट। तभी सूर्य के प्रचंड तेज से मेरे पंख जले और मैं चीत्कार करता भूमि पर आ गिरा। चंद्रमा नाम के मुनि ने समझाकर अभिमान छुड़वाया। फिर कहा कि त्रेतायुग में ब्रह्म मनुष्य शरीर धरकर आयेंगे। उनकी नारी निशिचर हरलेंगे। उनकी खोज में वानर कटक आएगा। उनसे मिलकर तुम पवित्र होजाओगे। उन्हें सीता दिखा देना। तुम्हारे पंख जम जायेंगे।

*गिरेहुए संपाती को चंद्रशर्मा मुनि ने वानरों से भेंट और पंख जमने का वरदान दिया था।

**- आनन्द रामायण**

यहां मेरा पुत्र सुपर्ण मेरी सेवा करता है। एकदिन भूख से व्याकुल होकर मैने उससे कुछ लाने को कहा। वह वन से बहुत से सिंहों को मार संध्या के समय आया। भूख से व्याकुल ज्ञानअंध हो मैं उसे श्राप देने लगा। तब उसने कहा। जब मैं शिकार लेने गया तब एक बीस भुजा दस शिर वाला व्यक्ति एक अनुपम सुंदरी को लिए जाता था। उस पुरुष को जंतु जान मैने पीछे से पकड़ा पर उस स्त्री के कारण छोड़ दिया। वह मेरी विनती करता दक्षिण को गया। यह सुन मुझे क्रोध आया पर बिना पंख कुछ कर नहीं पाया।

मैने कहा तेरे बल को धिक्कार है। वह रामजी की पत्नी थी। तब मुनि के वचनों का ध्यान आया। तभी से मैं आप लोगों की राह देख रहा था। आज मुनि की वाणी सत्य सिद्ध हुई। त्रिकूट पर लंका में अशोक वृक्ष के नीचे जानकीजी बैठी हैं। यह सुन सभी उस दिशा में देखने लगे। जानकीजी नहीं दिखाई दी तो वानर बोले, कहां है। हमें भी दिखाओ। संपाती बोला -

**मैं देखौं तुम नाहिंन, गीधहिं दृष्टि अपार।**
**बूढ़ भयउ नतु करतेउ, कछुक सहाय तुम्हार।।**

गिद्ध चार सो योजन तक देख सकते हैं। जो सो योजन सिंधु लांघेगा वही कार्य करेगा और रघुनाथजी का प्यारा भी होगा। क्योंकि -

**पापिउ जाकर नाम सुमिरहीं, अति अपार भव सागर तरहीं।**

इतना कह संपाती उड़ चला। सबके मन में विस्मय हुआ। सब विचार करने लगे। जामवंत बोले जब प्रभु वामन बने थे तब मैं युवा था। सब अंगद को घेरकर खड़े हुए और बोले बताओ कौन जायेगा।
विकट बोला मैं तीस,
नील बोला मैं चालीस,
दुर्धर बोला मैं पचास,
नल बोला मैं साठ,
दधिमुख बोला मैं सत्यासी,
जामवंत बोले पहले तो मैं ही लांघजाता पर अब वह बल कहां। सुनो एक बार मैं बद्रिकाश्रम गया।फल खा एक शिला पर बैठा। वहां एक ब्रह्मज्ञानी आराधना कर रहे थे। तभी एक दानव उन्हें मारने आया। मैं उन्हें बचाने ही वाला था तभी उस दानव ने एक विशाल शिला खंड, मेरे घुटनेपर दे मारा। मैने सहन कर उसे पृथ्वीपर पछाड़ कर चीर दिया। पर अब क्या कहूं। मैं अब भी पंचानवे योजन जा सकता हूं। मैने वामनजी के विराट शरीर की दो घड़ी में सात परिक्रमा की थी।

अंगद बोले -

**अंगद कहा जाऊं मैं पारा, जिय संशय कछु फिरती बारा।**

इसके तीन कारण हैं –

1- उन्हें श्राप था कि जिस जल को लांघोगे उसे फिर नहीं लांघ सकोगे।

2- कहीं वाली के मित्र रावण की बात में न आजाऊँ।

3- अंगद और अक्षय एक ही आश्रम में पढ़ते थे। अंगद ने अक्षय को एकबार बहुत मारा तो गुरु ने श्राप दिया कि अक्षय के एक ही घूंसे से अंगद की मृत्यु हो जावेगी। जामवंत ने कहा आप इस दल के नायक हो। आपको कैसे भेज दें।

मूल रामायण 26-

सुनि सब कथा समीर कुमारा,लांघत भयउ पयोधि अपारा। फिर हनुमानजी की ओर देखकर बोले -

**कहा रिच्छपति सुनु हनुमाना, का चुप साधि रहा बलवाना।**

आप पवन के पुत्र हो। आप में पवन के समान बल है। बुद्धि, विवेक, विज्ञान के घर हो। -

**कौनसो काज कठिन जग माहीं, जो नहिं तात होय तुम पाहीं।**

हिमालय के पास कश्यप ऋषि थे। एक बार एक हाथी ऋषि की ओर दौड़ा। आपके पिता केशरी उस वन के राजा थे। ऋषियों की पुकार पर केशरी ने दौड़कर एक मुक्का मार और हाथी के दांत पकड़, पृथ्वी पर पछाड़ दिया। प्रसन्न होकर ऋषि बोले है ब्राह्मणपालक कपिराज, मनचाहा वर मांगो। केशरी ने कहा मुझे मरुत समान बली पुत्र दो। ऋषियों ने तथास्तु कहा।

एक बार आपकी मां अंजना सौलह श्रृंगारकर पर्वतपर बैठी थी। त्रिविध पवन बह रही थी।पवन ने मोहित होकर चीर उड़ाया और भुजा दीर्घकर छूना चाहा। क्रोधित अंजना श्राप देने लगी। पवन ने ऋषि के वरदान की बात बताई। कहा मैं कहां अपनी देह से तुम्हें छू रहा हूं। आपकी मां ने केसरीजी को यह कथा कही।

फिर कार्तिक बदी चौदस मंगलवार के दिन आपका जन्म हुआ।

(उत्सव सिंधु में कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी को स्वाति नक्षत्र मंगलवार मेष लग्न में जन्म बताया गया है)

जब आपका जन्म हुआ तो माता आपके लिए फल लेने गई। भूख से व्याकुल आपने उगते सूर्य को देखा और कूदे। तभी सूर्य को राहू ग्रसने आया था। इससे सिद्ध हुआ की चतुर्दशी की रात्रि, मंगलवार को ही जन्म हुआ होगा। सूर्य ग्रहण अमावस को ही होता है। इंद्र ने दूसरा राहु जान वज्र प्रहार किया, जिससे ठोड़ी टेडी हुई। हनुमान नाम हुआ। पवनदेव ने पवन बंदकर दिया। देवों से अमर, अजित, बलसागर, चतुर, राम भक्त और उनके निकट रहने वाला हो यह वरदान पाकर पवन छोड़ा। ब्रह्मा बोले यह वज्रांगी होगा, मेरी शक्ति भी इसे प्रभावित नहीं करेगी। अग्नि ने अग्नि, इंद्र ने वज्र, महादेव ने त्रिशूल, यम ने दंड, वरूण ने जल, देवी ने वचन से अभय किया।

कहीं चैत्र शुक्ल पूर्णिमा का भी जन्म प्रमाण है। इस तरह पवन के वरदान से, पिता के वीर्य से, आपका जन्म हुआ। बालपन में आप मुनियों के कमंडल फोड़, जल बहा देते। पर्वत शिखर ढहाते। वृक्ष गिराते थे। तब ऋषियों ने श्राप दिया कि तुम अपना

बल भूल जाओगे। कोई सुरति करावेगा तबतब बल याद आएगा। इतना सुन हनुमानजी बोले शोक त्यागो। रामजी का काम अवश्य होगा। सब प्रसन्न हुए।

जामवंतजी के वचन -

**राम काज लगि तव अवतारा, सुनतहि भयहु पर्वताकारा।**

शरीर सोने सा दमकने लगा। बोले समुद्र लीला से लांघ जाऊं, सेना सहित रावण को मार त्रिकूट पर्वत उखाड़ लाऊं। फिर पूछा-

**जामवंत मैं पूछौं तोहीं, उचित सिखावन दीजै मोहीं।**

जामवंतजी बोले बस इतना करो कि जानकीजी की खबर लाकर सुनाओ। फिर रघुनाथजी कपिसेना लेकर चढ़ाई करेंगे। रावण को मारेंगे।उनका यश त्रिलोकी गाएगी। इसे सुनने वाले के सभी मनोरथ शिवजी पूर्ण करेंगे।

**।। इति किष्किंधाकांड ।।**

# ।। सुंदर काण्ड ।।

**शान्तं शाश्वतमप्रमेयमनघं निर्वाण शांति प्रदं।**
**ब्रह्माशंभुफणींद्रसेव्यमनिशं वेदांतवेध्यं विभुं।।**
**रामाख्यं जगदीश्वरं सुरगुरूं मायामनुष्यं हरिं।**
**वंदेहं करुणाकरं रघुवरं भूपालचूड़ामणिम।।**

जो आदि अंत रहित, प्रमाण से परे, पातक रहित, मोक्ष दाई हैं, शेषजी जिनकी नित्य सेवा करते हैं। हम उन रामजी की वंदना करते हैं।

है रघुनाथज़ी मुझे भक्ति दो। मन को काम दोषों से रहित करो।

अतुलित बल के धाम, सुमेरू से शरीर वाले, राक्षस वृत्ति वन को जलाने वाले अग्नि, ज्ञानियों में अग्रणी, सकल गुणधाम, वानरों के अधिपति, रामजी के श्रेष्ठ दूत महावीरजी की वंदना करते हैं।

हनुमानजी बोले है वानरों, आप तब तक मेरी बाट देखना जब तक मैं जानकीजी की सुधि लेकर न आजाऊं। कंद, मूल, फल खाकर निर्वाह करना, दुख सहना।

*तदनन्तर शत्रुओं का संहार करनेवाले हनुमानजी ने रावण द्वारा हरी गयी सीताजीके निवास स्थान का पता लगाने के लिये उस आकाश मार्ग से जानेका विचार किया, जिसपर चारण (देवजाति विशेष) विचरा करते हैं॥

- वा.रा.सु.01.01

सब को माथा नवाकर, योग मार्ग में स्थिर हो, रामजी का स्मरणकर, सुंदर नामक पर्वतपर चढ़कर कूदे। सुंदर पृथ्वी में धंस गया।

हनुमानजी रघुनाथजी के अमोघ बाण की भांति चले। रामजी का बाण –

1- जिस अर्थ को चलता है, उसे पूरा करके लोटता है।

2- मन से अधिक वेगवान है।

3- किसी के भी रोके नहीं रुकता।

समुद्र ने मैनाक पर्वत से कहा, तुम बाहर निकलकर रामदूत को थोड़ा विश्राम दो।

(जब इंद्र ने पर्वतों के पंख काटे थे तब वायु ने मैनाक (लंका और भारत के मध्य एक छोटी पहाड़ी) की मदद की थी। इसे उड़ाकर समुद्र में ले गया। यह अबतक वहीं था।)

मैनाक सहायता करने आया और हनुमानजी से बोला।-

**पूर्वं कृतयुगे तात पर्वताः पक्षिणोऽभवन्।**
**तेऽपि जग्मुर्दिशः सर्वा गरुडा इव वेगिनः॥**

तात ! पूर्वकाल के सत्ययुग की बात है। उन दिनों पर्वतों के भी पंख होते थे। वे भी गरुड़ के समान वेगशाली होकर सम्पूर्ण दिशाओं में उड़ते फिरते थे। प्राणियों को उनके गिरने के भय से सहस्र नेत्रोंवाले देवराज इन्द्र कुपित हो उठे और उन्होंने अपने व्रज से लाखों पर्वतों के पंख काट डाले। आपके पिता महान केसरी ने मेरी रक्षा की ओर मुझे समुद्र में छुपा दिया।

**- वा.रा.सु.01.122 से 124**

*मैनाक ने कहा कि मैं आपको विश्राम देकर दशरथजी के उपकारों का बदला चुकाना चाहता हूं।

**-आनन्द रामायण**

हनुमानजी ने उसका स्पर्श करके कहा -

**हनूमान तेहि परसि कर, पुनि पुनि कीन्ह प्रणाम।**
**राम काज कीन्हें बिना, मोहिं कहां विश्राम।।**

बोले अब तुम सागर से बाहर निकले रहो। इंद्र कुछ नहीं कहेगा।

देवों ने बल, बुद्धि परखने के लिए सर्पों की माता सुरसा को भेजा। उसने आकर कहा, मैं तुम्हें खाऊंगी। हनुमानजी बोले माता, प्रभु का काम कर, सीतामाता की सुधि देकर, तेरे मुंह में आजाऊंगा। मैं सत्य कहता हूं। मां कहा। स्त्री स्त्री की पीड़ा समझेगी इसलिए सीताजी की सुधि की याद दिलाई। त्रिलोकीनाथ के कार्य हित जाता हूं। सीताजी के लिए देवता भी दुखी हैं। जब किसी भी यत्न से सुरसा न मानी तो बोले, खा लो।

सुरसा ने एक योजन (चार कोस) का मुख फैलाया। महावीरजी उससे दुगने हो गए। उसने सोलह का किया तो ये बत्तीस योजन होगये। इस तरह -

**जस जस सुरसा बदन बढ़ावा, तासु दुगुन कपि रूप दिखावा।**
**शत योजन तेहि आनन कीन्हा, अति लघु रूप पवनसुत लीन्हा।**
**बदन पैठि पुनि बाहर आवा, मांगी विदा ताहि शिर नवा।**

इस तरह अपनी बुद्धि दिखाई। सुरसा ने प्रमाणित किया –

**राम काज सब करिहहु, तुम बल बुद्धि निधान।**
**आशिष दै सुरसा चली, हर्षि चलै हनुमान।।**

राहु की माता सिंहिका समुद्र में रहकर जो कोई ऊपर से उड़कर जाता था, उसकी परछाई पकड़ लेती थी। वही छल हनुमानजी से भी किया। हनुमानजी सुग्रीव से यह भेद जान चुके थे अतः नीचे चरण बढ़ाकर उसे मारकर आगे बढ़े।

लंका में जाकर सुंदर वन देखा। फल, फूल, मृग, भौंरे मन मोह लेते थे। एक बड़ा पर्वत देखकर उसपर चढ़े। निर्भय। शिवजी ने अपनी स्थिति स्पष्ट की। बोले –

**उमा न कछु कपि की अधिकाई, प्रभु प्रताप जो कालहिं खाई।**

शिवजी ही हनुमान थे अतः हनुमान का नहीं प्रभु के प्रताप का बखान किया।

मूल रामायण 27-

**लंका कपि प्रवेश जिमि कीन्हा, पुनि सीतहिं धीरज जिमि दीन्हा।**

हनुमानजी ने लंका देखी। समुद्र से सुरक्षित। बड़ा ऊंचा प्रकाशमान स्वर्ण कोट। सुंदर नगर रचना है। वन (जंगल), बाग (बड़े बाग), उपवन (नगर के भीतर के बाग), वाटिका (फूल बाग) है। सबको मोहित करदे एसी नर, नाग, सुर और गंधर्व कन्याएं है। पर्वताकार मल्ल हैं। करोड़ों भयंकर देह वाले नगर रक्षक हैं। अतः -

**पुर रखवारे देखि बहु, कपि मन कीन्ह विचार।**
**अति लघु रूप धरौं निशि, नगर करौं पैसार।।**
**(पैसार- प्रवेश)-**

मशक समान रूप कपि धरी,लंका चलै सुमिरि नर हरी।

लंका में उपद्रव करना है इसलिए नरसिंह (नरहरि) का स्मरण किया। नर रामजी, हरि सुग्रीव, दोनो स्वामियों का स्मरण किया। नर और वानर दो से ही रावण ने अमरता वर नहीं पाया था इसलिए उन स्वरूपों का स्मरण किया।

ओर मच्छर जितना छोटा कपि रूप बनाकर चले

*सूर्यास्त हो जानेपर रातके समय उन पवनकुमार ने अपने शरीरको छोटा बना लिया। वे बिल्लीके बराबर होकर अत्यन्त अद्‌भुत दिखायी देने लगे ॥

**- वा.रा.सु.02.49**

* तदनन्तर वानरश्रेष्ठ महाकपि पवनकुमार हनुमान् उस पुरी में प्रवेश करने लगे। इतने में ही उस नगरी की अधिष्ठात्री देवी लंकिनि ने अपने स्वाभाविक रूपमें प्रकट होकर उन्हें देखा ॥

**- वा.रा.सु.03.20**

विघ्न तो भले काम में भी आते ही हैं। अब लंकिनी आगई। बोली मेरा तिरस्कार कर कहां जाता है। देखलो रावण की सुरक्षा व्यवस्था। मच्छर जैसा कपि भी पकड़ लिया। बोली मैं लंका के चोरों को खा जाती हूं। -

ततः कृत्वा महानादं सा वै लंका भयंकरम् । तलेन वानरश्रेष्ठं ताडयामास वेगिता ॥

लंका ने बड़ी भयंकर गर्जना करके वानरश्रेष्ठ हनुमान् को बड़े जोरसे एक थप्पड़ मारा ॥

**- वा.रा.सु.03.38**

चोर की चौकीदारनी से, चोर उपाधि हनुमानजी को अच्छी नहीं लगी। एक मुक्का मारा तो लहू बहाती गिर गई। जैसे तैसे उठी और फिर न मार दे इस शंका से बोली कि ब्रह्माजी ने जब रावण को वरदान दिया था तब मुझसे कहा था। जब तू सीता की सुधि लाने वाले एक वानर के हाथ से घायल होगी तब समझ लेना कि अब राक्षस मारे जाएंगे। एक ही मुक्के में भाषा बदल गई। पहले चोर कहा था और अब -

**तात मोर अति पुण्य बहूता, देखेऊँ नयन राम कर दूता।**
**तात स्वर्ग अपवर्ग सुख, धरिय तुला इक संग।**
**तुलै न ताही सकल मिलि, जो सुख लव सतसंग।।**
**(अपवर्ग- मोक्ष, लव- लव भर का)**

(वशिष्ठजी और विश्वामित्रजी सत्संग और तप के विवाद को सुलझाने शेषजी के पास गए। शेष ने कहा पहले पृथ्वी धारण करो तो बताऊं।विश्वामित्रजी ने सम्पूर्ण तपबल लगाया पर नहीं उठी। शेष के हटते ही गिरने लगी। तब वशिष्ठजी ने दो घड़ी के सत्संग का फल लगाया तो पृथ्वी स्थिर होगई। )

अब तो चोकीदारनीजी बलिहार होगई। बोली -

**प्रविषि नगर कीजै सब काजा, हृदय राखि कौशलपुर राजा।**

(सब काम -1- राम काज, 2- वानरों के श्रम की सफलता, 3- सुग्रीव की सीता खोज की प्रतिज्ञा, 4- जानकी का विरह हरण, 5- विभीषण के मनोरथ की पूर्ति, 6- लंका दाह से त्रिलोकी को आनंद)

लंका में त्रिलोक की सुंदर स्त्रियां है। रघुनाथ को हृदय में धारण करोगे तो विकार नहीं आवेगा।

क्योंकि राम भक्त को -

**गरल सुधा रिपु करई मिताई, गोपद सिंधु अनल सितलाई।**
**गरुअ सुमेरू रेणु सम ताही, राम कृपा करि चितवा जाही।**
**(गरुअ- विशाल, भारी, रेणु- धूल का कण)**

(बजरंगबली इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। इंद्र ने वज्र मारा तो अमर हो गए। लंकिनी मित्र, समुद्र गौ खुर, अग्नि शीतल, रावण धूल का कण होगया)

उसकी सीख मान, रामजी का नाम लेकर अब और छोटा रूप बनाकर चले। मंदिर मंदिर जाकर देखा। रावण के अति विचित्र, अवर्णनीय मंदिर में भी गए। रावण सो रहा था।

सभी नशे में थे।

* शर्करासे तैयार की हुई सुरा 'शर्करासव' कहलाती है।

* मधुसे बनायी हुई 'मदिरा' माध्वीक।

* महुआ के फूलसे तथा अन्यान्य पुष्पोंके मकरन्द से बनायी हुई सुरा को 'पुष्पासव' कहते हैं।

* द्राक्षा आदि फलों के रससे तैयार की हुई 'सुरा' को फलासव कहते हैं।

**- वा.रा.सु.11.23**

*यहाँ शयनागारमें सोये हुए रावणके एक ही मुख और दो ही बाँहों का वर्णन आया है। इससे जान पड़ता है कि वह साधारण स्थिति में इसी तरह रहता था। युद्ध आदिके विशेष अवसरों पर ही वह स्वेच्छापूर्वक दस मुख और बीस भुजाओं से संयुक्त होता था।

**- वा.रा.सु.10.22**

सीताजी वहां नहीं थी। सोचा, अब क्या करूं। लोट जाऊं। रामजी को क्या मुंह दिखाऊंगा।

*जानकीजी के दर्शन किए बिना मेरे वहाँ जानेपर मैं समझता हूँ बड़ा भयंकर आर्तनाद होने लगेगा। इक्ष्वाकु कुल का नाश और वानरोंका भी विनाश हो जायगा।

*यदि मैं यहीं रहूँ और वहाँ न जाऊँ तो मेरी आशा लगाये वे दोनों धर्मात्मा महारथी बन्धु प्राण धारण किये रहेंगे और वे वेगशाली वानर भी जीवित रहेंगे।

*यदि मुझे जानकीजी का दर्शन नहीं हुआ तो मै खुशी-खुशी जल-समाधि ले लूँगा। मेरे विचारसे इस तरह जल-प्रवेश करके परलोकगमन करना ऋषियों की दष्टिमें भी उत्तम ही है।

**- वा.रा.सु.13.37,39,43**

जामवंतजी से क्या कहूंगा। घोर निशाचर ही निशाचर बसे हैं। सब नशे में थे। इनमें जानकीजी की खबर कौन दे। इसी दुविधा में भटक रहे थे तभी -

**भवन एक पुनि दीख सुहावा, हरि मंदिर तहं भिन्न बनावा।**
**रामायुध अंकित गृह, शोभा वरणि न जाय।**
**नव तुलसी के वृंद बहु, देखि हर्ष कपिराय।।**
**(रामायुध- धनुष बाण, वृंद- बिरवे, समूह)**

आशा जगी। फिर सोचा लंका में सज्जन का वास ? तभी विभीषण जागे और -

**राम नाम तेहि सुमिरण कीन्हा, हृदय हर्ष कपि सज्जन चीन्हा।**

महावीरजी का संशय भागा। सोचा इससे बात बन सकती है। राम नाम कोई साधु ही ले सकता है। साधु से मिलने से कोई हानि नहीं। ब्राह्मण का वेश धर आवाज लगाई। राक्षस होगा तो नहीं मानेगा। विभीषण आए। प्रणामकर कुशल पूछी। क्या आप नारायण के दास हो। तुम पर बहुत प्रीति हो रही है या आप स्वयं श्रीराम ही मुझपर कृपा करने आए हो। हनुमानजी ने अपना नाम, राम कथा कही। दोनो मगन हो गए।

विभीषण बोला -

सुनहुं पवन सुत रहनि हमारी,जिमि दशनन्ह में जीभ बिचारी।

मुझे अनाथ जानकर रघुनाथ कब कृपा करेंगे।

तामसी तन, साधन हीन। प्रभु चरणों में प्रीति भी नहीं। परंतु -

**अब मोहिं भा भरोस हनुमंता, बिनु हरि कृपा मिलहिं नहिं संता।**
**यह रघुनाथजी का अनुग्रह ही है जो आपने मुझे पुकार कर दर्शन दिया।**

हनुमानजी बोले विभीषणजी, प्रभु श्रीराम सेवक पर बहुत प्रेम रखते हैं। मुझे देखो। मैं कौन सा कुलीन हूं। वानर हूं, चंचल हूं, सब भांति हीन हूं। ओर तो ओर -

प्रात लेइ जो नाम हमारा,तेहि दिन ताहि न मिलै आहारा।

तब भी मुझपर कृपा की है। ऐसे प्रभु को छोड़ जो भटके उन्हें तो कष्ट होना ही है। -

**इसलिए जाती भ्रातादिक के, संबंधों में अब रत मत हो।**
**मेरे मत से है भक्तराज, रघुनायक के शरणागत हो।।**
**मैने तो यह ही समझा है, इसमें ही सब आजाताहै।**
**मालिक का जो हो जाता है,मालिक को वह पा जाता है।।**

**- राधेश्याम रामायण**

इसी प्रकार रामजी के गुण गाते अवर्णनीय विश्राम पाया।

विभीषण ने कहा जानकीजी यहां पिता के घर की तरह रहती है। हनुमानजी ने दर्शन की अभिलाषा बताई। विभीषण ने युक्ति बताई।

अशोक वाटिका में जानकीजी के दर्शन किए। उनको बैठे बैठे दिन रात बीतती थी।

तन दुर्बल। एक चोंटी।-

**क्षितिक्षमा सा पुष्करसंनिभेक्षणा या रक्षिता राघवलक्ष्मणाभ्याम् ।**
**राक्षसीभिर्विकृतेक्षणाभिः संरक्ष्यते सम्प्रति वृक्षमूले ॥**

हनुमानजी ने अशोक वाटिका में सीताजी को देखकर विचार किया अहो ! जो पृथ्वी के समान क्षमाशील और प्रफुल्ल कमल के समान नेत्रोंवाली हैं तथा श्रीराम और लक्ष्मणने जिनकी सदा रक्षा की है, वे ही सीता आज इस वृक्षके नीचे बैठी हैं और ये विकराल नेत्रोंवाली राक्षसियाँ इनकी रखवाली करती हैं ॥

**- वा.रा.सु.16.29**

*मिट्टी लगने से सीताजी के बालों में लटें पड़ गई थी।

-आनन्द रामायण

बस राम राम का जाप। नेत्र अपने चरणों में और मन रघुनाथ के चरणों में। या तो वे चरण आवें तो मन शांत हो या ये जावे तब। यह दशा देखकर हनुमानजी बहुत दुखी हुए। पेड़ के पत्तों में छुपकर विचार करते हैं की क्या करूं, तभी श्रृंगारित स्त्रियों के साथ रावण आया।-

**सन्नामिव महाकीर्तिं श्रद्धामिव विमानिताम्।**
**प्रज्ञामिव परिक्षीणामाशां प्रतिहतामिव।।**
**आयतीमिव विध्वस्तामाज्ञां प्रतिहतामिव।**
**दीप्तामिव दिशं काले पूजामपहतामिव।।**

**पौर्णमासीमिव निशां तमोग्रस्तेन्दुमण्डलाम्।**
**पद्मिनीमिव विध्वस्तां हतशूरां चमूमिव।।**
**प्रभामिव तमोध्वस्तामुपक्षीणामिवापगाम्।**
**वेदीमिव परामृष्टां शान्तामग्निशिखामिव।।**

रावण के आने पर जानकीजी क्षीण हुई विशाल कीर्ति, तिरस्कृत हुई श्रद्धा, सर्वथा ह्रासको प्राप्त हुई बुद्धि, टूटी हुई आशा, नष्ट हुए भविष्य, उल्लङ्घित हुई राजाज्ञा, उत्पातकाल में दहकती हुई दिशा, नष्ट हुई देवपूजा, चन्द्रग्रहण से मलिन हुई पूर्णमासी की रात, तुषारपात से जीर्ण-शीर्ण हुई कमलिनी, जिसका शूरवीर सेनापति मारा गया हो ऐसी सेना, अन्धकार से नष्ट हुई प्रभा, सूखी हुई सरिता, अपवित्र प्राणियों के स्पर्श से अशुद्ध हुई वेदी और बुझी हुई अग्निशिखा के समान प्रतीत होती थीं ॥

**- वा.रा.सु.19.11से14**

दुष्ट ने बहुत भांति जानकीजी को समझाया। साम (प्रीति), दाम, भय, भेद दिखाया। बोला, एक बार मेरी ओर देख ले। -
एवं चैवमकामां त्वां न च स्प्रक्ष्यामि मैथिलि।

कामं कामः शरीरे मे यथाकामं प्रवर्तताम् ॥ ६॥ मिथिलेशनन्दिनि ! ऐसी अवस्थामें भी जबतक तुम मुझे न चाहोगी, तबतक मैं तुम्हारा स्पर्श नहीं करूँगा। भले ही कामदेव मेरे शरीरपर इच्छानुसार अत्याचार करे।

**- वा.रा.सु.20.06**

मैं मंदोदरी आदि सब रानियों को तेरी दासी बना दूंगा।

(रावण जानकीजी को अपना इष्ट मानता है। कृपा दृष्टि चाहता है। हरण समय भी मन में प्रणाम किया था।)

जानकीजी तिनके की और देखकर या पर्दा करके या पृथ्वी की ओर देखकर,या अपने प्राणों को तृण समान त्यागने का संकेत कर या रावण को रामजी के सामने तृणवत सिद्ध कर, बोली कि मेरी कृपादृष्टि चाहता है तो रघुनाथजी का सुमिरण कर।–

**नहि गन्धमुपाघ्राय रामलक्ष्मणयोस्त्वया।**
**शक्यं संदर्शने स्थातुं शुना शार्दूलयोरिव ॥**

श्रीराम और लक्ष्मणकी तो गन्ध पाकर भी तुम उनके सामने नहीं ठहर सकते। क्या कुत्ता कभी दो-दो बाघोंके सामने टिक सकता है ? ॥

**- वा.रा.सु.21.31**

अवधपति दशरथजी का स्मरणकर कहती हैं कि उनकी भांति, मैं भी तन तज दूंगी। तू पटबीजना (खद्योत) है। मेरी कमलिनी आंखे रघुनाथजी के दर्शन से ही खुलेगी।

(इष्ट के अनुसार कहा कि में तो खद्योत हूं रामजी ही कृपा करेंगे।)

मूर्ख तू रघुवीर के बाण की चिंता कर। क्या महाराज अज के बाण को भूल गया जिसके भय से लंका में छिप कर बैठा था।

(इष्ट के मत से रघुनाथ की बान,आदत को देख वे सब पर कृपा करते हैं।)

रे मूर्ख, अकेले में मुझे हर लाया। लाज नहीं आती।

(हरि के बिना अकेली मुझसे याचना करते लाज नहीं आती।)

रावण खिसियाकर, तलवार निकालकर बोला।अरे मैने तेरे (इष्ट) भरोसे, राम से वैर लिया है-

**सीता तैं मम कृत अपमाना, कटिहौ तव शिर कठिन कृपाणा।**

(इष्ट मत में तू अपमान करेगी, कृपा नहीं करेगी, तो मैं अपना सिर काट लूंगा।)

जानकीजी बोली या तो रघुनाथ की भुजा या तेरी तलवार ही मेरे कंठ में पड़ेगी। है चंद्रहास मेरा दुख दूर करो।

इतना सुन मारने दौड़ा। मंदोदरी ने नारी को न मारने की बात कहकर, समझाया। अथवा यह सुन मारा नहीं भागा। तब मंदोदरी ने समझाया भागने से कुछ नहीं होगा और सेवा करो जिससे रीझेगी। तब निशाचरियों को समझाया कि बहुत त्रास भोगो पर इनकी सेवा करो। एक माह में प्रसन्न नहीं हुई तो तुम्हारा अपराध माना जायेगा।रावण घर गया। राक्षसियां सीता को विविध रूप दिखाने लगी।–

**यस्य सूर्यो न तपति भीतो यस्य स मारुतः ।**
**न वाति स्मायतापाङ्गि किं त्वं तस्य न तिष्ठसे ॥**

जानकीजी से दुर्मुखी नामवाली राक्षसी ने कहा, विशाललोचने ! जिनसे भय मानकर सूर्य तपना छोड़ देता है और वायुकी गति रुक जाती है, उन दशानन के पास तुम क्यों नहीं रहती?

**- वा.रा.सु.23.16**

ओर ज्ञान दिया -

* मरीचि, अत्रि, अङ्गिरा, पुलस्त्य, पुलह और क्रतु- ये छः प्रजापति हैं।

*बारह आदित्य, ग्यारह रुद्र, आठ वसु और दो अश्विनीकुमार- ये तैंतीस देवता हैं।

ये सब दशानन के वशवर्ती हैं।

**- वा.रा.सु.23**

त्रिजटा ने समझाया कि जानकी की सेवा करो। मेरे सपने में एक वानर ने लंका जलाकर राक्षसों की सेना मार दी। रावण मुंडित सिर,खंडित बाहु, गधेपर बैठ दक्षिण को गया। लंका विभीषण की हुई। सीता को रामजी ने बुला लिया। चार दिन में यह सच होगा। अथवा दिनचर (वानर) के जाते ही सच होगा।

सीताजी को लगा कि एक माह में मार देगा। त्रिजटा से बोली, मां चिता बनाकर अग्नि दे दे। इस ताप से तो मरण भला।-

**लोकप्रवादः सत्योऽयं पण्डितैः समुदाहृतः।**
**अकाले दुर्लभो मृत्युः स्त्रिया वा पुरुषस्य वा ॥**

हाय ! पण्डितों ने यह लोकोक्ति ठीक ही कही है कि किसी भी स्त्री या पुरुषकी मृत्यु बिना समय आये नहीं होती' ॥

**- वा.रा.सु.25.12**

सर्व समर्थ रघुनाथजी की पत्नी की यह दशा तो हम कहां। फिर भी निराश नहीं होना।

त्रिजटा प्रभु का बल बखान कर बोली -

**कारज धीरे होतु है, काहे होत अधीर।**
**समय पाय तरुवर फलै, केतक सींचो नीर।।**
**- वृंद कवि**

रात्रि में आग न मिलने का कहकर घर गई।

राक्षसियों द्वारा डराने पर जानकीजी ने कहा।-

**कीदृशं तु महापापं मया देहान्तरे कृतम् ।**
**तेनेदं प्राप्यते घोरं महादुः खं सुदारुणम् ॥**

पता नहीं, मैंने पूर्वजन्ममें दूसरे शरीरसे कैसा महान् पाप किया था जिससे यह अत्यन्त कठोर, घोर और महान् दुःख मुझे प्राप्त हुआ है ?

**- वा.रा.सु.25.18**

सीताजी दुखी हुईं। बोली चंद्रमा, तू ही आग बरसा दे। अशोक शोक हर। अपना नाम सिद्ध कर। यह दुख देख हनुमानजी बहुत दुखी हुए और -

**कपि करि हृदय विचार, दीन्ह मुद्रिका डारि तब।**
**जनु अशोक अंगार, दीन्ह हर्षि उठि कर गहेउ।।**

अंगारा जान, जानकीजी ने प्रसन्न होकर उठाया। देखा। मुद्रिका। राम नाम। यह यहां कैसे। रामजी को कोई जीत नहीं सकता। माया से ऐसी बन नहीं सकती। तभी महावीरजी -

**रामचंद्र गुण वरणै लागा, सुनतहि सीता कर दुख भागा।**
**गाने लगे -**

**इक्ष्वाकु वंश में नृप दशरथ, शुभ पुण्य कीर्ति के स्वामी थे।**
**धन धान्य अश्व गज वैभव संग, ऋषि सत्ता के अनुगामी थे।।**
**वे चक्रवर्ति महाराज स्वयं, थे देवराज से बल धारी।**
**मन में था भाव अहिंसा का, अनुराग धर्म में था भारी।।**
**रघुनंदन उनके ज्येष्ठ सुवन, जो शस्त्र शास्त्र के ज्ञाता हैं।**
**ऋषि मुनि सेवक और धर्मप्राण, सब जीव जगत के त्राता हैं।।**
**महाराज वचन को मान दिया, वन गमन किया रघुराई ने।**
**वैदेही उनके साथ चली, घर त्याग दिया प्रिय भाई ने।।**
**निशिचर विहीन कर जनस्थान, दशकंधर को संदेश दिया।**
**छल बल दिखला कर उस खल ने,प्रिय जनक लली का हरण किया।।**
**अपनी भार्या के लिए राम, मर्मांतक पीड़ा सहते हैं।**
**सब लता पत्र, पशु पक्षी से, बस सीता सीता कहते हैं।।**
**अत्यंत विरह में डूबे और, तन की सुधि भूले रघुराई।**
**फिर ऋष्यमूक पर जाकर के, प्रिय मीत बनाया कपिराई।।**
**निज कपिदल श्री कपिराई ने, पृथ्वी के चारों दिशि भेजा।**
**कपियों ने पूरी श्रद्धा से, मिथिलेश नंदिनी को खोजा।।**
**मैं भी उनका आदेश मान, यह सिंधु लांघ कर आया हूं।**
**सौभाग्य वंत मैं भाग्यवान, दर्शन मां के कर पाया हूं।।**
**राम कृपा से होगया, पूरण मेरा काम।**
**अपने सुत हनुमान का, स्वीकारो परनाम।।**
**- 'कमल'- वा.रा.सु.31**

राम जन्म से वन जाने तक की, खोज में आने, अंगूठी लाने की कथा सुन, दुख भाग गया।बोली, कथा कहने वाले प्रकट तो हो। जब प्रकट हुए तो मुंह फेर लिया। सोचा कहीं रावण की माया तो नही।-

मायां प्रविष्टो मायावी यदि त्वं रावणः स्वयम् । उत्पादयसि मे भूयः संतापं तन्न शोभनम्॥

जानकीजी ने हनुमानजी से कहा, यदि तुम स्वयं मायावी रावण हो और मायामय शरीर में प्रवेश करके फिर मुझे कष्ट दे रहे हो तो यह तुम्हारे लिये अच्छी बात नहीं है॥

**- वा.रा.सु.34.14-**

**गुणान् रामस्य कथय प्रियस्य मम वानर।**
**चित्तं हरसि मे सौम्य नदीकूलं यथा रयः।।**

वानर! यदि तुम सच में श्री रामजी के दूत हो तो मेरे प्रियतम श्रीराम के गुणोंका वर्णन करो। सौम्य ! जैसे जलका वेग नदीके तटको हर लेता है, उसी प्रकार तुम श्रीराम की चर्चा से मेरे चित्त को चुराये लेते हो ॥

**- वा.रा.सु.34.19**

हनुमानजी ने धीरज धरवाया। कहा -

**रामदूत मैं मातु जानकी, सत्य सपथ करुणानिधान की।**

वानर और राम दूत। यह कैसे। तब फिर सारा वृत्तांत कहा। विश्वास हुआ।-

**वर्तते दशमो मासो द्वौ तु शेषौ प्लवङ्गम ।**
**रावणेन नृशंसेन समयो यः कृतो मम ॥**

सीता जी ने कहा वानर ! यह दसवाँ महीना चल रहा है। अब वर्ष पूरा होने में दो ही मास शेष हैं। निर्दयी रावण ने मेरे जीवन के लिये जो अवधि निश्चित की है, उसमें इतना ही समय बाकी रह गया है॥

**- वा.रा.सु.37.08**

नेत्रों से जल बह चला। मुझे विरह सागर से निकालने को तुम जलयान हुए हो। अब कोमलचित, पर निष्ठुर हुए दोनो भाइयों की कुशलता कहो। मुझे याद भी करते हैं। मुझे दर्शन कब होंगे। बोल ना पाई। गला और नेत्र भर आये। हनुमानजी बोले -

मातु कुशल प्रभु अनुज समेता,तव दुख दुखी सो कृपानिकेता।

अब उनका संदेश सुनो-

**राम कहेउ वियोग तव सीता, मोकहं सकल भए विपरीता।**

तुम्हारे वियोग में शीतल करने वाली हर वस्तु, जलाने वाली होगई है। नव पल्लव अग्नि, हर रात्रि काल रात्रि, चंद्रमा ज्येष्ठ का सूर्य हुआ है।कमल वन बरछी वन हुआ। बादल मानो तप्त तेल बरसाते हैं। वृक्ष दुखदाई। त्रिविध पवन सर्प की फुंकार जैसी लगती है। कहने से दुख घटता है पर कहूं किससे। इस प्रेम तत्व को बस मेरा मन जानता हैं और वह सदा तेरे पास रहता है।

संदेश सुन जानकी तन की सुध भूल गई। हनुमानजी ने धैर्य बंधाया। कहा -

**निषिचर निकर पतंग सम, रघुपति बाण कृशानु।**
**जननी हृदय धीर धरु, जरे निशाचर जानु।।**
**(निकर- समूह, कृशानु- अग्नि)**

जानकीजी ने जयंत की धृष्टता की कथा कही।

*जब हम मंदाकिनी के समीप बैठे थे तभी एक कौए ने आकर पहले मेरे पैर चोंच मारी और थोड़ी ही देर में ' वह कौआ फिर वहाँ आया। मैं सोकर जगने के बाद श्रीरघुनाथजी की गोद से उठकर बैठी ही थी कि उस कौएने सहसा झपटकर मेरी छाती में चोंच मार दी ॥

**- वा.रा.सु.38.22-**

स दर्भसंस्तराद् गृह्य ब्रह्मणोऽस्त्रेण योजयत्।

स दीप्त इव कालाग्निर्जज्वालाभिमुखो द्विजम्।। श्रीराम ने कुश की चटाई से एक कुश निकाला और उसे ब्रह्मास्त्र के मन्त्र से अभिमन्त्रित किया। अभिमन्त्रित करते ही वह कालाग्नि के समान प्रज्वलित हो उठा। उसका लक्ष्य वह पक्षी ही था-

**स तं प्रदीप्तं चिक्षेप दर्भं तं वायसं प्रति।**
**ततस्तु वायसं दर्भः सोऽम्बरेऽनुजगाम ह।।**
**श्रीरघुनाथजी ने वह प्रज्वलित कुश उस कौए की ओर छोड़ा।**
**फिर तो वह आकाश में उसका पीछा करने लगा ॥**
**-वा.रा.सु.38.29,30**

*सब जगह भटकने के बाद जब वह रघुवर की शरण में आया तो उसकी सम्मति के अनुसार श्रीराम ने उस अस्त्र से उस कौए की दाहिनी आँख नष्ट कर दी। इस प्रकार दायाँ नेत्र देकर वह अपने प्राण बचा सका ॥

**-वा.रा.सु.38.35-**
**यदि वा मन्यसे वीर वसैकाहमरिंदम।**
**कस्मिंश्चित् संवृते देशे विश्रान्तः श्वो गमिष्यसि।।**

जानकीजी ने कहा शत्रुओं का दमन करनेवाले वीर ! यदि तुम ठीक समझो तो यहाँ एक दिन किसी गुप्त स्थान में निवास करो। इस तरह एक दिन विश्राम करके कल चले जाना।

**- वा.रा.सु.39.20**

*जानकीजी ने कहा इस संसार में समुद्र को लाँघने की शक्ति तो केवल तीन प्राणियों में ही देखी गयी है। तुममें, गरुड़ में अथवा वायुदेवता में।

**- वा.रा.सु.39.26**

*हनुमानजी ने कहा देवी जब मैं ही यहाँ आ गया, तब अन्य महाबली वीरों के आने में क्या संदेह है? जो श्रेष्ठ पुरुष होते हैं, उन्हें संदेश-वाहक दूत बनाकर नहीं भेजा जाता। साधारण कोटिके लोग ही भेजे जाते हैं ॥

**- वा.रा.सु.39.39**

पता होता तो देर ही नहीं करते। आज्ञा होती तो आपको अभी लेजाता। कुछ दिन धैर्य धरो। सूर्य उगने वाला है। उजाला होने वाला है।

"उजाला होने वाला है"

- 'कमल' (गीत)

रघुनाथ कपिदल सहित आकर आपको लेजाएंगे। सब यश गाएंगे।

सीताजी को शंका हुई। पूछा बेटा, वानर सब तुम्हारे ही जैसे है ? निशाचर तो बड़े बलवान, विकराल हैं। मुझे संदेह है। आकर क्या कर लोगे।

तभी हनुमानजी ने अपना स्वरूप प्रकट किया -

**कनकभूधराकार शरीरा, समर भयंकर अति बलबीरा।**

(कनकभूधराकार- स्वर्ण पर्वत के आकार का)

देखते ही विश्वास होगया। बोली अब ठीक है।

हनुमानजी फिर छोटे बन गए। यही कला आनी चाहिए। छोटे बनने की। लेकिन कौन छोटा बने। बस बड़े बनने की होड़ मची है।

हनुमानजी बोले मां, यहसब प्रभु का प्रताप ही है अन्यथा हम कहां। भक्ति, प्रताप, तेज, बल भरी वाणी सुन प्रसन्न हुई। आशीर्वाद दिया। तुम बल और शील के स्थान होवो। ओर -

अजर अमर गुननिधि सुत होहू,करहुं बहुत रघुनायक छोहू।

महावीरजी को आनंद आगया। प्रणाम किया ।बोले आपका अमोघ आशीर्वाद पाकर मैं कृतकृत्य होगया।

मूल रामायण 28-

**वन उजारि रावणहिं प्रबोधी, पुर दहि लांघेउ बहुरि पयोधी।**

फिर बोले, मां सुंदर फल देखकर भूख लग आई है। मां ने कहा विकट रखवाले खड़े है।

बोले, आप तो आशीर्वाद दो। उनका डर नहीं है।

**मां बोली -**

**देखि बुद्धि बल निपुण कपि, कहा जानकी जाहु।**
**रघुपति चरण हृदय धरि, तात मधुर फल खाहु।।**

बस फिर क्या था। चल दिए। फल खाए। भूख मिटी तो वृक्ष तोड़ने लगे। रखवालों ने विरोध किया को मार भगाया। वे रावण के पास जाकर बोले -

नाथ एक आवा कपि भारी,तेहि अशोक वाटिका उजारी।
उसने राक्षसों को मसलकर मारा।

*अशोक वाटिका (गृह उपवन, गृहोध्यान, प्रमदावन) के उजड़ने के समाचार पाकर उस महातेजस्वी निशाचर रावण ने हनुमानजी को कैद करनेके लिये अपने ही समान वीर किंकर नामधारी राक्षसों को जाने की आज्ञा दी।

**- वा.रा.सु.42.24**

*रावण द्वारा हनुमानजी से युद्ध करते हुए महाबली प्रहस्तपुत्र जम्बुमाली ओर सात मंत्री पुत्रों और पांच सेनापतियों के मारे जाने पर निशाचरराज रावणके नेत्र रोष से लाल होकर घूमने लगे। उसने तुरंत ही अपने पुत्र अक्षय कुमार को युद्धके लिये जानेकी आज्ञा दी॥

**- वा.रा.सु.44.20**

जब हनुमानजी ने रावण के भेजे निशाचरो को भी मार भगाया तब अक्षय कुमार को सेना लेकर भेजा। हनुमानजी ने वृक्ष उखाड़, उसे पार कर दिया। बचे हुओं ने फिर दरबार में पुकार लगाई।

पुत्र वध सुन रावण रिसाया और मेघनाद को भेजा। कहा, मारना मत, पकड़ लाना। देखूं तो, कहां का है।

मेघनाद को देख महावीरजी ने एक वृक्ष उखाड़कर फेंका। रथ तोड़ दिया। उसके साथियों को अपने तन से मसल दिया। फिर दोनो भिड़े। उसे एक मुक्का मारकर पेड़ पर जा चढ़े। इंद्रजीत को कुछ पल मूर्छा आई। जागा, माया की किंतु बजरंगबली पर एक न चली। तब –

**ब्रह्म अस्त्र तेहि साधा, कपि मन कीन्ह विचार।**
**जो न ब्रह्म शर मानहूं, महिमा मिटै अपार।।**
**ततः स्वायम्भुवैर्मन्त्रैर्ब्रह्मास्त्रं चाभिमन्त्रितम् ।**
**हनूमांश्चिन्तयामास वरदानं पितामहात् ॥**

जिन मन्त्रों के देवता साक्षात् स्वयम्भू ब्रह्मा हैं, उनसे अभिमन्त्रित हुए उस ब्रह्मास्त्र को देखकर हनुमानजी को पितामह ब्रह्मा से अपने लिये मिले हुए वरदानका स्मरण हो आया। (ब्रह्माजी ने उन्हें वर दिया था कि मेरा अस्त्र तुम्हें एक ही मुहूर्त में अपने बन्धनसे मुक्त कर देगा)

**- वा.रा.सु.48.40**

हनुमानजी को बाण लगा। सेना पर गिरे।

इंद्रजीत ने इन्हें मूर्छित जानकर नागफास में बांधा और पिता के पास ले चला।

शिवजी बोले पार्वती, जिसका नाम मुक्त करता है उसका दूत कैसे बंध जावे लेकिन प्रभु के कार्य हेतु यह भी किया।-

**स बद्धस्तेन वल्केन विमुक्तोऽस्त्रेण वीर्यवान्।**
**अस्त्रबन्धः स चान्यं हि न बन्धमनुवर्तते।।**

वल्कल (वृक्षों के वल्कल को बटकर) के रस्से से बँध जानेपर पराक्रमी हनुमान् ब्रह्मास्त्र के बन्धन से मुक्त हो गये क्योंकि उस अस्त्र का बन्धन किसी दूसरे बन्धन के साथ नहीं रहता॥

**- वा.रा.सु.48.48**

वानर बंधगया यह जान, कौतुक देखने बहुत निशाचर आए। अद्भुत सभा है रावण की। जहां -

**कर जोरे सुर दिशप विनीता, भृकुटी विलोकहिं सकल सभीता।**
**(दिशप- दिकपाल)**

वहां महावीरजी निःशंक खड़े है। रावण दुर्वाक्य कहकर हंसा फिर अक्षय की मृत्यु का स्मरण कर दुखी हुआ। पूछा, कौन हे तू ?

किसके बल से वन उजाड़ा ?

मेरा नाम नहीं सुना क्या ?

किसके बल से निर्भय फिरता है ?

राक्षसों को किस अपराध से मारा ?

तुझे प्राणों का डर नहीं है ?

**तू कौन कहां से आया है, कुछ अपनी बात बता बनरे।**
**उद्यान उजाड़ा क्यों मेरा, क्या कारण था बतला बनरे।।**

-राधेश्याम रामायण हनुमानजी ने प्रश्न सुने और तिगुना उत्तर दिया।छह प्रश्नों के अठारह उत्तर। यह भी कृपा थी। आखिर शिवभक्त जो ठहरा। समझाना तो बनता है।

हनुमानजी ने अच्छा उत्तर दिया।

1- तुझे लंका पर घमंड है किंतु जिसके बल माया ब्रह्मांडों की रचना करती है। उनका दूत हूं।

2- जिसके बल ब्रह्मा सृष्टि का सृजन, विष्णु पालन और शंकर संहार करते हैं। उनका दूत हूं।

3- तुम्हें दस शिर और कैलाश उठाने का घमंड है ना किंतु जिसका बल पाकर सहस्त्रमुख शेष सकल ब्रह्मांड को शिरपर धारण करते हैं। उनका दूत हूं।

4- तुझ जैसे शठों को शिक्षा देने के हेतु जो अनेक देह धरते हैं। उनका दूत हूं।

5- जिन्होंने तुझ जैसे अभिमानियों का मद हरण करने वाला शिव धनुष तोड़ा। उनका दूत हूं।

6- जिन्होंने खर, दूषण, विराध, वाली आदि महाबलियों का वध किया। उनका दूत हूं।

ओर –

**जा के बल लवलेश ते, जितेउ चराचर झारि।**
**तासु दूत हौं जाहिकी, हरि आनेउ प्रिय नारि।।**
**(झारि- जगत)**

7- जिनके बल के लवलेश मात्र शंकरजी हैं। उनका किंचित बल पाकर तूने सबको जीता है। उनका दूत हूं।

8- जिनकी स्त्री का तूने एकांत पाकर हरण किया है। मैं उन्हीं बलवान श्री रघुनाथजी का दूत हूं। तुमने पूछा कि मुझे नहीं जानते ? रावण को ? हां जानता हूं, अच्छी तरह जानता हूं।

9- तुम्हारी लड़ाई सहस्त्रबाहु से हुई थी ना। बड़ा यश पाया था।

10- तुम वाली से लड़ने गए थे ना। बड़ा यश पाया था।

रावण को लगा यह तो नंगा कर रहा है। सब भेद खोल देगा। हुंह किया। हंस कर बात टाली। हनुमानजी बोले,तुमने पूछा,

फल क्यों खाए ?

पेड़ क्यों तोड़े?

भला यह भी कोई पूछने की बात है।

11- अरे भूख लगी इसलिए फल खाए।

12- वानर स्वभाव से वृक्ष तोड़ दिए।-

**तुमने न पाहुने की सुधि ली,निशिचर कुल में अभाव है यह।**
**फल खाकर पेड़ तोड़ता है,वानर का तो स्वभाव है यह।।**

-राधेश्याम रामायण

13- मैने रामजी को भोग लगा कर फल खाए और तुम उस प्रसाद के पात्र नहीं हो इसलिए पेड़ तोड़ डाले।

महाराज। मैं तो अपने स्वभाव में रहा पर कुमार्ग पर चलने वाले तुम्हारे अनुचर मुझे मारने लगे। देखो अपना शरीर सबको प्यारा होता है।

14- जिन्होंने मुझे मारा, मैने उन्हें मारा। बात बराबर। फिर भी तुम्हारे बेटे ने मुझे बांध लिया। खैर। मुझे इस बंधन से कोई लाज नहीं।-

न चापि त्रिषु लोकेषु राजन् विद्येत कश्चन। राघवस्य व्यलीकं यः कृत्वा सुखमवाप्नुयात् ॥ राजन् ! तीनों लोकोंमें एक भी ऐसा प्राणी नहीं है, जो भगवान् श्रीराम का अपराध करके सुखी रह सके ॥

- वा.रा.सु.51.20

मैं तो अपने स्वामी का काम करना चाहता हूं।

फिर भी -

**विनती करौं जोरिकर रावण, सुनहु मान तजि मोर सिखावन।**

(जोरिकर- बल देकर)

अन्यथा जोर जबरदस्ती करके, बल से, बिन ती का (बिना स्त्री का) कर दूंगा। आत्मा की न तो स्त्री और न पति होता है। मुक्त कर दूंगा। तुम अपने कुल को तो देखो।

ब्रह्माजी के परपोते हो।

पुलस्त्यजी के पोते हो।

विश्रवाजी के बेटे हो।

कुल परंपरानुसार रघुनाथजी का भजन करो। जिनसे काल डरे उनसे तो डरो।-

**सुग्रीवो न च देवोऽयं न यक्षो न च राक्षसः ।**
**मानुषो राघवो राजन् सुग्रीवश्च हरीश्वरः।।**
**तस्मात् प्राणपरित्राणं कथं राजन् करिष्यसि ॥**

हनुमानजी ने रावण को मिले अमरता के वर का स्मरण कर कहा राक्षसराज ! सुग्रीव और श्रीरामचन्द्रजी न तो देवता हैं, न यक्ष हैं और न राक्षस ही हैं। श्रीरघुनाथजी मनुष्य हैं और सुग्रीव वानरों के राजा। अतः उनके हाथसे तुम अपने प्राणों की रक्षा कैसे करोगे ?

- वा.रा.सु.51.27-अपकुर्वन् हि रामस्य साक्षादपि पुरंदरः ।

न सुखं प्राप्नुयादन्यः किं पुनस्त्वद्विधो जनः।।

भगवान् श्रीराम का अपराध करके साक्षात् इन्द्र भी सुख नहीं पा सकते, फिर तुम्हारे-जैसे साधारण लोगों की तो बात ही क्या है?-

**यां सीतेत्यभिजानासि येयं तिष्ठति ते गृहे।**
**कालरात्रीति तां विद्धि सर्वलङ्काविनाशिनीम् ॥**

जिनको तुम सीता के नाम से जानते हो और जो इस समय तुम्हारे अन्तःपुर में मौजूद हैं, उन्हें सम्पूर्ण लंका का विनाश करनेवाली कालरात्रि समझो ॥

**- वा.रा.सु.41.33,34**

वैर मत करो। रामजी दीन दयाल हैं। शरण जाओ। क्षमा पाओ। -

**राम चरण पंकज उर धरहू, लंका अचल राज तुम करहू।**

रामजी के नाम के बिना वाणी भी शोभा नहीं पाती। मोह त्यागो। सुनो भूदेवपुत्र -

**वसनहीन नहिं सोह सुरारी, सब भूषण भूषित वर नारी।**

राम भजो नहीं तो जो पाया सब खो दोगे। राम पाई (एक का अंक) है। तुम शून्य हो। पाई बिना शून्य बस शून्य ही होता है। मूल्य हीन। राम विमुख रहोगे तो कोई देव (तुम्हारा इष्ट भी) सहाय नहीं करेगा। सोचो। सोचो जरा।

हनुमानजी ने यद्यपि भक्ति, ज्ञान, वैराग्य युक्त वाणी कही। सीख दी। पर किसे। जगत विख्यात अभिमानी को। वह बोला –

**बोला बिहंसि महा अभिमानी, मिला हमहिं कपि गुरु बड़ ज्ञानी।**
**मृत्यु निकट आई खल तोही, लागेसि अधम सिखावन मोही।**
**हनुमानजी समझ गए। यह गया -**
**उलटा होइहिं कह हनुमाना, मतिभ्रम तो प्रकट मैं जाना।**
**गरजा -**
**मेरी त्योरी के चढ़ते ही, त्रैलोक्य नाचने लगते हैं।**
**ग्रह काल सुरेश कुबेर वरुण, मेरे घर पानी भरते हैं।।**
**-राधेश्याम रामायण**

**हनुमानजी बोले -**

**तूने जो अधम कहा इससे, कब उनकी महिमा घटती है।**
**कितनी ही फेंको धूल किंतु, सूरज तक नहीं पहुंचती है।।**
**आगया मृत्यु का दिन समीप, उसने ही तुझे घुमाया है।**
**कहना सुनना है व्यर्थ सभी, तू तो सचमुच बौराया है।।**
**-राधेश्याम रामायण**

लज्जित होकर रावण गरजा। इसके प्राण क्यों नहीं ले लेते। राक्षस मारने दौड़े तभी विभीषण आए। प्रणाम किया। बोले दादा, दूत को नहीं मारते। नीति विरुद्ध है। कुछ और दंड देदो।–

**वैरूप्यमङ्गेषु कशाभिघातोमौण्ड्यं तथा लक्षणसंनिपातः ।**
**एतान् हि दूते प्रवदन्ति दण्डान् वधस्तु दूतस्य न नः श्रुतोऽस्ति ॥**

विभीषण ने समझाया किसी अङ्गको भङ्ग या विकृत कर देना, कोड़े से पिटवाना, सिर मुड़वा देना तथा शरीर में कोई चिह्न दाग देना ये ही दण्ड दूतके लिये उचित बताये गये हैं। उसके लिये वध का दण्ड तो मैंने कभी नहीं सुना है॥

**- वा.रा.सु.52.15**

रावण बोला, अंग भंग कर दो। ज्ञान बघारा -

**कपि की ममता पूंछ पर,सबहिं कहा समुझाय।**
**तेल बोरि पट बांधि पुनि,पावक देहु लगाय।।**
**(बोरि- भिगोकर, पट- कपड़ा)**

बिना पूंछ जायेगा। अपने तथाकथित स्वामी को लायेगा। तब मैं उसकी वीरता देखूंगा। हनुमानजी मुस्काए। सोचा सरस्वतीजी ने सहायता की है।

मूर्ख निशाचर, अपना घर जलाने की रचना खुद करने लगे। निरे मूर्ख। ये भी कपि ही तो ठहरे। खेल करने लगे -

**रहा न नगर बसन घृत तेला, बाढ़ी पूंछ कीन्ह कपि खेला।**
**घी तेल काम आया इतना, बाकी न बचा छोंकन तक को।**
**वस्त्रों का हुआ अकाल वहां, नहिं बचा जरा कफन तक को।।**
**- राधेश्याम रामायण**

*पूंछ लपेटने के लिए लोगों, सभासदों, महाराज, बिस्तर, ध्वजा आदि के वस्त्र भी ले लिए। दीपक और बच्चों के लिए भी घी तेल नहीं छोड़ा।

-आनन्द रामायण

कौतुक देखने पुरवासी आए। हनुमानजी को लात मारकर हंसी करने लगे। ढोल बजाया। ताली बजाई। नगर में घुमाया। घुमाया क्या नगर दिखा दिया। फिर आग लगा दी। लगा क्या दी। लगा ली।

*अग्नि को रावण फूंक मारकर जलाने लगा तो दाढ़ी मूछ के बाल जल गए। दोनो हाथों से बुझाने लगा।

- आनन्द रामायण महावीरजी ने छोटा रूप बनाया तो बंधन खिसक गए। इन्हें वरदान भी था कि ब्रह्मास्त्र दो घड़ी से अधिक बाधक नहीं होगा ओर ब्रह्मास्त्र के बाद और किसी बंधन से बांधने पर ब्रह्मास्त्र बंधन नहीं रहता है। अग्नि जलती देखी तो-

**निबुक चढ़ेउ कपि कनक अटारी, भई सभीत निशाचर नारी।**
**(निबुक- कूद कर)**

सीताजी ने जब हनुमान की पूंछ में आग लगने का समाचार सुना तो प्रार्थना की-

**यद्यस्ति पतिशुश्रूषा यद्यस्ति चरितं तपः।**
**यदि वा त्वेकपत्नीत्वं शीतो भव हनूमतः।।**

अग्निदेव ! यदि मैंने पति की सेवा की है और यदि मुझ में कुछ भी तपस्या तथा पातिव्रत्यका बल है तो तुम हनुमानके लिये शीतल हो जाओ यदि बुद्धिमान् भगवान् श्रीराम के मन में मेरे प्रति किंचिन्मात्र भी दया है अथवा यदि मेरा सौभाग्य शेष है तो तुम हनुमान् के लिये शीतल हो जाओ

**- वा.रा.सु.53.27,28**

**कवित्त -**

**गाजो करि गाज ज्यों विराजी ज्वाला जाल युत, बाजो वीर धीर अकुलाय उठो रावनो।**
**धावो धावो धरो सुनि धाये यातुधान धारि, वारि धारा उलचैं जलद ज्यों नशावनो।।**
**लपट झपट झहराने हहराने बात, भहराने भट पर्यो प्रबल परावनो।**
**ढकनि ढकेलि पेलि सचिव चले ले ठेलि, नाथ ना चलैगो बल अनल भयावनो।।01।।**

**बड़ो विकराल देखि सुनि सिंहनाद उठ्यो, मेघनाद सहित विषाद करै रावनों।**
**बेगि जीतौ मारुत प्रताप मार्तंड कोटि, कालऊ करालता बड़ा ई जीतो बावनो।।**
**तुलसी सयाने यातुधाने पछिताने कहैं, जाको ऐसो दूत सो तो स्वामी आवै का बनो।**
**काहेको कुशल रोष राम वाम देवहूको, विषय बली सों बादि वैर को बढ़ावनो।।02।।**

**हाट बाट कोट और अट्टनि अगार पौरि, खौरि खौरि दौरि दौरि दीन्ही अति आगि है।**
**आरत पुकारत संभारत न कोउ काहू, व्याकुल जहां सो तहां लोग चले भागि है।।**
**बालधी फिरावै बार बार झहरावे झेर, बूंदियांसी लंक पीव लाय पागि पागि है।**
**तुलसी बिलोकि अकुलानी यातुधानी कहै, चित्रहू के कपिसों निशाचर न लागि हैं।।03।।**

**लागि लागि आगि भागि भागि चले जहां तहां,धायको न माय बाप पूत न संभारहीं।**
**छूटे बार बसन उघारे घूम धुंध अंधे, कहैं बारे बूढ़े वारि वारि डारि बारहीं।।**
**हय हिहिनाय भागे जात घहरात गज, भारी भीर ठेलि पेलि रौंदि खौंदि डारहीं।**
**नाम ले चिलात बिललात अकुलात अति, तात तात तोसियत कोसियत झारहीं।।04।।**

**लपट कराल ज्वाल जाल माल दशों दिशि, घूम अकुलाने पहिचाने कौन काहि रे।**
**पानी को ललात बिललात जरे गात जात, परे पाय माल जात आत कू निवाहिरे।।**
**प्रिया तू पराहि नाथ नाथ तू पराहि बाप, बाप तू पराहि पूत पूत तू पराहि रे।**
**तुलसी बिलोकि लोक व्याकुल बिहार कहैं, लेहि दशशीश अब बीस चरण चाहि रे।।05।।**

वीथिका बजार प्रति अटाने अगार प्रति, पंवरि अगार प्रति वानर वि लोकिये।
अध ऊर्ध्व वानर विदिशि दिशि वानर है, मानो रह्यो जंग भरी वानर विलोकिये।।
मूंदि आंखि हिय में उघारे आंख आगे ठाढ़ों, धाय जाय जहां तहां और कोउ को किये।
लेहु अब लेहु तब कोटि न सिखावो मानो, सोई सत राय जाय जाहि जाहि रोकिये।।06।।

पान पकवान विधि नानाके सामानो सिधो, विविध विधान धान बरत बखारहीं।
कनक किरीट कोटि पलंग पिटारे पीठ, काढ़त कहार सब जरे भर भारहीं।।
प्रवल पावक बाढ़े जहां काढ़े तहां ताढ़े, झपटि लपट भरे भवन भंडारहीं।
तुलसी अगार न पगार न बजार बचो, हाथी हथियार जरे घोरे घुरसारहीं।।07।।

कोपि दशकंध तब प्रलय पयोद बोले, रावण रजाय धाय आये यूथ जोरिके।
कोपि दशकंध तब प्रलय पयोद बोले, रावण रजाय धाय आये यूथ जोरिके।
कह्यो लंकपति लंक बरत बुझावो बेगि, वानर भहाय मारो महावीर बोरिके।।
भले नाथ नाय माथ चले पाथप्रदनाथ, वरषे मुसलधार जलवार घोरिके।
जीवनते जागि आगि चपरि चौगुनी लागि, तुलसी भभरि मेघ भागे मुख मोरिके।।08।।

इहां ज्वाल जरे जात वहां ग्लानि गरे जात, सूखे सकुचाने सब कहत पुकार हैं।
युग शट भानु देखे प्रलय कृशानु देखे, शेष मुख अनल विलोके बार बार हैं।।
तुलसी सुना न कान सलिल सर्पी समान, अति अचरज किये केशरीकुमार हैं।
वारिद वचन सुनि धुनै शीश सचिव सो, कहै दशशीश ईश वामता विकार हैं।।09।।

पावक पवन पानी भानु हिमवान यम, काल लोकपाल मेरे डर डावांडोल हैं।
साहिब महेश सदा शंकित रमेश मोहि, महाताप साहस विरंचि लीन्है मोल हैं।।
तुलसी त्रिलोक आज दूजो न विराजे राज, बाज बाजे राजन के बेटा बेटी बोल हैं।
को है ईश नाम को जो बाम होत मोहसे को, मालवान रावरे की बावरी सी बोल हैं।।10।।

भूमि भूमिपाल व्याल पालक पताल नाक, पाल लोकपाल जीते सुभट समाज हैं।
कहै मालवान यातुधानपति रावरेको, मानहु अकाम आनैं ऐसे कौन आज हैं।।
राम कोह पावक समीर सीय स्वास कीश, ईश वामता विलोकि वानर के ब्याज हैं।
जारत विचारि फेरि वारिसों निशंक लंक, जहां बांके वीर तोसे शूर सरताज हैं।।11।।

हाट बाट हाटक पिघलि चलो घीसी घनो, कनककवाही लंक ताल फल जाय सों।
नाना पकवान यातुधान बलवान सब, पागि पागि मेरी कीन्ह भली भांति भायसों।।
पहुने कृशानु पवमान सो परोसो हनुमान सनमानकै जिमाये चित चायसों।
तुलसी निहारि अरिनारि दै दै गारि कहैं, बावरे सुरारि वैर कीन्हों राम राय सौं।।12।।

पिता ने भी सहायता की –

**हनूमज्जनकश्चैव पुच्छानलयुतोऽनिलः ।**
**ववौ स्वास्थ्यकरो देव्याः प्रालेयानिलशीतलः।।**

हनुमान के पिता वायुदेवता भी उनकी पूँछ में लगी हुई आगसे युक्त हो बर्फीली हवाके समान शीतल और देवी सीताके लिये स्वास्थ्यकारी (सुखद) होकर बहने लगे ॥ -

दह्यमाने च लाङ्गूले चिन्तयामास वानरः।

प्रदीप्तोऽग्निरयं कस्मान्न मां दहति सर्वतः।।

उधर पूँछ में आग लगायी जाने पर हनुमानजी सोचने लगे अहो ! यह आग सब ओरसे प्रज्वलित होनेपर भी मुझे जलाती क्यों नहीं है?

**दृश्यते च महाज्वालः करोति च न मे रुजम् ।**
**शिशिरस्येव सम्पातो लाङ्गूलाग्रे प्रतिष्ठितः।।**

'इसमें इतनी ऊँची ज्वाला उठती दिखायी देती है, तथापि यह आग मुझे पीड़ा नहीं दे रही है। मालूम होता है मेरी पूँछके अग्रभाग में बर्फ का ढेर-सा रख दिया गया है॥

**- वा.रा.सु.53.32,33,34-**

**हरिप्रेरित तेहि अवसर, चले मरूत उनचास।**
**अट्टहास करि गर्जेउ, कपि बढ़ि लागि अकास।।**

*इंद्र द्वारा सोते समय दिति के गर्भ के सात टुकड़े किए गए। दिति के आग्रह पर इंद्र ने इन्हें ही सात वातस्कंध (सात मरुत) बनाया। उनके नाम आवह, प्रवह, संवह, उद्वह, विवह, परिवह ओर परावह हैं। इनके एक एक के सात विभाग किए थे। कुल उनचास मरूत हुए। प्रथम ब्रह्मलोक, दूसरा इंद्रलोक, तीसरा दिव्य वायु और शेष चार इंद्र आज्ञा से चारों दिशाओं में संचार करते हैं।

**-वा.रा.बा.47**

* स्कंद पुराण और वेदों में वायु की 7 शाखाओं के बारे में विस्तार से वर्णन मिलता है।

दरअसल, जल के भीतर जो वायु है उसका वेद-पुराणों में अलग नाम दिया गया है और आकाश में स्थित जो वायु है उसका नाम अलग है। अंतरिक्ष में जो वायु है उसका नाम अलग और पाताल में स्थित वायु का नाम अलग है। नाम अलग होने का मतलब यह कि उसका गुण और व्यवहार भी अलग ही होता है। इस तरह वेदों में 7 प्रकार की वायु का वर्णन मिलता है। ये 7 प्रकार हैं- 1.प्रवह, 2.आवह, 3.उद्वह, 4.संवह, 5.विवह, 6.परिवह और 7.परावह।

**प्रवह परावह आवह, संवह विवह प्रमान।**
**उद्वह परिवह कमलजी, सप्त वायु श्रीमान।।**

- 'कमल'

**01- प्रवह :**
पृथ्वी को लांघकर मेघमंडलपर्यंत जो वायु स्थित है,उसका नाम प्रवह है। इस प्रवह के भी प्रकार हैं। यह वायु अत्यंत शक्तिमान है और यही बादलों को इधर-उधर उड़ाकर ले जाती है। धूप तथा गर्मी से उत्पन्न होने वाले मेघों को यह प्रवह

वायु ही समुद्र जल से परिपूर्ण करती है जिससे ये मेघ काली घटा के रूप में परिणत हो जाते हैं और अतिशय वर्षा करने वाले होते हैं।

**02- आवह :**
आवह सूर्यमंडल में बंधी हुई है। उसी के द्वारा ध्रुव से आबद्ध होकर सूर्यमंडल घुमाया जाता है।

**03- उद्वह :**
वायु की तीसरी शाखा का नाम उद्वह है जो चन्द्रलोक में प्रतिष्ठित है। इसी के द्वारा ध्रुव से संबद्ध होकर यह चन्द्र मंडल घुमाया जाता है।

**04- संवह :**
वायु की चौथी शाखा का नाम संवह है जो नक्षत्र मण्डल में स्थित है। उसी से ध्रुव से आबद्ध होकर सम्पूर्ण नक्षत्र मण्डल घूमता रहता है।

**5. विवह :**
पांचवीं शाखा का नाम विवह है और यह ग्रह मण्डल में स्थित है। उसके ही द्वारा यह ग्रह चक्र ध्रुव से संबद्ध होकर घूमता रहता है।

**6. परिवह :**
वायु की छठी शाखा का नाम परिवह है जो सप्तर्षिमण्डल में स्थित है। इसी के द्वारा ध्रुव से संबद्ध हो सप्तर्षि आकाश में भ्रमण करते हैं।

**7. परावह :**
वायु के सातवें स्कन्ध का नाम परावह है जो ध्रुव में आबद्ध है। इसी के द्वारा ध्रुव चक्र तथा अन्यान्य मण्डल एक स्थान पर स्थापित रहते हैं।

इन सातो वायु के सात सात गण हैं जो निम्न जगह में विचरण करते हैं–ब्रह्मलोक, इंद्रलोक, अंतरिक्ष, भूलोक की पूर्व दिशा, भूलोक की पश्चिम दिशा, भूलोक की उत्तर दिशा और भूलोक कि दक्षिण दिशा। इस तरह 7 x 7 = 49। कुल 49 मरुत हो जाते हैं जो देव रूप में विचरण करते रहते हैं।–

**घी तेल काम आया इतना, बाकी न बचा छोंकन तक को।**
**वस्त्रों का हुआ अकाल वहां, नहिं बचा जरा कफन तक को।।**
**- राधेश्याम रामायण**

महावीरजी मकानों को जलाने लगे। कोई पशु कोई अपनो को बचाने दौड़ा। चीख पुकार मची। कई माल छोड़ अपनो को लेकर भागे। मंदोदरी चीखी। अकम्पन, अतिकाय भागो। अपनो को लोक लाज तज बचाओ। उस दाड़ीजार, वंश के कुठार को बहुत समझाया था। अब सब भसम।जहां देखो वानर ही वानर। जल में भी, थल में भी। कुंभकर्ण की पत्नी ने कहा मेरा पति सो रहा है। तुम्है रघुनाथ की सौगंध है जो मेरा घर जलाया। विशाल अग्निज्वाल देख रावण ने मेघों को आदेश दिया। मेघ बरसे। किंतु एसा लगा कि पानी नहीं तेल बरसा। ज्वालाएं और भड़की।

माल्यवान बोला यह अग्नि नहीं, ईश्वर का कोप है। जानकी की आह है। निःश्वास है।

कुछ बोले हमने तो पहले ही कहा था यह कोई सामान्य वानर नही है। वानर के रूप में कोई देवता है। यह ज्ञान वे दे रहे हैं जो पहले लात मारकर हनुमानजी की हंसी कर रहे थे। अब जले तो ज्ञान जागृत हुआ।

रावण ने काल से कहा, वानर को मारकर ला। दंड धर। जल्दी कर। काल गया तो पर महावीर जी के गाल में।–

**ततस्तु तं वानरवीरमुख्यं महाबलं मारुततुल्यवेगम् ।**
**महामतिं वायुसुतं वरिष्ठं प्रतुष्टुवुर्देवगणाश्च सर्वे।।**

तदनन्तर सम्पूर्ण देवताओं ने वानरवीरों में प्रधान, महाबलवान्, वायुके समान वेगवान्, परम बुद्धिमान् और वायुदेवता के श्रेष्ठ पुत्र हनुमानजी का स्तवन किया ॥

**- वा.रा.सु.54.45**

शंकर और इंद्र के आग्रह पर काल को महाकाल ने मुक्त किया। लोग तात, मात पुकारने लगे। बोले यह बानर नहीं कोई अवतारी देव है। जानकीजी की प्रार्थना पर अग्नि ने हनुमानजी को पीड़ित नहीं किया। उन्हें तो जाड़ा लगता था। बाबा कहते हैं -

**साधु अवज्ञा कर फल ऐसा, जरै नगर अनाथ कर जैसा।**

(साधु- साधु संत, ऋषि मुनी, रामजी, जानकीजी, हनुमानजी, विभीषण आदि)

पल में सारा नगर स्वाह। बस विभीषण भक्त और कुंभकर्ण के घर को छोड़ कर। उलट पलटकर सब जला दिया।

(लंका की गलियों में स्वर्ण बहने लगा।

एक बार शनैश्चर की दृष्टि से लंका की दीवार काली पड़ गई थी। रावण ने उन्हें लंका की दीवार के नीचे दबा दिया। इस आग से सोना और दमका। महावीरजी से देवताओं ने कहा शनिश्चर को दीवार के नीचे से निकालो। उनकी दृष्टि पड़ने से दिवाल काली होकर जलेगी। दिवाल उलट, शनिश्चर को निकाला। दीवाल और लंका काली करवाई और फिर दीवार पलट दी। उन्हें दबा दिया। कहा, रामजी कल्याण करेंगे।)

फिर सागर में कूद गए।

* हनुमानजी द्वारा कंठ का धुएं से उत्पन्न कफ समुद्र में थूक दिया था। उसे एक मकरी ने निगल लिया उससे मकरध्वज का जन्म हुआ।

- आनन्द रामायण

पूंछ बुझाई। विश्राम किया। फिर सोचा-

धन्याः खलु महात्मानो ये बुद्ध्या कोपमुत्थितम् । निरुन्धन्ति महात्मानो दीप्तमग्निमिवाम्भसा।। लंका जलाने में सीता जी के जल जाने की आशंका से हनुमान चिंतित हुए सोचा जो महामनस्वी महात्मा पुरुष उठे हुए कोप को अपनी बुद्धि के द्वारा उसी प्रकार रोक देते हैं, जैसे साधारण लोग जल से प्रज्वलित अग्नि को शान्त कर देते हैं वे ही इस संसारमें धन्य हैं।

- किमग्नौ निपताम्यद्य आहोस्विद् वडवामुखे । शरीरमिह सत्त्वानां दद्मि सागरवासिनाम्॥

'क्या मैं अब जलती आग में कूद पड़ूं या वडवानल के मुख में ? अथवा समुद्र में निवास करनेवाले जल जन्तुओं को ही यहाँ अपना शरीर समर्पित कर दूँ।

**- वा.रा.सु.55.03,13**

*हनुमानजी ने महात्मा चारणों के मुंह से सुना कि पर्वत की कन्दराओं, अटारियों, परकोटों और नगर के फाटकों सहित यह सारी लंका नगरी दग्ध हो गयी परंतु सीता पर आँच नहीं आयी। यह हमारे लिये बड़ी अद्भुत और आश्चर्य की बात है' ॥

**- वा.रा.सु.55.32**

प्रसन्न होकर जानकीजी के आगे जाकर खड़े हो गए। मां ने चूड़ामणि दी। बोली, मेरा प्रणाम कहना। आप तो -

**दीन दयाल विरद सम्भारी, हरहु नाथ मम संकट भारी।**

(विरद- प्रतिष्ठा, आदत, टेव, प्रण, कृपा, उपकार, सम्भारी- संभाल कर)

जयंत की कथा कहना। एक माह में नहीं आए तो मुझे जीती नहीं पाएंगे। जैसे मणि बिना सर्प, जल बिना मछली वैसे ही मैं व्याकुल हूं। विधाता जाने कब अयोध्या पहुंचाएगा। कब मंगल होगा। कब प्रभु के श्रृंगारित सुंदर, सुकोमल बदन के दर्शन पाऊंगी –

**अरुण अधर दाड़िम दहन, रसन चारु मृदुहास।**<br>**हे हरि कब अवलोकिहौं, शशिकर सरिस प्रकास।।**<br>**(दहन- दांत)**

मूल रामायण 29-

**आए कपि सब जहं रघुराई, वैदेही को कुशल सुनाई।**<br>**जानकीजी को समझाकर, प्रणाम कर रघुनाथजी के निकट चले।**

*जिसपर चढ़कर हनुमानजी कूदे वह अरिष्ट पर्वत तीस योजन ऊँचा और दस योजन चौड़ा था। फिर भी उनके पैरों से दबकर भूमिके बराबर हो गया ॥

**- वा.रा.सु.56.50**

उनकी चलते समय की गर्जना से राक्षसियों के गर्भ गिर गए। लंका में अब कोई निशाचर पैदा नहीं होगा। जब रामजी की कृपा होगी तो भक्त ही पैदा होंगे।

कार्तिक पूर्णिमा को इस पार आए।

*इस पार एक मुनि के आश्रम गए। पानी मांगा। चूड़ामणि और मुद्रिका रख सरोवर पर जल पीने गए। मुनि ने दोनो (चूड़ा मणि और मुद्रिका) को एक कमंडल में डाल दिया। लोटकर मांगने पर मुनि ने कमण्डल दिखाया। उसमें सहस्त्रों मुद्रिका और चूड़ामणि देखी। हनुमानजी गिन भी नहीं पाए। गर्व जाता रहा। अचरज हुआ। यह क्या। मुनि बोले, जब भी रामजी का

अवतार होता है, हनुमानजी सीताजी की सुधि लेने जाते हैं। वो चूड़ामणि और अंगूठी है। रामजी के पास गए तो उन्होंने स्वयं मुनि बनने और परीक्षा लेने को कहा। उनके हाथ में वही अंगूठी देख हनुमानजी ने विष्णुजी मानकर प्रणाम किया।

- आध्यात्म और आनन्द रामायण

हनुमानजी को देखकर सब प्रसन्न हुए।-

**ते नगाग्रान्नगाग्राणि शिखराच्छिखराणि च।**
**प्रहृष्टाः समपद्यन्त हनूमन्तं दिदृक्षवः ॥**

हनुमानजी को देखने की इच्छा से वे वानर और भालू प्रसन्नतापूर्वक एक वृक्ष से दूसरे वृक्षोंपर तथा एक शिखर से दूसरे शिखरों पर चढ़ने लगे।–

**केचिदुच्छ्रितलांगूलाः प्रहृष्टाः कपिकुञ्जराः ॥**
**आयताञ्चितदीर्घाणि लांगूलानि प्रविव्यधुः।**

बहुत-से कपिकुञ्जर हर्ष से उल्लसित हो अपनी पूँछ ऊपर उठाकर नाचने लगे। कितने ही अपनी लम्बी और मोटी पूँछें घुमाने या हिलाने लगे ॥

**- वा.रा.सु.57.25,42,43**

नया जन्म माना। मुख का तेज देख जान लिया कि काम हो गया है। अगहन कृष्ण पंचमी शुक्रवार को मधुवन के फल खाए।

*मधुवन सुग्रीव का सर्वथा सुरक्षित बगीचा था। सुग्रीव के मामा महावीर दधिमुख नामक वानर

सदा उस वन की रक्षा करते थे।

**- वा.रा.सु.61.07,08**

अब तो-

**गायन्ति केचित् प्रहसन्ति केचि-नृत्यन्ति केचित् प्रणमन्ति केचित्।**
**पतन्ति केचित् प्रचरन्ति केचित् प्लवन्ति केचित् प्रलपन्ति केचित्।।**

मधुवन का मधु पीकर और फल खाकर कोई गाते, कोई हँसते, कोई नाचते, कोई नमस्कार करते, कोई गिरते- पड़ते, कोई जोर- जोरसे चलते, कोई उछलते- कूदते और कोई प्रलाप करते थे।

**- वा.रा.सु.61.16**

सुग्रीव को प्रणाम किया। प्रसन्न होकर रामजी के पास चले। सब ने प्रणाम किया। प्रभु ने कुशल पूछी। जामवंतजी बोले -

**जामवंत कह सुनु रघुराया, जापर नाथ करहुं तुम दाया।**
**ताहि सदा शुभ कुशल निरंतर, सुर नर मुनि प्रसन्न तेहि ऊपर।।**

नाथ, सब काम होगया है। पवनपुत्र की करनी हजार मुख से भी वर्णन नहीं की जा सकती है। सब विस्तार से सुनाया। प्रभु ने प्रसन्न होकर हनुमानजी को पुनः हृदय से लगाया। प्रभु ने पूछा जानकी कैसी है?

हनुमानजी ने कहा जानकीजी आपके विरह में बहुत दुखी है।

प्रभु ने पूछा जीवित कैसे है ?

हनुमानजी बोले जिंदा कैसे हैं तो सुनो –

**नाम पाहरू दिवस निशि, ध्यान तुम्हार कपाट।**
**लोचन निजपद यंत्रित, जाहिं प्राण केहि बाट।।**

(पाहरू- प्रहरी, कपाट- दरवाजा, निजपद- अपने पैरों में, यंत्रित- ताला)

यह चूड़ामणि दी है।

चूड़ामणि लेकर रामजी ने कहा मेरे श्वशुर राजा जनकने विवाह के समय वैदेही को यह मणिरत्न दिया था जो उसके मस्तक पर आबद्ध होकर बड़ी शोभा पाता था। जल से प्रकट हुई यह मणि श्रेष्ठ देवताओं द्वारा पूजित है। किसी यज्ञमें बहुत संतुष्ट हुए बुद्धिमान् इन्द्र ने राजा जनक को यह मणि दी थी।

**- वा.रा.सु.66.04,05**

प्रभु ने हृदय से लगाई। हनुमानजी बोले उन्होंने कुछ कहा है -

**अनुज समेत गहेउ प्रभु चरणा, दीनबंधु प्रणतारति हरणा।**

लक्ष्मण और मेरी दोनो की सेवा के चरण पकड़ना। अथवा लक्ष्मण के भी चरण पकड़ना।मैने भूल वश उन्हें भला बुरा कहा था। किस अपराध से मेरा त्याग किया है। हां -

**अवगुण एक मोर मैं माना, बिछुरत प्राण न कीन्ह पायना।**

जैसा श्वसुरजी ने किया था। नेत्रों के बहते जल के कारण विरहाग्नि शांत हो जाती है। मर भी नहीं सकती। हे नाथ, जल्दी चलो। उनका दुख देखा नहीं जाता।

प्रभु के नेत्र बरसने लगे। सीता पर विपत्ति।

**हनुमान बोले -**

**कह हनुमंत विपति प्रभु सोई, जब तव सुमिरण भजन न होई।**

**रघुनाथ जी कहते हैं -**

**सुनु कपि तोहि समान उपकारी, नहिं कोउ सुर नर मुनि तनु धारी।**

क्या प्रति उपकार करूं। सामना भी नहीं कर सकता।-

**इदं तु मम दीनस्य मनो भूयः प्रकर्षति ।**
**यदिहास्य प्रियाख्यातुर्न कुर्मि सदृशं प्रियम्।।**

रामजी बोले आज मेरे पास पुरस्कार देने योग्य वस्तुका अभाव है, यह बात मेरे मन में बड़ी कसक पैदा कर रही है कि यहाँ जिसने मुझे ऐसा प्रिय संवाद सुनाया, उसका मैं कोई वैसा ही प्रिय कार्य नहीं कर पा रहा हूँ ॥-

**एष सर्वस्वभूतस्तु परिष्वङ्गो हनूमतः।**
**मया कालमिमं प्राप्य दत्तस्तस्य महात्मनः।।**

इस समय इन महात्मा हनुमान् को मैं केवल अपना प्रगाढ़ आलिङ्गन प्रदान करता हूँ, क्योंकि यही मेरा सर्वस्व है।

**- वा.रा.युद्ध कांड.01.12,13**

बोले मैं तुम्हारा ऋणी हूं। नेत्रों में जल भर आया। अपलक निहारते रहे। हनुमानजी चरणों में गिरे। बोले नाथ, रक्षा करो, रक्षा करो। प्रभु उठाते हैं। हनुमान चरण छोड़ना नहीं चाहते। प्रभु के चरणों में हनुमान का सिर। सिरपर प्रभु का हाथ। वाह -

**प्रभु करपंकज कपिकर शीशा, सुमिरि सो दसा मगन गौरीशा।**

शंकरजी ही हनुमान हुए थे -

**प्रभु सेवा की चाह में, धारा सेवक वेश।**
**जय हनुमत जय वीरवर,जयजय जयति महेश।।**
**- 'कमल' (मंगलाचरण, जय श्री कृष्ण)**

अब जैसे अपने ही सरपर प्रभु का हाथ है यह जानकर शिवजी मगन हो गए।

प्रभु ने हनुमानजी को उठाया। निकट बैठाया। पूछा लंका कैसी है ?

हनुमानजी बोले त्रिकूट पर्वत पर सुदृढ़ लंका है।

*हनुमानजी ने रामजी को लंका की सुरक्षा के बारे में बताते हुए कहा कि उक्त चारों दरवाजों के सामने उन खाइयों पर मचानों के रूपमें चार संक्रम (लकड़ी के पुल) हैं, जो बहुत ही विस्तृत हैं। उनमें बहुत-से बड़े-बड़े यन्त्र लगे हुए हैं और उनके आस-पास परकोटे पर बने हुए मकानों की पंक्तियाँ है। उन्हें यंत्र से आवश्यकता अनुसार उठाया, गिराया जा सकता है।

**- वा.रा.युद्ध कांड.03.16**

उसमे पांच लाख पत्थर के, नो लाख काठ, सात करोड़ तांबे, चार करोड़ चांदी, चार करोड़ सोने और एक करोड़ मणि, छह करोड़ घांस फूस, सो करोड़ बांस और छाल के, नो करोड़ स्फटिक, हजार करोड़ नीलमणि के घर हैं। सो योजनकी सघन बस्ती है। अब शीघ्र चलिए।

रामजी ने पूछा लंका कैसे जलाई। बताओ कपिराई। बजरंगी बोले नाथ, वानरों की प्रभुता डालियों पर कूदने, लटकने में ही है। मेरा कुछ पराक्रम नहीं। जो किया -

**सो सब तव प्रताप रघुराइ, नाथ न कछु मोरी प्रभुताइ।**

आपकी कृपा हो तो कुछ अगम नहीं। नाथ आपकी भक्ति प्रदान करो। प्रभु ने तथास्तु कहा। शिवजी कहते हैं उमा, रामजी का स्वभाव जानने वाला भजन तज ही नहीं सकता। सारे वानर जय जयकार करने लगे।

मूल रामायण 30-

**सेन समेत यथा रघुवीरा, उतरे जाय वारिनिधि तीरा।**

रघुनाथजी ने सुग्रीव से कहा -

अब विलम्ब केहि कारण कीजै, तुरत कपिन कहु आयसु दीजै।

*अश्विन शुक्ल दशमी को श्रवण नक्षत्र में रामजी ने सागर की ओर प्रस्थान किया।

- आनन्द रामायण

देवताओं के मन की होगई। पुष्प बरसाए। सुग्रीव के बुलाने पर यूथ के यूथ आए। प्रभु को प्रणाम किया। प्रसन्न मन चले। शुभ शकुन हुए। बाबा कहते हैं -

**जासु सकल मंगलमय कीर्ती, तासु पयान शकुन यह नीती।**

जानकीजी का वाम अंग फड़का। जानकीजी को शकुन रावण को अपशकुन हुए। कटक का वर्णन कौन करे। नख ही आयुध। पृथ्वी, आकाश मार्ग से चले। समुद्र उछला। पृथ्वी हिली। दिग्गज डोले। देवता मगन हो गए। रघुनाथजी की जय के ही घोष हैं। शेषजी जैसे भार ही न सम्भार सके। कश्यपजी की पीठ पर दांत से पकड़ते हैं, मानो प्रभु के पयान को अंकित कर रहे हों।

इधर ये सागर के तटपर जाकर ठहरे। उधर लंका में सब डरे हैं। अब मरे। जिसका दूत ऐसा तो वो कैसा होगा। बात मंदोदरी तक पहुंची। रावण के चरण पकड़कर बोली नाथ -

कंत कर्ष हरिसन परिहरहू।मोर कहा अति हित हिय धरहू।

(कर्ष- लड़ाई, रार, कटुता, वैमनस्य)

उनकी स्त्री उनके पास भिजवादो। यह वही है।

(राजा पद्माक्ष ने लक्ष्मी को पुत्री रूप में पाने के लिए तप किया। लक्ष्मी के कहने पर विष्णु का तप किया। प्रसन्न होकर मातुलिंग का फल दिया।उसमे से कन्या प्रकटी। पद्मा नाम रखा। बड़ी हुई। स्वयंवर किया। शर्त थी जो नील वर्ण अकाश को अपनी देह में लपेट लेगा उसी से ब्याह होगा। यह असंभव बात सुन कन्या हरण के लिए दैत्यों ने राजा को मार दिया। कन्या अग्नि में समा गई। नगर नष्ट होगया। एक समय पद्मा कुंड से निकल विचरण कर रही थी। रावण ने देखकर हाथ बढ़ाया। वह फिर अग्नि में समा गई। रावण ने कुंड में तलाशा तो पांच रत्न मिले। पिटारी में रख लंका लाया। मंदोदरी से एकांत में बोला तुम्हारे लिए भेंट लाया हूं। पिटारी लाओ।मंदोदरी उठा न पाई। रावण गया। उससे भी नहीं उठी। वहीं खोलने पर तेजवान कन्या देखी। आंखे चौंधिया गई। मंदोदरी को उसकी कथा सुनाई। वह बोली इसे यहां क्यों लाए। यह तुम्हारी मृत्यु का कारण बनेगी। इसे ऐसी जगह गाड़ दो जहां का गृहस्थी, चराचर में ईश्वर को देखता हो। चलते समय कन्या बोली, मैं रावण को सवंश नष्ट करने फिर आऊंगी। फिर शतशिर रावण को मारूंगी। रावण खड़ा होकर मारने चला। मंदोदरी ने रोका ।दूतों ने जनकपुर में गाड़ी।)

इसे लोटा दो नहीं तो अमर करने वाले भी साथ नहीं देंगे। क्योंकि -

**राम बाण अहिगण सरिस, निकर निशाचर भेक।**
**जबलगि ग्रसत न तबहि लग, यतन करहु तजि टेक।।**
**(भेक- मेडक)।**

अभिमानी ने हंसकर नारी को डरपोक कहा।वानरों को आने दो। निशाचरों का पेट भरेगा। डरो मत। इतना कहकर दरबार में गया। मंदोदरी ने सोचा कि दीपक बुझने की सुगंध, सुहृदजनों के वाक्य और अरुंधति तारा ये गतायुष मनुष्य सूंघते, सुनते और देखते नहीं।-

**दीपनिर्वाणगंधं च सुहृदवाक्यमरूंधतीम।**
**न जिघ्रन्ती न श्रणवंति न पश्यन्ति गतायुष।।**
**बुझे दीप की गंध और, सुहद जनो के बोल।**
**अरुंधती के दरस ये, गत आयुष्य अमोल।।**
**- 'कमल'**

रावण बोला एक बार मैंने बलपूर्वक अप्सरा पुंजिकस्थला के वस्त्र उतार दिये और हठात् उसका उपभोग किया। इसके बाद वह ब्रह्माजी के भवन में गयी। इससे वे अत्यन्त कुपित हो उठे और मुझसे इस प्रकार बोले –

**अद्यप्रभृति यामन्यां बलान्नारीं गमिष्यसि ।**
**तदा ते शतधा मूर्धा फलिष्यति न संशयः ॥**

आजसे यदि तू किसी दूसरी नारी के साथ बलपूर्वक समागम करेगा तो तेरे मस्तक के सौ टुकड़े हो जायँगे, इसमें संशय नहीं है।

- वा.रा.युद्ध कांड.13.12 से14

रावण की सभा में राक्षसों द्वारा नाना प्रकार के मिथ्या बल का बखान किया गया। कुंभकर्ण बोला त्रिलोकी में कौन है जो हमारा सामना करे। इतना कहा और औंघाई आई, सोने चला गया। अतिकाय बोला आज्ञा दो। अभी पृथ्वी वानर और मनुष्य से हीन कर दूं। कुंभकर्ण के बेटे कुंभ, निकुंभ, मेघनाद, अकम्पन, दुर्मुख, मकराक्ष ने भी अपना अपना बल बखान किया।

बाबा कहते हैं –

**सचिव वैद्य गुरु तिनि जो, प्रिय बोलहिं भय आश।**
**राज धर्म तनु तीनि कर, होय बेगि ही नाश।।**

ये तीनो रावण के सहायक हुए। विभीषण सभा में आया और रावण के पूछने पर बोला नाथ, कल्याण चाहने वाले, पराई स्त्री का मुख, भादौ की चौथ के चंद्रमा की तरह नहीं देखते। कलंक लगता है। भले चौदह भुवन का स्वामी हो किंतु पराया द्रोह करने से, जीवित नहीं रहता काम, क्रोध, मद, लोभ सब नर्क के मार्ग हैं।

*राजाओंमें सात व्यसन माने गये हैं-

**वाग्दण्डयोस्तु पारुष्यमर्थदूषणमेव च ।**
**पानं स्त्री मृगया द्यूतं व्यसनं सप्तधा प्रभो ॥**
**- वा.रा.युद्ध कांड.14**

विभीषण ने सभा में कहा कि (कामन्दक नीतिका वचन गोविन्दराज की टीका रामायण-भूषण से) वाणी और दण्डकी कठोरता, धनका अपव्यय, मद्यपान, स्त्री, मृगया और द्यूत-ये राजाके सात प्रकारके व्यसन हैं।

उसे भजो जिसे संत भजते हैं। भैया -

**तात राम नहिं नर भूपाला, भुवनेश्वर कालहु कर काला।**
**ब्रह्म अनामय अज भगवन्ता, व्यापक अजित अनादि अनंता।**

(अनामय- रोग रहित, अज- जन्म रहित, भगवन्ता- ऐश्वर्यवान, अनंता- अंत रहित)

गो द्विज धेनु देव हित कारी,कृपासिंधु मानुष तनु धारी।

उन वेद रक्षक से वैर त्यागो। वैदेही लौटा दो।पुलस्त्यजी का संदेश है भजन करो।

वृद्ध सचिव माल्यवन बोला तात, तुम्हारा भाई नीति का गहना है। उसकी बात मानो। रावण क्रोधकर बोला इन रिपु के प्रशंसकों को बाहर निकाल दो। माल्यवान तो चला गया। विभीषण फिर बोला। वाह, क्या बोला है -

**सुमति कुमति सबके उर रहहीं, नाथ पुराण निगम अस कहहीं।**
**जहां सुमति तहं संपति नाना, जहां कुमति तहं विपति निदाना।**

तुम हित को अहित मान रहे हो। यह कुमति है। सीता कालरात्रि है।-

**तात चरण गहि मांगहूं, राखहुं मोर दुलार।**
**सीता देहू राम कहं, अति हित होय तुम्हार।।**

पांडित्य, पुराणोक्त, वेदोक्त, नीतिज्ञ वचन सुनकर रावण उठा।-

**विद्यते गोषु सम्पन्नं विद्यते ज्ञातितो भयम्।**
**विद्यते स्त्रीषु चापल्यं विद्यते ब्राह्मणे तपः।।**

रावण ने विभीषण को फटकारते हुए कहा जैसे गौओं में हव्य-कव्य की सम्पत्ति दूध होता है, स्त्रियों में चपलता होती है और ब्राह्मण में तपस्या रहा करती है, उसी प्रकार जाति भाइयों से भय अवश्य प्राप्त होता है।

- वा.रा.युद्ध कांड.16.09

मूल रामायण 31-

**मिला विभीषण जेहि विधि आई, सागर निग्रह कथा सुनाई।**

बोला तेरी मौत आई है। मेरे जिलाये जीने वाले। शत्रु का पक्ष लेता है -

**मम पुर बसि तपसिन पर प्रीती, शठ मिलु जाय तिन्हहिं कहु नीती।**

ऐसा कहकर चरण प्रहार किया। विभीषण ने चरण पकड़े। मंद करने वाले का भी संत भला करते हैं। तुम पिता समान हो। कोई बात नहीं जो मुझे मारा। पर तुम्हारा हित तो राम भजन में ही है। अपने सचिवों को लेकर आकाश में गया बोला –

**राम सत्य संकल्प प्रभु, सभा काल वश तोरि।**
**मैं रघुवीर शरण अब, जाऊं देउ जनि खोरि।।**

(सत्य संकल्प- निशिचर हीन करहु महि, खोरि- दोष)

सब आयुहीन हुए। शिवजी कहते हैं -

**साधु अवज्ञा तुरत भवानी, कर कल्याण अखिल की हानी।**
**(अखिल- संपूर्ण कल्याण)**

विभीषण के बिना रावण वैभवहीन और अभागा हुआ। विभीषण मनोरथ करता रघुनाथजी के पास चला। दंडकवन पावनकर्ता पद कमल का अवलोकन करूंगा। जानकीजी, भरतजी,शंकरजी के आराध्य का दर्शन करूंगा। शीघ्र सिंधु पार आया।

कपियों ने रावण का दूत समझ सुग्रीव से कहा। सुग्रीव से रामजी ने मत लिया। सुग्रीव बोले, हो सकता है भेद लेने आया हो। इसे बांध देना उचित है। रामजी बोले मित्र। मैं शरणागत को नहीं तजता। हनुमानजी को आनंद आगया-

**शरणागत कहं जे तजहिं, निज अनहित अनुमानि।**
**ते नर पामर पाप मय, तिनहिं विलोकत हानि।।**

**ब्राह्मण वध कर्ता भी -**

**सनमुख होय जीव मोहिं जबहीं, जन्मकोटि अघ नाशौं तबहीं।।**

पापी तो मेरे निकट भी नहीं आता है। आज रघुनाथजी ने उन्हें पाने का सूत्र दे दिया। बोले -

**निर्मल मन जन सो मोहिं पावा, मोहिं कपट छल छिद्र न भावा।**

**सवैया -**

**एकहि बेर कहौ सुकहौ, कहिकै पुनि और को और न भाखौं।**
**कीन्ही कृपा जेहिपै तिहिपै, अपराध निहारि न रंचहु भाखौं।।**

**जाहि लियो गहिकै अपनाय, तिन्हैं रसिकेश न भूलिहु नाखौं।**
**लावो कपीश विभीषण को, करि देऊं अभै शरणागत राखौं।।**

**- रामरसायने-**

**सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते ।**
**अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद् व्रतं मम।।**

राम जी बोले जो एक बार भी शरण में आकर 'मैं तुम्हारा हूँ' ऐसा कहकर मुझसे रक्षा की प्रार्थना करता है, उसे मैं समस्त प्राणियों से अभय कर देता हूँ। यह मेरा सदाके लिये व्रत है।-

**आनयैनं हरिश्रेष्ठ दत्तमस्याभयं मया।**
**विभीषणो वा सुग्रीव यदि वा रावणः स्वयम् ॥**

अतः कपिश्रेष्ठ सुग्रीव! वह विभीषण हो या स्वयं रावण आ गया हो। तुम उसे ले आओ। मैंने उसे अभयदान दे दिया ॥

**- वा.रा.युद्ध कांड 18.33,34**

अगर भेद लेने आया होगा तो भी हानि नहीं।लक्ष्मण है ना। वे विभीषण क्या जगत के सभी निशाचरों को निमिष में समाप्त कर सकते हैं।सही है। थोड़ा पहलू बदला की स्वाहा। भय वश शरणागत आया है तो भी प्राण समान रखूंगा। जैसे भी आया है ले आओ। वाह। अंगद, हनुमान तो उछल पड़े। जय जयकार किया।

लेकर, आगे करके लाए। दोनो भाइयों की अनुपम छवि देख अपलक निहारता रहा। पैर ठिठक गए। नेत्र बरसने लगे। बोला-

**नाथ दशानन कर मैं भ्राता, निशिचर वंश जन्म सुरत्राता।**

आपने प्रण लिया है निषिचरहीन महि करने का। मैं शरण में आया हूं। हमें स्वभाव से ही पाप प्रिय है। जैसे उल्लू को अंधकार। मैं तो -

**श्रवण सुयश सुनि आयऊं, प्रभु भंजन भवभीर।**
**त्राहि त्राहि आरतिहरण, शरण सुखद रघुवीर।।**

**(त्राहि- रक्षा करो)**

त्यक्त्वा दारांश्च पुत्रांश्च त्वामहं शरणम गतः

- वाल्मीकि रामायण

दीन वचन सुन रामजी उठे। हृदय से लगाया। लक्ष्मण के साथ निकट बैठाया। राज्याभिलाषी था। इसीलिए पहले चरण नहीं बलिष्ठ भुजाओं, रक्ताभ नेत्रों को देखा था। प्रभु तो प्रभु ही हैं।समझ गए। पूछा -

**कहु लंकेश सहित परिवारा, कुशल कुठाहर वास तुम्हारा।**
**(कुठाहर- गलत जगह)**

दुष्टों के बीच रहकर अपना धर्म कैसे निभाते हो-

**बरु भल बास नरक कर ताता, दुष्ट संग जनि देइ विधाता।**

*विभीषण ने बताया कि लंका में एक खरब राक्षस निवास करते हैं।

**- वा.रा.युद्ध कांड 19.15**

बोला, नाथ, जब तक आपका भजन न करे, सपने में भी जीव को विश्राम नहीं। आपकी छवि न बसे तब तक लोभ, मोह, कामादि ही रहते हैं। आपके चरण देखकर अब मैं अभय हूं। क्योंकि -

**तुम कृपालु जापर अनुकूला, ताहिन व्याप त्रिविध भव शूला।**
(त्रिविध- दैहिक, दैविक, भौतिक)

मुझ निशाचर, अधम, अज्ञानी को आपने अपनाकर, उद्धार करदिया। मेरा सौभाग्य जो दर्शन पाए।

प्रभु बोले, मित्र, चराचर द्रोही भी मद, छल, कपट, मोह (अज्ञान) तजकर शरण में आएगा तो उसे मैं साधु समान अपना लेता हूं। स्वजन, मित्र, परिजन, तन इन सब के प्रीति के धागे को मेरे चरणों में बांधे। इच्छा रहित, अशोक रहे वो -

**अस सज्जन मम उर बस कैसे, लोभी हृदय बसत धनु जैसे।**

तुम जैसे महात्माओं के लिए ही मैं देह धरता हूं।वानर जय जयकार करने लगे। विभीषण चरणों से लिपट गया। बोला अब मैं वासना हीन हूं। अपनी शिव मनभाई भक्ति प्रदान करें। रामजी ने यही होगा कह, सागर का जल बुलवाया और बोले, मेरा दर्शन अमोघ है। यह कह लंका के राज्य का तिलक कर दिया।

*रामजी ने रेत की लंका बनवाकर विभीषण का राज तिलक किया था। आज भी वह हनुमान लंका के नाम से प्रसिद्ध है।

-आनन्द रामायण

अकाश से देवों ने पुष्पों की झड़ी लगा दी।

बाबा कहते हैं -

जो संपति शिव रावनहिं,दीन्हि दिये दश माथ।सोइ संपदा विभीषणहिं,सकुचि दीन्हि रघुनाथ।। ऐसे कृपालु रघुनाथजी का ही भजन श्रेष्ठ है।वानरों को आनंद आगया।

मूल रामायण 32/01-

**सेतु बांधि कपि सेन जिमि, उतरी सागर पार।**
**गयो बसीठी वीरवर, जेहिविधि वालिकुमार।।**

रामजी बोले कपिपति,लंकेश अब बताओ सागर कैसे उतरें।

लो भाई। अभी तो इतनी बड़ी बड़ी बातें करते थे। अब शरणागतों से पूछते हैं,दुस्तर सागर कैसे उतरें। यही तो नर लीला है।-

**निरुत्साहस्य दीनस्य शोकपर्याकुलात्मनः।**
**सर्वार्था व्यवसीदन्ति व्यसनं चाधिगच्छति।।**

समुद्र कैसे पार करें यह कहने पर सुग्रीव ने रामजी को समझाया जो पुरुष उत्साहशून्य, दीन और मन-ही-मन शोकसे व्याकुल रहता है, उसके सारे काम बिगड़ जाते हैं और वह बड़ी विपत्ति में पड़ जाता है।

**- वा.रा.युद्ध कांड.02.06**

विभीषण बोले नाथ विनय करना उचित होगा। ये सगर के पुत्रों से उत्पन्न है, कुल गुरु है। वही उपाय बताएंगे। रामजी बोले ठीक। लक्ष्मण को लगा काहेका ठीक। रोष करो। सुखा दो। देव देव गाना आलसियों का काम है। प्रभु ने ऐसा ही करूंगा कहा। लक्ष्मण को समझाकर सागर के किनारे गए। प्रणाम किया। कुश बिछाकर बैठ गए।

*श्रीराम सागर तटपर पूर्वाभिमुख दाहिनी बांह का तकिया लगाकर लेट गए। महल में वह बांह गंगाजल में निवास करने वाले तक्षक (तक्षक का रंग लाल माना गया है -महाभारत आदिपर्व 44।2-3) की भांति सुशोभित होती थी।

**- वा.रा.युद्ध कांड 21.05**

*राक्षसराज रावण के निर्देश देनेपर उस समय निशाचर शुक तोता नामक पक्षीका रूप धारण करके तुरंत सुग्रीव का भेद लेने के लिए आकाशमें उड़ चला ॥

**- वा.रा.युद्ध कांड 20.13**

रावण के भेदिए, वानर देह में, रामादल में आ मिले। गुण गाने लगे। दुराव भूले। राक्षस रूप हुआ। वानर बांधकर कपिपति के पास ले गए।सुग्रीव ने सोचा इनके यहां की जो रीती है, उसका पालन जरूरी है। अंग भंग करके भेज दो। बांधा। कटक के चारों ओर घुमाया। मारने लगे। बहुत मारा। डरे। इनके यहां की रीति अलग है। वे बोले, नाक कान काटे तो रामजी की सौगंध है। लक्ष्मणजी ने हंसकर छुड़ाया। रावण के नाम पाती दी। जानकीजी दो नहीं तो मरो। दूत राम राम करते लंका आए।

रावण ने शुक और विभीषण (गेहूं का कीट) की कुशल पूछी। कटक कितना बड़ा है। डरे तपस्वी कैसे हैं। मिले की नाम सुनकर ही भाग गए। चुप क्यों हो। बोलो। शुक बोला क्रोध त्यागकर सुनो।विभीषण को अभी से तिलक कर दिया है। हम भी राम शपथ से बचे। वो लश्कर भारी है। बता नहीं सकते। जिसने नगर जलाया, वो तो छोटा वानर था। ओर भी बलवान भरे पड़े हैं। अनगिन।अठारह पद्म तो सेनापति हैं। सब आपको जीतने लायक हैं। फिर राम का बल। होगया अपना काम तमाम। फिर भी आपके भाई के कहने पर सागर की विनती कर रहे हैं।

रावण हंसा। जैसी संगति वैसी मति। समझ गया। अवश्य जीतेंगे। विभीषण से डरपोक सलाहकार जो हैं।

शुक ने चिट्ठी दी। बाएं हाथ ली, सचिव से पढ़वाई। लिखा था। मान तज। आकर मिल। अन्यथा सब खतम।

रावण अंदर डरा। बाहर बोला, गिरा हुआ तपस्वी आकाश को गिराना चाहता है। शुक बोला, नाथ। विरोध छोड़ो। मिल लो। जानकी दे दो। यह सुना तो लात मारी। शुक रघुनाथ शरण गया। सुगति पाई। अपने आश्रम गया।

(अगस्त्यजी का खड़े होकर सम्मान न करने के कारण,राक्षस होने का श्राप पाया था। या आमिष भोजन करने से श्राप पाया था।)-

**प्रशमश्च क्षमा चैव आर्जवं प्रियवादिता।।**
**वे असामर्थ्यफला ह्येते निर्गुणेषु सतां गुणाः।**

तीन दिन बाद राम जी बोले समुद्रको अपने ऊपर बड़ा अहंकार है, जिससे वह स्वयं मेरे सामने प्रकट नहीं हो रहा है। शान्ति, क्षमा, सरलता और मधुर भाषण ये जो सत्पुरुषोंके गुण हैं, इनका गुणहीनों के प्रति प्रयोग करनेपर यही परिणाम होता है कि वे उस गुणवान् पुरुषको भी असमर्थ समझ लेते हैं॥-

आत्मप्रशंसिनं दुष्टं धृष्टं विपरिधावकम् ॥ सर्वत्रोत्सृष्टदण्डं च लोकः सत्कुरुते नरम् ।

जो अपनी प्रशंसा करनेवाला, दुष्ट, धृष्ट, सर्वत्र धावा करनेवाला और अच्छे-बुरे सभी लोगोंपर कठोर दण्ड का प्रयोग करनेवाला होता है, उस मनुष्यका सब लोग सत्कार करते हैं॥

- वा.रा.युद्ध कांड 21.14 से 16-

**निर्मर्यादं करिष्यामि सायकैर्वरुणालयम् ।**
**महार्णवं क्षोभयिष्ये महादानवसंकुलम्।।**

रामजी बोले यद्यपि समुद्रको अक्षोभ्य कहा गया है फिर भी आज कुपित होकर मैं इसे विक्षुब्ध कर दूँगा। इसमें सहस्त्रों तरंगें उठती रहती हैं फिर भी यह सदा अपने तट

की मर्यादा (सीमा) में ही रहता है। किंतु अपने बाणों से मारकर मैं इसकी मर्यादा नष्ट कर दूँगा। बड़े-बड़े दानवों से भरे हुए इस महासागर में हलचल मचा दूँगा तूफान ला दूँगा ॥

- वा.रा.युद्ध कांड 21.23,24 इधर बाबा गाने लगे-

**विनय न मानत जलधि जड़, गये तीन दिन बीति।**
**बोले राम सकोप तब, भय बिनु होय न प्रीति।।**
**लक्ष्मण बाण सरासन आनू, सोखौं वारिधि विशिख कृषानू।**
**(विशिख कृषानू- अग्नि बाण)-**
**शठ सन विनय कुटिल सन प्रीती, सहज कृपण सन सुन्दर नीती।**
**ममता रत सन ज्ञान कहानी, अति लोभी सन विरति बखानी।**
**(ममता- मोह, विरति- वैराग्य)-**
**क्रोधिहिं शम कामिहिं हरि कथा, ऊषर बीज बये फल यथा।**
**(शम- शांति)**

धनुष चढ़ाया। लक्ष्मण के मन भाया। तीन दिन बिगाड़ लिए। मैंने तो पहले ही कहा था। खैर अब सही।-

ततो मध्यात् समुद्रस्य सागरः स्वयमुत्थितः । उदयाद्रिमहाशैलान्मेरोरिव दिवाकरः ॥

तब समुद्रके बीचसे सागर स्वयं मूर्तिमान् होकर प्रकट हुआ, मानो महाशैल मेरुपर्वत के अङ्गभूत उदयाचल से सूर्यदेव उदित हुए हों।

- वा.रा.युद्ध कांड 22.17

सागर में ज्वाला उठी। जंतु अकुलाए। ब्राह्मण का रूप धर, स्वर्ण थाल में मोती सजाकर, मान त्यागकर आया।

काकभुशुंडीजी कहते हैं -

**काटे पै कदली फरै, कोटि जतन कर सींच।**
**विनय न मान खागेस सुनु,डाटेहिपै नव नीच।।**

समुद्र ने प्रभु के पैर पकड़े। बोला -

**गगन समीर अनल जल धरणी, इनकी नाथ सहज जड़ करणी।-**
पृथिवी वायुराकाशमापो ज्योतिश्च राघव । स्वभावे सौम्य तिष्ठन्ति शाश्वतं मार्गमाश्रिताः।।

सागर बोला सौम्य रघुनन्दन ! पृथ्वी, वायु, आकाश, जल और तेज ये सर्वदा अपने स्वभाव में स्थित रहते हैं। अपने सनातन मार्ग को कभी नहीं छोड़ते सदा उसीके आश्रित रहते हैं॥

- वा.रा.युद्ध कांड 22.26

इन्हें माया ने पैदा किया। ग्रंथों ने सृष्टि का कारण कहा है। जिसको आपकी जैसी आज्ञा, वैसा करते हैं। ठीक किया जो मुझे सीख दी -

**ढोल गंवार शूद्र पशु नारी, यह सब ताड़न के अधिकारी।**
(ढोल- अकाश, गंवार- पवन, शूद्र- अग्नि, पशु- जल, नारी- पृथ्वी, ताड़न- अवलोकन, निगाह रखने, सहेजने, संभालने, देखरेख करने, सम भाग रखने, संतुलित रखने, ताड़ न- दंड न देने, समझाने, विनय करने पर न मानने पर नियंत्रित करने)

आपके प्रताप से सूख जाऊंगा। कटक उतर जाएगा। जो इच्छा हो करिए। यह सुन रामजी मुस्काकर बोले, उपाय बताओ। सागर बोला, नाथ नील-नल दो भाई आपके कटक में हैं।बालपन में उन्हें ऋषि का श्राप मिला था। आज आशीर्वाद लग रहा है।

ये मुनि के आश्रम में उपद्रव करते थे। जब जब मुनि ध्यान लगाते। ये ठाकुरजी को पानी में डाल देते। मुनि ने श्राप दिया कि जो वस्तु तुम्हारी छुई होगी वह उतरावेगी, तैरेगी। जहां की तहां स्थिर रहेगी। उनके स्पर्श किए पर्वत भी तैरेंगे। मैं भी सहाय करूंगा। इस तरह पुल बनाओगे तो त्रिलोकी आपका यशगान करेगी। इस चढ़ाए अमोघ वाण से मेरे उत्तर तटवासी पापात्मा किरातों का विनाश कीजिए। सागर प्रणाम करके लोटा। बाबा कहते है -

**सकल सुमंगल दायक, रघुनायक गुणगान।**
**सादर सुनहिं ते तरहिं भव,सिंधु बिना जलयान।।**

**।। इति सुंदरकांड ।।**

# ||लंकाकांड||

लंकाकांड के आरंभ में गोस्वामीजी ने श्रीराम की वीरता की वंदना की है क्योंकि युद्ध करके जय पाना है। रावण वध का आशीर्वाद प्राप्त करने हेतु शंकरजी की सुंदर वंदना-

**शंखेंद्वाभमतीव सुंदरतनुं शार्दूलचर्माम्बरं,**
**कालव्यालकपालभूषणधरं गंगाशशांकप्रियं।**
**काशीशं कलिकल्मशौघशमनं कल्याणकल्पद्रुमं,**
**नौमीड्यम गिरिजापतिं गुणनिधिं श्रीशंकरं कामदम।।**

जिनकी शंख और चंद्रमा जैसी कांति है। सिंह का चर्म ही वस्त्र है। सर्प और कपाल जिनके गहने हैं। विभूति का श्रृंगार है। स्तुति करने योग्य, कामनाशक, शंकरजी को नमस्कार।

पलक के लगने का नाम लव, साठ लव का एक निमेष। साठ निमेष का एक परिणाम। साठ परिणाम का एक पल। साठ पल का एक दंड अर्थात घड़ी। साठ घड़ी का एक दिन रात। तीस दिन रात का एक माह। बारह माह का एक वर्ष। सो वर्ष रामजी के बाण की डंडी है। लव निमेष बाणों के फाकें। हजार हजार चारों युग (चतुर्युगी) बीतने पर ब्रह्मा का एक दिन होता है। इसे कल्प कहते हैं। यह राम बाण ब्रह्मादिकों को भी लगते रहते हैं। मनुष्यों की क्या गिनती। इस भांति गोस्वामीजी ने समय के साथ काल रूप राम के धनुष बाण की तुलनाकी।

आइए उन श्रीराम और उनके दिव्य आयुध को प्रणाम करते हुए कथा में प्रवेश करते हैं।

रामजी ने मंत्रियों से कहा कि अब विलंब क्यों, सेतु निर्माण करो। तब जामवंतजी हाथ जोड़कर बोले, हे सूर्यकुल भूषण आपका नाम सबसे बड़ा सेतु है जिसका जापकर मनुष्य संसार सागर से पार हो जाते हैं।

हनुमानजी बोले -

**प्रभु प्रताप बडवानल भारी, शोषेउ प्रथम पयोनिधि बारी ।।**

पहले ही आंख का पानी उतार दिया है।

सागर लांघकर अमर्यादित (मर्यादा हीन) किया है। फिर भरा कैसे तो कहते हैं-

**तव रिपुनारि रूदन जलधारा, भरेउ बहोरि भयेउ तेहि खारा।।**

प्रभु मुस्काए। नल नील को बुलाकर सेतु निर्माण आरंभ किया। आदेश सुन -

**सुनि कपि भालू चले कर हूहा, जय रघुवीर प्रताप समूहा।।**
**अति उतंग तरु शैलगण, लीलहिं लेहिं उठाय।**
**आनि देहिं नल नील कहं, रचहिं ते सेतु बनाय।।**
**ते नगान् नगसंकाशाः शाखामृगगणर्षभाः।**
**बभञ्जुः पादपांस्तत्र प्रचकर्षश्च सागरम्।।**

वे पर्वतके समान विशालकाय वानरशिरोमणि पर्वतशिखरों और वृक्षों को तोड़ देते और उन्हें समुद्रतक खींच लाते थे।-

ते सालैश्चाश्वकर्णैश्च धवैर्वंशैश्च वानराः। कुटजैरर्जुनैस्तालैस्तिलकैस्तिनिशैरपि

बिल्वकैः सप्तपर्णैश्च कर्णिकारैश्च पुष्पितैः चूतैश्चाशोकवृक्षैश्च सागरं समपूरयन्।।

वे साल, अश्वकर्ण, धव, बाँस, कुटज, अर्जुन, ताल, तिलक, तिनिश, बेल, छितवन, खिले हुए कनेर, आम और अशोक आदि वृक्षोंसे समुद्रको पाटने लगे।

- वा.रा.युद्ध कांड 22.55 से 57

*कोई सो योजन लंबा सूत तो कोई दंड पकड़ कर सहायता कर रहे थे।

**- वा.रा.युद्ध कांड 22-**

**दशयोजनविस्तीर्णं शतयोजनमायतम्।**
**ददृशुर्देवगन्धर्वा नलसेतुं सुदुष्करम्।।**

नलके बनाये हुए सौ योजन लंबे और दस योजन चौड़े उस पुल को देवताओं और गन्धर्वों ने देखा जिसे बनाना बहुत ही कठिन काम था ॥

**- वा.रा.युद्ध कांड 22.76-**

तानि कोटिसहस्त्राणि वानराणां महौजसाम् ॥ बवन्तः सागरे सेतुं जग्मुः पारं महोदधेः ।

इस प्रकार उन सहस्त्र कोटि (एक खरब) महाबली एवं उत्साही वानरोंका दल पुल बाँधते-बाँधते ही समुद्रके उस पार पहुँच गया।

**- वा.रा.युद्ध कांड 22.77,78**

*पहले दिन चौदह, दूसरे दिन बीस, तीसरे दिन इक्कीस,चौथे दिन बाइस और पांचवें दिन तेवीस योजन पुल का निर्माण किया।

**- वा.रा.युद्ध कांड 22**

**नित्य काम चला। -**

**पर्वत शिखरों से वीर कीश, पर्वत उखाड़ कर लाते थे।**
**गिरिसम तरु पल में खींचखांच, सेतू निर्माण कराते थे।।**
**धव बांस कुटज संग अश्वकर्ण, ओर ताल तिलक अर्जुन लाए।**
**छितवन संग आम अशोक बेल, नल नील हाथ से पधाराए।।**
**सो योजन लंबा सूत पकड़, कोई मीजान मिलाता था।**
**इक दंड धारकर कपि कोई, सीमा का भान कराता था।।**

**सो योजन लंबा दीर्घ सेतु, जो दश योजन तक चौड़ा था।**
**गंधर्व देव सब थे प्रसन्न, नल ने यह अद्भुत जोड़ा था।।**
**यह दुष्कर अनुपम पुल निहार, कपि कटक अनंद मनाता है।**
**वह सहस कोटि वानर समूह, गढ़ता और बढ़ता जाता है।।**
**चौदह बीसिक्कीस नित, बाविस और तेवीस।**
**शत योजन सेतू गढ्यो, पांच दिवस में कीस।।**
**हिमगिरि को ले श्रृंग जब, थे वृंदावन कोर।**
**हनुमत प्रभु वाणी सुनी, अब मत लाओ और।।**
**गोवर्धन विनती करी, कपि मत तोड़ो कोल।**
**बजरंगी ने कमलजी, कहे प्रभू से बोल।।**
**रघुवर बोले बोल दो, तजे न गिरि निज आस।**
**द्वापर में निज कर धरूं, रखो हृदय बिस्वास।।**
**- 'कमल'**

सुग्रीव ने दूत भेजकर श्रेष्ठ मुनियों को बुलाया और -

**शंकर भगतोद्धार हित, कियो राम उपचार।**
**संभु थापि पूजा करी, नमन करे संसार।।**
**- 'कमल'-**

बाबा गाते हैं -

**बांधेउ सेतु नील नल नागर, राम कृपा यश भयेऊ उजागर।।**
**बूढ़हिं आनहिं बोरहिं जेई, भए उपल बोहित सम तेई।**
**(उपल- पत्थर, बोहित सम- जहाज जैसे)**

सज्जनों, न तो वे विग्रह केवल पखान थे, जिनके कारण नल नील को श्राप मिला और न हीं पुल में लगे पत्थर और वृक्ष तैरने वाले थे, न हीं सिंधु की कृपा। यह सब रामजी का प्रताप था। बाबा की लेखनी प्रमाण है -

महिमा यह न जलधि की बरणी, पाहन गुण न कपिन की करणी।।

**फिर -**

**श्री रघुवीर प्रताप ते, सिंधु तरे पाषाण।**
**ते मतिमंद जो राम तजि, भजहिं जाय प्रभु आन।।**

जब उनकी कृपा से पत्थर तैर जाते हैं तो भक्तों के पार होने में तो कोई शंका ही नहीं होनी चाहिए।

रावण को आचार्य बनाने की कथा पौराणिक नहीं है। रामचरित मानस और श्रीमद्वालमीकि रामायण में इसका कोई उल्लेख नहीं है।

रामजी बोले, शिव द्रोही मेरा दास नहीं हो सकता और मेरा द्रोह करे तो शिव कृपा नहीं पा सकता। यह रावण को स्पष्ट कूटनीतिक संकेत था।

नाम क्या रखें। तय हुआ 'रामेश्वर' -

**ऋषि बोले - राम और ईश्वर, सखा भाव।**
**राम बोले - राम के ईश्वर, स्वामी भाव।**
**पिंडी बोली - राम हैं ईश्वर जिसके, सेवक भाव।-**

रामजी सेतु को देखने लगे। जलजंतु राम दरस हित आए। उनकी ओट में जल नहीं दीखता था।

हटाने पे ना हटे-

**प्रभुहिं विलोकहिं टरहिं न टारे, मन हर्षित सब भए सुखारे।।**
**तिनकी ओट न देखिय वारी, मगन भए हरि रूप निहारी।।**

**सेतुबंध भइ भीर अति, कपि नभ पंथ उड़ाहिं।**
**अपर जलचरन ऊपर, चढ़ि चढ़ि पारहिं जाहिं।।**

तीन मोक्ष मार्ग हैं यह सिद्ध किया है।

कर्म मार्ग - सेतु पर।

उपासना मार्ग - जल जंतुओं पर।

ज्ञान मार्ग - आकाश में।

सबका फल एक। रामजी की प्रसन्नता। भक्ति रूपी जानकी की प्राप्ति।

पार जाकर फल खाने की आज्ञा की। प्रभु कृपा से-

**सब तरु फले राम हित लागी, ऋतु अनऋतु अकाल गति त्यागी।।**

निशाचरों को मारा।

*शुक सारण ने रामजी की सेना का वर्णन करते हुए कहा कि सौ लाख की संख्या को एक कोटि कहते हैं और सौ सहस्र कोटि (एक नील) को एक शङ्कु कहा जाता है। एक लाख शङ्कु को महाशङ्कु नाम दिया गया है। एक लाख महाशङ्कु को वृन्द कहते हैं। एक लाख वृन्द का नाम महावृन्द है। एक लाख महावृन्द को पद्म कहते हैं। एक लाख पद्म को महापद्म माना गया है। एक लाख महापद्मको खर्व कहते हैं ॥ एक लाख खर्व का महाखर्व होता है। एक सहस्त्र महाखर्व को समुद्र कहते हैं। एक लाख समुद्र को ओघ कहते हैं और एक लाख

ओघकी महौघ संज्ञा है। इस प्रकार सहस्र कोटि, सौ शङ्कु, सहस्र महाशङ्कु, सौ वृन्द, सहस्र महावृन्द, सौ पद्म, सहस्र महापद्म, सौखर्व, सौ समुद्र, सौ महौघ तथा समुद्र-सदृश (सौ) कोटि महौघ सैनिकों से, वीर विभीषण से तथा अपने सचिवों से घिरे हुए वानरराज सुग्रीव आपको युद्धके लिये ललकारते हुए सामने आ रहे हैं। विशाल सेनासे घिरे हुए सुग्रीव महान् बल और पराक्रमसे सम्पन्न हैं।

**- वा.रा.युद्ध कांड 28-**

उन्होंने सेतुबंध और सेना आगमन की खबर रावण को दी। सुनते ही पहली बार दसों मुखों से बोला -

**बांधेऊ वननिधि नीरनिधि, जलधि सिंधु वारीश।**
**सत्य तोयनिधि कंपती, उदधि पयोधि नदीश।।**
**यह श्राप था कि दसों मुखों से जब बोलेगा तब मृत्यु होगी।**
**न तावत् सद्दशं नाम सचिवैरुपजीविभिः।**
**विप्रियं नृपतेर्वक्तुं निग्रहे प्रग्रहे प्रभोः।।**

घबराए रावण ने शुक को फटकारा राजा निग्रह और अनुग्रह करने में भी समर्थ होता है। उसके सहारे जीविका चलानेवाले मन्त्रियों को ऐसी कोई बात नहीं कहनी चाहिये, जो उसे अप्रिय लगे।

**- वा.रा.युद्ध कांड 29.07**

अब बोल तो दिया। सकुचाकर घर गया। मंदोदरी ने अपने घर लेजाकर समझाया। समझाया क्या औकात दिखाई -

**नाथ वैर कीजे ताही सों, बुधि बल जीति सकिय जाही सों।।**

यह वही है जिसने हिरण्यकशिपु आदि का संहार किया। सीता दो। वन चलो। भक्ति करो।

मंदोदरी को समझाकर मंत्रियों के पास गया। पूछा क्या करें। वे बोले अरे महाराज, बारबार क्यों पूछते हो । वे हमारे आहार हैं।

प्रहस्त बोले, मंत्रियों नीति का विरोध न करो। महाराज, ये ठकुरसुहाती कहते है –

**वारिधि लांघि एक कपि आवा, तासु चरित मन मंह सब गावा।**
**क्षुधा न रही तुमहिं तब काहू, जारत नगर न तस धरि खाहू।।**
**सुनु मम वचन तात अति आदर,जनि मन गुनहुं मोहि कहि कादर।**
**(कादर- डरपोक, भीरू)-**

**प्रिय वाणी जे सुनहिं जे कहहीं, ऐसे नर निकाय जग अहहीं।**
**वचन परम हित सुनत कठोरे, कहहिं सुनहिं ते नर प्रभु थोरे ।**

दूत भेजो,सीता लौटा दो।

रावण बोला, तुम बांसों के वंश में घमोई (अग्नि, दीमक) हो।

प्रहस्त बोला-

**हित मत तोहि न लागत कैसे, काल विवश कहं भेषज जैसे।।**

उसकी बात को अनसुना कर रावण बीस भुजा निरखता लंका के गढ़पर अप्सराओं का नृत्य देखने गया।

यहां राम सुवेल पर्वतपर, मृगचर्म पर सुग्रीव की गोदी में सिर रखकर लेटे हैं। मानो कह रहे हैं कि सिर का भार तुमपर है। विभीषण नीति कह रहे हैं मतलब भेद तुम बताओगे । अंगद हनुमान चरण सेवारत हैं मानो जहां ले चलोगे या मेरी गति तुम्हारे हवाले। लक्ष्मण वीरासन में हैं मानो कोई प्रतिकूल चले तो दंड का भागी होगा।

दाहिनी ओर धनुष है, बाण सुधार रहे हैं। जैसे कहते हों कि अब तुम्हारी सेवा का अवसर आया है।

दोनों की क्रियाओं का अंतर चिंतनीय है।

सब के मन की थाह लेने के लिए श्री राम बोले-

**कह प्रभु शशि मंह मेचकताई, कहहुँ काह निज निज मति भाई।**
**(मेचकताई- सांवला पन, दाग)**

सुग्रीव बोले यह पृथ्वी की छाया है। इससे सुग्रीव की राज्य अभिलाषा प्रकट हुई। अंगद ने कहा यह राहु के आघात से श्यामलता है। यह वीरता को प्रकट करता है। कोई बोला कि रति के मुख में शशि का भाग लेकर सौंदर्य भरा है।यह समर विमुखता हुई। रामजी ने कहा कि अपने बंधु विष को हृदय में बिठाया है। विष संयुक्त किरण फैलाकर विरहियों को जलाता है। अपना वियोग दर्शाया। हनुमान बोले -

**कह मारूत सुत सुनहुँ प्रभु, शशि तुम्हार प्रिय दास।**

तव मूरति तेहि उर बसत,सोइ श्यामलता भास।। यह भक्त के भाव हैं।

रामजी ने दक्षिण दिशा की तरफ देख, विभीषण का भाव जानने के लिए पूछा। विभीषण यह मेघ का गर्जन, बिजली का चमकना क्या है ?

वे बोले नाथ, भवन के शिखरपर बैठे रावण का मुकुट मेघ घटा, मंदोदरी के कुंडल विध्युच्छटा, ताल मृदंग घन गर्जन है।

यह अभिमान युक्त वाणी सुन रामजी ने एक बाण चलाया –

**छत्र मुकुट ताटंक सब, हते एक ही बाण।**
**सबके देखत महि गिरे, मर्म न काहू जान।।**
**(ताटंक- कर्णफूल)**

यह कौतुक कर शर लोट आया।

वहां -

**कंप न भूमि न मरुत विशेषा, अस्त्र शस्त्र कछु नयन न देखा।।**

इस अपशकुन से सब को शंकित देख रावण बोला जब सिर कटे तब अपशकुन नहीं तो मुकुट मात्र गिरने से क्या भय खाना। जाओ विश्राम करो।

रामजी ने विभीषण से कहा कि-

**एको हि कुरुते पापं कालपाशवशं गतः।**
**नीचेनात्मापचारेण कुलं तेन विनश्यति।।**

काल के पाश में बँधा हुआ एक ही पुरुष पाप करता है, किंतु उस नीच के अपने ही दोष से सारा कुल नष्ट हो जाता है।

- वा.रा.युद्ध कांड 38.07

मंदोदरी ने फिर समझाया, राम का महिमा गान किया –

**विश्व रूप रघुवंशमणि, करहुं वचन विश्वासु।**
**लोक कल्पना वेद कह, अंग अंग प्रति जासु।।**

बैर त्यागो, मेरे सुहाग की रक्षा करो। अभिमानी नहीं माना। बाबा ने नीति कह दी-

**फुले फले न बेत, यदपि सुधा वर्षहिं जलद।**
**मूरख हृदय न चेत, जो गुरु मिलहिं विरंचि सम।।**

एक बार रावण जब लंका के उच्च शिखरपर चढ़ा तो सारन बोला महाराज, यह सात ताल ऊंचे, विश्वकर्मा के पुत्र, नल-नील हैं। इनके साथ सहस्त्र करोड़ वानर हैं। यह जो चौदह ताल सा विशाल है। बादलों को पकड़ लेता है। इस तारा पुत्र के साथ पांच पद्म वानर हैं। यह चांदी के पर्वत सा कुमुद है। इसके साथ पांच सो करोड़ वानर हैं। यह धूमकेतु का सात पद्म वानरों का कटक है। अपराजेय। इसी का बड़ा भाई वो जामवंत है जो पृथ्वी को गेंद के समान उठा सकता है। इसे युद्ध में जीतने की चाह रखने वाला महा मूर्ख है। यह चौवीस अरब का कटक अविनाशी का है। वो पर्वत श्रृंग सा, मात्र गंगाजल पीने वाला हनुमान का पिता केशरी है। यह उत्तर में टिड्डी दल सा कटक गय और गवाक्ष का है। इसमें सत्तर हजार हाथियों का बल है।

वह हजार करोड़ वानर के साथ तारा का पिता सुषेण है। इस गेरू के पर्वत, हनुमान से कैसे युद्ध करोगे। ये अवतारी, अजेय राम-लक्ष्मण हैं। वह सुग्रीव है। कुल अठारह पद्म सेना तुमसे लड़ने को आतुर है।

मूल रामायण 32/02-

**सेतु बांधि कपि सेन जिमि, उतरी सागर पार।**
**गयो बसीठी वीरवर, जेहिविधि वालिकुमार।।**

यहां श्रीराम ने अपने मंत्री जामवंत से पूछा क्या करें। उन्होंने कहा अंगद को दूत भेजना उचित होगा।

रामजी ने अंगद को समझाते हुए कहा तात, वही करना जिससे विरोध बढ़े और रावण शीघ्र मरे।

अंगदजी माघ बदी पड़वां को चले। लंका में प्रवेश करते ही खेलते हुए रावण के बेटे से मुलाकात हो गई -

**बातहिं बात कर्ष बढ़ि आई, युगल अतुल बल पुनि तरुणाई।।**

उसने लात चलाई। इन्होंने पकड़ा और घुमाकर पृथ्वीपर पटकदिया। राम नाम सत्य होगया। सब डरे। सोचा जिसने लंका जलाई फिर आगया। अबतो -

**बिनु पूछे मगु देहिं दिखाई, जेहि विलोक सोइ जाइ सुखाई।।**

मतवाले हाथियों के बीच, शेर की भांति दरबार में प्रवेशकर रावण को देखा-

**अंगद दीख दशानन वैसा, सहित प्राण कज्जल गिरि जैसा।।**

अंगद को देखकर सभासद खड़े हो गए। रावण रूष्ट हुआ। सभा को प्रतिप्रणाम कर अंगद बैठगए। यही तो शिष्टता है।

रावण ने पूछा,तुम कौन ?

बोले, मैं आपके मित्र वाली का पुत्र हूं। रामजी का दूत हूं।

क्यों आए ?

बोले, तुम्हारा हित करने। तुमने तप करके देवों को प्रसन्न किया, वरदान पाया। सीताजी का हरण कर सबपर बट्टा लगालिया। अब मेरा कहा मानो। लंका की नारियों को आगेकर, मुंह में तृण दाब, जगदम्बा को आगेकर शरणागत हो जाओ। प्रभु कृपा करेंगे।

रावण बोला-

**गर्भ न खसेउ वृथा तुम जाये, निज मुख तापस दूत कहाए।।**

अब वाली की कुशल कहो।

अंगद बोले दस दिन में तुम स्वयं जाकर कुशल पूछ लेना।

रावण ने अंगद को अपनी ओर मिलाने का प्रयास किया।

अंगद बोले जिसके हृदय में राम होते हैं वहां भेद नहीं होता।

रावण बोला तुम कुल नाशक हो।

उत्तर दिया -

**हम कुल घालक सत्य तुम, कुलपालक दशशीष।**
**अंधौ बधिर न कहहिं अस, श्रवण नयन तोहि बीस।।**

जब यह वार्ता चल रही थी तभी कुबेर का दूत समझाने आया। रावण उसे मारकर खा गया। अंगद बोले मैंने तुम्हारा दूत के प्रति व्यवहार देख लिया। नकटी बहिन देख क्षमा कर धर्मशीलता भी दर्शाई है।

अंगद बोले -

**मैं हूँ राम दूत आयो तोहिं समझाय बे को मान कही मेरी एती उरमे अरनले ।**
**बरनत भट तजि क्रोध मन मांझ ओ सबेरे रामनाम की रटन ले॥**
**जोरिकर बीस दस सीसन नवाय अब पाहि पाहि कहि प्रभु के चरन ले ।**

जान की कुशल जो पे चाहत अजान अरे जानकी समर्पि जानकीश की सरन ले ॥ रावण बोला, तुम्हारे कटक में कौन है जो मुझसे भिड़े। तुम और सुग्रीव राज्य हेतु लड़ रहे हो। राम पत्नी विरही। लक्ष्मण भाई के दुख से दुखी। जामवंत वृद्ध। हां एक कपि है जो लंका जलागया।

अंगद बोले -

**सिंधु तर्यो उनको वनरा तुम पै धनुरेख गई न तरी।**
**बाँध्योई बाँधत सो न बँध्यो, उन वारिधि बांधि के बाट करी।।**
**अजहूं रघुनाथ-प्रताप की बात तुम्हें दसकंठ न जानि परी।**
**तेलनि तूलनि पूंछ जरी न जरी, जरी, लंक जराई जरी ॥**
**- पैतृक संपदा**

अंगद बोले, क्या सच में। वह तो सुग्रीव का एक अदना धावक था। ज्यादा चले वह वीर नहीं होता। हां तुमने कहा कि हमारे कटक में तुमसे युद्ध करने वाला कोई नहीं क्योंकि -

**प्रीति विरोध समानसन, करिय नीति असि आहि।**
**जो मृगपति वध मेंडुकहिं, भलो कहै को ताहि।।**

रावण बोला ठीक कहते हो। पाला हुआ बंदर ऐसे ही नाचता है।

अंगद बोले, तुम्हारे गुण कपिराई ने गाए है।

बाग उजाड़ा, पुत्र मारा, लंका जलाई फिर भी क्षमा करदिया। वाह तुम्हारे अंदर लाज, क्रोध, अहंकार कुछ भी नहीं है।

अंगद के वचन शूल से चुभे। उत्तर रूपी संडसी से निकालने की असफल कोशिश की। पूछा

राम को काम कहा रिपु जीतहिं ।

कौन कबै रिपु जीत्यो, कहां बाली बली, छल सों, भृगुनन्दन, गर्व हर्यो क्षेलिज द्विज दीन महा दानि सो क्यों ? छिति क्षत्र हत्यो 'बिन प्राणनि हेहय राज कियो हैहह कौन ? वहै बिसर्यो जिन खेलत ही तोहि बांधि लियो।

- पैतृक संपदा

अंगद ने पूछा, तुम कोनसे रावण हो ? मैने कुछ के नाम सुने है।

*एक रावण बली को जीतने पाताल गया था। बच्चों ने घुड़साल में बांध दिया। वामनजी ने छुड़ाया।

*एक को सहस्त्रबाहु ने जलजंतु मानकर पकड़ा जिसे पुलस्त्यजी ने छुड़ाया ।

*एक मेरे पिताजी की कांख में रहा। अब इनमे से तुम कौन हो कहो।

रावण अपना प्रताप बखान करता है। कहां मैं और कहां वह तपस्वी मनुज।

अंगद बोले -

कवित -

**जाके रोष दुसह त्रिदोषदाह द्रूर कीन्हें, पैयत न क्षत्री खोज खोजते खलक में।**
**माहिषमती को नाह साहसी सहसबाहु, समर समर्थ राज हेरिये हलक में।।**
**सहित समाज महाराज सो जहान राज, बूढ़ि गयो जाके बल वारिधि छलक में।**
**टूटत पिनाक के मैनाक वाम राम से ते, नाक बिनु भये भृगुनायक पलक में।।**

वे -

**राम मनुज कस रे शठ बंगा, धन्वी काम नदी पुनि गंगा।**
**(बंगा- लुच्चे, धन्वी काम- कामदेव साधारण धनुषधारी)-**
**पशु सुरधेनु कल्पतरु रूखा, अन्न दान अरु रस पीयूखा।**
**(अन्न दान- साधारण दान, पीयूखा- अमृत)-**
**वैनतैय खग अहि सहसानन, चिंतामणि पुनि उपल दशानन।**

(वैनतैय- गरुड़, सहसानन- शेष, उपल- पत्थर)-
सुनु मतिमंद लोक वैकुंठा, लाभ कि रघुपति भक्ति अकुंठा।
(लोक- साधारण लोक, लाभ- साधारण लाभ, अकुंठा- अविचल)
और -
सेन सहित तव मान मथि, वन उजारि पुर जारि।
कस रे शठ हनुमान कपि, गयउ जो तव सुत मारि।।

गाल मत बजा। रामजी से विमुख तेरा वह हाल होगा कि वानर तेरे सिर से गेंद खेलेंगे।-

पाहन ते पतिनी करि पावन, टूक कियौ हर को धनु को रे।
छत्र विहीन करी छन में छिति, गर्व हर्यो तिनके बल को रे।।
पर्वत पुंज पुरैनि के पात समान तरे, अजहूं धर को रे।
होई नरायन हूं पै न ये गुन, कौन इहाँ नर वानर को रे।।
- केशवदास

रावण अपने भाई, पुत्र के बल और अपनी बीस भुजाओं को सिंधु बताकर कहता है कि तेरा स्वामी वीर है तो बारबार दूत भेजने में लाज नहीं आती। -

शूर कवन रावण सरिस, स्वकर काटि जेइं शीश।
हुने अनल महं बार बहु, हर्षित साखि गिरीश।।
जरत विलोकेउ जबहिं कपाला, विधि के लिखे अंक निज भाला।
नर के कर आपन वध बांची, हंसेउ जानि विधि गिरा असांची।
सो मन समुझि त्रास नहिं मोरे, लिखा विरंचि जरठ मति भोरे।
(जरठ- बुढ़ापा)

अंगद बोले तुझसा सलज्ज कोई नहीं है। स्वयं अपनी बढ़ाई किए जा रहा है। बली जी, यह बल तब कहां गया था जब वाली, बली और सहस्त्रबाहु ने बांध लिया था। बाजीगर अपना शरीर काट लेते हैं तो क्या वे वीर हुए। मोहवश पतंगे जल जाते हैं, गधे भार उठाते हैं तो क्या शूर हो गए। नहीं ना। रामजी ने कहा है कि, गीदड़ को मारकर,शेर वीर नहीं कहाता। मैं रामजी के अपमान से डरता हूं। तुम्हें मारने का संकल्प उन्होंने लिया है नहीं तो तुझे मार, मंदोदरी सहित जानकीजी को लेकर लौटता-

जो अस करऊं न तदपि बड़ाई, मुयेई वधे कछु नहिं मनुसाई।
(मुयेई- मरे को, मनुसाई- बढ़ाई)
कोल कामवश कृपण विमूढ़ा, अति दरिद्र अपशी अति वूढ़ा।
(कोल- वाम मार्गी, उलटा चलाने वाला)-
सदा रोगवश संतत क्रोधी, विष्णु विमुख श्रुति संत विरोधी।
(श्रुति- वेद)-
तनु पोषक निंदक अघ खानी, जीवत शव सम चौदह प्रानी।
(अघ खानी- महा पापी)

रावण दांत पीसकर बोला। तेरे राम को -

**अगुण अमान विचारि तेहि, दीन्ह पिता वनवास।**
**सो दुख अरु युवती विरह, पुनि निशि दिन मम त्रास।।**

रामजी की निंदा सुन अंगद को क्रोध आया। बाबा कहते हैं -

**हरि हर निंदा सुनहिं जे काना, होइ पाप गोघात समाना।।**

अंगद ने क्रोध से दोनो हाथ धरती पर दे मारे। धरती हिली। सभासद गिरे, रावण गिरते गिरते बचा पर मुकुट गिर गए। छह तो फिर पहने। चार अंगद ने उठाकर प्रभु के पास फेंक दिए।

यहां उल्कापात जान बानर डरे। रामजी ने हंसकर कहा डरो मत -

**ये किरीट दशकंधर केरे, आवत वालितनय के प्रेरे।**

हनुमानजी ने किरीट का मान किया। कूदकर पकड़े। प्रभु के पास रखे।

उधर रावण ने कहा, इस वानर को पकड़लो। भागकर सभी बानर,भालू और दोनो मनुजों को खा जाओ ।

अंगद ने कहा -

**रे तिय चोर कुमारग गामी,खल मलराशि मंदमति कामी।**
**(खल- दुष्ट, मलराशि- पापिष्ट)**

बीस नैत्रों वाले अंधे। अरे जिसने एक ही बाण से वाली को बधा वे राम तुझे मनुष्य लगते है -

मैं तव दशन तोरिबे लायक,आयसु पे न दीन्ह रघुनायक।

रावण बोला, वाली तो इतना बड़बोला नहीं था। तपस्वियों की संगत का प्रभाव लगता है।

अंगद बोले, ले संगत का असर देख -

**राम प्रताप सुमिरी कपि कोपा, सभा मांझ प्रण करि पग रोपा।**

उद्‌घोषणा की -

**जो मम चरण सकसि शठ टारी, फिरहिं राम सीता मैं हारी।।**

दूत को अधिकार है। मुझे हारकर राम सीता फिरेंगे। राम सीता ही रूष्ट होंगे तो पग टरेगा। मेघनाद आदिक योद्धा नहीं उठा पाए। लजाकर बैठ गए। पर -

भूमि न छांड़त कपि चरण,देखत रिपु मद भाग।कोटि विघ्न जिमि संत कहं,तदपि नीति नहिं त्याग।।

तब रावण उठा तो अंगद ने पैर उठा लिया।

बोले -

**गहत चरण कह बालि कुमारा, मम पद गहै न तोर उबारा।।**

सोचा, इससे न उठा तो रामजी पर हीनता आवेगी। अंगद का पैर ही न उठाने वाले को मारा तो क्या मारा। वालि का मित्र, पिता समान जाना। मान लो हार गया। जानकी दे दी तो विभीषण को राज्य कैसे देंगे।

श्रीहीन दशानन सिंहासन पर जा बैठा।

रामजी का यश गाकर, अंगद रामजी के शरण चले आए।

रावण घर गया।

मंदोदरी ने फिर समझाया। जिसके दूत, जिसका भाई ऐसा।-

**पति रघुपतिहिं मनुज जनि जानहुं, अग जग नाथ अतुल बल मानहुं।**
**काल दंड गहि काहु न मारा, हरै धर्म बल बुद्धि बिचारा।।**
**रावण अनसुना कर प्रातः सिंहासन पर जा बैठा।**

विध्युज्जिव्ह को बुलाकर राम का धनुष और मस्तक हुबहू बनाकर लाने को कहा। सीता के सामने रख अपनी प्रशंसा करने लगा। सीता का विलाप अवर्णनीय था। तभी वानरों की 'जय श्रीराम' गर्जना सुनकर रावण लोटा। विभीषण की पत्नी सरमा ने सीताजी को ढाढस बंधाया। यहां रामजी ने अंगद से पूछा, चार मुकुट कैसे चलाए। बोले -

**साम दाम अरु दंड विभेदा,नृप उर बसहि नाथ कह वेदा।**
**नीति धर्म के चरित सुहाए,अस जी जानि नाथ पहं आए।**

मूल रामायण 33-

**निशिचर कीश लराई, बरनेसि विविध प्रकार।**
**कुंभकर्ण घननाद कर, बल पौरुष संहार।।**

गढ़ के विस्तृत समाचार सुने। मंत्रियों से सलाह की। लंका के चार द्वारों के लिए कटक चार भागों में किया। आक्रमण किया।

रावण बोला, विधाता ने घर बैठे आहार दिया। जाओ भोजन करो। शिवजी कहते है -

**उमा रावणहि अस अभिमाना, जिमि टिट्टिभ पग सूत उताना।**
(अंडे पर आकाश न गिरजावे इसलिए ऊपर पग कर सोता है)

लड़ाई हुई। हनुमान और अंगद राक्षसों को आपस में रगड़कर मारने लगे। प्रमुख को राम के पास भेजा। विभीषण ने परिचय कराया। मुक्त हुए। शंकरजी कहते हैं -

खल मनुजाद द्विजामिश भोगी,पावहिं गति जो याचत योगी।

**उमा राम मृदु चित करुणाकर, वैरभाव मोहिं सुमिरत निसिचर।**
**जे अस प्रभु न भजहिं भ्रम त्यागी, नर मतिमंद ते परम अभागी।।**

वानर निशाचारों को पृथ्वीपर पटक पटककर मारकर, सागर में डाल देते हैं। आधी सेना मरी जानकर रावण ने सलाह की। माल्यवंत के सुझाव पर नाराज हो भगा दिया। मेघनाथ सहित विचार में रात बिताई। दूसरे दिन मेघनाद युद्ध करने आया। भीषण युद्ध हुआ।

कवित्त -

**लोथिन सों लोहू के प्रवाह चले जहां तहां, मनहुं गिरिन गेरू झरना झरत है।**
**शोणित सरित घोर कुंजर करोर भारे, कूल ते समूल वाजि विटप परत है।।**
**सुभट शरीर नीरचारी भारी जहां तहां, शूरन उछाह क्रूर कादर डरत हैं।**
**फिकरि फिकरि फेरु फारि फारि पेट खात, काक कंक बालक कोलाहल करत हैं।।**

मेघनाद ने मायापति के सामने, प्रबल माया दिखाई। लक्ष्मण से हारने लगा तो ब्रह्मा की दी हुई शक्ति छोड़ी। लक्ष्मण मूर्छित हो गए। मूर्ख -

**मेघनाद सम कोटि शत, योद्धा रहे उठाय।**
**जगदाधार अनंत किमि, उठहिं चले खिसियाइ।।**

शिवजी बोले, पार्वती जिसकी क्रोधाग्नि चौदह भुवन जला दे उसे संग्राम में कौन जीत सकता है। प्रभु का कृपा भाजन ही उनका कौतूहल जान सकता है। संध्या समय प्रभु ने पूछा लक्ष्मण कहां है। तभी हनुमानजी उन्हें उठाकर लाए। उन्हें मूर्छित देखकर बड़ा दुख हुआ।

बोले -

**मेरो सब पुरुषारथ थाको।**
**विपति बंटावन बंधु बाहु बिनु, करौं भरोसो काको।।**
**सुनु सुग्रीव सांचहुं मोसन अब, फेर्यो बदन विधाता।**
**ऐसे समय समर संकट हौं, तजो लषण सो भ्राता।।**
**गिरि कानन जैहैं शाखा मृग, हौं पुनि अनुज संघाती।**
**ह्वैहैं कहा विभीषण की गति, रही सोच भरि छाती।।**
**तुलसी सुनि प्रभु वचन भालु कपि, सकल विकल हिय हारे।**
**जामवंत हनुमंत बोलि तब, औसर जानि प्रचारे।।**
**जब लखन नहीं तो राम कहां, जब राम नहीं तो विजय कहां।**
**जब विजय नहीं तो सिया कहां,जब सिया नहीं शुभ समय कहां।।**
**संसार कहेगा वनरों ने, वन में बहकाए रघुवंशी।**
**वनरे तो वन को भाग गए, रह गए अकेले रघुवंशी।।**
**- राधेश्याम रामायण**

जामवंतजी के कहने पर, हनुमानजी, घर सहित सुषेण को लाए। (घर सहित इसलिए लाए कि औषधि घर रहगई यह बहाना कर सकता है, फिर ना आवे)

हनुमानजी बोले –

जो मैं तव अनुशासन पाऊं।

**तो चंद्रमहिं निचोड़ बेल जिमि, आनि सुधा शिर नाउं।**
**कै पाताल दलों व्यालावलि, अमृत कुंड महि ल्याऊं।।**
**भेदि भुवन करि भानु बाहिरो, तुरत राह दै ताऊं।**

**पटको मीच नीच मूषक जिमि, सबको पाप बहाओं।।**
**तुम्हरी कृपा प्रताप तुम्हारे, नेक विलंब न लाऊं।**
**दीजै सोई आयसु तुलसी प्रभु, जो तुम्हार मन भाऊं।।**
**- गीतावली**

सुषेण ने देखा कि रामजी का-

**मनमोहन श्याम सलोना मुख, इस समय आंसुओं से तर है।**
**मानों पानी से भरा मेघ, झर लगा रहा पृथ्वी पर है।।**
**- राधेश्याम रामायण**

सुषेण ने कहा कि मैं दशानन का वैद्य हूं। उनके वैरी की चिकित्सा धर्म विरुद्ध होगी। क्या आप इसकी अनुमति देंगे। रामजी बोले -

**जिस धर्म हेतु निज राज गया, श्री पितृदेव का मरण हुआ।**
**जिस धर्म हेतु प्रिय भरत छुटा, सीता प्यारी का हरण हुआ।।**
**उस सत्य धर्म पर लक्ष्मण भी, यदि मर जाए तो मर जाए।**
**आवाज यही होगी अपनी, हां धर्म नहीं जाने पाए।।**
**- राधेश्याम रामायण**

*द्रोणाचल पर्वत साठ लाख योजन दूर था। नल ने कहा तीन दिन में, द्विविद 2 दिन, सुग्रीव-1 दिन, अंगद 12 घण्टे में ला सकते थे। रात ही रात में हनुमान लेकर आये।

- पैतृक संपदा

सुषेण के कहने पर, रामजी का आशीर्वाद ले हनुमान औषधि लेने चले।

*संजीवनी की सुगंध से सभी राक्षस फिर जीवित हो जायेंगे यह अनुमान करके गरूड़ और विभीषण ने समुद्र में फेंक दिया।

- आनन्द रामायण

दूत से समाचार पाकर, रावण कालनेमी के पास गया। सब बताया। कालनेमी बोला जिसने तुम्हारे सामने तुम्हारा नगर जलादिया उसका मार्ग कौन रोक सकता है। अभिमान त्यागो। जो काल का काल है उससे जीतने का विचार त्यागो।

रावण रिसाया। कालनेमी ने सोचा, मरना ही है तो रामदूत के हाथों ही मरूं। वह गया और मार्ग में मंदिर, बाग और ताल बनाकर साधु बनकर बैठा।

हनुमानजी ठहरे। कपटी को प्रणाम किया। वह बोला, राम रावण में युद्ध चल रहा है। मैं ज्ञानदृष्टि से सब देख सकता हूं। हनुमानजी के जल मांगने पर, कमंडल का जल दिया।

हनुमानजी बोले, इतने से काम नहीं चलेगा। सरोवर में भेजा। बोला शीघ्र आओ। ज्ञान देना है। सरोवर में एक मकरी ने बताया कि यह मुनि कपटी है।

(कालनेमि और मकरी पहले गंधर्व थे। इंद्र की सभा में गाते थे। दुर्वासा आए तो ये उनकी सूरत देखकर हंसे। मुनि ने राक्षस होने और हनुमानजी के हाथ से कल्याण होने का कहा।)

देर हुई तो कालनेमी ने जाना कि मकरी ने हनुमान को मार दिया। प्रसन्न होकर सोचा अब रावण से इनाम में आधा राज्य लूंगा। रेतीला उसे दूंगा। बस पुष्पक मेरे हिस्से आजावे। तभी कालनेमी के पास जाकर हनुमानजी ने कहा मुनि, पहले दक्षिणा लो फिर ज्ञान देना।

हनुमानजी ने लंगूर में लपेटकर पछाड़ा। दक्षिणा दी। रामनाम सत्य कर दिया।

द्रोणागिरी पर जाकर देखा। औषधी पहचान नहीं पाए। अविलंब पर्वत उखाड़ा और उठाकर चल दिए। सूर्य से कहा -

**हे सूर्य ध्यान रखना इतना, संकट अब सूर्यवंश पर है।**
**लंका के नीच राहु द्वारा, आघात दिनेश अंश पर है।।**
**इसलिए छुपे रहना तब तक, जबतक न जड़ी पहुंचा दूं मैं।**
**उस समय प्रकट होना भगवन, जब संकट निशा मिटादूं मैं।।**
**अन्यथा क्षमा करना दिनकर, अंजनीतनय से पाला है।**
**बचपन से जान रहे हो तुम, हनुमत कितना मतवाला है।।**
**-राधेश्याम रामायण**

अयोध्या के ऊपर से निकल रहे थे। सोचा देखूं कि प्रभु जिस भरत का इतना गुणगान करते हैं, वे कैसे हैं।

*हनुमानजी ने सोचा की बस अब मैं शीघ्र औषधि पहुंचा दूंगा।इस नन्हे से मद का हरण करने के लिए भरत ने बाण चलाया। भरतजी ने हनुमान पर कुश बाण चलाया था।

-राधेश्याम रामायण खड़ाऊ पर छाया देख,भरत ने बिना फर का बाण मारा। हनुमान भूमिपर मूर्छित होकर गिरे।

(हनुमन्नाटक के अनुसार पर्वत लंगूर पर धारण किया।)

बाबा कहते हैं -

कौतुक ही कपि कुधर लियो है।

चलो नभ नाय माथ रघुनाथहिं सरिस न वेग बियो है।।

**देखे जात जानि निशिचर बिनु, फर शर हर्यो हियो है।**
**पर्यौं कहि राम पवन राख्यो गिरि, पुर तेहि तेज पियो है।।**
**जाय भरत भरि अंक भेंट निज, जीवन दान दियो है।**
**दुख लघु लषण परम घायल सुनि, सुख बड़ो कीश जियो है।।**
**आयसु इतहि स्वामि संकट उत, परत न कछू कियो है।**
**तुलसिदास निहर्यो अकाश सों, कैसे जात सियो है।।**

कपि की मूर्छा जागी। राम नाम जपते उठे। सोचा -

**मेरे आराध्य देव के जो, आराध्यदेव हैं इस जग में।**
**मैं बड़भागी हूं आन पड़ा, उनके ही प्रिय पावन पग में।।**
**- राधेश्याम रामायण**

भरत का मुंह सूख गया। बोले -

**अहह देव मैं कत जग जायऊं, प्रभु के एकौ काम न आयऊं।**

**हनुमानजी को घर लाए। युद्ध का हाल सुन सुमित्राजी को हर्ष शोक दोनो हुआ।**

**भजन –**

**सुनि रण घायल लखन परे हैं।**
**स्वामिकाज संग्राम सुभटसों, लहिललकारि लरे हैं।।**
**सुवन शोक संतोष सुमित्रहिं, रघुपति भगति बरे हैं।**
**छिन छिन मात सुखात छिनहिं छिन, हुलसत होत हरे हैं।।**
**कपिसों कहति सुभाव अंब के, अंबक अंबु भरे हैं।**
**रघुनंदन बिनु बंधु कुअवसर, यद्यपि धनु दुसरे हैं।।**
**तात जाहु कपिसंग रिपुसूदन, उठि कर जोरि खरे हैं।**
**प्रमुदित पुलकित प्रेमपूरि जनु, विधिवश सुढर ढरे हैं।।**
**अंब अनुज गति लखि पवनात्मज, भरतादिक सब ग्लानि गरे हैं।**
**तुलसी तब समुझाय मातु तेहि, समय सचेत करे हैं।।**
**शत्रुघ्न से रामजी की सहायता हेतु जाने का कहा।**

मैने अपने ग्रंथ "दानवीर" के भाग "जनक लली" में इस प्रसंग और उर्मिला-हनुमान संवाद का विस्तृत एवम भावपूर्ण वर्णन किया है।

भरत ने कहा आपको देर हो जायेगी। मेरे बाण पर, पर्वत सहित चढ़ जाओ। हनुमान ने सोचा-

**सुनि कपि मन उपजा अभिमाना, मोर भार चलिहि किमि बाना।**
**बोले, आपके आशीर्वाद से, बाण की भांति पहुंच जाऊंगा। प्रणामकर चले।**

वहां लक्ष्मण को देख रामजी बोले।-

**शक्या सीतासमा नारी मर्त्यलोके विचिन्वता।**
**न लक्ष्मणसमो भ्राता सचिवः साम्परायिकः।।**

नागपाश से बंधे लहूलुहान लक्ष्मण को देखकर श्री रामजी विलाप कर कहते हैं मृत्यु लोक में ढूँढ़ने पर मुझे सीता जैसी दूसरी स्त्री मिल सकती है परंतु लक्ष्मण के समान सहायक और युद्धकुशल भाई नहीं मिल सकता।-

**देशे देशे कलत्राणि देशे देशे च बान्धवाः।**
**तं तु देशं न पश्यामि यत्र भ्राता सहोदरः।।**

रामजी कहते हैं प्रत्येक देशमें स्त्रियाँ मिल सकती हैं, देश-देश में जाति-भाई उपलब्ध हो सकते हैं परंतु ऐसा कोई देश मुझे नहीं दिखायी देता, जहाँ सहोदर भाई मिल सके ॥

**- वा.रा.युद्ध कांड 101.15**

परित्यक्ष्याम्यहं प्राणान् वानराणां तु पश्यताम्। यदि पञ्चत्वमापन्नः सुमित्रानन्दवर्धनः।।

सुमित्राजी के आनन्दको बढ़ानेवाले लक्ष्मण यदि जीवित न रहे तो मैं वानरों के देखते-देखते अपने प्राणोंका परित्याग कर दूँगा।-

**किं नु वक्ष्यामि कौसल्यां मातरं किं नु कैकयीम्।**
**कथमम्बां सुमित्रां च पुत्रदर्शनलालसाम्।।**

लक्ष्मण के बिना यदि मैं अयोध्या को लौटूं तो माता कौसल्या और कैकेयी को क्या जवाब दूँगा तथा अपने पुत्र को देखने के लिये उत्सुक हो बछड़े से बिछुड़ी गायके समान काँपती और कुररी की भाँति रोती-बिलखती माता सुमित्रा से क्या कहूँगा ? उन्हें किस तरह धैर्य बँधाऊँगा?

**- वा.रा.युद्ध कांड 49.06 से 09-**

तत्तु मिथ्या प्रलप्तं मां प्रधक्ष्यति न संशयः। यन्मया न कृतो राजा राक्षसानां विभीषणः।।

मैं विभीषण को राक्षसों का राजा न बना सका अतः मेरा वह झूठा प्रलाप मुझे सदा जलाता रहेगा, इसमें संशय नहीं है।

**- वा.रा.युद्ध कांड 49.22**

आधी रात बीत गई। हनुमान नहीं आए हैं। लक्ष्मण को हृदय से लगाया। भैया, मुझे कभी दुखी नहीं देख सकते थे। मेरे हित वन के सब क्लेश सहे। उठो - जो जनतेऊं बन बंधु बिछोहू,पिता वचन मनतेऊ नहिं ओहू। पुत्र, धन, स्त्री, कुटुंब बारबार मिल जाते हैं परन्तु सहोदर भाई मिलना कठिन है। तेरे बिना कैसे जीऊंगा -

**जैहों अवध कवन मुंह लाई, नारि हेतु प्रिय बंधु गवाई।**

अब स्त्री और भाई दोनो की हानी सहूंगा -

**निज जननी के एक कुमारा, तात तासु तुम प्राण अधारा।**
**क्या जाने उस द्रोणागिरि तक, जा ही न सका कपिराई हो।**
**डूबा हो कहीं राह में ही, योद्धा है लज्जा आई हो।।**
**यदि लखनलाल के साथ साथ, उसने भी दुनियां छोड़ी है।**
**तब तो विधना तूने मेरी, दूसरी भुजा भी तोड़ी है।।**
**- राधेश्याम रामायण-**
**हो न सके अपने मन चीति पे ईस की चिति न देर लगावे।।**
**- 'कमल' (गजेन्द्र मोक्ष)**
**तात को सोच न मात को सोच,न सोच अवध के राज गए को ।**
**पंचवटी बनमाँझ छुटी नहिं सोच जटायु के पंख जरे को।**
**लछिमन के उर सक्ति लगी नहिं सोच है रावन सीय हरे को।**
**बारहि बार कहे रघुनाथ मोहिं सोच विभीषण बाह गहे को ।।**

सबको क्या मुंह दिखाऊंगा। प्रभु की यह दशा देखकर वानर व्याकुल हुए। रामजी विलाप करते हैं –

**कारणवश भाई भाई में, चाहे कितनी ही अनबन हो।**
**पर विपत पड़े पर भाई ही, देता है साथ एक मन हो।।**
**मिलजाते हैं विश्व में, मित्र कलत्र हजार।**
**लेकिन मिलता है नहीं, भाई बारंबार।।**
**लक्ष्मण से भाई को खोकर, धिक्कार राम के जीने पर।**

**हे ब्रह्मशक्ति दे छोड़ इसे, आजा अब मेरे सीने पर।।**
**तारे फीके पड़ चले, बीत चली है रात।**
**मुझे अकेला छोड़ तुम, कहां जारहे भ्रात।।**
**मैं बिना तुम्हारे ए भैया, किस तरह अवधपुर जाऊंगा।**
**जब मां पूछेगी लखन कहां, तो क्या कहकर समझाऊंगा।।**
**तुम इस मूर्छा में मरते हो, सीता मरती है लंका में।**
**माता और रहे सहे भ्राता, मरते हैं उधर अयोध्या में।।**

**इतनों को अगर मारना है, तो अपने प्राण तजो भैया।**
**अन्यथा सभी के जीवन हित, जल्दी से जाग उठो भैया।।**
**- राधेश्याम रामायण**

अपने मंत्रियों से बोले -

**इतना करना हम दोनो की, छातियां मिला देना भाई।**
**एक ही वस्त्र में दोनों को, कसकर लिपटा देना भाई।।**
**- राधेश्याम रामायण**

(लक्ष्मण इसलिए भी मूर्छित हुए कि राम को क्रोध आवे और राक्षसों को शीघ्र मारे।)

रामजी का विलाप सुनकर सभी बहुत दुखी हुए तभी हनुमानजी आगये। प्रभु प्रसन्न होकर मिले।

वैद्य ने चार जड़ी उखाड़ी -

विशल्यकरणी-जो शस्त्र की पीड़ा दूर करे।

संधानकरणी-टूटे मांस, हड्डी को जोड़े। सवर्णकरणी-उस स्थान और पूरे शरीर को वैसा ही कर दे।

मृत संजीवनी-प्राणों को सावधान करने वाली।

औषधी पिलाते ही लक्ष्मणजी प्रसन्न होकर उठे।

युद्ध में मृत वानर भी, औषध की सुगंध पाकर जीवित होगये। राक्षस नहीं क्योंकि राक्षसों को सागर में फेंक दिया था। जिससे रावण को यह न लगे कि राक्षस बहुत मरे।

*आज्ञाके अनुसार प्रतिदिन मरते-मरते ही समुद्रमें फेंक दिये जाते थे। ऐसा इसलिये होता था कि वानरोंको यह मालूम न हो कि बहुत-से राक्षस मार डाले गये ॥

**- वा.रा.युद्ध कांड 74.76**

सुषेण वैद्य को घर पहुंचाया।

*द्रोणाचल को पुनः अपने स्थानपर रखकर अयोध्या में भरतजी को लक्ष्मणजी के स्वस्थ होने का समाचार हनुमानजी ने दिया।

-आनन्द रामायण

*तत्पश्चात् प्रचण्ड वेगवाले पवनकुमार हनुमानजीने पुनः ओषधियोंके उस पर्वतको वेगपूर्वक हिमालयपर ही पहुँचा दिया और फिर लौटकर वे श्रीरामचन्द्रजी से आ मिले।

**- वा.रा.युद्ध कांड 74.77**

धूम्राक्ष, अकम्पन, प्रहस्त, महोदर, कुंभ, निकुंभ की मृत्यु से रावण अधिक दुखी हुआ। कुंभकर्ण को जैसे तैसे जगाया। समाचार कहे। कुंभकर्ण बोला

- उत्तर में चौकी क्यों नहीं बनाई।

- पुल क्यों बनने दिया।

- अकेले थे तब क्यों नही मारा।

- वाली की सहायता क्यों नहीं ली, सब वानर तुम्हारे होते।

सीता हरण सुन -

**दशकंधर के वचन सुनि, कुंभकर्ण बिलखान।**
**जगदम्बा हरि आनिके, शठ चाहसि कल्यान।।**

नारदजी से प्रभु के अवतार की बात सुन चुका था -

**हे दशशीश मनुज रघुनायक, जाके हनुमान से पायक।**
**(पायक- सेवक)**
**अहह बंधु ते कीन्ह खोटाई, प्रथमहिं मोहिं न जगायउ आई।।**
**अब गले मिल। मैं युद्ध करने जाता हूं। प्रभु का दर्शन करूंगा।**

मदिरा पिलाकर युद्ध में भेजा। विभीषण ने प्रणाम किया। बोला भैया, रावण ने लात मारकर भगाया था। कुंभकर्ण ने उठाकर गले लगाया। बोला, रावण काल वश है। किसी की नहीं सुनेगा। -

**धन्य धन्य ते धन्य विभीषण, भयउ तात निशिचर कुल भूषण।**
**बंधु बंस ते कीन्ह उजागर, भजेउ राम शोभा सुख सागर।।**

भीषण संग्राम हुआ। प्रभु ने वानरों को विकल देख शारंग से कुंभकर्ण की दोनो भुजा काटी।

(शारंग विष्णु भगवान का धनुष है। पहले पच्चीस पर्व युत एरंड वृक्ष प्रकट हुआ था। उसके नो पर्व से शारंग, सात से शिव का पिनाक, पांच पर्व से राम का कोदंड, तीन से गांडीव और एक पर्व से कृष्ण की बांसुरी हुई।)

मस्तक काटा। बिना मस्तक भी लड़ता रहा। धड़ को खंड खंड कर दिया। उसका तेज रघुनाथजी के मुख में समा गया। शंकरजी बोले -

**निषिचर अधम मलाकर, ताहि दीन निज धाम।**
**गिरिजा ते नर मंद मति, जे न भजहिं श्रीराम।।**
**(मलाकर- पापी)**

कुंभकर्ण का मस्तक रावण के आगे गिरा।–

**राज्येन नास्ति मे कार्यं किं करिष्यामि सीतया।**
**कुम्भकर्णविहीनस्य जीविते नास्ति मे मतिः।।**

रावण विलाप करने लगा अब मुझे राज्य से कोई प्रयोजन नहीं है। सीताको लेकर भी मैं क्या करूँगा? कुम्भकर्ण के बिना जीने का मेरा मन नहीं है॥

**- वा.रा.युद्ध कांड 68.17-**

तस्यायं कर्मणः प्राप्तो विपाको मम शोकदः । यन्मया धार्मिकः श्रीमान् स निरस्तो विभीषणः।। पश्चाताप किया मैंने धर्मपरायण श्रीमान् विभीषण को जो घर से निकाल दिया था, उसी कर्मका यह शोकदायक परिणाम अब मुझे भोगना पड़ रहा है।

**- वा.रा.युद्ध कांड 68.23**

रावण बहुत दुखी हुआ। देवों में हर्ष व्याप्त हुआ। उस समय -

**छीजहिं निशिचर दिन अरु राती, निज मुख कहे सुकृत जेहि भांती।**
**(छीजहिं- क्षीण)**
**बहु विलाप दशकंधर करई, पुनि पुनि बंधु शीश उर धरई ।।**
**मेघनाद ने समझाया। कल मेरा पराक्रम देखना।**

माया की सीता बनाकर मेघनाद रणभूमि में ले गया। बोला, जिसके कारण लड़ाई है उसे ही समाप्त कर देता हूं। यह कह, मस्तक काट दिया। महावीरजी और अन्य वानरों के आक्रमण करने पर भागकर लंका में गया। रामजी यह समाचार सुन बहुत दुखी हुए। बोले -

**लक्ष्मण सिय बिन अब नहीं, हम करिहैं संग्राम।**
**नारि पवित्र जगत में, जहं तहं मिलत न वाम।।**

मुझ जैसे पति को पाकर भी अनाथ की तरह मरी है-

**अब सुख कौन अवधपुर जैहौं, माता कहं उत्तर कह दैहौं।**

मूर्छित हो गए। विभीषण ने समझाया। नाथ यह माया की सीताजी थी। आप चिंता मत करो।उनकी ओर कोई देख भी नहीं सकता। हनुमानजी गुप्त रूप से लंका जाकर सीता की खोज कर आए। तब प्रभु को धीरज हुआ।

मेघनाद ने फिर आकर भीषण संग्राम किया।वानर कटक बेहाल कर दिया। प्रभु को नागफास में बांध दिया। जो जगत के फंद छुड़ाते हैं वे भक्तों के हित बंधन भी स्वीकार करते हैं। शंकरजी बोले उमा रामजी के चरित्र तर्क से परे हैं। बस भजन करो। जामवंत ने पैर पकड़, मेघनाद को लंका में फेंक दिया। देवों ने गरुड़ को भेज प्रभु के बंधन कटवाए। गरुड़जी को इससे अभिमान हुआ जिसकी कथा का आगे वर्णन होगा पार्वतीजी के पूछने पर शंकरजी बोले। एक बार मेघनाद ने देवी को प्रसन्नकर एक अदृश्यचारी विमान पाया था। देवी बोली कि इसे छुपाकर रखना। जब कठिन संग्राम हो तभी उपयोग करना। किंतु चेताया भी था-

**जो त्यागे द्वादश बरस, नींद अन्न अरु नारि।**
**तासों मत करियो समर, सो तोहिं डारै मारि।।**

एक बार इंद्र को पकड़ लंका लाया। ब्रह्माजी ने छुड़ाया। ब्रह्मशक्ति वर दिया। जिसको लगेगी एक रात में उपचार नहीं हुआ तो प्राण ले लेगी।

एक बार वासुकी को पकड़ लाया। अपनी पुत्री सुलोचना ब्याहने की शर्त पर छोड़ा।

वानरों ने निकुंभिला में यज्ञ विध्वंस किया। भीषण युद्ध में लक्ष्मण के हाथों मेघनाद का वध हुआ। मरती बार-

**राम अनुज कहि राम कहि, अस कहि छाडेसि प्रान।**
**धन्य शक्रजित मातु तव, कह अंगद हनुमान।।**
**(शक्रजित- इंद्रजीत)**

हनुमानजी उसकी काया लंका के द्वारपर रख आए। रामजी ने सुग्रीव से मेघनाद का मस्तक संभालकर रखवाया। देवों ने लक्ष्मण की प्रशंसा की। पुष्प बरसाए।

लक्ष्मणजी के बाण से रक्तरंजित भुजा मेघनाद के आंगन में गिरी। भुजा देख सुलोचना दुखी हुई। सोचा मेरा देवविजयी पति-

**नींद नारि भोजन परिहरई, बारह वर्ष तासु कर मरई।**

जो यह भुजा अपनी कथा लिखे तो मानू। सेविकाओं ने खड़िया पकड़ाई तब भुजा ने मणिमय आंगन में लक्ष्मणजी की कीर्ति और रघुनाथजी के विरद का लेख किया। सुलोचना ने विलाप किया। गहने तजे। पृथ्वीपर गिरगई।सखी के समझाने पर भवन में जा दान किया। बोली, अब देव, दिकपाल, अग्नि, इंद्र, पवन सब सुख से विचरेंगे।

भुजा रथ में रखकर पति के पास चली। विलाप करती जनता साथ चली। ढोल नगाड़ों का शोर था। रावण के सामने जाकर विलाप किया। महा अभिमानी ने समझाया। रुको अभी मैं बदला लेकर आता हूं।-

**मेरु उखारन हार जे, धरा धरत कर बीच।**
**ते भट खाए मशकशिशु, कालकुटिलता नीच।।**
**(मशकशिशु- मच्छर समान वानर)**

रावण को धिक्कार कर, मंदोदरी के पास गई। उसने कहा रावण मरते दमतक अपनी हठ नहीं छोड़ेगा। रीछ वानर आनंद मनाएंगे। विभीषण अखंड राज्य करेगा। तुम राम से अपने पति का सिर मांग लाओ। संकोच मत करो -

**आजु न होय लाज तव भूषण, समय हीन गुण गणिय न दूषण।**
**(लाज- लज्जा करने का समय नहीं है)**

विभीषण तुम्हारे श्वसुर हैं। रामजी एक नारी व्रती। लक्ष्मणजी यती, अंगद मेरे पुत्र सा, हनुमानजी शिव स्वरूप हैं। बाकी सब रामरुखी हैं। वहां जाने में संकोच मत करो।

पालकी में बैठ सुलोचना सागर तट गई। पहले तो सब प्रसन्न हुए। अंततोगत्वा रावण को सद्‌बुद्धि मिली। जानकीजी को भेज दिया। लड़ाई खतम।

*सुलोचना की पालकी को सीताजी समझ सभी ने सोचा कि अब रावण ने हार मानली ओर सीताजी को भेज दिया। अब क्या होगा।विभीषण को लंका का राज्य दिया है। उसे कहां का राज्य देंगे। रामजी बोले –

**बोले हम भारत वासी हैं, शरणागत को न भुलाएंगे।**

**इनको लंकेश बनाया तो, उनको अवधेश बनाएंगे।।**

**- राधेश्याम रामायण**

सुलोचना उतरी, रामजी का यशगान किया -

**निरखत युग चरणम अशरणशरणम तारण तरणम भय हरणम।**
**जगकारण करणम पोषण भरणम खलदलहरणम दुख टरणम।।**
**घनश्यामस्वरूपं अतिहि अनूपं सुरवरभूपं नररुपं।**
**जेहि निगम निरूपं अकल अनूपं कीन्ह कुरुपं नखशूपं।।**

सती होने के लिए पति का मस्तक मांगा। रामजी रोने लगे। बाबा कहते हैं –

**अस प्रभु दीन बंधु हरि, कारण रहित दयाल।**
**तुलसिदास शठ ताहि भजु, छांडि कपट जंजाल।।**

अपने को संयतकर उसके व्यवहार से प्रसन्न होकर रामजी ने कहा इसे जीवित कर दूं। सुलोचना ने कृपा गान किया-

**निर्मल गति अवसर भयउ, सुनहु सत्य रघुवीर।**
**तुमहीं मिल नहिं होई भव, यथा सिंधु गत नीर।।**

सिर पकड़कर विलाप किया। आंचल से धूल झाड़ने लगी।

सुग्रीव को अचरज हुआ कि बिना जीव के भुजा कैसे लिख सकती है। यदि यह सिर हंसे तो मानूं।

सुलोचना ने कहा तो नहीं हंसा। बोली यदि आप कहते तो सहायतार्थ अपने पिता वासुकी को बुला लेती। यह सुनकर सिर हंसा। सब ने अचंभा माना। सब ने रामजी से पूछा सिर कैसे हंसा। प्रभु बोले -

**मन क्रम वचन पतिहिं सेवकाइ, तियहित इहिसम असन उपाई।**

नारी के कल्याण का कोई अन्य उपाय नहीं है-

**अस जियजानि करहिं पति सेवा, तिहि पर सानुकूल मुनि देवा।**
**यह सतवति अहि राजकुमारी, तेहि सत ते हंसि शीश सुरारी।**

**(सुरारी- देवों के शत्रु का)**

विभीषण के निर्णय की प्रशंसा कर, विदा हुई। सब रावण का वैर बिसर गए। लंका की नदी और सागर संगम पर रावण, मंदोदरी सब एकत्रित हुए। दिव्य चिता पर बैठकर, योगाग्नि से सुलोचना हरिधाम गई। रावण भी बहुत दुखी हुआ। फिर विलाप करती नारियों को समझाया। बाबा गाते हैं-

**पर उपदेश कुशल बहुतेरे, जे आचरहिं ते नर न घनेरे।।**

रावण को मंत्रियों ने काल कर्म का ज्ञान दिया।
शिव भक्त रावण ने शिव मंदिर में जाकर आकर्षण मंत्र से अहिरावण का ध्यान किया।
अहिरावण आया। रावण नें पास बैठाया। सब कथा, व्यथा कही। अहिरावण बोला -

**बिना बिचारि रारि तुम ठानी, कीन्ह सेन कुल सर्वस हानी।**

**मनुज प्रताप प्रभाव न जानेउ,सबते बड़ तेहि लघु करि मानेउ।।**

**मूल रामायण 34-**

**निशिचर निकर मरण विधि नाना,रघुपति रावण समर बखाना।**

पार्वतीजी के पूछने पर शिवजी अहिरावण की कथा कहने लगे -

हे पार्वती, मंदोदरी को एक अजीब सी बीस सांप युक्त संतान हुई। रावण ने अपने श्वानानन नामक सेवक को भेज इसे भूमि में गड़वा दिया। यह माटी खोदकर खाता रहा। सागर तक पहुंचा। राहू की मां सिंहिका ने पालन किया। शुक्राचार्यजी ने कहा, यह रावण का पुत्र है। अहिरावण नाम रखा। अपनी उत्पत्ति कथा सुन सागर में कूद, वितल में गया जहां दर्विकर का राज्य था।

पुराण कथा से तप महिमा जानकर, नदी तटपर कामदादेवी का जाप करने लगा। चौदह हजार वर्ष के तप से देवी प्रसन्न हुई। अमरता का वर मांगा। देवी बोली तथास्तु किंतु -

**त्रेता शेष समय दशशीशा, याचै तोहिंजोरि भुज बिसा।**
**मारे तुम्हें न कोउ जग माहीं, कपि इक मम वाचा वश नहीं।**
**तेहि प्रभु ते जनि किएहु कुचाली,तौ तू अजर अमर कहि चाली।**

इसके अत्याचार से त्रस्त होकर दर्विकर अनंत के पास गया। उनके कहने पर अपनी कुंदनी नामक कन्या ब्याही। अलग राक्षस नगरी बसाकर राज किया।

इधर रामादल की सुरक्षा हनुमानजी के सुपुर्द थी। अपनी पूंछ को डेरे के चारों ओर सर्प की कुंडली की भांति लपेट रखा था। अंदर जाने का कोई उपाय न देख अहिरावण विभीषण का कपट वेश धरकर आया। बोला मैं संध्या की अनुमति लेकर गया था। महावीरजी ने विश्वास किया।-

**सत्य वचन कपि निज मन माना, सुनु खगेस भावी बलवाना।**

सोतेहुए रघुवीर को प्रणाम किया। सम्मोहन मंत्र पढ़, दोनो को उठा, आकाश मार्ग से ले चला। रावण की प्रतीति हेतु विलक्षण प्रकाश किया।

प्रातः रामजी को न पाकर दल में हाहाकार मच गया -

**शोधेउ सब मिलि कटक तिन, नहिं पाए दोउ वीर।**
**भय व्याकुल सब भालु कपि, जिमि जलचर गत नीर।।**

हनुमानजी के रात्रि का हाल कहनेपर विभीषण बोले अहिरावण ले गया -

**पन्नगलोक निवासी सोई, मम तनु वेश और नहिं कोई।**
**बिलखि कहेउ कपिपति बहुरि, सुनु मारुत सुत तात।**
**विनु रघुनायक जन्म धिक, पल युग सरिस बिहात।।**
**यथा तृषित बिनु वारिद वारी,रवि बिनु जलज मीन बिनु वारी।**
**(वारी- बाड़ी)-**
**भट अशस्त्र रण अनी अनाथा, वह्नि अनिंधन गात न माथा।**

(अनी- सेना, अनाथा- बिना नाथ के, वह्नि- अग्नि, अनिंधन- ईंधन बिना, गात- शरीर)-

**दीप अवर्ति सकल क्षण भंगी, तिमि हम सब देखिय बजरंगी।**
**(अवर्ति- बत्ती, क्षणभंगी- क्षण भंगूर)**

हनुमानजी बोले -

**भुवन चारि दस तीनहुं लोका, आनहुं प्रभुबल प्रभु तजु शोका।**
**(प्रभुबल- आपके प्रताप से)**

मार्ग में गिद्ध और गर्भिणी गिद्धनी की वार्ता सुनी। वह नर मांस मांग रही थी। गिद्ध बोला अहिरावण राम-लक्ष्मण की बली देगा। उनका मांस तुझे दे दूंगा।

पाताल में द्वारपर हनुमानजी को मकरध्वज ने रोका-

**निदरि जात मोहिं तोहिं डर नाहीं, दीपहिं जिमि न पतंग डराही।**
**जानसि मोहिं मरूत सुत बालक, स्वामिभक्त भंजन मुख कालक।**

हनुमानजी विस्मय करके बोले -

कहत वचन शठ संयुत खोरी, काम विवश कब भइ मति मोरी।

**(संयुत खोरी- दोष युक्त वचन)**

अपनी जन्म कथा कहो -

**सुनत कहत मकरध्वज वचना, कियेउ दाह रावण पुर रचना।**
**जब आयउ चलि उदधि समीपा, बहेउ स्वेद तव तनु कपि दीपा।**
**सोई प्रस्वेद सागर मंह गयऊ, पियेऊ मीन तेहिते मैं भयऊं।**
**(प्रस्वेद- पसीना)-**
**इहि प्रकार मैं तव सुत ताता, गोपहुं नहिं निज पिता न माता।**
**(गोपहुं- गोपनीय रखना, छुपाना)**

पूछने पर बताया कि आज होम है और राम- लक्ष्मण की बली दी जावेगी। मैं स्वामी आज्ञा से बंधा हूं। आपको भीतर नहीं जाने दूंगा। दोनों में युद्ध हुआ। अंत में उसकी ही पूंछ से उसे बांधकर हनुमानजी भीतर गए। तभी -

**मालिनि तहं प्रसून लै आई, सुमन मध्य प्रविषेऊ कपिराई।**
**सुमनहुंते करि अति हलुकाई,लेत पाणि जेहि जानि न जाई।**
**जब देविहिं सो पुष्प चढ़ायउ,विकट रुप तव कपि दिखरायउ।**

चरण छूते ही देवी धरती में समा गई। कपि मुंह फाड़कर खड़े हो गए। इतना विकराल रुप कि देखकर डर लगता था।

राक्षस बोले, तपस्वी, अंत समय में किसी को याद करना हो, नाम जपना हो तो जप लो-

**फणिपति चितवत राम कंह, राम चितव अहिराज।**
**प्रभु कर कौतुक कहिय किमि, सुनो दशा खग राज।।**
**(फणिपति- अहिराज, लक्ष्मण, शेष)-**
**बिहंसि कीन्ह प्रभु हृदय बिचारा, जपै सकल जग नाम हमारा।**

आज मैं बजरंगी का स्मरण करता हूं। यह सुनते ही अट्टहास कर बजरंगबली प्रकटे। दोनो भाइयों को कंधे चढ़ा जैसे किसान खेती काटता है वैसे राक्षसों की गर्दन काटी। अहिरावण के बड़े बोल और तलवार का वार सह, उसी तलवार से उसका वधकर, होम पूर्ण किया। मकरध्वज को मुक्तकर वहां का राजा बनाया। रामादल में लोटे-

**मृतक शरीर प्राण जिमि आवहिं, मणि निज पाय फणी सुख पावहिं।**
**बिछुर अलभ्य मिले जनु आई, तिमि हर्षे सब लखि दोउ भाई।**

सुग्रीव, जामवंत, विभीषण, भालू, कपि सब मिले। श्रीराम ने हनुमानजी की प्रशंसा की -

**तव समान नहिं कोउ हितकारी, सुर मुनि सिद्ध मनुज तनु धारी।**

तुम्हारा यश त्रिभुवन में व्याप्त होगया है।

हनुमान बोले -

**नाथ कीन्ह सब मैं केहि लेखे, तरणी चलत अगम जल देखे।**
**(नाथ कीन्ह सब- नाथ ने सब किया, तरणी- नाव, अगम- गहरा)**

सब से मिले। देवों ने पुष्पवृष्टि की। भरद्वाजजी के पूछने पर याज्ञवल्क्यजी बोले, अहिरावण के वध के समाचार पाकर, रावण बहुत दुखी हुआ-

**वचन वज्र सम लागे ताही,संभ्रमि मूर्छि परेउ महि माही।**
**(संभ्रमि- संभ्रमित होकर, चक्कर खाकर)**

मंदोदरी ने समझाया। तभी विभीषण के साथ रहने वाला मंत्री सिंधुरनाद आया। ज्ञान दिया, पर रावण की विपरीत बुद्धि देख सोचा, अब इसका शीघ्र विनाश हो यही उचित। बोला, अभी आपके कुल में, अक्षादिक से बली विद्यमान हैं।

क्यों चिंता करते हो। रावण ने पूछा कौन ? तब नारांतक का नाम बताया जिसे अभुक्त मूल नक्षत्र में जन्म लेने के कारण, बहा दिया था। वह बच गया। बिहबावलपुर में रहता है। वहां सभी समान बलशाली है। किसी श्रेष्ठ दूत को भेजकर बुलाओ। रावण ने प्रसन्न होकर धूमकेतु को भेजा।

गरुड़जी के पूछने पर काकभुशुण्डिजी बोले। एक बार लंका में, एक ही मुहूर्त में, बहत्तर करोड़ बालकों ने, राक्षसों के घर जन्म लिया। शुक्राचार्य के बताने पर कि ये सब अभुक्त मूल में जाए हैं और पिता के लिए अनिष्टकर हैं। इन्हें समुद्र में डाल दो। रावण आज्ञा से, सब को एक ही स्थान पर, मधुमक्खियों की तरह डाल आए। होनहार बलवान। वे वटवृक्ष से चिपट, सात वर्ष, वट का दूध पीने से पुष्ट हुए। फिर एकसाथ गंगा संगम में जा बैठे। शिवजी के दर्शन कर, लंका से पूर्व की ओर छह सो कोस दूर जाकर, शिव भजन करते, शुक्राचार्यजी के पास गए। अपनी उत्पत्ति कथा जान, उनकी आज्ञा से, ब्रह्माजी की प्रार्थना करने लगे। कठिन तप से प्रसन्न ब्रह्मा प्रकटे। बोले वर मांगो। मांगा -

**नाथ चहत हम यह वरदाना, हमहिं न कोउ जीतै मैदाना।**

एवमस्तु कहा पर -

**हरि सुत है तुम्हार गुरु भाई, तेहि सन किएहु न कबहुं लराई।**

(हरि सुत- सुग्रीव का बेटा)

नारांतक को यह वर दे औरों को रीछ वानर को छोड़, अन्य से अभय वर दिया। प्रणाम कर, तप करने लगे। सर नीचे, पैर ऊपर कर, हाथ जोड़, दस हजार वर्ष तप किया। तब बेल पर सवार होकर, शिव पार्वतीजी प्रकटे। बोले वर मांगो। मांगा -

**मोहिं विभव अस देहुं गुसाईं, भूप प्रजा नहिं परहिं लखाई।**
**(भूप प्रजा नहिं परहिं लखाई- राजा प्रजा में भेद न हो)-**
**पुर अनयास बसहि मम नाथा, यह कहि रहा जोरि युग हाथा।**

नारांतक ने शिवकृपा से अंतरिक्ष में बिहबावलपुर बसाया। अद्भुत। बहत्तर करोड़ घर, एक की समय। जिस वैश्य के पास एक पद्म धन था उसे तुच्छ गिना जाता था। फिर सब विद्या पढ़ने लगे। हरि इच्छा से वहां एक दधिबल नामक वानर पढ़ने आया। एक वर्ष पढ़ा। एक दिन गुरु ने श्राप दिया। जा तू अपने गुरु भाई को मारने वाला होगा। दधिबल विदा मांगकर चला। नारदजी से मिलन हुआ। उन्होंने हरि भजन की प्रेरणा दी।

बिंदु नाम राक्षस ने अपनी बिंदुमति, नारांतक और अन्य बहत्तर करोड़ कन्याएं, उसके साथियों को ब्याही। बिंदुमती के गुणों की चर्चा बुद्धिमानों की सभा में होती थी -

नारि पतिव्रत जेहि घर माहीं,तेहि प्रताप नित अमर डराहीं।

धूमकेतु (रावण का दूत) बिहबावलपुर की संपदा देख चकित हुआ। जैसे तैसे नगर में प्रविष्ट होकर, नारान्तक के दिव्य दरबार में जाकर पाती दी। पढ़कर नारान्तक घर गया। पत्नी को बताया। उसने राम से लड़ाई न करने को कहा। बोली, चरण शरण लेकर, जीवन धन्य करो। नहीं माना। निशान बजा, राक्षसों का कटक लेकर चला। बिंदुमती भी, सास श्वसुर के दर्शन हित, अपनी सहेलियों के साथ चली।

इधर राम ने, दक्षिण की ओर, सघन बादलों को देख, अपने मंत्रियों से मंत्रणा की। विभीषण
बोले -

**देवदेव नहिं दल जलवाहा, अहहिं नरांतक निशिचर नाहा।**
**(जलवाहा- बादल)**

भगवान हंसे। हनुमान कोप करके उस तरफ दौड़े। दूत से नरांतक ने पूछा, यह स्वर्ण शैल सा कौन है। बोला-

**सिंधु लांघि लंका दहेसि, पुनि हति अक्ष कुमार।**
**कालनेमि कहं मारि मग, लावा शैल उपार।।**

यहिकर भुज बल अहै अपारा,सुनि रिसान दशकंठ कुमारा। मारने दौड़ा। हनुमानजी ने दौड़कर, धनुष बाण पकड़, चूर दिए। पूंछ में लपेट, घुमाकर दे मारा। वर से मरा नहीं। राक्षस मारे। भीषण संग्राम मचा। हनुमानजी को अकेला देख अंगद दौड़े आए। संध्या समय सब लोटे। प्रभु को प्रणामकर चरण सेवा करने लगे। देवों को सोच हुआ। हम भी बानर होते तो लाभ लेते।

नारांतक सेना सहित रावण के पास जाकर, बल बखानने लगा। कल भाइयों का बदला लूंगा। रावण प्रसन्न हो घर गया। बिंदुमती मंदोदरी के पास गई। रावण घर गया तो मंदोदरी ने समझाया –

**नाथ निगम आगम विबुध, कहत प्रकट यह बात।**
**बुधजन सो जो आधहूं, राखे सरवस जात।।**

(निगम- वेद, आगम- शास्त्र, विबुध- पंडित)-

**तजई न हठ शठ सरवस खोवै, यद्यपि अंत शीश धुनि रोवै।।**
**प्रभुपद गहि मांगहु वर एहू, पद पंकज रति विमल सनेहू।**

नहीं माना, युद्ध ठाना। महा भीषण रण हुआ। राक्षसों को ले अंगद सूर्य मंडल तक गए। जला दिया। नीचे आए तो निशाचरों ने त्रिशूल से उन्हें घायल किया तब राम आज्ञा से, लक्ष्मण युद्ध करने आए। उन्होंने राक्षसों की धुनाई की -

**उड़हिं अकाश शीश भुज कैसे, धुनकत तूल रोम कण जैसे।**

(धुनकत तूल रोम कण जैसे- जैसे धुनते समय बारीक रुई उड़ती है)

दुष्ट नारांतक ने, रामजी पर वाणवर्षा की। कोपकर जामवंत ने उसके त्रिशूल के वार को बचाया और उसे बांधकर रेत में गाड़ दिया। फिर पैर पकड़ लंका में फेंक दिया। वह जागा। लज्जित होकर पुनः आया। महा भीषण संग्राम में अंगद हनुमान का पराक्रम देख प्रभु बोले -

**तुमहिंं सुमिरि अंगद हनुमाना, जितिहैं जगत मनुज रण नाना।**

राक्षसों की प्रबलता देख, रामजी शिवजी का यशगान करने लगे।-

**जे सुमिरहिं शिव सह उमा, ते जानहुं मम प्रीय।**
**शंकर भजहिं ते मोहिं प्रिय, मोहिते शंभु अतीय।।**

तब नारद मुनि रामादल में आए। प्रणाम करके कहा कि सुग्रीव का पुत्र दधिबल, तप कर रहा है। हनुमान को भेजकर उसे बुलाओ। वही नारांतक को मारेगा। आज्ञा पाकर हनुमानजी गए। लाए। दधिबल ने नारांतक को समझाया। किंतु न मानने पर युद्ध हुआ। सुग्रीव और जामवंत में दधिबल के बलपर संवाद हुआ। जामवंत ने श्राप का स्मरण करवाया। राक्षस अस्सी हजार योजन ऊपर लेगया। दधिबल ने राम का स्मरण कर नीचे फैंका जिससे नारांतक का वध हुआ। मरती बार राम नाम उच्चारण से वह मुक्त हुआ।

गरुड़जी कहते हैं -

**देखि तासु गति विबुधगण, अभय भए खग राइ।**
**प्रमुदित वर्षे पुहुप झरि, राम चरण चित लाइ।।**

(विबुधगण- देवता, पुहुप झरि- फूलों की झड़ी)

दधिबल नारांतक का मस्तक लेकर (धड़ लंका में फेंक कर) रामजी के पास आया। प्रणाम कर, नारांतक का सिर चरणों में रखा जिसे रामजी ने सुग्रीव से संभालकर रखने को कहा। दधिबल की भूरि प्रशंसा कर, वर मांगने को कहा। दधिबल बोला-

**नाथ तुम्हार रूप गुण नामा, करहिं निरंतर मम उर धामा।**
**हो मोहि प्रिय पद पंकज ऐसे, कामिहिं वाम सूम धन जैसे।**

रामजी बोले इसके अतिरिक्त भी मैं कुछ देना चाहता हूं –

**बिहबावलपुर राज, करहुं तात तुम मुदित मन।**
**छांडि और सब काज, शिवा शंभु पद भक्ति दृढ़।।**

वह प्रभु स्मरणकर राज्य करने लगा। उधर नारांतक देह देख, रावण और रनिवास कलाप करने लगा। वर्णन नहीं किया जा सकता।

मंदोदरी ने बिंदुमती को, सुलोचना की गति कहकर, राम के पास भेजा। वह अपनी सखी चित्ररेखा के साथ, पालकी में सवार होकर रामादल की ओर गई। नल-नील ने रोका। बोली हम दर्शन की अभिलाशिनियां हैं। अनुमति नहीं मिली। पास जाकर विनती की -

**प्रभु सीतापति जगत पति, सुर नर पति रघुनाथ।**
**देउ दरश करुणायतन, दीन बंधु श्रुतिमाथ।**
**(श्रुतिमाथ- वेदों के मान रक्षक)**

इतने पर भी दर्शन नहीं दिए तो बोली -

**तारि तारि अधमनि अमित,बार बार श्रम जान।**
**ताते करत अनाकनी, मोरि और भगवान।।**

वृंदा, शबरी, अहिल्या का उद्धरण देकर विरद स्मरण करवाया। प्रभु रीझे, पास बुलाया। प्रसन्न होकर कहा, जाओ अपने पति के संग आराम से रहो।

बोली जिन चरणों को शिव, पार्वती, नारद, योगी इतने निकट से नहीं देख पावे वो सुख हमें मिला। अब -

**हरि दर्शन लवलेश प्रमाना, जग के सब सुख नाहिं समाना।**
**अमिय अघाइ गरल को खाई, विनय हमारि यहै सुर साई।**

हमारे पति का सिर देदो। रामजी ने सादर सिर दिया। बोली लकड़ी नहीं है। रामजी ने वानरों से लकड़ी, अगरू, चंदन का प्रबंध करवाया। विभीषण ने वैर बिसुर, सुलोचना के ही स्थानपर चिता बनाई। बिंदुमती की चौदह सोतों ने भी उसका अनुसरण किया। रावण को आता देख, राम ने विभीषण को वापिस बुलाया। मंदोदरी आदि राक्षसियों के सहित रावण बहुत दुखी होकर रोने लगा। सोलह सतियां चिता में प्रवेश कर स्वर्ग सिधारी। लंका में अंधकार छा गया-

**राम बिरोधहि जस उचित, तस दिन पहुंचा आइ।**
**सो विचार करि लंकगढ़, उतरी विपति बजाई।।**
**(विपति बजाई- विपत्ति डंका बजाकर उतरी)**

लंका में विपत्ति का डेरा है और इधर रामजी की आज्ञा से, वानर शिवा शिव का भाव से कीर्तन करने लगे। मुख से सब डमरू, मृगी, श्रृंगी, ताली, गोंडर, तंतु, वेणु, शंख, मंजीरे बजाते है। सब गाते हैं-

शिव सम को भगतन सुखदाई।

**भीर देवतन पर जब जानी, कीनो गरल पान हरशाई।**
**बाणासुर को सहस भुजा दी, त्रिपुर दैत्य मारो रिसियाई।।**

शिव सम...

शिव सम....

यहां कीर्तन के बाद सब आनंद से सोते हैं। वहां रावण ने पूरी रात बकते झकते बिताई और सुबह युद्ध करने चला। बोला, जिसे भय हो अभी घर जावे। रण में विमुख होना कायरता है। मैंने वैर बढ़ाया है, मैं ही निपट लूंगा। भीषण

कटक चला। अपशकुन होने लगे -

**अतिगर्व गनत न शकुन अशकुन स्रवहिं आयुध हाथ ते।**
**भट गिरहिं रथ तें बाजि गज चिक्करहिं भाजहिं साथ ते।।**
**गोमायु गीध कराल खररव श्वान रोवहिं अति घने।**
**जनु काल दूत उलूक बोलहिं वचन परम भयावने।।**
**(गोमायु- गीदड़)**

क्यों -

**ताहि कि संपत्ति शकुन शुभ, स्वप्नेहु मन विश्राम।**
**भूत द्रोह रत मोह वश, राम विमुख रत काम।।**
**(भूत द्रोह- प्राणियों से वैर)**

चतुरंगिनी सेना के कारण, धूल के उड़ने से रवि अदृश्य हो गए। निशाचरों की गर्जन सुन, रामजी की सेना भी जय जयकार करती चली। विभीषण ने देखा -

**रावण रथी विरथ रघुवीरा, देखि विभीषण भयउ अधीरा।**

बोले -

**नाथ न रथ नहिं तनु पदत्राना, केहिविधि जीतब रिपु बलवाना।**

रामजी बोले -

**सुनहुं सखा कह कृपा निधाना, जेहि जय होय सो स्यंदन आना।**
**(स्यंदन- रथ, आना- दूसरा है)-**
**शौरज धीरज तेहि रथ चाका, सत्य शील दृढ़ ध्वजा पताका।**
**(शौरज- शौर्य, चाका- पहिए)-**
**बल विवेक दम परहित घोरे, क्षमा दया समता रजु जोरे।**
**(विवेक- कामादि शत्रु जीतने का ज्ञान, दम - इंद्रिय निग्रह, घोरे- घोड़े)-**
**ईश भजन सारथी सुजाना, विरति चर्म संतोष कृपाणा।**
**(ईश भजन- शंकर भजन, चर्म- ढाल)-**
**दान परशु बुधि शक्ति प्रचंडा, वर विज्ञान कठिन कोदंडा।**
**(वर विज्ञान- उत्तम ज्ञान, कोदंडा- धनुष)-**
**संयम नियम शिलीमुख नाना, अमल अचल मन तूण समाना।**

(संयम- अनर्थों का त्याग, नियम- वेद विहित अर्थों का पालन, शिलीमुख- बाण, अमल- निर्मल, तूण- तरकस)-

**कवच अभेद विप्र गुरु पूजा, इहि सम विजय उपाय न दूजा।**
**सखा धर्ममय अस रथ जाके, जीतन कहं न कतहुं रिपु ताके।**

हे सखा, संसार रूपी शत्रु से वही वीर जीत सकता है जिसके पास ऐसा दृढ़ रथ हो।

विभीषण ने ज्ञान पाकर प्रणाम किया।

घोर संग्राम आरंभ हुआ। भालू कपि राक्षसों की गर्दन तोड़ते हैं फिर उसी गर्दन से दूसरों पर वार करते हैं। अंगभंग करते, रेत में गाड़ देते।

बाबा लिखते हैं -

**धरि गाल फारहिं उर बिदारहिं गल अंतावलि मेलहीं, प्रहलादपति जनु बिबिध तनु धरि समर अंगन खेलहीं।**
**धरू मारु काटु पछारू घोर गिरा गगन महि भरि रही, जय राम जो तृण ते कुलिश कर कुलिश ते तृण कर सही।।**
**(धरि- पकड़, तृण- वानर भालु, कुलिश- वज्र)**

अपने दल को विचलित देख, रावण क्रोधकर, आगे आ, दसों धनुष से भीषण बाण चलाने लगा-

**संधानि धनु शर निकर छाडेसि उरग जिमि उड़ि लागहीं।**
**रहे पूरि शर धरणी गगन दिशि विदिशि कहं कपि भागहीं।**
**भा अति कुलाहल विकल दल कपि भालु बोलहिं आतुरे।**
**रघुवीर करुणासिंधु आरत बंधु जन रक्षक रहे।**
**(निकर- बाणों के समूह, पूरि शर- भरगए, छागए)**

तब लक्ष्मणजी कोप करके चले -

**रे खल का मारसि कपि भालू, मोहिं बिलोकु तोर मैं कालू।**

रावण बोला -

**खोजत रहेउ तोहिं सुत घाती, आजु निपाति जुड़ावौं छाती।**
**(निपाति- मार कर, जुड़ावौं- ठंडी करूंगा)**

भीषण संग्राम हुआ। रावण ने ब्रह्मशक्ति चलाई।

घायल लक्ष्मण को रावण उठाने लगा। मूढ़। जो रजसम धरा धारण करते हैं, उन्हें उठाने लगा। तभी हनुमानजी आए। रावण के मुष्टि प्रहार से जानू टिकाकर बैठ गए। हनुमानजी के मुष्टिक प्रहार से दशानन गिरिश्रृंग सा गिर पड़ा।

हनुमानजी लक्ष्मणजी को रामजी के पास ले गए।

रामजी ने कहा लक्ष्मण, क्यों बार बार शक्ति की व्यथा सहते हो। तुम तो काल भक्षक हो। अपने बल का स्मरण करो। लक्ष्मण उठे और रण में जाकर रावण पर भीषण बाण वर्षाकर घायल करदिया। सारथी घर ले गया।

रात में (चैत्र कृष्ण दशमी को) यज्ञ करने लगा। बाबा लिखते हैं -

**वहां दशानन जागि करि, करन लाग कछु यज्ञ।**
**जय चाहत रघुपति विमुख, काल विवश शठ अज्ञ।।**
**(अज्ञ- मतिहीन)**

विभीषण ने रामजी को सूचित किया। बानर गए। बोले -

रण ते भाजि निलज गृह आवा,इहां आई बक ध्यान लगावा।

यज्ञ ध्वंसकर बानर लोटे। यज्ञ देवताओं ने कहा था कि यज्ञ ध्वंस से उसका नाश होगा। मन से हारगया। फिर भी कोपकर, सैनिकों संग चला। अपशकुन हुए।-

**प्रभु सम्मुख खल धावहिं कैसे, शलभ समूह अनल कहं जैसे।**
**(शलभ- पतंग, अनल- अग्नि)**

देवों ने प्रभु से विनती की। है नाथ इसने हमे बहुत त्रास दिया है -

**अब जनि नाथ खेलावहुं एही, अतिशय दुखित होत वैदेही।**

रामजी मुस्काए। जटा जूट बांधा। कटि निशंग। कमर में दुपट्टा। तरकस। शार्ंग धनुष –

**हर्षे देव विलोकि छवि, वर्षहिं सुमन अपार।**
**जय जय प्रभु गुण ज्ञान बल, धाम हरण महि भार।।**

महा संग्राम छिड़ गया। रामजी के तीरों से निशिचर दल विकल हुआ। युद्ध की विभत्सता का वर्णन नहिं किया जा सकता। सात दिवस, रात्रि तक, रघुनाथजी के धनुष का घंटा बजता रहा।

*घंटा प्रमाण - जब दस हजार हाथी सवार, दस लाख घुड़ सवार, डेढ़ सो रथी, दस करोड़ पैदल मरे तब एक कबंध रण में उठकर नाचता है। जब करोड़ कबंध नाचे तब एक खेचर उठता है। जो आकाश में बिना सिर के फिरता है।

जब करोड़ खेचर उठते हैं तब एक घंटा बजता है।

रामजी को पैदल देख,देवों के कहने पर मातली प्रसन्न हो, (इंद्र के साथ सदा हार होती थी) रथ लाया। विहंस कर रामजी चढ़े।

(मेघनाद की मृत्यु से देव अभय होगये, तब रथ भेजा)

रावण ने माया रची। वानरों को अनेक राम लक्ष्मण दिखाई दिए। घबराए। प्रभु ने माया का निवारण किया और वानर सेना से कहा कि अब रावण के साथ मेरा द्वंद्व द्वन्द युद्ध देखो।

रावण बोला, आज सभी परिजनों की मृत्यु का बदला लूंगा।

रामजी ने कहा बकवादी मत बनो। तीन प्रकार के लोग होते हैं।

*पाटल (जिसमे फूल लगता है फल नहीं- कहते हैं करते नहीं।),

*रसाल (आम, जिसमे फल फूल दोनो लगते हैं- जो कहते हैं करते भी हैं।),

*कटहल (जिसमे फल लगता है फूल नहीं) ये करते हैं कहते नहीं।

युद्ध छिड़ा। रावण के मस्तक और बीस भुजा काट दी। फिर निकल आए। बार बार काटे। बार बार उगे।

जब रावण ने विभीषण पर शक्तिप्रहार किया।तब-

**तुरत विभीषण पाछे मेला, सम्मुख राम सह्यो सोइ सेला।**

विभीषण ने कोप करके गदा प्रहार किया। रावण के मुंह से रक्त बह चला। रावण बोला द्वंद्वयुद्ध कर (राम भक्त के तन स्पर्श से मुक्ति मिलेगी इसलिए)। वो विभीषण जो रावण के सामने देख भी नहीं सकता था वो प्रभुकृपा से रावण से युद्ध कर रहाहै। फिर हनुमानजी और रावण में युद्ध हुआ। रावण की माया से बानर भालू को रावण ही रावण नजर आए। सब डरे। एक ही भारी था। अब तो गिरि कंदरा देखो। प्रभु ने व्याकुलता देख एक ही बाण से माया निस्तारी। एक रावण रह गया।

देवता प्रशंसा करने लगे। प्रभुकृपा से एक ही रहगया। रावण को क्रोध आया और देवताओं की ओर दौड़ा। देवता भागे -

हाहाकार करत सुर भागे,शठहु जाहु कहं मोरे आगे।

देवों को विकल देख अंगद ने दौड़कर पैर पकड़ पृथ्वी पर दे मारा।

और तब कोप कर -

**तब रघुपति लंकेश के, शीश भुजा शर चाप।**
**काटे भए बहोरि जिमि, कर्म मूढ़ के पाप।।**
**(शर चाप- धनुष बाण)।**

तब भी न मरा तो बानर सिर चढ़े। नखों से नोचकर रक्तरंजित करदिया। जामवंत ने लात मारी जिससे घायल रावण को संध्या समय सारथी घर ले गया।

रामायण 35-

**रावण वध मंदोदरि शोका, राज विभीषण देव अशोका।**

इधर त्रिजटा ने सीताजी को रावण के सिर कटने और न मरने का दुखद समाचार कहा। वे बहुत दुखी होकर कहने लगी कि रामजी के बाणों से नहीं मर रहा तो फिर कैसे मरेगा बताओ तो -

**रघुपति शर शिर कटेउ न मरई, विधि विपरीत चरित सब करई।**
**मोर अभाग्य जियावत ओही, जेहि हौं हरिपद कमल बिछोही।**
**(जेहि हौं- जिसने मुझे)-**
**जेहि कृत कटक कनक मृग झूंठा, अजहुं सो देव मोहिं पर रूठा।**
**जेहि विधि मोहिं दुख दुसह सहावा,लक्ष्मण कहं कटु वचन कहावा।**
**रघुपति विरह विषम सर भारी, तकि तकि बार बार मोहि मारी।**
**ऐसेहु दुख जो रखु मम प्राना, सोइ वधि ताहि जियावन आना।**
(जो रखु मम प्राना- इतने दुख देकर भी जो विधाता मेरे प्राण बचा रहा है, सोइ- वही विधाता, वधि ताहि- उसे मारकर, जियाव- जिला रहा है, नआना- और कोई नहीं)

जानकीजी श्रीरघुवर का स्मरणकर विलाप करने लगी तब त्रिजटा बोली -

**कह त्रिजटा सुनु राजकुमारी, उर शर लागत मरिहिं सुरारी।**
**ताते प्रभु उर हतहिं न तेही, इहि के हृदय वसति वैदेही।**

तो क्या होगा -

बाबा रामजी के हृदय की बात कहते हैं -

**एहिके हृदय बस जानकी उर जानकी मम वास है।**
**मम उदर भुवन अनेक लागत बाण सबको नाश है।।**

**अस सुनत हर्ष विषाद उर अति देखि पुनि त्रिजटा कहा।**
**अब मरिहि रिपु इहिभांति सुंदरि तजहुं तुम संशय महा।।**

(उर अति देखि- जानकी के हृदय में, इहिभांति- ऐसे मरेगा)-

**काटत शिर होइहैं विकल, छूटि जाय जब ध्यान।**
**तब रावण के हृदय शर, मारहिं कृपा निधान।।**

समझाकर त्रिजटा घर गई। सीताजी को रात भारी लगी। वाम बाहु और नयन के फड़कने से शुभ शकुन जान धैर्य धरा।

वहां रावण सारथी पर नाराज हुआ और प्रातः युद्धभूमि में आगया। माया विस्तारी। वानर भालुओं को विचलित देख एक ही बाण से श्रीराम ने माया नष्टकर मस्तक भुजा काट दी।-

**काटत बढ़हिं शीश समुदाई, जिमि प्रतिलाभ लोभ अधिकाई।**

फागुन सुदी द्वादशी से चैत्र कृष्ण चतुर्दशी तक युद्ध होता रहा। इसकी कोई उपमा नहीं। वाल्मीकिजी लिखते हैं –

# ।।रामरावणयोर्युद्धम रामरावणयोरिव।।

अठारह दिन युद्ध हुआ तब भी न मरा तब रामजी ने विभीषण को देखा।

*क्या होगा? इसे राज्य दिया है।

*इस भाई में इतना बल कैसे।

*कैसे मरेगा पूछते हैं।

क्या राम नहीं जानते। तो उत्तर शिवजी देते हैं -

उमा काल मरू जाकी इच्छा,सोइ प्रभु जन की लेत परीक्षा।

विभीषण ने कहा कि नाभी में अमृतकुंभ है।

बस रावण को अशकुन होने लगे। गीदड़, गधे, कुत्ते रोते हैं। उल्लू दिन में बोलने लगे, दिग्दाह दिखा। (सुबह पूर्व, शाम पश्चिम में अधिक रक्तता दिग्दाह कहाती हैं) मंदोदरी का हृदय कांपने लगा। मूर्तियों के नेत्र जल बरसाने लगे (राज भंग संकेत), बिजली गिरने लगी, आंधी चली, भूमि कांपी, रुधिर बरसने लगा तब श्रीराम ने देवों को भयभीत देख बाण चढ़ाया-

**आकर्षेउ धनु श्रवण लगि, छांडे शर इकतीस।**<br>
**रघुनायक सायक चले, मानहुँ काल फणीश।।**<br>
**सायक एक नाभि सर शोषा, अपर लगे शिर भुज करि रोषा।**<br>
**लेइ शिर बाहु चले नाराचा, शिर भुज हीन रूंड महि नाचा।**<br>
**(नाराचा- बाण)-**<br>
**धरणि धसै धरि धाव प्रचंडा, तब प्रभु शर हति कृत युग खंडा।**

(धरणि धसै- पृथ्वी धसकने लगी, धरि धाव- रावण के धड़ के दौड़ने से, कृत युग खंडा- बाण मार धड़ के दो टुकड़े किए)-

**गर्जेउ मरत घोर रव भारी, कहां राम रण हतौ प्रचारी।**

(राम- पहली बार राम कहा, पहले तपस्वी कहता था, प्रचारी- प्रचार कर)-

**डोली भूमि गिरत दशकंधर, क्षुभित सिंधु सरि दिग्गज भूधर।**<br>
**परेउ भूमि युगखंड बड़ाई, चापि भालु मर्कट समुदाई।**<br>
**(युगखंड बड़ाई- दोनो खंड बड़ा करके)**

*चैत्र सुदी चौदस के दिन रावण की मृत्यु हुई।

*रामजी ने मरते समय रावण के पास ज्ञान लेने लक्ष्मणजी को भेजा था। रावण बोला –

प्रथम मन धरूं टेक बोझ बासक का उतारूं ।चन्द्र करूं नव लोक जाय यमपुरी को घेरूं ॥ स्वर्ग बाट पाडूं जा बैठूं पाताल बलभद्दर को छेडूं।

उससे अमृत का कूपा लाय,सागर में ढोलूं। करना था सो कर लिया,आराम किया सो रहा यूँ ही।

**दस मस्तक बीस भुजा से, प्राण निकस के चला यूंही।।**
**दो बातें केवल कहनी है, शुभकार्य शीघ्र करना अच्छा।**
**दुष्कर्म टले जितना टालो, उसका सदैव टलना अच्छा।।**
**- राधेश्याम रामायण**

रामजी के बाण रावण की बीस भुजा और शिर को मंदोदरी के पास (ताकि उनको गिद्ध न खावे, अपमान न हो, उनके साथ वे सती हो सके) रख पुनः उनके तर्कस में प्रवेश कर गए। देवों ने दुंदुभी बजाई-

**तासु तेज समान प्रभु आनन, हर्षे देखि शंभु चतुरानन।**
**(आनन- मुख)-**
**जय ध्वनि पूरि रही नव खंडा, जय रघुवीर प्रबल भुज दंडा।**
**(नव खंडा- पृथ्वी के नो खंड)-**

**वर्षहिं सुमन देव मुनि वृंदा, जय कृपालु जय जयति मुकुंदा।**
(मुकुंदा- विपत्ति की डोरी से मुक्त कराने वाले)-
**कृपा दृष्टि करि वृष्टि प्रभु, अभय किए सुर वृंद।**
**हर्षे वानर भालु सब, जय सुखधाम मुकुंद।।**

रावण के सिर और भुजा देख मंदोदरी विलाप करने लगी। विश्वास हेतु रणभूमि में आई। कहीं फिर सिर जुड़ गए हों। सत्य मरण देख देह सुध भूली। केश खुले। प्रताप बखाना। आपके बल से पृथ्वी डोलती थी।

*राजा मरूत के यज्ञ में अचानक रावण आया तो देवताओं ने पक्षी आदि के रूप धरकर वहां से गमन किया। यम ने काग ( श्राद्ध में बली वर), इंद्र ने मोर (सर्प से अभय और सहस्त्र नेत्र पंखों में होंगे (पहले मोर काले थे), मेघ बरसने से प्रसन्न होंगे), वरुण ने हंस (हंस के काले पर श्वेत होंगे), कुबेर ने गिरगिट (सुवर्ण के रंग का होगा सिर में धन होगा), इस प्रकार सभी रक्षक रूपों को वर दिया)

अग्नि, चंद्र, सूर्य तेजहीन थे। शेष, कश्यप भार न सह पाते थे। देव घबराते। काल और यम भी जीते। आज अनाथ की तरह पड़े हो।

क्यों-

**राम विमुख यह हाल तुम्हारा, रहा न कुल कोउ रोवनहारा।**
**अब तव शिर भुज जंबुक खाहीं, राम विमुख यह अनुचित नाहीं।**

**जंबुक- गीदड़)**

राम कितने दयालू हैं -

**अहह नाथ रघुनाथ सम, कृपा सिंधु को आन।**
**मुनि दुर्लभ जो परम गति, तुमहिं दीन्ह भगवान।।**
**(अहह- अरे आश्चर्य है)**

मंदोदरी का रूदन, भगवद निरूपण, सुर, मुनि, सिद्धों, शिव, सनकादिकों के मन भाया। विभीषण भी दुखी हुए। रामजी बोले-

मरणान्तानि वैराणि निर्वृत्तं नः प्रयोजनम्। क्रियतामस्य संस्कारो ममाप्येष यथा तव।।

विभीषण! वैर जीवन-काल तक ही रहता है। मरने के बाद उस वैर का अन्त हो जाता है। अब हमारा प्रयोजन सिद्ध हो चुका है, अतः अब तुम इसका संस्कार करो। इस समय यह जैसे तुम्हारे स्नेह का पात्र है, उसी तरह मेरा भी स्नेहभाजन है ॥

- वा.रा.युद्ध कांड 109.25

प्रभु आज्ञा से लक्ष्मणजी ने समझाया और यथा विधि रावण की अंतिम क्रिया की। मंदोदरी आदि -

**मयतनयादिक नारि सब, देइ तिलांजलि ताहि।**
**भवन गईं रघुवीर गुण, गण वर्णत मनमाहि।।**

हनुमानजी नल नील आदि को लक्ष्मणजी के साथ भेज विभीषण को राज तिलक करवाया।

जब लोटे तो सभी के सहयोग की प्रशंसाकर, हनुमानजी को जानकीजी को विजय समाचार देने भेजा। लंका में सबने स्वागत किया। जानकीजी अत्यंत प्रसन्न हुई। बोली, मेरी प्रसन्नवाणी के अलावा जगत में कोई वस्तु देने योग्य नहीं लग रही।

हनुमानजी ने कहा माता, मैने शत्रु को जीतने वाले, भ्राता सहित, रोग दुख रहित रामजी को देखकर, जगत का राज्य पा लिया।

मां ने आशीर्वाद दिया –

**सुनु सुत सद्गुण सकल तव, हृदय बसहिं हनुमंत।**
**सानुकूल रघुवंशमणि, रहहिं समेत अनंत।।**

हनुमानजी की प्रशंसा की-

**शुश्रूषा श्रवणं चैव ग्रहणं धारणं तथा।**
**ऊहापोहो र्थविज्ञानं तत्त्वज्ञानं च धीगुणाः।।**

सुननेकी इच्छा, सुनना, ग्रहण करना, स्मरण रखना, ऊहा (तर्क- वितर्क), अपोह (सिद्धान्तका निश्चय), अर्थ का ज्ञान होना तथा तत्त्वको समझना - ये आठ बुद्धि के गुण हैं जो सदा तुम्हारे पास विद्यमान रहें ।

- वा.रा.युद्ध कांड 113

मूल रामायण 36-

**सीता रघुपति मिलन बहोरी, सुरन कीन्हि अस्तुति करजोरी।**

हनुमानजी ने रामजी से समाचार कहे। श्रीराम ने विभीषण और हनुमानजी को, जानकीजी को लेने भेजा। राक्षसियों ने विमान का श्रृंगार करवा, जानकीजी को संवारकर बैठाया और छड़ीदार, पहरेदारों संग लाए। बानर, भालू दर्शन को उमड़े तो उन्हें रोकने पर कृपालु रघुनाथजी ने कहा कि जानकी को पैदल आने दो जिससे सब दर्शन कर सके। सब प्रसन्न हुए, देवों ने सुमन वर्षा की।

जगत को संदेशार्थ अग्नि परीक्षा ली। पावक श्रीखंड (चंदन) सी शीतल हुई। अग्नि में प्रवेश करने के पहले सीताजी ने कहा-

**कर्मणा मनसा वाचा यथा नातिचराम्यहम्।**
**राघवं सर्वधर्मज्ञं तथा मां पातु पावकः।।**

यदि मैंने मन, वाणी और क्रियाद्वारा कभी सम्पूर्ण धर्मों के ज्ञाता श्रीरघुनाथजी का अतिक्रमण न किया हो तो अग्निदेव मेरी रक्षा करें।

**- वा.रा.युद्ध कांड 116.27**

*उस चिता को हिलाकर इधर-उधर बिखराते हुए दिव्य रूपधारी हव्यवाहन अग्निदेव वैदेही सीताको साथ लिये तुरंत ही उठकर खड़े होगये ओर लोकसाक्षी अग्नि ने श्रीरामसे कहा 'श्रीराम ! यह आपकी धर्मपत्नी विदेहराजकुमारी सीता है। इसमें कोई पाप या दोष नहीं है॥

**- वा.रा.युद्ध कांड 118.02,05**

जानकीजी बोली कोशलेश की जय। अग्नि ने विप्र रूप धरकर जानकीजी को रामजी को सौंपा। -

**हर्षि सुमन वर्षहिं बिबुध, बाजहिं गगन निशान।**
**गावहिं किन्नर सुरवधू, नाचहिं चढ़ी विमान।।**
**(बिबुध- देवता)**

जानकीजी सहित प्रभु को देखकर सभी बोल उठे, सुख के सागर रामचंद्रजी की जय।

प्रभु ने मातली को विदाकिया। सदा स्वार्थी देव परमार्थियों की तरह विनती कर लोटे। सरोज भव (ब्रह्मा जी) ने सुंदर यश गाया-

**जय राम सदा सुख धाम हरे, रघुनायक सायक चाप धरे।**
**(हरे- दुख हरने वाले)-**
**भव वारण दारण सिंह प्रभो, सुख सागर नागर नाथ विभो।**
**अब दीनदयाल दया करिए, मति मोरि विभेद करी हरिए।**

(विभेद करी- भेद बुद्धि हर लो। सर्वत्र एक देखने वाले को शोक मोह नहीं होता)-

जेहिते विपरीत क्रिया करिए,दुख सो सुख मानि सुखी चरिए।

(भेद बुद्धि के कारण ही विपरीत आचरण करते है और दुख को सुख मानते हैं। यह विपरीत मति जाती रहे और सुखी होजाऊं।)

प्रणाम किया।

तब विमान में बैठ इंद्रलोक से दशरथजी आए। बंधु सहित रामजी ने प्रणामकर कहा कि आपके आशीर्वाद से, जगजई निशाचरों का संहार किया है। दशरथजी के नेत्रों से जल बहने लगा। भेद भक्ति (स्वामी सेवक भाव) से मुक्ति नहीं हुई थी।(सर्व रूप परमेश्वर जानना) अभेद भक्ति है। पिता को भक्त नहीं मान सकते इसलिए दृढ़ज्ञान देकर मुक्त किया।

इंद्र ने आकर कहा कि मुझे आज्ञा दो, क्या सेवा करूं। प्रभु बोले, मेरे हित प्राण देने वाले, वानर भालुओं को जिला दो।-

**सुधा वृष्टि भई दोउ दल ऊपर, जिए भालु कपि नहिं रजनीचर।**

(मन रामाकार होने से राक्षसों को ब्रह्मपद मिला। वहां से अमृत भी नहीं ला सकता। वानर, रीछ देव अंश हैं। अंश में प्राण अटकने से, अमृत से जी गए। प्रभु कृपा ही, अमृत को विष और विष को अमृत बनाती है।) सुधा वृष्टि से जीते होकर, वानर भालू रामजी के पास आए -

तब शंकरजी ने आकर यश गाया -

**मामभिरक्षय रघुकुलनायक, धृत वर चाप रुचिर कर सायक।**
**(मामभिरक्षय- मेरी रक्षा करो, धृत- धारण करते हो)-**
**अनुज जानकी सहित निरंतर, बसहुं राम नृप मम उर अंतर।**
**(नृप- राजा राम)**

हे नाथ जब अयोध्या में राजतिलक होगा तब मैं दर्शन करने आऊंगा। विदा हुए।

विभीषण ने घर चलकर संपत्ति, सुख देखने का आग्रह किया। रामजी बोले तुम्हारा सब मेरा है पर अब मुझे भरत की याद आरही है। एक पल भी कल्प सा लगता है। वो-

**तापस वेश शरीर कृत, जपत निरंतर मोहिं।**
**देखहुँ बेगि सो जतन करू, सखा निहोरऊं तोहि।।**
**(निहोरऊं- विनय, आग्रह, मनावना)-**

बीते अवधि जाऊं जो,जियत न पावऊ बीर।प्रीति भरत की समुझि प्रभु,पुनि पुनि पुलक शरीर।।

तुम कल्पभर राज्य करो। मेरा स्मरण करो और अंत में मेरे धाम को जाओ जहां मुनि जाते हैं।

आज्ञा पाकर विभीषण पुष्पक में वसन, मणि, माणिक भरलाया। वर्षा की। जिसको जो भाया सो लिया। कपि मणि को फल समझ मुख में रखते, उगलते। प्रभु प्रसन्न होते।

शिवजी बोले –

**उमा योग जप दान तप, नाना व्रत मख नेम।**
**राम कृपा नहिं करहिं तसि, जसि निष्केवल प्रेम।।**
**(मख- यज्ञ)**

नाना प्रकार के वस्त्र, जेवर पहनकर रामजी के सामने आते हैं। प्रभु प्रसन्न होते हैं। प्रभु ने सब का आभार जताया -

**तुम्हरे बल मैं रावण मारा, तिलक विभीषण कहं पुनि सारा।**
**निज निज गृह अब तुम सब जाहू,सुमिरेहु मोहि डरपेउ जनि काहू।**
**(निज निज गृह- अपने देवांश में मिल जाओ)**

सब लोटे।

मूल रामायण 37-

**पुनि पुष्पक चढ़ि सीय समेता, अवध चले प्रभु कृपा निकेता।**

प्रमुख दलपति पुष्पक विमान में चढ़े। प्रभु उच्च आसन पर बैठे। विप्रो को नमनकर विमान चलाया। -

**चलत विमान कोलाहल होई, जय रघुवीर कहे सब कोई।**

प्रकृति सुरम्य हुई। जानकीजी को युद्ध के हाल सुनाते, दिखाते हैं। सेतुबंध, रामेश्वर दिखाया। (इससे यह सिद्ध होता है कि रामेश्वर स्थापना के समय जानकीजी नहीं आई थी।)

(लौटते समय रामजी ने अपने धनुष की कोटि (नोक) से सेतु को तोड़ दिया था। वहां धनुषकोटि तीर्थ हुआ।

*संपाती को भी पुष्पक विमान में चढ़ाकर अयोध्या लाए।

-आनन्द रामायण

दंडकवन में अगस्त्यजी सहित सब मुनियों को प्रणाम किया।

*अगस्त्यजी की पत्नी लोपामुद्रा ने कहा कि रामजी ने समुद्र पर सेतु बनाने का व्यथा कष्ट किया मेरे पति से कहते तो वो उसका पान कर सुखा देते। सीताजी ने कहा कि मेरे पति इतना बड़ा पाप कैसे कर देते। यदि वे समुद्र को बाण से सुखाते तो असंख्य जीवों की हानी होती।

आकाश मार्ग से जाते तो मनुष्य लीला नहीं होती। हनुमान की पीठपर जाते तो उनका अपना क्या पराक्रम होता। तैर कर जाते तो ब्राह्मण के मूत्र को लांघने का दोष लगता।

अगस्त्यजी से समुद्र पीने का आग्रह करते तो मुनि को उनका ही मूत्र पिलाने का बड़ा अपराध होता। इसलिए सेतु बनाया।

-आनन्द रामायण

चित्रकूट होते हुए यमुना, गंगा, प्रयाग, त्रिवेणी में मज्जन कर स्नान, दान किया।

हनुमानजी को बटुक रूप में भरतजी की कुशल लेने, अपनी कुशल देने अयोध्या भेजा। शुभ समाचार मांगलिक शरीर से देने चाहिए। (आज भी लग्न, रस्म, तिलक ब्राह्मणों के द्वारा ही भेजने की परंपरा है।) हनुमानजी को कपि देह में नहीं भेजा क्योंकि कहीं प्राण न तज दें। तुम अकेले आए प्रभु नहीं आये।

प्रभु भरद्वाजजी से मिलकर, आज्ञा ले आगे चले।

*चौदहवें वर्ष की माघ शुक्ल चतुर्दशी को रामजी भरद्वाज मुनि के आश्रम में पधारे।

- आनन्द रामायण

निषादराज ने सुना तो, "नाव कहां है? नाव कहां है?" बोला। गंगा पारकर, सीताजी ने पूजन किया। गूह को देख रामजी ने हृदय से लगाया। रघुनाथजी से अधिक दयालु कोन है -

**यह कलिकाल मलायतन, मन करि देखु विचार।**
**श्रीरघुनायक नाम तजि, नहिं कछु आन अधार।।**

**(मलायतन- पाप का स्थान)**

**।। इति लंकाकाण्ड ।।**

# ।।उत्तरकांड ।।

**केकीकंठाभनीलम सुरवरविलसद्विप्रपादाब्ज चिह्नम।**
**शोभाढ्यं पीतवस्त्रम सरसिजनयनं सर्वदा सुप्रसन्नम।**
**पाणो नाराचचापम कपिनिकरयुतम बंधुना सेव्यमानम।**
**नोमिड्यम जानकीशम रघुवरमनिशं पुष्पकारुढ़रामम।।**

(केकीकंठाभनीलम- मोर के कंठ सी नीली आभा, सुरवर- देवों में श्रेष्ठ, विप्रपादाब्ज चिह्नम- हृदय में मुनि पदचिन्ह- मृदुलता है, शोभाढ्यं- शोभा युक्त, नाराचचापम- धनुष बाण, नोमिड्यम- स्तुति प्रणाम योग्य, मनिशं- अहरनिश)

गोस्वामीजी श्री शंकरजी की वंदना करके उत्तरकांड आरंभ करते हैं।

जब वनवास की अवधि पूरी होने में एक दिन रहा तो सब अयोध्या में जहां तहां, कृषतनु बैठे चिंतित हैं। माताओं को शुभ शकुन हुए।

भजन -

**मेरु उखारन हार जे, धरा धरत कर बीच।**
**बैठी शकुन मनावति माता।**
**कब ऐहैं मेरे बाल कुशल से, कहहु काग फुरि बता।।**
**द्रूध भात की दोनी दैहों, कंचन चोंच मढ़ेहौं।**
**जब सिय सहित विलोकि नयन भरि, राम लषण उर लैहौं।।**
**अवधि समीप जानि जननी जिय,अति आतुर अकुलानी।**
**गनक बुलाय पांय परि पूंछति, प्रेम मगन मृदु बानी।।**
**तेहि अवसर कोउ भरत निकट ते, समाचार लै आयो।**
**प्रभु आगमन सुनत तुलसी जनु, मीन भरत जल पायो।।**

भरतजी की दाहिनी बांह और नेत्र फड़के।

सोचते हैं कि मुझे कपटी (जो प्रत्यक्ष दुख दे), कुटिल (पीछे बुराई करनेवाला) जानकर, साथ नहीं लिया। लक्ष्मण बड़भागी है। मेरी करनी नहीं, प्रभु अपना विरद देख कृपा करेंगे।

तभी-

**राम विरह सागर मंह, भरत मगन मन होत।**
**विप्र रूप धरि पवनसुत, आई गयउ जनि पोत।।**

(मन डूबना ही चाहता था, पवन सुत- नौका पवन की कृपा से ही चलती है, पोत- जहाज)

भरत को जटा जुट बांधे, राम नाम जपते देख भरत के कानों में अमृत वाणी बोले। भैया -

रिपु रण जीति सुयश सुर गावत,सीता अनुज सहित प्रभु आवत।

अमृतमई समाचार सुनकर भरतजी ने परिचय पूछा। गले मिले-

कपि तव दरश सकल दुख बीते,मिले आज मोहिं राम पिरीते।।

(सकल दुख- राम विरह, लड़ाई, सीता हरण, लक्ष्मण शक्ति, राम पिरीते- रामजी के प्रिय)।

हनुमानजी की प्रशंसा की। बोले, तुम्हें क्या दूं। उन्हें प्रणामकर हनुमानजी रामजी के पास लोटे। रामजी चले। भरतजी ने गुरुजी, भवन में माताओं को शुभ संदेश दिया। सब, जो जैसी थी वैसी ही उठ दौड़ी। नगरवासी भी स्वागत करने दौड़े-

दधि दुर्वा रोचन फल फूला,नव तुलसी दल मंगल मूला।

(रोचन- गोरोचन, मंगल मूला- गुलाब, कमल, हल्दी, नारियल, सुपारी, आम, केला आदि मंगल पदार्थ)

मूल रामायण 38-

जेहि विधि राम नगर निज आए,वायस विशद चरित सब गाए।

कोलाहल हुआ। बालक और वृद्ध को घर छोड़कर सब दौड़े। विमान में प्रभु मित्रों को अपनी नगरी दिखाते हैं -

यद्यपि सब वैकुंठ बखाना,वेद पुराण विदित जग जाना।

अवध सरिस प्रिय मोहिं न सोऊ,यह प्रसंग जानै कोउ कोऊ।

* अयोध्या में किया हुआ पुण्य एक ही दिन में फलदायक होता है।

- आनन्द रामायण

लोगों को आता देखकर, पुरी के निकट विमान उतारा। पुष्पक के अधिष्टात्र देवता को कुबेर के पास भेजा।-

ततो रामाभ्यनुज्ञातं तद्विमानमनुत्तमम्।

उत्तरां दिशमुद्दिश्य जगाम धनदालयम्।।

श्रीरामकी आज्ञा पाकर वह परम उत्तम पुष्पक विमान उत्तर दिशाको लक्ष्य करके कुबेरके स्थान पर चला गया।

- वा.रा.युद्ध कांड 127.62

रामजी ने वामदेवजी, वशिष्ठजी से शस्त्र धरकर प्रणाम किया। (बड़ों को प्रणाम करते समय शस्त्र नहीं रखने चाहिए) कहा, हम आपकी कृपा से कुशल हैं।

* भरत खड़ाऊ सिरपर रखकर रामजी की अगवानी करने आए।

- आनन्द रामायण

भरतजी चरणों में गिरे। उठाने से भी न उठे। नैनों में जल भर आया-

**पूछत कृपानिधि कुशल भरतहिं वचन बेगि न आवई।**
**सुनु शिवा सो सुख वचन मन ते भिन्न जान न पावई।।**
**अब कुशल कौशलनाथ आरत जानि जन दर्शन दियो।**
**बूढ़त विरह वारीश कृपा निधान मोहिं कर गहि लियो।।**

सब सबसे मिले। पुरवासियों की ललक देख-

अमित रूप प्रकटे तेहि काला,यथा योग्य मिलि सबहिं कृपाला।

सब, सब माताओं से मिले। जानकीजी ने प्रणाम किया। लक्ष्मणजी कैकई मां से बारबार मिले। अब तो -

सब रघुपति मुख कमल बिलोकहिं,मंगल जानि नयनजल रोकहिं।

**कनक थार आरति उतारहिं, बारबार प्रभु गात निहारहिं।**
**नाना भांति निछावरि करहीं, परमानंद हर्ष उर भरहीं।**
**कौशल्या पुनि पुनि रघुवीरहिं, चितवति कृपा सिंधु रणधीरहिं।**
**हृदय विचारति बारहिं बारा, कवन भांति लंका पति मारा।**

प्रत्यक्ष उत्तर न देकर सब सखाओं को बुलाकर, रामजी ने गुरुजी को प्रणाम करवाया और मां की शंका का निवारण किया-

**गुरु वसिष्ठ कुल पूज्य हमारे, इनकी कृपा दनुज रण मारे।**
**ए सब सखा सुनहुं मुनि मेरे, भए समर सागर मंह बेरे।**

वाह! क्या मर्यादा है। सबने कौशल्याजी को प्रणाम किया। सबको घर लाए। अवध सजी थी। द्वार द्वार कंचन कलश, पताका, बंदनवार, झंडियां। सुगंधित पदार्थ वीथियों में छिड़काए। निछावरी की जारही है। नगाड़े बज रहे हैं। कंचन थाल से आरती करती हैं –

करहिं आरती आरतिहर की,रघुकुल कमल विपिन दिनकर की।

(आरतिहर- दुख हर्ता)-

**होहिं शकुन शुभ विविध विधि, बाजहिं गगन निशान।**
**पुर नर नारि सनाथ करि, भवन चले भगवान।।**

और सुनो, मर्यादापुरुषोत्तम की लीला -

**प्रभु जानी कैकई लजानी, प्रथम तासु गृह गए भवानी।**
**ताहि प्रबोधि बहुत सुख दीन्हा, तब निज भवन गवन प्रभु किन्हा।**

मूल रामायण 39-

कहेसि बहोरि राम अभिषेका,पुर वर्णन नृप नीति अनेका।

वशिष्ठजी ने ब्राह्मणों से कहा कि आज ही तिलक का शुभ मुहूर्त है। तैयारियां होने लगी।मंगल द्रव्य बुलाया। सब सखाओं को स्नान कराया। भरतजी की जटा प्रभु ने खोली। सब भाइयों ने स्नान किया। प्रभु ने गुरु, महिदेवों की आज्ञा से अपनी जटा विसर्जित कर, स्नान किया। करोड़ों कामदेव को लजाने वाले भूषण पहिरे। जानकीजी को सासुओ ने स्नान करवाया। श्रृंगारितकर रामजी के बगल में विराजित किया। सभी ने जोड़ी निरखकर जन्म सफल माना।

वैशाख कृष्ण सप्तमी के दिन रघुनाथजी को राजतिलक हुआ।

काकभुशुंडीजी कहते हैं -

**सुनु खगेस तेहि अवसर, ब्रह्मा शिव मुनिवृंद।**
**चढ़िं विमान आए सब, सुर देखन सुखकंद।।**

**प्रभु विलोकि मुनि मन अनुरागा,तुरत दिव्य सिंहासन मांगा।।**
**रवि सम तेज बरणि नहिं जाई, बैठे राम द्विजन शिर नाई।।**
**जनकसुता समेत रघुराई, देखि प्रहर्षे मुनि समुदाई।।**
**वेदमंत्र तब द्विजन उचारे, नभ सुर मुनि जय जयति पुकारे।।**
**प्रथम तिलक वसिष्ठ मुनि कीन्हा, पुनि सब विप्रन आयसु दीन्हा।।**
**सुत विलोकि हर्षहिं महतारी, बार बार आरती उतारी।।**
**विप्रन दान विविध विधि दीन्हे, याचक सकल अयाचक किन्हे।।**
**सिय सहित दिनकर वंश भूषण काम बहु छवि सोहई।**
**नव अंबुधर वर गात अंबर पीत मुनि मन मोहई।।**
**मुकुटांगदादि विचित्र भूषण अंग अंगन प्रति सजे।**
**अंभोज नयन विशाल उर भुज धन्य नर निरखंत जे।।**

(अंबुधर- जल भरे बादल, मुकुटांगदादि- मुकुट बाजूबंद आदि, अंभोज- कमल से)-

**वह शोभा समाज सुख, कहत न बने खगेस।**
**बरनै सारद शेष श्रुति, सो रस जान महेस।।**

* श्रीरामचन्द्रजी के सब तरह से समझाने और नियुक्त किये जानेपर भी जब सुमित्राकुमार लक्ष्मण ने स्वीकार नहीं किया तब महात्मा श्रीराम ने भरत को युवराज-पदपर अभिषिक्त किया।

- वा.रा.युद्ध कांड 128.93

अगस्त्य संहिता के अनुसार भाइयों के अलावा विभीषण,अंगद, हनुमान, सुग्रीव, दधिमुख, द्विविद, मयंद, जांबवंत, सुषेण, दरीमुख, कुमुद, नील, नल, गवाक्ष, पनस, गंधमादन्य आदि सोलह पार्षद परिचर्या में रहे।–

इस अवसर पर सागर द्वारा रावण को भेंट की गई दिव्य रत्नमाला विभीषण ने जानकीजी के गले में पहिराई। सब चकित हुए। सीता ने विचार कर वह माला प्रभु आज्ञा से हनुमानजी के गले में डाल दी। महावीरजी धन्य हुए। देखने लगे। ऊपर प्रकाश के अलावा कुछ न पाकर एक-

मणि भीतर कछु होइहै सारा,मुक्ता एक तोरि तब डारा।

एक मोती तोड़ा। भीतर कुछ न पाकर फेंकदिया और दूसरा तोड़ा। दर्शक हैरान। अपात्र को दान समझ सोचने लगे।-

**बोलि उठ्यो कोउ नृपति यह, कहा करत हनुमान।**
**क्यों तोरत हो माल तुम, सुंदर रत्न सुजान।।**

(सुजान- चतुर होकर)

हनुमानजी बोले इसमें, सदा सुखदाई रामनाम देख रहा हूं। किंतु दिखता नहीं। पूछा कि सब में राम नाम कहां होता है। हनुमान बोले जिसमे राम नाम नहीं फिर वह वस्तु किसी काम की नहीं। -

जो जेहि भावे सो भलो,गुन को कछु न विचार। तज गजमुक्ता भीलनी,पहिरति गुंजा हार।।

- पैतृक संपदा उसने व्यंग्य से कहा, तब तो तुम्हारे तन में भी उदार रामनाम होगा ही। हनुमान बोले अवश्य –

**सुनत वचन कह पवन कुमारा, निश्चय तनु हरि नाम उदारा।**
**अस कहि कपि निज हृदय विदारा, रोम रोम प्रभु नाम उदारा।।**

सब चकित हुए। रामजी की कृपा दृष्टि से तन पुनः कुलिश (वज्र) सा होगया।

तब वेदों ने आकर प्रभु का यशगान किया।

प्रथम सामवेद ने सगुण निर्गुण रूप का बखान किया

* द्वै एव ईश्वरस्य रूपे,मूर्तश्चामूर्तश्चेति श्रुते।।

यजुर्वेद

* माया से जगत की रक्षा करो नाथ।

अथर्ववेद

* सुर-नर वंदित और उद्धारक चरणों की मैं वंदना करता हूं। वासना ध्वंस जीव ब्रह्म ही है। हम आपके नामाधारी भक्त होजावें। जो लोग कंचन, मित्र-शत्रु, सुख-दुख, प्रिय-अप्रिय, निंदा-स्तुति, मान-अपमान से परे है उसे ही त्रिगुणातीत कहते हैं

- श्रीमद्भगवद्गीता ऋग्वेद

* यह संसार आपकी विभूति रूपी वृक्ष है। हमारा मन आपके इस सगुण रामरूप में रमा रहे।

तब शंकरजी ने पुलकित शरीर और गद्गद वाणी से विनय की-

जय राम रमा रमणं शमणं भव ताप भयाकुल पाहि जनम।

बार बार बर मांगहुं,हर्षि देहु श्रीरंग।

पद सरोज अनपायनी,भक्ति सदा सतसंग।

तब भगवान ने सब कपियों को यथाविधि वास दिए। इस प्रीति में छह माह बीत गए। एक दिन प्रभु ने सबको बुलाया। उनके उपकारों का गान किया-

अनुज राज संपति वैदेही,देह गेह परिवार सनेही।

सब मोहिं प्रिय नहीं तुमहिं समाना,मृषा न कहों मोर यह बाना।

अब घर जाओ। मेरा सर्वदा, सर्वव्यापक ओर सबका हितकारी जानकर भजन करो। अंगद का प्रेम देख उन्हें नहीं छेड़ा। सोचा कि इनकी प्रीति से और भी प्रभावित होंगे। सब प्रेम मगन होगये। सबको भूषण, वसन पहिराए। सुग्रीव को भरत ने सजाकर पहराये। विभीषण को लक्ष्मण और जामवंत, नल नीलादि को रामजी ने पहराए। सब प्रणामकर विदाहुए। अंगद उठे। प्रणाम किया। बोले –

मरती बार नाथ मोहिं ं वाली,गयो तुम्हारे पगतर घाली।

(घाली- डाल कर)-

मोरे प्रभु तुम गुरु पितु माता,जाऊं कहां तजि पद जल जाता।

कभी हम भी ऐसा ही गान करें। अंतर मन से -

नीच टहल गृह की सब करिहऊं,पद पंकज विलोकि भव तरिहऊं।

अब घर जाने की मत कहना। भगवान ने उठाकर गले लगाया। हृदय की माला, वसन, मणि पहिराइ। समझाकर विदा के लिए राजी किया। चारों भाई पहुंचाने चले। अंगद मुड़ मुड़कर देखते हैं। कदाचित प्रभु रुकने का बोल दें।

हनुमानजी ने कुछ दिन रुक, प्रभु सेवा की आज्ञा ली। सुग्रीव ने उनके भाग्य की सराहना की। अंगद ने हनुमानजी को रोका। कहा –

**प्रभुसन कहियो दंडवत, मम कर जोरि बहोरि।**
**बार बार रघुनायकहिं, सुरति करायहु मोरि।।**

हनुमान से उनकी प्रीति सुन, रामजी प्रसन्न हुए।

युवराज हैं। आगे राजा होंगे इसलिए विदा किया।

निषाद का आदर कर, भरत सा प्रिय सखा कह, आते रहना कहकर, विदा किया। अब -

राम राज्य बैठे त्रैलोका,हर्षित भयउ गयउ सब शोका।

**वर्णाश्रम निज निज धरम, निरत वेद पथ लोग।**
**चलहिं सदा पावहिं सुखहिं, नहि भय शोक न रोग।।**

(वर्ण- चार वर्ण, आश्रम- चार आश्रम)

* रामजी के शासन में कोई वेश्यासक्त नहीं था। कोई मादक पदार्थ सेवन नहीं करता था। कोई दरिद्र, रोगी, मूर्ख, चोर हिंसक नहीं था।

-आनन्द रामायण-

देहिक दैविक भौतिक तापा, राम राज्य काहुहिं नहिं व्यापा।

(दैविक- बिजली गिरना, भौतिक- जीवों द्वारा दिए)-

सब नर करहिं परस्पर प्रीती,चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति रीती।

(श्रुति रीती- वेद की रीति अनुसार)-

अल्प मृत्यु नहिं कवनिऊं पीरा,सब सुंदर सब विरुज शरीरा।

(विरुज- रोग रहित)-

नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना,नहिं कोउ अबुध न लक्षण हीना।

(अबुध- मूर्ख)

सातों द्वीपों,जिसकी सागर मेखला है उसके एकमात्र स्वामी श्रीराम थे। वृक्ष सदा फलते फूलते। हाथी और सिंह साथ रहते। गाएं मनचाहा दूध देती। धरती धान्य से पूर्ण। त्रेता सतयुग सा होगया। पर्वतों से मणियां प्रकटी। नदियां निर्मल जल वाली। सागर, तटों पर रत्न डालते-

**विधु महि पुर मयूखन, रवि तप जीतनहि काज।**
**मांगे वारिद देहिं जल, रामचंद्र के राज।।**

(मयूखन- किरणों से)

* रामजी ने डोंडी पिटवाई कि आज से जबतक मैं राजा रहूं तब तक सभी नागरिक और अतिथियों को (गृहस्थ को छूट रहेगी) हमारे रसोई घर में ही भोजन करना है।

* एक ब्राह्मणी को अल्प वस्त्र और आभूषण हीन अपने छोटेबच्चे के साथ सीताजी ने देखा। महल में बुलाया। उसके पति तीर्थ गए थे। धन समाप्त होगया। पिता परलोक चलेगए इसलिए दुखी है। सीताजी ने डोंडी पिटवाई कि आगे से कोई बिना वस्त्र और आभूषण के नहीं रहे।

- आनन्द रामायण

सीताजी पति और सासू की सेवा करती। भाई परस्पर प्रेम करते।-

दुईसुत सुंदर सीता जाए,लवकुश वेद पुराणन गाए।

(जाए- वाल्मिक आश्रम में)

भरत के पुष्कल, तक्षक। लक्ष्मण के अंगद, चित्रकेतु। शत्रुघ्न के श्रुतिसेन ओर सुबाहु।

प्रभु भाइयों संग भोजन, गुरु संग सत्संग करते हैं। सब नर नारी राम भजनरत हैं क्योंकि-

राम नाम जपताम् कुतो भयम,सर्वतापशमनैक भेषजम।

एक बार सनकादिक मुनि आए। रामजी ने दंडवत कर पटपीत पर बरबस बैठाया। विनती कर, मुनि ब्रह्मलोक गए। तब भाइयों में सत्संग हुआ। भरत ने पूछा संतों की महिमा और संत असंत का भेद कहो।

प्रभु बोले ये दोनो चंदन और कुठार जैसे होते हैं। अपनी इसी वल्लभता से चंदन देवों के मस्तक पर शोभा पाता है और कुठार आग में तपाया, पीटा जाता है। इसी भांति परोपकारी संत स्वर्ग और असंत यमपुर जातेहै। संत परदुख में दुखी, सुख में प्रसन्न होते हैं। समदर्शी होते हैं। किसी को शत्रु नहीं मानते। कोई मद नहीं। विषयों से विरागी। कोमल चित, दीन दयाल। मेरी भक्तिरत –

सबहि मान प्रद आपु अमानी,भरत प्राण सम मम ते प्राणी।

ये शांति, त्याग, नम्रता, हर्ष के घर हैं। सबसे शीतलता, सरलता, मित्रता रखते हैं। द्विज पद में प्रेम रखते हैं। शम, दम रखते हैं। कठोर वचन नहीं बोलते हैं। निंदा स्तुति को सम मानते हैं। ये मुझे प्राणों के समान प्रिय हैं। ये ही संत हैं।

असंत का साथ महा दुखदाई होता है। ये पराई संपदा देख जलते हैं। पराई निन्दा में आनंद पाते हैं। काम, क्रोध, मद, लोभ में रत। कपटी, कुटिल और पापात्मा होते हैं। अकारण वैर करते हैं। सब कुछ झूठ पर निर्भर होता है। मोर जैसे मीठे बोलते हैं पर भीतर कठोर होते हैं।-

**पर द्रोही परदारत, परधन पर अपवाद।**
**ते नर पामर पापमय, देह धरे मनुजाद।।**

(परदारत- दूसरों की स्त्री से प्रीति रत, अपवाद- झूठी निंदा, मनुजाद- राक्षस)

लोभी, पेट और लिंग में ही निरत रहते हैं। यम का डर ही नहीं होता। किसी की प्रशंसा सुन बुखार चढ़ जाता है। विपत्ति देखकर बादशाह होजाते हैं। ऐसे मतलबी, व्यभिचारी, कामी, क्रोधी को असंत जानो। माता, पिता, गुरु किसी को नहीं मानते। सत्संग और कथा नहीं भाती। ये कलिकाल में अधिक होते हैं। ये ही असंत हैं। भरत -

पर हित सरिस धरम नहिं भाई,पर पीड़ा सम नहिं अधमाई।

मोह वश पाप करने वाले नर्क में जाते हैं। इनके लिए ही मुझे अवतार लेना पड़ता है।

भरतादिक प्रसन्न हुए।

एक बार -

एक बार रघुनाथ बुलाए,गुरु द्विज पुरवासी सब आए।

सब बैठे। प्रभु बोले, सुनो। मेरी आज्ञा मानने वाला ही मुझे प्रिय है-

जो अनीति कछु भाषौ भाई,तौ मोहिं बरजेउ भय बिसराई।

बड़े भाग्य मानुष तनु पावा,सुर दुर्लभ सद्ग्रंथन गावा।

साधन धाम मोक्ष कर द्वारा,पाई न जेहि परलोक संवारा।

इस तन का फल विषय नहीं है। जो ऐसा करते हैं वे अमृत तज विष लेते हैं। यह जीव चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करता है। कभी दयाकर परमात्मा मनुष्य शरीर देता है। इसे पाकर जो भवसागर पार नहीं जाता वह ईश्वर के अनुग्रह का तिरस्कार करता है। मेरा कहा मानो, भक्ति करो। ज्ञान अगम, कष्टसाध्य है। बिना सत्संग भक्ति नहीं मिलती -

पुण्य पुंज बिनु मिलहि न संता,सतसंगति संसृति कर अंता।

(संसृति- आवागमन)-

पुण्य एक जग मंह नहिं दूजा,मन क्रम वचन विप्र पद पूजा।

ओर एक गुप्त बात सुनो। शंकरजी की भक्ति बिना मेरी भक्ति नहीं मिलती है-

कहहुं भक्ति पथ कवन प्रयासा,योग न मख जप तप उपवासा।

(कवन प्रयासा- कोई प्रयास नहीं)-

**सरल सुभाव न मन कुटिलाई, यथा लाभ संतोष सगाई।**
**मोर दास कहाय नर आशा, करै तो कहहु कहा विश्वासा।**

(नर- राजा, अमीर, धनी)-

**।।भोजनाच्छादने चिंता वृथा कुर्वन्तिमानवाः,**
**योअसो विश्वंभरो देवः स भक्तान किमुपेक्षते।।**

वैर न विग्रह आश न त्रासा,सुखमय ताहि सदा सब आशा।

(आशा- दिशा)-

अनारंभ अनिकेत अमानी,अनघ अरोश दक्ष विज्ञानी।

(अनारंभ- उद्यम की ममता हीन, अनिकेत- स्थान की ममता हीन, अनघ- निष्पाप, अरोश- क्रोध रहित, दक्ष- निपुण संगति के अनुरूप व्यवहारी, विज्ञानी- अनुभव सहित)-

प्रीति सदा सज्जन संसर्गा,तृण सम विषय स्वर्ग अपवर्गा।

(संसर्गा- मिलाप, अपवर्गा- विषय, स्वर्ग और मोक्ष को तृण सम माने)-

भक्ति पक्ष हठ नहिं शठताई,दुष्ट तर्क सब दूरि भगाई।

(नहिं शठताई- भक्ति का पक्ष ले किंतु शठता, जड़ता, जिद न करे, दुष्ट तर्क- अनावश्यक शंकादि, ग्रंथ, संत, भगवंत संबंधी)

सब भाग्य सराहते विदा हुए।

* एक बार रामजी के दर्शन करने के लिए व्यासजी पधारे। रामजी ने कहा मुनि मेरे तीन संकल्प पूर्ण हों यह आशीर्वाद दीजिए।

एक तो जो मैंने एक बार बोल दिया वह फिर नहीं बदलूंगा। दूसरा एक पत्निव्रत रखूंगा। तीसरा जिसे क्रोध करके मारना चाहूं उसपर मात्र एक बाण चलाऊंगा। मुनि ने सफल हो कहा। व्यासजी बोले एक पत्नी व्रत से आपको अगले जन्म में बहुत सी पत्नियां मिलेगी। अब आप सीता की सोलह स्वर्ण प्रतिमाएं बनाकर ब्राह्मणों को दान करो जिससे आगे सहस्त्र गुना फल मिलेगा। आपको सोलह हजार स्त्रियां मिलेगी। रामजी ने वही किया।-

विसर्जये त्वां सौमित्रे मा भूद् धर्मविपर्ययः । त्यागो वधो वा विहितः साधूनां तूभयं समम् ॥ अपना प्राण भंग कर दुर्वासा के भय से कक्ष में प्रवेश करने पर रामजी ने कहा 'सुमित्रानन्दन ! मैं तुम्हारा परित्याग करता हूँ, जिससे धर्मका लोप न हो। साधु पुरुषोंका त्याग किया जाय अथवा वध-दोनों समान ही हैं।

- वा.रा.उत्तरकांड 106.13- अदृश्यं सर्वमनुजैः सशरीरं महाबलम्।

प्रगृह्य लक्ष्मणं शक्रस्त्रिदिवं संविवेश ह।।

सरयू के तटपर श्वास रोककर महाबली लक्ष्मण अपने शरीर के साथ ही सब मनुष्यों की दृष्टि से ओझल हो गये। उस समय देवराज इन्द्र उन्हें साथ लेकर स्वर्गमें चले गये।

- वा.रा.उत्तरकांड 106.17

एक बार गुरु वशिष्ठ आए। बोले-

उपरोहिती कर्म अति मंदा,वेद पुराण स्मृति कर निंदा।

जब न लेऊं मैं तब विधि मोही,कहा लाभ आगे सुत तोही।

आपके दर्शन सेवा, भक्ति का सौभाग्य मिला। अब-

**नाथ एक बर मांगऊं, मोहि कृपा करि देहु।**
**जन्म जन्म प्रभु पद कमल, कबहुं घटै जनि नेहु।।**

* चैत्र कृष्ण पंचमी को रामजी को प्रथ्वी पर ग्यारह हजार वर्ष, ग्यारह महीने, ग्यारह दिन, ग्यारह नाड़ी, ग्यारह पल पूरे होगये थे।

- आनन्द रामायण

* श्रीरघुनाथजीने राज्य पाकर ग्यारह सहस्र वर्षों तक उसका पालन और सौ अश्वमेध यज्ञों का अनुष्ठान किया। उन यज्ञों में उत्तम अश्व छोड़े गये थे तथा ऋत्विजोंको बहुत अधिक दक्षिणाएँ बाँटी गयी थीं।

- वा.रा.युद्ध कांड 128.95

स्वाधाम जाने को उद्यत श्री राम ने कहा महापराक्रमी राक्षसराज विभीषण-

यावत् प्रजा धरिष्यन्ति तावत् त्वं वै विभीषण। राक्षसेन्द्र महावीर्य लङ्कास्थः स्वं धरिष्यसि।।

जबतक संसार की प्रजा जीवन धारण करेगी, तबतक तुम भी लङ्का में रहकर अपने शरीर को धारण करोगे।–

**यावच्चन्द्रश्च सूर्यश्च यावत् तिष्ठति मेदिनी।**
**यावच्च मत्कथा लोके तावद् राज्यं तवास्त्विह।।**

जबतक चन्द्रमा और सूर्य रहेंगे, जबतक पृथ्वी रहेगी और जबतक संसार में मेरी कथा प्रचलित रहेगी, तबतक इस भूतलपर तुम्हारा राज्य बना रहेगा।

- वा.रा.उत्तरकांड 108.27,28

रामजी हानुमानजी से बोले-

कर मत्कथाः प्रचरिष्यन्ति यावल्लोके हरीश्वर।।

ये तावद् रमस्व सुप्रीतो मद्वाक्यमनुपालयन्।

हरीश्वर ! जबतक संसारमें मेरी कथाओं का प्रचार रहे, तबतक तुम भी मेरी आज्ञाका पालन करते हुए प्रसन्नतापूर्वक विचरते रहो।- एवमुक्तस्तु हनुमान् राघवेण महात्मना।।

वाक्यं विज्ञापयामास परं हर्षमवाप च।

महात्मा श्रीरघुनाथजी के ऐसा कहनेपर हनुमानजी को बड़ा हर्ष हुआ और वे इस प्रकार बोले-

यावत् तव कथा लोके विचरिष्यति पावनी।। तावत् स्थास्यामि मेदिन्यां तवाज्ञामनुपालयन्।

भगवन्! संसार में जबतक आपकी पावन कथा का प्रचार रहेगा, तबतक आपके आदेश का पालन करता हुआ मैं इस पृथ्वीपर ही रहूँगा।

- वा.रा.उत्तरकांड 108.33 से 36

* इसके बाद भगवान ने ब्रह्माजी के पुत्र बूढ़े जाम्बवान् तथा मैन्द और द्विविद से भी कहा कि जाम्बवान सहित तुम पाँचों व्यक्ति (जाम्बवान्, विभीषण, हनुमान्, मैन्द और द्विविद) तबतक जीवित रहो, जबतक कि प्रलय एवं कलियुग न आ जाय। (इनमें से हनुमान् और विभीषण तो प्रलयकालतक रहनेवाले हैं और शेष तीन व्यक्ति कलि और द्वापर की संधि में श्रीकृष्णावतार के समय मारे गये या मर गये)

- वा.रा.उत्तरकांड 108.36,37

* रामजी ने शेष सभी रीछों और वानरों से कहा कि बहुत अच्छा तुमलोगों की बातें मुझे स्वीकार हैं। तुम सब अपने कथनानुसार मेरे साथ चलो।

- वा.रा.उत्तरकांड 108.38

* एक बार सीताजी ने रामजी के रूप में मोहित

पिंगला वैश्या को सखियों से बांधकर पिटवाया और श्राप दिया कि तुमने अपराध किया है इससे जब तू भविष्य में जन्म लेगी तो तीन कूबड़ होंगे और कृष्ण कृपा से तेरा उद्धार होगा।

- आनन्द रामायण

* फिर भगवान् श्रीराम सूक्ष्म वस्त्र धारण किये दोनों हाथों में कुश लेकर परब्रह्म के प्रतिपादक वेद-मन्त्रों का उच्चारण करतेहुए सरयूनदी के तटपर चले। भगवान् श्रीराम के दाहिने पार्श्व में कमल हाथ में लिये श्रीदेवी उपस्थित थीं। वामभागमें भूदेवी विराजमान थीं तथा आगे-आगे उनकी व्यवसाय (संहार) - शक्ति चल रही थी।

नाना प्रकारके बाण, विशाल एवं उत्तम धनुष तथा दूसरे-दूसरे अस्त्र-शस्त्र- सभी पुरुष-शरीर धारण करके भगवान के साथ चले। चारों वेद ब्राह्मण का रूप धारण करके चल रहे थे। सबकी रक्षा करनेवाली गायत्री देवी, ओंकार और वषट्कार सभी भक्तिभावसे श्रीराम का अनुसरण करते थे। अन्तःपुर की स्त्रियाँ भी बालकों, वृद्धों, दासियों, खोजों और सेवकों के साथ निकलकर सरयूतट की ओर जाते हुए श्रीरामके पीछे-पीछे जा रही थीं।

भरत और शत्रुघ्न अन्तःपुर की स्त्रियों के साथ अपने आश्रयस्वरूप भगवान् श्रीरामके पीछे पीछे चले। समस्त मन्त्री और भृत्यवर्ग भी अपने पुत्रों, पशुओं, बन्धुओं तथा अनुचरोंसहित हर्षपूर्वक श्रीराम के पीछे-पीछे जा रहे थे।

हृष्ट-पुष्ट मनुष्यों से भरेहुए समस्त प्रजाजन श्रीरघुनाथजी के गुणोंपर मुग्ध थे; इसलिये वे स्त्री, पुरुष, पशु-पक्षी तथा बन्धु-बान्धवोंसहित उस महायात्रा में श्रीराम के अनुगामी हुए। उन सबके हृदय में प्रसन्नता थी और वे सभी पापसे रहित थे। जनपदके लोगों में से जो श्रीराम की यात्रा देखने के लिये आये थे, वे भी यह सब समारोह देखते ही भगवान्के साथ परमधाम जाने को तैयार हो गये। रीछ, वानर, राक्षस और पुरवासी मनुष्य बड़ी भक्तिके साथ रामचन्द्रजी के पीछे-पीछे एकाग्रचित्त होकर चले आ रहे थे। अयोध्यानगर में जो अदृश्य प्राणी रहते थे, वे भी साकेतधाम जाने के लिये उद्यत हुए श्रीरघुनाथ के पीछे-पीछे चल दिये। चराचर प्राणियों में से जो-जो श्रीरघुनाथजी को जाते देखते थे, वे सभी उस यात्रा में उनके पीछे-पीछे चल देते थे। उस समय उस अयोध्या में साँस लेनेवाला कोई छोटे-से-छोटा प्राणी भी रह गया हो, ऐसा नहीं देखा जाता था। तिर्यग्योनि के समस्त जीव भी श्रीराम में भक्तिभाव रखकर उनके पीछे-पीछे चले जा रहे थे।

- वा.रा.उत्तरकांड 109

* ब्रह्माजी ने श्री राम को जिस देह से स्वाधाम् जाने की इच्छा हो वह करने का आग्रह किया पितामह ब्रह्माजी की यह बात सुनकर परम बुद्धिमान् श्रीरघुनाथजी ने कुछ निश्चय करके भाइयों के साथ शरीरसहित अपने वैष्णव तेज में प्रवेश किया। तत्पश्चात् विष्णुरूप में विराजमान महातेजस्वी श्रीराम ब्रह्माजी से बोले-उत्तम व्रतका पालन करनेवाले पितामह ! इस सम्पूर्ण जनसमुदाय को भी आप उत्तम लोक प्रदान करें। ये सब लोग स्नेहवश मेरे पीछे आये हैं। ये सब- के-सब यशस्वी और मेरे भक्त हैं। इन्होंने मेरे लिये अपने लौकिक सुखों का परित्याग कर दिया है, अतः ये सर्वथा मेरे अनुग्रह के पात्र हैं। भगवान् विष्णुका यह वचन सुनकर लोकगुरु भगवान् ब्रह्माजी बोले- 'भगवन्! यहाँ आये हुए ये सब लोग 'संतानक' (साकेत धाम का एक अंग) नामक लोकों में जायँगे। जिन वानरों और रीछों की देवताओं से उत्पत्ति हुई थी, वे अपनी-अपनी योनि में ही मिल

गये- जिन-जिन देवताओं से प्रकट हुए थे, उन्हीं में प्रविष्ट हो गये। सुग्रीव ने सूर्यमंडल में प्रवेश किया। जिसने-जिसने जल में गोता लगाया, वही-वही बड़े हर्ष के साथ प्राणों और मनुष्य-शरीर को त्यागकर विमानपर जा बैठा॥

- वा.रा.उत्तरकांड 110

* स्वधाम लोटते समय रामजी विष्णु रूप में आगये। भरत शंख, शत्रुघ्न चक्र हुए। सभी वानर अपने देव अंश में समा गए। वाल्मिकीजी को हृदय से लगाकर, ऋषियों से आज्ञा ले रामजी गरुड़ पर बैठकर वैकुंठ पधारे।

- आनन्द रामायण

नारदजी ने आकर प्रार्थना की -

मामवलोकय पंकज लोचन,कृपाविलोकिनि शोकविमोचन।।

(मामवलोकय- मेरी ओर निहारो, कृपा दृष्टि करो, पंकज लोचन- कमल नयन, कृपाविलोकिनि - कृपा दृष्टि, शोकविमोचन- दुख हारिणी है)-

भूसुर ससि नव वृंद बलाहक,अशरणशरण दीन जन गाहक।

(भूसुर- ब्राह्मण, ससि- कृषि यानी जगत में भक्ति मार्ग का, आराधना का संचार करना, सतसंग को बल देना, उसके लिए, नव वृंद बलाहक- आप जल भरे नवीन बादल जैसे हो अर्थात उनकी खेती भक्ति, सत्संग, आराधना, पूजा को बढ़ाने पोषण देने, शीतलता देने वाले हो, अशरणशरण-जिसका कोई नहीं उसके सब कुछ जो शरण न आवे उसके भी शरणालय हो, गाहक-ग्राहक,अपनाने वाले,बिना मोल खरीदने वाले)

नारदजी रामजी के गुण गाकर विधिधाम पधारे।

बाबा मर्यादा का पालन करते हुए कहते हैं, एक दिन वह भी आया जब -

हरण सकल श्रम प्रभु श्रम पाई,गये जहां शीतल अमराई।

(हरण सकल श्रम- जगत के कष्ट, भूमि का भार, विप्र, धेनु, सुर, संत पीड़ा हरण, भक्तों का मान, दिया गया वरदान, प्रभु श्रम पाई- श्रमित हो गए,थक गए,श्रम पाकर,स्वयं श्रमित होकर, इस सब पीर को स्वयं में समाकर, अमराई- वैकुंठ परमधाम, साकेत, स्वधाम, अमरापुर, अमर का विश्राम स्थल, अमर जहां से आते हैं, गोलोक)-

भरत दीन्ह निज वसन डसाई,बैठे प्रभु सेवहिं सब भाई ।

(भरत- विश्व भरण..., वसन- सृष्टि, आवरण, सब प्रकृति पुरुष के सुपुर्द कर दी, चार्ज दे दिया, सब भाई- प्रभु अमरापुर में बैठे जिनकी सब भाई, भक्त सेवा करते हैं, शेष, लक्ष्मी ,ब्रह्मा, शंकर आदि)।

पार्वतीजी ने शंकरजी से नो प्रश्न किए थे। चार का बालकांड, पांचवें का अयोध्या, छठे का अरण्य, किष्किंधा, सुंदर, सातवे का लंका, आठवें का उत्तर राज गद्दी तक है। नवम प्रश्न किमि गवने निज धाम का उत्तर इस चौपाई में तुलसीदासजी ने उपासकों की भावनानुकूल दिया। स्वधाम गमन स्पष्ट नहीं किया।

भरतादिक संग अमराई में जाने का गूढ़ अर्थ यह कि सब का श्रम हरते जो श्रम हुआ उसके शमन हेतु अमराई (परम धाम) को गए। उचित भी यही था। हम कैसे अपने आराध्य, भक्त वत्सल, दिन दयाल को अपने से अलग कर सकते हैं। हां आराम तो करवा ही सकते हैं। वही बाबा ने करवाया है। हम नित्य अर्जी लगाते, मांगते हैं। आखिर वह भी तो थकता ही होगा। थोड़ा आराम भी जरूरी है।

* इसके बाद दीर्घकाल व्यतीत होनेपर पुत्र-पौत्रोंसे घिरी हुई परम यशस्विनी श्रीराममाता कौसल्या कालधर्म (मृत्यु) को प्राप्त हुईं ॥

सुमित्रा और यशस्विनी कैकेयी ने भी उन्हीं के पथका अनुसरण किया।

- वा.रा.उत्तरकांड 99.15,16

शंकरजी बोले,उमा मेरी मति अनुरूप रामकथा कही है। फिर भी -

जलसीकर महिरज गनि जाहीं,रघुपति चरित न बरनि सिराहीं।

(जलसीकर- जल कण, महिरज- धरती के रज कण, सिराहीं- वर्णन नहीं किया जा सकता।) पार्वतीजी बोली-

**नाथ तवानन शशि स्रवत, कथा सुधा रघुवीर।**
**श्रवण पुटन्ह मन पान करि, नहिं अघात मतिधिर।।**

(शशि- मुख रूपी चंद्रमा से, स्रवत- बरस रहा है, रघुवीर- रामकधामृत)-

**राम चरित जे सुनत अघाहीं, रस विशेष जाना तिन नाहीं।**
**श्रवण वन्त अस को जग माहीं, जाहि न रघुपति चरित सुहाहीं।**
**ते जड़ जीव निजातमघाती, जिनहिं न रघुपति कथा सुहाती।**

(निजातमघाती- आत्महत्या करने वाले)-

इदमाख्यानमायुष्यं सौभाग्यं पापनाशनम्। रामायणं वेदसमं श्राद्धेषु श्रावयेद् बुधः।।

कुश और लव ने कहा यह प्रबन्धकाव्य आयु तथा सौभाग्य को बढ़ाता और पापों का नाश करता है। रामायण वेद के समान है। विद्वान् पुरुषको श्राद्धों में इसे पढ़कर सुनाना चाहिये।

- वा.रा.उत्तरकांड 111-

रामायणं गोविसर्गे मध्याह्ने वा समाहितः। सायाह्ने वापराह्ने च वाचयन् नावसीदति।।

जो प्रतिदिन एकाग्रचित्त हो प्रातःकाल, मध्याह्न, अपराह्न अथवा सायंकाल में रामायण का पाठ करता है, उसे कभी कोई दुःख नहीं होता है।

- वा.रा.उत्तरकांड 111-

**यः पठेच्छृणुयान्नित्यं चरितं राघवस्य ह।**
**भक्त्या निष्कल्मषो भूत्वा दीर्घमायुरवाप्नुयात्।।**

जो पुरुष प्रतिदिन भक्तिभाव से श्रीरघुनाथजी के इस चरित्र को सुनता या पढ़ता है, वह निष्पाप होकर दीर्घ आयु प्राप्त कर लेता है।

- वा.रा.उत्तरकांड 111.19-

चिन्तयेद् राघवं नित्यं श्रेयः प्राप्तुं य इच्छति। श्रावयेदिदमाख्यानं ब्राह्मणेभ्यो दिने दिने।।

जो कल्याण-प्राप्ति की इच्छा रखता है, उसे नित्य- निरन्तर श्रीरघुनाथजी का चिन्तन करना चाहिये। ब्राह्मणों को प्रतिदिन यह प्रबन्धकाव्य सुनाना चाहिये।

- वा.रा.उत्तरकांड 111.20

पार्वतीजी ने पूछा नाथ काक शरीर में राम भक्ति का होना यह कैसे? हजारों में कोई एक राम भक्ति का अधिकारी होता है-

सो हरि भक्ति काक किमि पाई,विश्वनाथ मोहिं कहहु बुझाई।

काक तन कैसे पाया ?

गरुड़ जो सदा श्रीहरि के निकट रहते हैं उन्होंने काक से कथा क्यों सुनी ?

आपने कथा किससे सुनी ?

यह चरित्र किससे सुना ?

पार्वती की भक्तिमति की प्रशंसाकर, शंकरजी कहते हैं। पहले वह सुनो कि मैने कैसे सुना।

पूर्व जन्म में आपका नाम सती था। जब दक्ष ग्रह में आपने अपना तन तजा -

तब अति शोच भयउ मन मोरे,दुखित भयऊ वियोग प्रिय तोरे।

तुम्हारे वियोग में भटकता, सुमेरू से उत्तर दिशा में, चार स्वर्ण शिखरों वाला, नील पर्वत मन भाया। वहां वट, पीपल, पाकर और आम के वृक्षपर काकभुशुंडीजी प्रथम प्रहर में पीपल के तले सतयुग धर्मानुसार, दूसरे प्रहर पाकर वृक्ष के नीचे त्रेता, तीसरे प्रहर आम तले द्वापर और चौथे प्रहर बड़ के तले हरि कथा कहते हैं। वट तले बहुत से हंस, रामकथा सुनते हैं। यह देख मैने भी -

**तब कछुकाल मराल तनु, धरि तहं कीन्ह निवास।**
**सादर सुनि रघुपति चरित, पुनि आयउ कैलास।।**

(मराल- हंस)

अब वह कथा सुनो कैसे खगपति काक के पास गए। जब मेघनाद ने रामजी को नागपाश से आबद्ध किया तब नारद प्रेरित गरुड़ ने बंधन काटे किंतु स्वयं मोह में बंध गया-

**भव बंधन ते छूटहिं, नर जपि जा कर नाम।**
**खर्व निशाचर बांधेउ, नागपाश सोई राम।।**

(खर्व- तुच्छ)

ये कैसे ईश्वर। नारद के पास गया। नारद बोले-

जेहि बहु बार नचावा मोही,सोई व्यापी विहंगपति तोही।

(सोई- माया)-

महा मोह उपजा मन तोरे,मिटिहि न बेगि कहे खग मोरे।

तुम ब्रह्माजी के पास जाओ। ब्रह्मा भी नाच चुके थे। सो उन्होंने मेरे पास भेजा। मैं कुबेर से मिलने जारहा था। मैंने कहा –

मिलेउ गरुड़ मारग मंह मोही,कवन भांति समझावौं तोही।

जहां नित्य सत्संग हो वहां जाओ क्योंकि-

**बिनु सत्संग न हरि कथा, तेहि बिनु मोह न भाग।**
**मोह गए बिनु राम पद, होइ न दृढ़ अनुराग।।**

उसे नील पर्वत पर, काकभुशुण्डि के पास भेजा। उमा ने पूछा कि आपने क्यों नहीं समझाया तो उमानाथ बोले देवी-

ताते उमा न मैं समुझावा,रघुपति कृपा मर्म मैं पावा।

मैं समझ गया था-

होइहि कीन्ह कबहु अभिमाना,सो खोवै चह कृपानिधाना।

मेरे कहने से अभिमान न जावेगा। अपनो से बड़े ज्ञान दे तो अभिमान न जावे। किंतु छोटे से ज्ञान लेना पड़े तो निर्मलता आती है-

कछु तेहिते पुनि मैं नहिं राखा,खग समुझइ खग ही की भाषा।

कौन ऐसा ज्ञानी है जो प्रभु की बलवंत माया से मोहित न हो। गरुड़ पहुंचे। कथा आरंभ होने ही वाली थी। काक ने अति आदर से स्वागत किया। सुआसन देकर आदर से पूछा-

**नाथ कृतारथ भयउ मैं, तव दरशन खग राज।**
**आयसु होइ सो करौं अब, प्रभु आयहुं केहि काज।।**

गरुड़ बोले-

**सदा कृतारथ रूप तुम, कह मृदु वचन खगेश।**
**जाकी अस्तुति सादर, निज मुख कीन्ह महेश।।**

(जाकी- आपकी)

उन्होंने ही तो भेजा है-

सुनहुं तात जेहि कारन आयऊ,सो सब भयउ दरश तव पायउ।

देख के ही कार्य सिद्ध हुआ। आपकी विनम्रता,

आपके सम्मुख बैठा समाज, महेश द्वारा आपके नाम का अनुमोदन। और-

देखि परम पावन तव आश्रम,गयउ मोर संशय नाना भ्रम।

अब श्री राम कथा अति पावनि,सदा सुखद दुःख पुंज नशावनि।

सादर तात सुनावहुं मोही,बार बार विनवौ प्रभु तोही।

सुनत गरुड़ की गिरा विनीता,सरल सप्रेम सुखद सुपुनीता।

भयउ तासु मन परम उछाहा,कहै लागि रघुपति गुण गाहा।

01- प्रथमहि अति अनुराग भवानी,राम चरित सर कहेसि बखानी।

(अनुराग- बड़े प्रेम से, सर- मानस)-

02- पुनि नारद कर मोह अपार,कहेसि बहुरि रावण अवतारा।

03- प्रभु अवतार कथा पुनि गाई,पुनि शिशु चरित कहेसि मन लाई।

04- बाल चरित कहि विविध विधि,मन मंह परम उछाह।

ऋषि आगमनु कहेसि पुनि,श्री रघुवीर विवाह।।

05- बहुरि राम अभिषेक प्रसंगा,पुनि नृप वचन राज रस भंगा।

06- पुरवासिन कर विरह विषादा,कहेसि राम लक्ष्मण संवादा।

07- विपिन गमन केवट अनुरागा,सुरसरि उतरि निवास प्रयागा।

08- वाल्मीकि प्रभु मिलन बखाना,चित्रकूट जिमि बस भगवाना।

09- सचिवागमन नगर नृप मरना,भरतागमन प्रेम बहु बरना।

10- करि नृप क्रिया संग पुरवासी,भरत गए जहं प्रभु सुख रासी।

11- पुनि रघुपति बहुविधि समुझाए,लै पादुका अवधपुर आए।

12- भरत रहनि सुरपति सुत करनी,प्रभु अरु अत्रि भेंट पुनि बरनी।

13- कहि विराध वध जाहि विधि,देह तजी शरभंग।

वरणि सुतीक्षण प्रेम पुनि,प्रभु अगस्त्य सतसंग।।

14- कहि दंडकवन पावन ताई,गीध मइत्री पुनि तेहि गाई।

15- पुनि प्रभु पंचवटी कृत वासा,भंजेउ सकल मुनिन की त्रासा।

16- पुनि लक्ष्मण उपदेश अनूपा,शूर्पणखा जिमि कीन्ह कुरुपा।

17- खर दूषण वध बहुरि बखाना,जिमि सब मर्म दशानन जाना।

18- दशकंधर मारीच बतकही,जेहि विधि भई सकल तेई कही।

19- पुनि माया सीता कर हरना,श्री रघुवीर विरह कछु वरना।

20- पुनि प्रभु गीध क्रिया जिमि कीन्ही,बधि कबंध शबरिहिं गति दीन्ही।

21- बहुरि विरह वर्णत रघुवीरा,जेहि विधि गए सरोवर तीरा।

22- प्रभु नारद संवाद कहि,मारुति मिलन प्रसंग।

पुनि सुग्रीव मिताई,वालि प्राण कर भंग।।

23- कपिहिं तिलक करि प्रभु कृत,शैल प्रवर्षण वास।

वरणत वर्षा शरद ऋतु,राम रोष कपि त्रास।।

24- जेहि विधि कपिपति कीश पठाये,सीता खोज सकल दिशि धाये।

25- विवर प्रवेश कीन्ह जेहि भांती,कपिन बहोरि मिला संपाती।

26- सुनि सब कथा समीर कुमारा,लांघत भयउ पयोधि अपारा।

27- लंका कपि प्रवेश जिमि कीन्हा,पुनि सीतहिं धीरज जिमि दीन्हा।

28- वन उजारि रावणहिं प्रबोधी,पुर दहि लांघेउ बहुरि पयोधी।

29- आए कपि सब जहं रघुराई,वैदेही को कुशल सुनाई।

30- सेन समेत यथा रघुवीरा,उतरे जाय वारिनिधि तीरा।

31- मिला विभीषण जेहि विधि आई,सागर निग्रह कथा सुनाई।

32- सेतु बांधि कपि सेन जिमि,उतरी सागर पार।

गयो बसीठी वीरवर,जेहिविधि वालिकुमार।।

33- निशिचर कीश लराई,बरनेसि विविध प्रकार।

कुंभकर्ण घननाद कर,बल पौरुष संहार।।

34- निशिचर निकर मरण विधि नाना,रघुपति रावण समर बखाना।

35- रावण वध मंदोदरि शोका,राज विभीषण देव अशोका।

36- सीता रघुपति मिलन बहोरी,सुरन कीन्हि अस्तुति करजोरी।

37- पुनि पुष्पक चढ़ि सीय समेता,अवध चले प्रभु कृपा निकेता।

38- जेहि विधि राम नगर निज आए,वायस विशद चरित सब गाए।

39- कहेसि बहोरि राम अभिषेका,पुर वर्णन नृप नीति अनेका।

शंकरजी बोले, उमा जो मेने तुम्हें सुनाई वह सब कथा कही।

कथा सुन गरुड़ बोले -

**गयऊ मोर संदेह, सुनेउ सकल रघुपति चरित।**
**भयऊ राम पद नेह, तव प्रसाद वायस तिलक।।**

(वायस तिलक- काक कुलभूषण)

अब अपराध स्वीकारा -

**मोहिं भयउ अति मोह, प्रभुबंधन रणमंह निरखि।**
**चिदानंद संदोह, राम विकल कारण कवन।।**

(चिदानंद संदोह- सदा आनंद के धाम, राम विकल- वे राम व्याकुल)-

सो भ्रम अब मैं हित करि जाना,कीन्ह अनुग्रह कृपानिधाना।

(भ्रम- मोह)-

जो अति आतप व्याकुल होई,तरु छाया सुख जानै सोई।

(आतप व्याकुल- गर्मी से हैरान)-

जो नहिं होत मोह अति मोही,मिलतेऊं तात कवन विधि तोही।

मोह ने आपसे मिलवाया। सत्संग करवाया। यदि यह नहीं होता तो आपके मुख से गाई कथा कैसे सुनता। राम कृपा से आपके दर्शन हुए। संशय छूटा।

शिवजी कहते हैं उमा-

**श्रोता सुमति सुशील शुचि, कथा रसिक हरिदास।**
**पाई उमा अति गोप्य मत, सज्जन करहिं प्रकास।**

(शुचि- पवित्र, पाई- ऐसे श्रोता को पाकर, गोप्य मत- गूढ़ अवर्णनीय, सज्जन- सज्जन वक्ता, प्रकाश- प्रकटित)

काकभुशुण्डिजी ने कहा हे नभगनाथ, आप मेरे पूज्य और रघुनाथजी के कृपापात्र हो। आपको कोई संशय, मोह, माया नहीं, बस मेरे ऊपर दया है और रघुनाथजी ने मुझे बढ़ाई दी है -

**मोह न अंध कीन्ह केहि केही, को जग काम नचाव न जेही।**
**तृष्णा केहि न कीन्ह बौराहा, केहि कर हृदय क्रोध नहिं दाहा।**
**श्रीमद वक्र न कीन्ह केहि, प्रभुता बधिर न काहि।**
**मृगनयनी के नयनशर, को अस लाग न जाहि।।**
**गुण कृत सन्निपात नहिं केही, कोन मान मद जिते न जेही।**

(गुण कृत सन्निपात- गुण पाकर बौरा जाना)

इनके अलावा यौवन, ममता, मत्सर, शोक, चिंता सांपिनी, मनोरथ कीट, आदि माया का परिवार बहुत बड़ा है। यह केवल श्री रामकृपा से ही छूट सकते हैं। भक्त हेतु प्रभु ने श्रीराम रूप धरा है। नर लीला करते हैं-

यथा अनेक वेश धरि,नृत्य करे नट कोइ।

सोई सोई भाव दिखावे,आपु न होइ न सोइ।।(आपु न होइ- स्वयं नहीं होता, न सोइ- जो दिखता है वह भी नहीं होता)।

* माया जवनिका छन्नमज्ञा..........भागवत

नयन दोषी को सब पीला। नौका सवार को जग चलता। घूमते बालक को जग भ्रमता। गृहांध को राम कृपा कहां दिखे। निर्गुण सुगम किंतु सगुण को तो चरित्र करने होते हैं। सो बड़ा विचित्र होता है।

है गरुड़जी मेरी कथा सुनो। मैं अपनी ही कहता हूं। आप से क्या छुपाना। राम किसी का अभिमान नहीं रखते।

कैसे-

जिमि शिशु तन व्रण होइ गुसाईं,मातु चिराव कठिन की नाई।

(व्रण- फोड़ा, चिराव- शल्य क्रिया, कठिन की नाई- कठिन हृदय करके)

वह रोता है पर अंत में सुख पाता है। त्यों ही रामजी मान हरते हैं। और कान में कहता हूं। अब मेरी मूर्खता सुनो। जब जब राम जन्म होता है। मैं वहां पांच वर्ष रह आनंद लेता हूं। आंगन (अजिर) में गिरी इष्ट की जूठन खाता हूं। एक बार की लीला स्मरणकर पुलकावलियां छाती है। सुंदर अवध आंगन में चारों भाई क्रीड़ा करते।प्रभु के श्री चरणों में वज्रादि चिन्ह शोभित हैं। उदर में त्रिवल्ली, चौड़ा हृदय, गहन नाभी, बाल सुलभ वस्त्र, ऊंचे कंधे, शंख सी गर्दन, तोतले बोल, दो दांत, गोरोचन तिलक, पीली झीनी झिंगुली पहने नृप अजिर में, अपना प्रतिबिंब

निरखकर नृत्य करते हैं-

किलकत मोहिं धरन जब धावहिं,चलौं भाजि तब पूप दिखावहिं।

(धरन- पकड़ने, भाजि- उड़ जाता हूं, पूप- पूआ)

पास जाऊं तो हंसे, दूर जाऊं तो रोवे, क्या लीला है-

**प्राकृत शिशु इव लीला, देखि भयउ मोहि मोह।**
**कवन चरित्र करत प्रभु, चिदानंद संदोह।।**

(प्राकृत- साधारण, इव- समान)

इतना था कि मुझे माया ने जकड़ लिया। सीता पति ज्ञान और जीव माया वश है। सबको ज्ञान हो तो ईश्वर जीव में भेद न रहे। क्योंकि-

**माया वश्य जीव अभिमानी, ईश वस्य माया गुनखानी।**
**परवश जीव स्ववश भगवंता, जीव अनेक एक श्रीकंता।**
**ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।**
**भ्रामयन्सर्वभूतानिं यंत्रारूढानि मायया।।**

- श्रीमद्भगवद्गीता 18.61-

**सब प्राणिन के हृदय में, ईश्वर बैठा जान।**
**भ्रमा रहा सब भूत को, अर्जुन यंत्र समान।।**

- 'कमल' श्रीमद्भगवद्गीता के मोती18.61-

द्विधा भेद यद्यपि कृत माया,बिनु हरि जाई न कोटि उपाया।

**रामचंद्र के भजन बिनु, जो चह पद निर्वाण।**
**ज्ञानवंत अपि सोपि नर, पशु बिन पूंछ विशान।**

(निर्वाण- मुक्ति, विशान- सींग)

क्योंकि-

**राका शशि षोडश उगहिं, तारागण समुदाय।**
**सकल गिरिन दव लाइए, रविबिनु राति न जाय।।**

(राका- पूनम, दव- आग)

प्रभु मुझे भ्रमता देख मुस्काए। यह किसी ने नहीं जाना। भाई ,मां सब थे। रामजी मुझे पकड़ने आए। भुजा बढ़ाई। में उड़ा। भुजा बढ़ी-

जिमि जिमि दूरि उड़ाऊं अकाशा,तहं हरि भुज देखौं निज पासा।

ब्रह्मलोक तक गया। मुझ में और भुजा में बस दो अंगुल की दूरी रही। व्याकुल होगया। आंखे मूंद ली। थोड़ी देर बाद खोली तो अयोध्या में था। रघुनाथजी -

मोहिं बिलोकि राम मुसुकाहीं,बिहसत तुरत गयउ मुख माहीं।

(बिहसत- गहरी सांस, मुस्काए)

वहां अनेक ब्रह्मांड, शिव, ब्रह्मा, सूर्य, चंद्र, तारे, यम, काल, मुनि, सिद्ध, नाग, नर -

**जो नहिं देखा नहिं सुना, जो मनहूं न समाइ।**
**सो अद्‌भुत तहं देखेऊं, बरनि कवन विधि जाइ।।**
**एक एक ब्रह्मांड मंह, रहेउ वर्ष शत एक।**
**इहि विधि मैं देखत फिरेऊं, अंडकटाह अनेक।**

(अंडकटाह- ब्रह्मांड)-

लोक लोक प्रति भिन्न विधाता,भिन्न विष्णु शिव मनु दिशित्राता।

(दिशित्राता- दिकपाल)

देवता, राक्षस, पृथ्वी, नदी, सागर, अयोध्या, सरयू -

दशरथ कौसल्या सुनु ताता,विविध रूप भरतादिक भ्राता।

**भिन्न भिन्न सब देखेऊं, अतिविचित्र हरियान।**
**अगणित भुवन फिरेउ मैं, राम न देखेऊं आन।।**

(आन- दूसरे)

सो कल्प बीत गए। अपने आश्रम में कुछ काल रहा। वहां भी राम जन्म सुना तो उठ भागा। जन्मोत्सव देखा। दो घड़ी में सब देख लिया। व्याकुल होगया। तब-

**देखि कृपालु विकल मोहिं, बिहंसे तब रघुवीर।**
**बिहंसत ही मुख बाहर, आयऊं सुनु मतिधीर।।**

ब्रह्मांड विराट के उदर में ही है।
यहां फिर वही लरिकाई, फिर वही बाल क्रीड़ा। मैं व्याकुल होगया -
धरणि परऊं मुख आव न बाता,त्राहि त्राहि आरतजन त्राता।

(त्राहि- रक्षा करो, आरतजन- दुखी जनो के, त्राता- रक्षक)

परम व्याकुल देख प्रभु ने माया रोकी।-

कर सरोज प्रभु मम शिर धरेउ,दीन दयालु दुसह दुख हरेउ।

यह प्रभुता विचारकर मन में प्रसन्नता हुई। नेत्रों में जल भरकर विनती की। तब प्रभु बोले, काकभुशुण्डि वर मांग। सकल सिद्धि, रिद्धि (संपत्ति), मुक्ति, ज्ञान (आत्मज्ञान), विवेक (सत असत का ज्ञान), विरति (त्याग), विज्ञान (अनुभव) जो चाहो लो। मैने सोचा सब देते पर भक्ति देने का नहीं बोला -

भक्ति हीन गुण सुख सब ऐसे,लवण बिना बहु व्यंजन जैसे।

मैं बोला यदि प्रसन्न हो तो दो।–

**अविरल भक्ति विशुद्ध तव, श्रुति पुराण जो गाव।**
**जेहि खोजत योगीश मुनि, प्रभु प्रसाद कोउ पाव।।**

(अविरल- अखंड, प्रभु प्रसाद- स्वामी कृपा से)

वह दो। तब एवमस्तु कहकर रघुकुलनायक बोले, काक तुम बहुत सयाने हो इसीलिए ऐसा वरदान मांगा। अब मेरी कृपा से तुम्हारे अंदर समस्त शुभ गुणों का वास होगा। सबका भेद जानोगे। माया नहीं व्यापेगी। मुझमें अनुराग रखो। सुनो-

मम माया संभव संसारा,जीव चराचर विविध प्रकारा।

सब मम प्रिय सब मम उपजाए,सबते अधिक मनुज मोहिं भाए।

उनमें द्विज, उनमें श्रुतिधारी, उनमें नीतिवान, उनमें विरक्त ज्ञानी, विज्ञानी, निजदास-

भक्ति हीन विरंचि किन होई,सब जीवन मंह अप्रिय सोई।

(सब जीवन- जीवों में)-

भक्तिवंत अति नीचौ प्राणी,मोहिं परम प्रिय यह मम वाणी।

एक पिता के बहुत पुत्र होते हैं जिनका प्रथक प्रथक गुण, शील और आचार होता है। पंडित, तपस्वी, ज्ञानी, धनी, शुर, धर्मात्मा सब पर बराबर प्रीति होती है किंतु कोई मन वचन कर्म से, पिता की भक्तिरत हो, कोई और गुण धर्म नहीं जानता हो तो वह प्राणों से प्यारा होता है। इस प्रकार-

**पुरुष नपुंसक नारि नर, जीव चराचर कोइ।**
**भक्तिभाव भज कपट तजि, मोहि परमप्रिय सोइ।।**

तुझे काल नहीं व्यापेगा। भजन करो। यह सुन मन प्रसन्न, तन पुलकित हुआ-
सो सुख जाने मन अरु काना,नहिं रसना प्रति जाइ बखाना।
प्रभु शोभा सुख जानहिं नयना,कहिकिमि सकै तिन्हैं नहिं बयना।
प्रभु को भूखे जान, मां दूध पिलाने लगी। धन्य हैं अवध वासी। जिस सुख के लिए शंकरजी, अशुभ वेश या वेश छुपाकर रहते हैं। उसमे वे मग्न रहते हैं। मैं कुछ समय रुक, चरण पकड़, अपने आश्रम आगया। भैया, जबसे रामजी ने अपनाया तब से मुझे माया ने नहीं घेरा-
निज अनुभव अब कहहुं खगेसा,बिनु हरि भजन न जाहिं कलेशा।

**रामकृपा बिनु सुनु खगराई, जानि न जाइ राम प्रभुताई।**
**जाने बिनु न होई परतीती, बिनु परतीति होइ नहिं प्रीती।**

(परतीती- अनुभव, विश्वास)

घी, तेल जल में डालो तो तैरता रहता है। उतरता नहीं। बिना धरा वृक्ष लगे कैसे। तप बिना तेज, जल बिना रस, बुधजन सेवा बिना शील, तेज बिना रूप, विश्वास बिना सिद्धि, वायु बिना स्पर्श-

**बिनु विश्वास भक्ति नहीं, तेहि बिनु द्रवहिं न राम।**
**राम कृपा बिनु सपनेहुं, जीव न लह विश्राम।।**

(द्रवहिं- प्रसन्न)

ऐसा विचार सभी कुतर्क और संशय त्यागकर करुणासागर श्रीराम का भजन करना चाहिए।।

हे खगपती रामजी करोड़ों कामदेव से सुंदर। करोड़ों दुर्गा सम शत्रु नाशक। करोड़ों इंद्रों से विलासवान। करोड़ों वायु से बली। करोड़ों सूर्यों से प्रकाशवान। करोड़ों चंद्रमा सम शीतल। करोड़ों काल से दुस्तर (तैरने के अयोग्य, जिनका पार न पाया जा सके)। पतालों से अगाध, यम से भयंकर। तीर्थों से पवित्र, पाप नाशक। हिमगिरि से अचल, सिंधु से गंभीर। कामधेनु से इच्छित फलदाता। शारदा से चतुर, ब्रह्मा से सृष्टि रचैता, विष्णु से पालनहार, रुद्र से संहारक, कुबेर से धनवंत, शेष से भार वहन करने वाले हैं। अतः अनुपम हैं।

रामजी की महिमा और प्रताप का स्मरणकर गरुड़ ने पंख फुलाए (रोमांचित हुए)। नेत्रों में जल भर आया। बारबार, काक का पदवंदन किया। सोचा-

गुरु बिनु भव निधि तरै न कोई,जो विरंचि शंकर सम होई।

काक की प्रशंसा की और प्रणाम करके पूछा कि आप रामजी के परम भक्त, विद्वान हो फिर यह काक देह किस कारण और कहां पाई।

शिवजी कहते हैं, प्रलय में भी आपका नाश नहीं होता। यह ज्ञान प्रभाव है या योग बल।

गरुड़ के प्रश्न की प्रशंसाकर काकभुशुंडीजी ने कहा कि मुझे बहुत जन्मों का स्मरण हो आया। जप, तप, व्रत, यज्ञादि का फल राम चरणों में प्रेम हैं। इस तन से रामभक्ति पाने के कारण, मुझे इससे प्रेम होगया है-

जेहिते कछु निज स्वारथ होई,तेहि पर ममता कर सब कोई।

रेशम के अपवित्र कीट से, रेशम पाने के लिए, सब उससे स्नेह करते हैं।-

सोई पावन सोई सुभग सरीरा,जो तनु पाई भजिय रघुबीरा।

राम विमुख लहि विधि सम देही,कवि कोविद न प्रशंसहिं तेही।

मैं तन तजता नहीं। इच्छा मृत्यु का वर है। कई योनियों में भ्रमा। जप तपादि किए किंतु इस जन्म सा सुख न पाया। बहुत जन्मों का स्मरण है। क्योंकि शिवजी के प्रसाद से, मोह ने नहीं घेरा। मेरे प्रथम जन्म के चरित अब कहता हूं।

सुनो। इससे रामजी के चरणों में प्रीति होती है जिससे सभी क्लेश कट जाते हैं।

प्रथम कल्प के कलिकाल में, मैं अयोध्या में शूद्र शरीर से पैदा हुआ। शिव उपासक किंतु अन्य देवों का निंदक। अभिमानी, धनमत्त, बुद्धिमान, पाखंडी था। वह काल ही ऐसा था।–

**कलिमल ग्रसे धर्म सब, गुप्त भये सद्ग्रंथ।**
**दंभिन निज मति कल्पि करि, प्रकट कीन्ह बहु पंथ।।**

(दंभिन- पाखंडियों ने)

सब वर्णाश्रम, धर्म, वेद विरुद्ध लोग-

मारग सोई जा कहं जोइ भावा,पंडित सोई जो गाल बजावा।

पाखंड वेश धारी को संत। पर धन हर्ता सयाना। जूठा, मसखरा गुणवंत -

**निराचार जो श्रुति पथ त्यागी, कलियुग सोई ज्ञानी बैरागी।**
**नारि विवश नर सकल गुसाईं, नाचहिं नट मरकट की नाईं।**

नारी भार्या ही नहीं - लक्ष्मी, सरस्वती, दुर्गा, प्रतिष्ठा, कीर्ति, सुमति, प्रशंसादि भी है।-

सब नर काम लोभ रत क्रोधी,देव विप्र गुरु संत विरोधी।

(रत- वश में)-

गुरु शिश बधिर अंध कर लेखा,एक न सुने एक नहिं देखा।

दृष्टांत –

* एक नाममात्र के ब्रह्मज्ञानियों के नगर में एक वैद्य आया। जिससे मिले वो ब्रह्मज्ञानी। एक बार वहां का राजा बीमार हुआ। किसी की नहीं बल्कि इनकी औषधि से आराम हुआ। राजा बोला शीघ्र बल मिले एसी औषधि दो। वैद्य बोले वो तो आपके नगर में बहुतायत से है। बताओ। बोला, ब्रह्मज्ञानी का तेल निकालकर, औषधि बनेगी। बुलाओ। चौकीदार भेजा। एक दुकानदार से पूछा तो वह बोला, हां हूं ब्रह्मज्ञानी। चलो राजा बुलाते हैं। क्यों। तब बताया कि औषधि के लिए, ब्रह्मज्ञानी का तेल निकालना है। बोला कौन ब्रह्मज्ञानी। खानदान और पड़ोस में कोई न रहा। चौकीदार लोटा। वैद्य बोले मैं पता करता हूं।

सभी उनकी जी हुजूरी करने लगे। बचा लो प्रभु। वैद्य भेंट ले राजा के पास गया और बिना तेल के दवाई बनाकर दे दी।

कच्चे ब्रह्मज्ञानी कलिकाल में सब जगह हैं।-

आपु गए अरु आनहिं घालहिं,जो कोउ श्रुति मारग प्रति पालहिं।

(आपु गए- नष्ट हुए ,गिर गए, घालहिं- गिराते, नष्ट करते)-

नारि मुई घर संपति नासी,मूंड मुंडाय होइ संन्यासी।

(नारि मुई- घरवाली मरी, संपति नासी- दौलत समाप्त हुई)

बाबा गाते हैं -

तपसी धनवंत दरिद्र ग्रही,कलि कौतुक तात न जात कही।

ससुरारि पियारि लगी जबते,रिपु रूप कुटुम्बि भए तब ते।

लघुजीवन संवत पंच दसा,कल्पांत न नाश गुमान असा।

(संवत पंच दसा- पांच दस बरस या पंद्रह, गुमान- अभिमान ऐसा)-

कलिकाल बिहाल किए मनुजा,नहिं मानत कोउ अनुजा तनुजा।

फिर भी इसमें एक विशेषता है-

**कलियुग सम युग आन नहिं, जो नर कर विश्वास।**
**गाई राम गुण गण बिमल, भव तर बिनहिं प्रयास।।**

**।।तपः परम् कृतयुगे त्रेतायाम ज्ञानमुच्यते।**
**द्वापरे यज्ञमेवाहुर्दानमेकम कलौ युगे।।**

नित्य युग धर्म प्रकट होते है। जैसे जब शुद्धता, सत्यता, मित्र भाव, ज्ञान, मन प्रसन्न हो तो सतयुग। जब सत्वगुण अधिक हो, कुछ रजोगुण भी आ जाए, मन सब भांति सुखी हो तो त्रेता। जब रजोगुण अधिक सत्वगुण थोड़ा और थोड़ा तमोगुण भी आ मिले। मन में हर्ष शोक दोनो हो तो द्वापर और जब तमोगुण बहुत, थोड़ा रज भी

हो। चारों ओर विरोध सूझे तो जानो कलियुग चल रहा है।

कैसे बचें -

नट कृत कपट विकट खग राया,नट सेवकहिं न व्यापइ माया।

(नट का कपट जंबूरे को नहीं पीड़ित करता)

ऐसे कलियुग में मैं अयोध्या में रहा। दुकाल पड़ा तो उज्जैन गया। श्रमकर कुछ संपति पाई, शिवजी की सेवा की। वहां एक वैदिक ब्राह्मण, शिवजी का उपासक था पर आज की तरह हरि निंदक नहीं था। मैं उनकी कपट पूर्वक सेवा करता। उन्होंने मुझे पुत्र की भांति पढ़ाया। पंचाक्षर मंत्र दिया। मैं पाप बुद्धि, हरिभक्त ब्राह्मण से जलता। विष्णु द्रोह करता।

एक बार गुरु ने बुलाकर समझाया-

शिव सेवा कर फल सुत सोई,अविरल भक्ति राम पद होई।

रामजी को शिवजी, ब्रह्माजी भी भजते हैं। उनको तज, सुख चाहना, अभाग्य है। शिवजी को हरि (रामजी) का सेवक सुन, मैं जल गया। दूध पिलाए सर्प की तरह,गुरु से द्रोह करने लगा। वे शांत रहे-

जेहि ते नीच बढ़ाई पावा,सो प्रथमहिं हठि ताहि नशावा।

(जिस निसरनी से चढ़ेगा उसे ही तोड़ेगा)-

धूम अनल संभव सुनु भाई,तेहि बुझाव घन पदवी पाई।

अग्नि से उत्पन्न धुआं बादल का पद पाकर, उसी अग्नि को बुझाता है। सूर्य ताप से बना बादल, सूर्य को ही ढकना चाहता है। राह की धूल सबके पैरों में आती है वही पवन का संग पाकर राजाओं के नेत्र और मुकुट पर चढ़ती है-

**सुनु खगपति अस समुझि प्रसंगा, बुध नहिं करहिं अधम कर संगा।**
**कवि कोविद गावहिं अस नीती, खल सन कलह न भल नहिं प्रीती।**

उदासीन रहो। श्वान की भांति त्यागो।

गुरुजी हितकर बातें बताते। मुझे नहीं भाता। एक बार तो हद होगई। मैं शिव मंदिर में नाम जप रहा था कि गुरुजी आए। मैंने अभिमान के कारण गुरुजी को उठकर प्रणाम भी नहीं किया।

गुरुजी तो सह गए पर महेशजी न सह सके-

मंदिर मांझ भई नभ वानी,रे हतभाग्य अधम अभिमानी।

(नभ वानी- आकाशवाणी, अधम- नीच)

तेरा गुरु शांत है, ज्ञानी है पर मैं तुझे श्राप दूंगा, क्योंकि नीति विरोधी मुझे नहीं सुहाता।-

जो नहिं दंड करऊं शठ तोरा,भ्रष्ट होइ श्रुति मारग मोरा।

(दंड करऊं- दंड न दूं तो, श्रुति मारग- गुरु का सम्मान करना)

रे मूर्ख, गुरु से ईर्ष्या, दाह करने वाले, सो कल्प तक, रौरव नर्क भोगते हैं। फिर पक्षी आदि योनियां पाते हैं-

बैठि रहेसि अजगर इव पापी,सर्प होई खल मल

मति व्यापी।

(मल मति- पाप बुद्धि)

कोटर में वास कर।

गुरु तो गुरु ठहरे। विचलित हो गए -

**हाहाकार कीन्ह गुरु, सुनि दारुण शिव शाप।**
**कंपित मोहिं विलोकि अति, उर उपजा परिताप।।**

(दारुण- महा कठोर, कंपित मोहि विलोकि- कांपता देख, परिताप- दुःख)

**करी दंडवत सप्रेम गुरु, शिव सम्मुख कर जोरि।**
**विनय करत गद्गद गिरा, समुझि घोर गति मोरि।।**

रूद्राष्टक -

नमामीशमीशान निर्वाण रूपम,विभुम व्यापकम ब्रह्म वेदस्वरूपम।

(नमामी- नमन करता हूं, ईश ईशान- है ईश्वरों के ईश्वर, निर्वाण रूपम- मुक्ति रूप, संहरता, त्याग के प्रतिरूप, विभुम- समर्थ, व्यापकम- सर्व व्यापी, ब्रह्म- ईश, वेदस्वरूपम- वेद स्वरूप हो)-

अजं निर्गुणम निर्विकल्पम निरीहं, चिदाकाशमाकाशवासं भजेहम।

(अजं- स्वयंभू, जनक, पिता, निर्गुणम- गुण रहित (सत, रज, तम), गुणातीत, निर्विकल्पम- एक रस, राम रस, जिनका कोई विकल्प न हो, आप जैसे बस आप, निरीहं- निर ईह, कामना हीन, इच्छा रहित, चिदाकाशमाकाशवासं- सूक्ष्म और महान आकाश में वास करने वाले, देह में भी और देहांतर में भी, सर्व व्यापक, भजे अहम- मैं भजन करता हूं)-

निराकार मोंकारमूलम तुरीयं,गिरा ज्ञान गोतीत मीशं गिरीशम।

(निराकार- आकर रहित, सर्वाकार, विशाल, असीम, औंकारमूलम- ओंकार के मूल, ओम के जनक, तुरीयं- जागृत,स्वप्न, सुषुप्ति से परे, तुरीयावस्था, गिरा- वचन, वाणी, ज्ञान- सत असत का ज्ञान, गोतीत- इंद्रियों से परे, सुनहिं बिनु काना., ईशं- परमात्मा को, गिरीशम- कैलाश के स्वामी, शिखर के देव, उच्च ब्रह्म, अडिग देव)-

करालं महाकालकालं कृपालं,गुणागार संसार पारं नतोहम।।

(करालं- कराल, भक्तों की ओर झुके हुए, भयानक, महाकालकालं- महाकाल के भी काल, समस्त कल्पों, युगों, सहस्त्राब्दियों को समाप्त करने वाले, समय से परे, प्रलयंकर, कृपालं- फिर भी दयावान, समर्थ होकर कृपा करने वाले, गुणागार- सकल गुणों की खान, भंडार, राम नाम जाप के विशेष गुण के आगार, स्थान, संसार पारं- संसार से परे, जग के बाहर, जगत व्यवहार से विलग, नतोहम- नमस्कार करता हूं)-

तुषाराद्रिसंकाशगौरं गभीरं,मनोभूतकोटि प्रभा श्री शरीरं।

(तुषाराद्रिसंकाशगौरं- हिमालय के समान गौर वर्ण, पूर्ण श्वेत, पवित्र, बेदाग, ऊंचाई पर भी बेदाग, गभीरं- हिमगिरि समान गंभीर हो, सच में बड़े, मनोभूतकोटि- करोड़ों कामदेव, प्रभा- शोभायमान, श्री- उत्तम, सर्व गुण संपन्न, श्रेष्ठ)-

स्फुरनमौलि कल्लोलिनी चारु गंगा,लसदभाल बालेन्दु कंठे भुजंगा।।

(स्फुरनमौलि- जटाओं में शोभायमान, किलोल करती, तरंगित होती, कल्लोलिनी- कल कल निनादिनी, कलि कल्मश विनाशिनी, चारु- सुंदर, रुचिकर, लसदभाल- ललाट में शोभायमान, बालेन्दु- बाल चंद, दूज का चांद, अमृत धर, निर्दोष शशि, कंठे भुजंगा- कंठ में भुजंग शोभायमान है)-

चलत्कुंडलं शुभ्र नेत्रं विशालं,प्रसन्नाननं नील कंठं दयालुम।

(चलत्कुंडलं- कुंडल चलायमान है, डौल रहे हैं, शुभ्र- उज्जवल, समता मूलक, प्रसन्न आननं- प्रसन्न मुख, नील कंठम- नीले रामजी के नाम को, स्वरूप को कंठ में धारण करने वाले, दयालुम- दया के घर)-

मृगाधीशचर्माम्बरं मुंडमालं,प्रियं शंकरं सर्व नाथं भजामि।

मृगाधीशचर्म- सिंह चर्म, अंबरं- वसन, मुंडमालं- स्वजन या स्नेही की स्मृति, प्रियं- जिनको प्रिय है ऐसे, शंकरं- कल्याण कारक, शमन कर्ता, उपसंहार कर्ता, सर्व नाथं- सबके नाथ, भजामि- भजन करता हूं।)-

प्रचंडं प्रकृष्टम प्रगल्भं परेशं,अखंडं अजं भानुकोटिप्रकाशम।

(प्रचंडं- आप उग्र, तीव्र, गर्म, प्रचंड, तेजोमय, प्रकृष्टम- प्रधान, मुख्य, उत्तम, श्रेष्ठ, प्रगल्भं- चतुर, होशियार, पर ईशं- देवों के देव,bपर देव, उच्चतम ईश्वर, अखंडं- संपूर्ण, व्यवधान रहित, निर्विघ्न, विभाग हीन, अक्षर, अजं- जन्म रहित, ईश्वर)-

त्रिधाशूल निर्मूलनं शूल पाणिम,भजेहम भवानीपतिं भावगम्यम।।

(त्रिधाशूल- त्रय ताप दैहिक, दैविक, भौतिक, निर्मूलनं- नाश करने वाले, शूल- त्रिशूल को, पाणिम- धारण किए हो, पकड़े हो, तीनों तापों पर पकड़ रखने वाले, भजे अहम- मैं आपका भजन करता हूं, भव- जगत, अनी- सेना (काम, क्रोध, लोभ, मद, मान, मत्सर, ईर्ष्या), पार्वती, पतिं- स्वामी, नियंत्रक, भावगम्यम- भाव से प्राप्त होने वाले)-

कलातीत कल्याण कल्पान्त कारी,सदा सज्जनानन्द दाता पुरारी।

(कलातीत- कला से परे, कल्याण- मंगल, शुभ, कल्पान्त- प्रलय, पूर्ण करता, उपसंहार, कारी- कर्ता, पुरारी- त्रिपुरासुर के शत्रु, जड़ता के शत्रु, ठहराव के विरोधी)-

चिदानन्द संन्दोह मोहा पहारी,प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारी।

(चिदानन्द- आनन्द और चैतन्य स्वरूप ब्रह्म, संन्दोह- के मान, पात्र, चैतन्य आनंद के पात्र, मोह- अज्ञान, नासमझी, अपहारी- हरण करने वाले, प्रसीद- प्रसन्न हो, मन्मथ- कामदेव, दुविधा, मन के मंथन, अरी- नष्ट करने वाले, शत्रु, विरोधी)-

न यावत् उमानाथ पादारविन्दं,भजंतीहलोके परे वा नराणाम।

(न यावत्- जबतक नहीं, उमानाथ- हे उमा नाथ, उमानाथ का, भजंत- भजन न किया जाय, इहलोके -इस लोक में, परे- पर लोक में, वा- भी, या, नराणाम- लोगों को)-

न तावत्सुखं शांति संताप नाशं,प्रसीद प्रभो सर्व भूताधिवासम।

(न तावत सुखं- तबतक सुख नहीं मिलता, संताप- दुख, क्लेश, प्रसीद- प्रसन्न होवो, भूताधिवासम- प्राणियों के बाद का, अंतिम गृह, देह से परे आलय, परम धाम)-

न जानामि योगं जपं नैव पूजा,नतोहं सदा सर्वदा शम्भु तुभ्यम।

(न जानामि- नहीं जानता, योगं- मिलाप, मेल, मिलन, संयोग, चित्त वृत्ति का निरोध, जपं- नाम स्मरण, पूजा- अर्चना, नतोहं- नमस्कार, नमन, वंदन, प्रणाम,अभिवादन, करता हूं, शम्भु- कल्याण कर्ता, सुख दाता, शमन कर्ता, तुभ्यम- आपको)-

जरा जन्म दुःखोघ तातप्य मानं,प्रभो पाहि आपन्नमामीश शंभो।

(जरा- बुढ़ापा, वृद्धावस्था, दुःख ओघ- दुख के समूह, ढेर, अंबार, बहुलता, पाप, तातप्य- तप्त, दुखी, पीड़ित, सताया, मानं- नरम, नाजुक, पिघला हुआ, तपाया हुआ, तपाए हुए, प्रभो- हे भगवान, परमेश्वर, परमात्मा, पाहि- प्रसन्न हो, शरणागत हूं, आप नमामी ईश- ईश्वर आपको नमन करता हूं, शंभो- हे शंभो)-

रुद्राष्टकमिदं प्रोक्तम विप्रेण हर तुष्टये। ये पठन्ति नरा भक्त्या तेशां शम्भुः प्रसीदति।।

(रुद्राष्टक- रुद्र अष्टक, इदं- यह, प्रोक्तम- गाया, सुनाया, कहा, गाकर, विप्रेण- गुरु ने, ब्राह्मण ने, हर तुष्टये- शंकर को शांत, संतुष्ट, प्रसन्न किया,

भक्त्या- भक्ति भाव से, तेशां- उन पर, प्रसीदति- प्रसन्न होते हैं, कृपा करते हैं)-

शिवजी प्रसन्न हुए। आकाशवाणी हुई। बोले हे विप्र वर मांगो।

ब्राह्मण ने मांगा। पहले तो दृढ़ भक्ति दो और-

**तव माया वश जीव जड़, सन्तत फिरहिं भुलान।**<br>**तिन्ह पर क्रोध न करिय प्रभु, कृपासिंधु भगवान।।**

(भुलान- आपको भूला फिरता है)

अब हे कृपानिधान जिससे इसका कल्याण हो वह कहो।

परहित सानी, विप्र वाणी सुन, त्रिशूलपाणि बोले। यद्यपि इसने दारुण पाप किया है और मेरा श्राप व्यर्थ नहीं जाता इसलिए यह सहस्त्र जन्म तो अवश्य पाएगा पर जन्म लेते और मरते समय के भीषण कष्ट इसे नहीं होंगे। इसका ज्ञान किसी जन्म में नहीं मिटेगा। अयोध्या में तेरा जन्म हुआ। मेरी सेवा में तन दिया इसलिए पुरी के प्रभाव और मेरे अनुग्रह से तुम्हारे भीतर राम भक्ति का उदय होगा। मेरा कहा सत्य जानो। ईश्वर को संतुष्ट करने का व्रत मात्र ब्राह्मणों की सेवा ही है-

अब जनि करसि विप्र अपमाना,जानि स्वतंत्र अनन्त समाना।

(अनन्त- ईश्वर के)

इंद्र वज्र, मेरा त्रिशूल, ब्रह्म दंड, नारायण चक्र से भी विप्र क्रोधाग्नि अधिक है। ऐसा विवेक रखना और सुन, तुम्हारी अप्रतिहत (स्वच्छंद) गति होगी अर्थात बिना रोक टोक कहीं भी जा सकेगा।

मुझे ज्ञान देकर, गुरु ने प्रस्थान किया। काल प्रभाव से मैं विंध्याचल में सर्प हुआ। फिर बिना प्रयास वह तन तजा। अबतो-

**जोइ तनु धरऊं तजऊँ पुनि, अनायास हरियान।**
**जिमि नूतन पट पहिरइ, नर परिहरइ पूरान।।**

ऐसे बहुत से शरीर धारे किंतु कष्ट नहीं पाया।

पक्षी आदिक योनियों में भी, राम भक्ति रही। एक शूल था कि मेरे गुरु और उनके शील की याद बहुत आती। फिर मैने सबसे उत्तम, चरम, सुर दुर्लभ, पुराण द्वारा गाई, द्विज देह पाई। वहां बालकों संग खेलता। रघुनाथ लीला करता। पिता ने पढ़ने बैठाया। सब सुनू, समझूँ पर मन में न भावे। मन की वासना गई, राम चरण में लय लगी।-

कहि खगेस अस कवन अभागी,खरी सेव सुर धेनुहिं त्यागी।

(खरी- गधी)

पिता हारे। माता पिता दोनो सिधारे तो मैं वन गया। स्वच्छन्द गति से मुनियों के आश्रम जा जाकर राम कथा सुनी। लोक, पुत्र, वित्तेष्णा छूटी और एक इच्छा रही कि रामजी के चरणों का दर्शन करूं तब जन्म सफल हो।

मुनि कहते सबमें ईश्वर देखो पर मुझे नहीं भाता।

मेरु शिखर पर लोमश ऋषि (एक प्रलय में इनका एक रोम गिरता है) को प्रणामकर पूछा सगुण ब्रह्म की आराधना कैसे करूं। उन्होंने ब्रह्म का उपदेश देना आरंभ किया। बोले, वह काल, इच्छा रहित, अनाम, अनूप, इंद्रियातीत, निर्विकार (जन्म, वृद्धि, विवर्ण, क्षीण, जरा, मरण ये छः विकार) है। वही तू है।–

सो तैं ताहि तोहि नहिं भेदा,वारिवीचि इव गावहिं वेदा।

(सो- वही, तैं- तू है, ताहि- उनमें, तोहि- तुझमें, वारिवीचि- जल और लहर, इव- के समान)

* मुझमें तुम में बस भेद यही ...

मैने आग्रह किया निर्गुण नहीं, सगुण उपदेसो।मुनि ने फिर निर्गुण का गुण गाया। मैने सगुण का बखान किया तो लोमश मुनि को क्रोध आया-

अति संघर्षण करै जो कोई,अनल प्रकट चंदन ते होई।

मैने विचारा द्वैत के बिना क्रोध कैसे। पारसमणि वाला दरिद्र, कामी निष्कलंक, परद्रोही निःशंक, ब्राह्मण का बुरा करने पर वंश, दुष्ट संग से सुमति, परस्त्री गामी की शुभगति, बिना नीति के राज्य, नारायण चरित्र गान से पाप, निंदक को सुख, पुण्य बिना यश, पाप बिना अपयश, हरी भक्ति समान लाभ, मनुष्य देह पाकर भक्ति नहीं करने से बड़ी हानी, दया समान धर्म नहीं होता।

गुरु गर्जे, मूर्ख। अच्छी शिक्षा देता हूं वह भी नहीं मानता। बहस करता है -

सत्यवचन विश्वास न करहीं,वायस इव सब ही सन डरहीं।

(वायस- काक)-

शठ सपक्ष तव हृदय विशाला,सपदि होहु पक्षी चंडाला।

(सपक्ष- कौवे के लक्षण, सपदि- शीघ्र)

मैं तुरंत काग हो, प्रणामकर उड़चला।

शंकरजी कहते हैं -

उमा जे रामचरण रत,विगत काम मद क्रोध।

निज प्रभुमय देखत जगत,केहिसन करहिं विरोध।

प्रभु ने मुनि मति फेरी। पछताकर मुझे बुलाया।

बालरूप राम का मंत्र दिया। राम चरित मानस सुनाया। सरपर करधर कहा-

सदा राम प्रिय होहु तुम,शुभ गुण भवन अमान।कामरूप इच्छा मरण,ज्ञान विराग निधान।।

(शुभ- श्रेष्ठ, गुण भवन- गुण मंदिर, अमान- मान रहित, कामरूप- कामनानुरूप देह धारी, इच्छित रूप)

जिस आश्रम में भगवान का स्मरण करते हुए रहोगे उसके एक योजन (चार कोस) तक

अविध्या नहीं रहेगी। काल, कर्म, गुण, दोष नहीं व्यापेंगे, गुप्त चरित्र प्रकट करोगे। जो मन में इच्छा करोगे, मिलेगा। कुछ भी दुर्लभ नहीं होगा। मुनि की वाणी सुनकर आकाशवाणी हुई "हे ज्ञानी मुनि, आपके वचन सत्य होंगे। यह मन, वचन और कर्म से मेरा भक्त है।"

सत्यापित (अटेस्टेड) किया। मैं आनंदित हुआ। प्रणामकर विदा मांगकर यहां आया। गरुड़जी, यहां रहते हुए मुझे –

इहां बसत मोहिं सुनु खग ईसा,बीते कल्प सात अरु बीसा।

(कल्प- इकहत्तर चौकड़ी युग का एक मन्वंतर और चौदह मन्वंतर का एक कल्प जो ब्रह्मा का एक दिन होता है।)

रघुवर गुण गाता हूं, हंसादिक सुनते हैं। जब जब राम अवतार होता है। बाल रूप दर्शनार्थ अयोध्या रह, रामजी को हृदयस्थ कर फिर लोट आता हूं।

कैसे काक तन पाया, मैने सब सुनाया। अपने प्रभु के इस देह से दर्शन पाने के कारण, यह काक तन मुझे अत्यंत प्रिय है। भजन के प्रताप से शाप भी वर सिद्ध हुआ। भक्ति का प्रताप है। जो भक्ति तज, ज्ञान का सेवन करते हैं, वे मानो कामधेनु तज, आक के वृक्ष को ढूंढते हैं।

गरुड़जी बोले, आपकी कृपा से मेने राम प्रभाव जाना और मन शांत हुआ। अब ज्ञानी और भक्त का अंतर भी कृपाकर बताओ।

भुषुण्डीजी बोले, दोनो जग ताप हरते हैं। ज्ञान, वैराग्य, योग, विज्ञान, पुरुष हैं, माया, भक्ति नारी हैं-

मोह न नारि नारि के रूपा,पन्नगारि यह नीति अनुपा।

रघुनाथ को भक्ति प्रिय है। सो भक्तों पर माया का प्रभाव नहीं होता। इसीलिए मुनि विज्ञानी भक्ति के उपासक हैं। और सुनो-

ईश्वर अंश जीव अविनाशी,चेतन अमल सहज सुख राशी।

(अमल- पाप रहित)-

सो माया वश भयउ गुसाईं,बंधेउ कीर मरकट की नाईं।

(कीर- तोता, मरकट- बंदर)

जड़ चेतन (माया जीव) में गांठ पड़ी जो छूटती नहीं। जितने साधन सुनता है उतनी उलझती जाति है। कैसे छूटे। उपाय सुनो, मन में सात्विक श्रद्धा रूपी गाय, जब जपतप व्रत आदि शुभ कर्म रूपी हरी घास खावे और भाव (प्रेम) रूपी बच्चे को पाकर, पन्हाय जावे (सत्य, सोच, दान, दया चार थन)। निवृत्ति मार्ग की रज्जू से, गाय को बांधकर, विश्वास के पात्र में, निर्मलमन रूपी अहीर द्वारा, परमधर्म रूपी दूध दूह, अकर्म अग्नि में ओटा, क्षमा संतोष के पवन से शीतल कर, धैर्य का जामन दे, इंद्रिय निग्रह के खम्ब में लगी, विचार मथानी से मथे, जिसमे सत्य और प्रिय वाणी रस्सी हे। तब वैराग्य रूपी मक्खन निकले जिसे योग अग्नि में, शुभाशुभ कर्म की लकड़ी जलावे। बुद्धि से ठंडाकर, ज्ञान रूपी घृत निकले। ममता मट्ठा जलावे। तब विज्ञान रूपिणी बुद्धि, घृत पाकर, चित्त दीपक में, जागृत, स्वप्न, सुषुप्ति तीनो अवस्था के फल से, कपास निकाल, सत,रज, तम के बिनौले हटा, तुरीय (मुक्त) अवस्था रूपी रुई की, कड़ी बत्ती बना तेजपुंज विज्ञान दीप जलावे, जिसके पास आने से, मदादिक माखियां जल जावे। उस समय आत्मा का अनुभव रूपी प्रकाश के कारण, जीव ईश्वर की भेद बुद्धि जाती रहती है। प्रबल अविद्या का परिवार, मोहादिक अंधकार जाता रहता है। तब वह बुद्धि उजियारा पाकर, हृदय में बैठ, गांठ खोलने लगती है। गांठ खुलती देख माया विघ्न करती है। रिद्धि (राज्य, धन आदि), सिद्धि (योग बल) भेज अंचल की पवन से दीप बुझाती है। बुद्धि चतुर हो और इस पवन से बचे तो देवता लोभ (देव लोक के सुख) दिलाते हैं। देवता कहां है-

इंद्रिय द्वार झरोखा नाना,जहं तहं सुर बैठे करि थाना।

(इंद्रिय द्वार- इन्द्रियों के द्वार और रोम आदि)-

आवत देखहिं विषय बयारी,ते हठि देहिं कपाट उधारी।

कौन कहां बैठा है -

कान के दिशा, त्वचा के पवन, नेत्रों के सूर्य, जिव्हा के वरुण, नाक के अश्विनी कुमार, (तन्मात्रा देव)। वाणी के अग्नि, मन के चंद्रमा आदि। इनको ज्ञान नहीं भाता। जब विषय रूपी पवन, हृदय रूपी घर में जाती है तो विज्ञान दीप को बुझाती है। ग्रंथी तो नहीं छूटी, अंधेरा और होगया। विषय वायु से, बुद्धि भी विकल हो गई।

दीपक को कोन संभाले। तब जीव जन्म मरण के क्लेश पाता है। गरुड़जी प्रभु की माया अत्यंत दुस्तर (कठिन) है। ज्ञान कहने, समझने, साधने में कठिन है-

ज्ञान के पंथ कृपाण के धारा,परत खगेश होइ नहिं बारा।

(परत- गिरने में)-

जो निर्विघ्न पार करे तो केवल्य (मोक्ष) पावे।

जैसे धरती बिना पानी नहीं ठहरे त्यों ही भक्ति बिना मुक्ति सुख, संभव नहीं। इसी से हरि भक्त, मुक्ति तज भक्ति अपनाते हैं। भक्ति जन्म मरण अविद्या का नाश करती है । जैसे किए गए भोजन को पेट की आग पचा देती है त्यों ही, भक्तों के कर्मों को, भक्ति पचा देती है। क्षीण कर देती है। एसी सुगम नारायण भक्ति किसे न भावे।

गरुड़जी, स्वयं को सेवक, रामजी को स्वामी मानकर भजन करो –

**जो चेतन कहं जड़ करहिं, जड़हिं करै चैतन्य।**
**अस समर्थ रघुनायकहिं, भजहिं जीव ते धन्य।।**

आप जो चैतन्य थे सो मोह से जड़ और मैं जड़ जीव था सो भक्ति प्रभाव से चैतन्य हो गया। यह भक्ति रूपी चिंतामणि जो परम प्रकाशवान है, जिनके हृदय में बसती है वहां दिया बाती की आवश्यकता नहीं। मोह दारिद्य समीप न आवे, लोभ पवन बुझा न पावे। अविद्या अंधकार मिट जाता है। पतंगे पास न आते। काम क्रोधादि दुष्ट पास न आते हैं। विष (लोमश श्राप) अमृत, शत्रु मित्र (शाप देने वाले लोमश ने मित्र बन उपदेश किया) बन जाते है। मन के रोग जो जगत को दुखी किए हैं वे नही व्यापते –

राम भगति मणि उर बस जाके,दुःख लवलेश न सपनेहुँ ताके।

(लवलेश- लेश मात्र)

अतः चतुर लोग इस मणि हेतु यत्न करते हैं।

यह प्रकट है पर राम कृपा बिना नहीं मिलती।

वेद पुराण पर्वत में, राम कथा रूपी अनेक खदाने हैं। गुणी सज्जन, सुंदर बुद्धि कुदाल से, ज्ञान वैराग्य की दृष्टि से जो भाव सहित खोजते हैं वे समस्त सुखों की खान उस मणि को पाजाते हैं।-

मोरे मन प्रभु अस विश्वासा,राम ते अधिक राम कर दासा।

राम सागर, सज्जन बादल हैं जो सब पर बरसते हैं। प्रभु चंदन, संत समीर। सब को सुगंधित कर देते हैं। वेद रूपी क्षीर सिन्धु को, संत रूपी देवों ने, ज्ञान मंदर से मथ, कथामृत

निकाला है। जिसमे भक्ति रूपी मिठाई भरी हुई है।

गरुड़जी बोले, मेरे सात प्रश्न और हल कर दो।

1- सबसे दुर्लभ शरीर कोनसा?

काक बोले नर तन।-

नरक स्वर्ग अपवर्ग निसेनी,ज्ञान विराग भक्ति सुख देनी।

(अपवर्ग- मुक्ति, निसेनी- सीढ़ी)

**।। धर्मार्थकाममोक्षाणां शरीरं साधनं स्मृतम।।**

वे मूढ़ हैं जो विषयरुपी कांच की किरच के लिए नरतन रूपी पारस गवांते हैं।

2- बड़ा दुख कौनसा है?

नहीं दरिद्र सम दुख जग माहीं।

3- अधिक सुख क्या है ?

संत मिलन सम सुख कछु नाहीं।

4- संत असंत का सहज स्वभाव क्या है?

मन वचन कर्म से परोपकार संत स्वभाव है। ये भोजपत्र के समान है जो नित्य  अपनी खाल खिंचवाता है।

असंत पराए दुख देने के कारण हैं। सन की भांति औरों के बंधन के कारण बनते हैं। सांप को काटने से, चूहे को कुतरने से क्या लाभ। पर -

पर संपदा विनाशि नशाहीं,जिमि कृषि हति हिम उपल बिलाहीं।

(विनाशि- नष्ट करके, नशाहीं- नष्ट होजाते हैं,  हति- नष्ट करके, हिम उपल- बर्फ के ओले, बिलाहीं- गल जाते हैं)

5- वेद के अनुसार सबसे अधिक पुण्य धर्म क्या है?

परम धर्म अहिंसा है।

6- घोर पाप कोनसा है?

पराई निन्दा घोर पाप है।

भगवान और गुरु निंदक, हजार जन्म तक मेंढक का शरीर पाता है। ब्राह्मण निंदक काक शरीर पाते, देव वेद निंदक रोरव नर्क, संत निंदक उल्लू-

सबकी निंदा जे नर करहीं,ते चमगादुर होई अवतरहीं।

7- मानस रोग क्या है?

मोह सकल व्याधिन कर मूला,जेहिते पुनि उपजहिं बहु शूला।

काम वात, लोभ कफ, क्रोध पित्त छाती जलाते हैं। ममता दाद, ईर्षा खुजली, दुष्टता कुष्ट, तृष्णा जलोदर है। धैर्य क्षमा संतोष ही इनकी औषधि है-

एक व्याधि वश नर मरहिं,ये असाध्य बहु व्याधि।

संतत पीड़हिं जीव कहं,सो किमि लहहिं समाधि।

(समाधि- हरी स्मरण, सुख)-

इहि विधि सकल जीव जग रोगी,शोक हर्ष भय प्रीति वियोगी।

(जीव जग- जगत के जीव, वियोगी- बिछोह)

ये रोग विषय रूपी कुपथ्य पाकर और बढ़ते हैं। मुनियों को भी सताते हैं। उचित संयोग बने तो रामजी की कृपा से सब रोग नष्ट हो जाते हैं।

वैराग्य और बुद्धि क्षुधा बढ़े, विशयासक्ति घटे। उज्ज्वल ज्ञान जल से नहावे तब रामभक्ति बढ़े।

शंकर और सनकादिक-

सबकर मत खग नायक एहा,करिय राम पद पंकज नेहा।

कछुए की पीठ पर बाल, वंध्या का पुत्र, आकाश में फूल खिल जावे। मृग तृष्णा प्यास बुझा दे, अंधेरा सूर्य को ढक ले पर हरि विमुख को सुख नहीं।-

वारि मथे बरु होइ घृत,सिकता ते बरु तेल।

बिनु हरि भजन न भव तरिय,यह सिद्धांत अपेल।।

(वारि- जल, सिकता- रेत)-

मशकहिं करहिं विरंचि प्रभु,अजहिं मशक ते हीन।

अस विचारि तजि संशय,रामहिं भजहिं प्रवीण।।(मशकहिं- मच्छर, विरंचि- ब्रह्मा, अज)

है प्रभु मैने यह राम चरित्र व्यास (अयोध्या काण्ड तक विस्तार), समास (फिर संक्षेप) से कहा।

अब क्या करें -

श्रुति सिद्धांत ईहै उरगारी,भजिय राम सब काज बिसारी।

आपको कोई मोह नहीं हुआ, बस मुझपर कृपा की है।-

देखु गरुड़ निज हृदय विचारी,मैं रघुवीर भजन अधिकारी।

(मैं- क्या मैं)-

शकुनाधम सब भांति अपावन,प्रभु मोहिं कीन विदित जग पावन।

(शकुनाधम- पक्षियों में नीच)

वेद कहते है-

न तस्य प्रतिमा ह्यस्ति यस्य नाम महदयशः।।

रामजी की मूरत से अधिक नाम में यश है।–

**जासु नाम भव भेषज, हरण ताप त्रय शूल।**
**सो कृपालु मोहिं तोहिं पर, सदा रहहिं अनुकूल।।**

(भव भेषज- जग के तीन तापों की औषधि)

गरुड़जी बोले, मेरे मोह सिंधु के लिए आप जहाज बने हो। क्या उपकार करूं। प्रणाम करता हूं।

संतों का हृदय नवनीत सा है-

संत हृदय नवनीत समाना,कहा कविन्ह पै कहई न जाना।

निज परिताप द्रवै नवनीता,पर दुख द्रवहिं सु संत पुनीता।

मेरा जन्म धन्य हुआ। मुझे सदा अपना किंकर जानना। ऐसा कह, प्रणाम कर, रामजी को हृदय में धारकर गरुड़जी वैकुंठ गए।

शिवजी कहते है-

**गिरिजा संत समागम, सम न लाभ कछु आन।**
**बिनु हरि कृपा सो होइ नहिं, गावहिं वेद पुराण।।**

मैने राम कथा कही। वही गुणी, पंडित, ज्ञाता, धरती का भूषण, चतुर, प्रवीण, वेदज्ञ पंडित, धीर है जिसका मन राम चरण में रत है।

पतिव्रता नारी, गंगा वाला देश, नीतिज्ञ राजा, धर्म रत ब्राह्मण, दान योग्य धन, पुण्य में प्रीति वाली बुद्धि, सत की घड़ी, ब्राह्मण चरणों में मति वाला जन्म धन्य है-

**सो कुल धन्य उमा सुनु, जगत पूज्य सुपुनीत।**
**श्री रघुवीर परायण, जेहि नर उपज विनीत।।**

अब इस कथा को-

यह नहिं कहिय शठहिं हठ शीलहिं,जो मन लाई न सुन हरि लीलहिं।।

कहिय न लोभिहिं क्रोधिहि कामिहिं,जो न भजै सचराचर स्वामिहिं।

द्विज द्रोहीहिं न सुनाइय कबहूं,सुरपति सरिस होई नृप तबहूं।।

रामकथा के ते अधिकारी,जिनको सतसंगति अति प्यारी।

राम कथा गिरिजा मैं वरणी,कलिमल शमन मनो मल हरणी।

कहहिं सुनहिं अनुमोदन करहीं,ते गोपद इव भव निधि तरहीं।

उमा बोली-

**मैं कृतकृत्य भयउ अब, तव प्रसाद विश्वेश।**
**उपजी राम भक्ति दृढ़, बीते सकल कलेश।।**

याज्ञवल्क्य बोले, हे भरद्वाजजी,यह शिव उमा संवाद, सुख दाई, विषाद, संसार भय, संदेह हर्ता सज्जनानन्दी है -

इहि कलिकाल न साधन दूजा,योग यज्ञ जप तप व्रत पूजा।

तो क्या करें-

रामहिं सुमिरिय गाइय रामहिं,संतत सुनिय राम गुण ग्रामहिं।

बाबा गाते हैं -

पाई न गति केहि पतित पावन राम भजि सुनु शठ मना।

गणिका अजामिल व्याध गीध गजादि खल तारे घना।

आभीर यवन किरात खश श्वपचादि अति अघ रूप जे।

कहि नाम बारेक तेपि पावन होहि राम नमामि ते।।

(गणिका- पिंगला, व्याध- बाण मारने से)

श्री रामचरितमानस में 5100 चौपाइयां है। ये सच्चे पंच हैं। न्याय करते है। गणेश, देवी, शिव, पार्वती, तमारी पांच देवों का वंदन किया है।

श्रीराम कृपा से गोस्वामी तुलसीदासजी के मन ने भी विश्राम पाया-

**मो सम दीन न दीन हित, तुम समान रघुवीर।**
**अस विचारि रघुवंश मणि, हरहुं विषम भव भीर।।**

(दीन- शोक मोह ग्रस्त, विषम- कठिन, भव भीर- संसार के दुखों की पीड़ा)-

पापीनाम अहम अग्रो दयालूनाम त्वं अग्रणीह।।

कामिहिं नारि पियारि जिमि,लोभिहिं प्रिय जिमि दाम।

तिमि रघुवीर निरंतर,प्रिय लागहुं मोहिं राम।।

बाबा के साथ ही मैं भी अपनी वाणी और लेखनी को विश्राम देता हूं। प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से प्रेरित करने वालों का भी विनम्रता से वंदन करता हूं।

सादर अभिवादन।-

**सबके हिरदै बैठ के, राघव करो उद्धार।**
**हाथ जोड़ विनती करे, 'नागर कमल कुमार'।।**

'कमल कुमार नागर'